धवलासार

सकलन व सम्पादन

ब्र. विमला जैन

जबलपुर (म. प्र.)

प्रकाशक

दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल ट्रस्ट

मुकर्जी चौक, उदयपुर (राज.) ३१३ ००१

प्रथम सस्करण ३०००
(१५ अप्रेल १९९४)

मूल्य पन्द्रह रुपए

प्राप्ति स्थान
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-४ , बापूनगर , जयपुर - ३०२ ०१५

मुद्रक
वाहुवली प्रिन्टर्स
लालकोठी , जयपुर - १५
फोन ५१५४८०

प्रकाशकीय

श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल उदयपुर की ओर से "धवलासार" नामक यह अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ पाठकों के समक्ष रखते हुए प्रसन्नता है। इसमे धवला, जयधवला, महाधवला आदि ग्रन्थराजो मे आचार्य वीरसेन स्वामी ने स्वाध्यायी और साधक मुमुक्षुओ के मन में उठने वाली करणानुयोग सम्बन्धी शकाओ को स्वय ने उठाकर उनका समाधान तथा चर्चित विषय मे आये शका समाधानो का प्रश्नोत्तर के रूप मे सुन्दर विवेचन किया है।

इस ग्रन्थ का सकलन विदुषि ब्र विमला बहन जबलपुर के द्वारा कुछ वर्ष पूर्व किया जाकर , इस युग के करणानुयोग के विद्वान तथा धवलादि ग्रन्थो के टीकाकार प फूलचन्दजी सिद्धान्तशास्त्री बनारस को आद्योपात दिखाकर सशोधित करवा लिया गया था। श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल कानपुर ने इस ग्रन्थ को छपवाने की प्रक्रिया भी प्रारम्भ कर दी थी लेकिन कुछ ऐसा ही योग था कि प्रूफ सशोधनादि सारे कार्य हो जाने पर ग्रन्थ की छपाई का कार्य नही हो सका।

इस वर्ष माह जनवरी-फरवरी ९४ मे मण्डल के निमत्रण पर ब्र विमला बहन का उदयपुर पधारना हुआ। आपने अपने प्रवचनो मे कई बार धवलादि ग्रन्थो के आधार से शकाओ का समाधान किया तथा प्रकरणवश ग्रन्थ के प्रकाशन न होने की बात भी कही। इस ग्रन्थ की आवश्यकता और महत्ता को समझकर मण्डल के पदाधिकारियो की यह भावना हुई कि ऐसे उपयोगी ग्रन्थ को मण्डल की तरफ से प्रकाशित करवाया जाये तो अच्छा रहेगा।

इन विचारो से जव वहनजी को अवगत कराया गया तो वहनजी ने हर्ष के साथ अनुमति दे दी तथा तुरन्त ही जयपुर से ग्रन्थ की तैयार प्रूफ कॉपी मगवाकर मण्डल को सौंप दी। ग्रन्थ की तैयार प्रूफ कॉपी के इतनी शीघ्रता से प्राप्त हो जाने से छपवाने की भावना को वल मिला आर इस कार्य को अतिशीघ्रता से करवाने का निर्णय लिया गया। जिससे जल्दी ही इसे पाठको के हाथो पहुँचाया जा सके।

प्रस्तुत प्रकाशन के अवसर पर इस मण्डल के उन सदस्यो को जो हमारे बीच मे नही हैं लेकिन जिनके ही प्रयत्नो से मण्डल आज इस स्थिति मे है याद किये विना नही रह सकते है , सर्वश्री चन्द्रसेनजी वडी, उग्रसेनजी वडी हजारीलालजी मेहता, श्यामसुन्दरजी वेद, सुन्दरलालजी मेहता, फतहलालजी

लखमावत, मागीलालजी अग्रवाल तथा इन्दरमलजी गोधीनोत, जिनकी प्रेरणा से सद्साहित्य के प्रकाशन की भावना सदा बनी रहती है।

श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल उदयपुर का यह छठवाँ पुष्प है। इससे पूर्व के दो प्रकाशनो को छोड सभी अप्राप्त है।

ग्रन्थ की कीमत कम करने के लिए जिन महानुभावों ने सहयोग दिया है उनकी नामावली इसी ग्रन्थ में अन्य स्थान पर दी जा रही है हम उन सबके आभारी है। प टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर के भी हम आभारी हैं जिन्होने इस ग्रन्थ की कीमत कम करने हेतु प्राप्त राशि हमे भिजवा दी।

विदुषी ब्र विमला बहन के हम बहुत आभारी हैं ही कि जिन्होने तत्काल हमारी प्रकाशन की भावना को सहमति देकर प्रोत्साहित किया।

स्व प फूलचन्दजी सिद्धान्तशास्त्री के भी हम आभारी हैं कि जिन्होंने इस ग्रन्थ का सशोधनादि कर इसकी महत्ता और उपयोगिता बढ़ा दी है।

ग्रन्थ को छपवाने के निर्णय के बाद छपवाने मे लगने वाली रकम की समस्या से निपटने मे जो योगदान डॉ जामनदासजी मेहता उदयपुर ने दिया उसके लिये मण्डल उनका सदा आभारी रहेगा।

डॉ हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर तथा प नेमीचन्दजी पाटनी आगरा का तो यह मण्डल सदा ही आभारी है जिनसे मण्डल को सदा मार्गदर्शन प्राप्त होता रहा है तथा होता रहेगा।

अत में मण्डल ब्र यशपालजी, बेलगाम तथा अखिलजी बसल, जयपुर का भी आभार मानता है कि जिनके सहयोग से ही इतने कम समय में ही इस ग्रन्थ का प्रकाशन हो सका।

इस विश्वास के साथ कि जिसप्रकार समाज ने हमारे पूर्व प्रकाशनो को अपनाया है उसीप्रकार इसको भी अपनावेगी और आगे के लिये प्रोत्साहित करेगी। यह ग्रन्थ आपके ज्ञानवर्धन मे सहायक होकर सम्यग्ज्ञान प्राप्ति का कारण बने इस भावना से प्रस्तुत है।

दिनाक ३-४-९४

सुजानमल जैन,
मंत्री, श्री दि. जैन मुमुक्षु मण्डल, उदयपुर

अपनी बात

आज से करीब ३० वर्ष पहले मुझे धवला, जयधवला और महाधवला ग्रन्थ प्राप्त हुए थे। उस समय से एक विकल्प चल रहा था कि यदि इन जिनागम ग्रन्थो के कठिन-कठिन शब्दो के अर्थो का एक शब्द-कोष होता तो हम जैसे मदबुद्धि इन ग्रन्थो को सुगमता से पढ़ एव समझ सकते। इन ग्रन्थो का विषय जटिल एव सूक्ष्म हैं। इनको योग्य गुरु के निर्देशन बिना पढ़ पाना असम्भव सा ही है। सन् १९८६ मे जब जयधवल के प्रथम भाग का स्वाध्याय हम ६-७ मुमुक्षु भाई-बहिने मिलकर कर रहे थे, तब उसमे कितने ही कठिन शब्दो के अर्थ स्पष्ट मिले तो मेरा मन एकदम बोल उठा कि इन धवलादि ग्रन्थो के कठिन शब्दो का एक शब्द-कोष तैयार करूँ। परन्तु कार्य विचारो के आधीन नही होता, भावना होते हुए भी उसका शुभारभ होने मे १ वर्ष का विलम्ब हुआ।

सन् १९८७ मे यह ग्रन्थ प्रारम्भ किया और ४ माह की अल्प-अवधि मे धवलराज के १६ ग्रन्थ, महाधवल के ७ ग्रन्थ, जयधवल के १६ ग्रन्थो को पढ़ा और उनमे चिन्ह करती गयी, ग्रन्थो के पूर्ण होते ही लिखना प्रारम्भ किया। ४ माह के अन्दर पढ़ना और लिखना पूर्ण हो गया। उसमे कितने ही शका/समाधान तो ग्रन्थो से लिये हैं सभी के पृष्ठ नबर शंका समाधान के अत मे लिखे हैं, तथा कितने ही शका/समाधान हैं उसमे शकाये तो मैंने विषय को पढ़कर बनाई हैं और समाधान ग्रन्थो से लिखे हैं। कही-कही ग्रन्थो के सूत्रो मे शका और समाधान लिखा है, लेकिन वहाँ शका समाधान ऐसा कुछ भी नही लिखा है। उनको भी मैंने शका-समाधान के रूप मे दिया है।

मेरी भावना थी कि एक बार सिद्धान्ताचार्य पंडित श्री फूलचन्दजी (बनारस वाले) इसे देखे और उचित मार्गदर्शन करे। इस हेतु अगस्त १९८७ मे उन्हे पत्र लिखा, परन्तु उनकी तबियत ठीक न होने से कोई जवाब नही मिला। फिर सन् १९८७ के चौमासे मे पडित श्री फूलचन्दजी एव पडित

श्री जगमोहनलालजी कटनीवालो का स्वागत समारोह जबलपुर मे स्थित अतिशय क्षेत्र पिसनहारी मढ़ियाजी मे हुआ, तब मैने पंडित श्री फूलचन्दजी से बात की और कहा कि आप अवश्य ही एक बार इन्हे सुनिये फिर आप जैसा कहेगे वैसा करेगे । उन्होने सुनते ही अत्यधिक हर्ष व्यक्त किया और कहा बेटी मेरी ४० वर्षो से ये भावना थी कि कोई इन ग्रन्थो के कठिन शब्दो का अर्थ लिखकर एक पुस्तक तैयार करे और आपने की है तो मुझे प्रसन्नता हुई । यदि आपके पास लिखा हुआ मैटर यहीं हो तो मुझे दे दो । मै अवश्य ही जॉचकर जयपुर भिजवा दूंगा । परन्तु मेरे पास जबलपुर मे मैटर न होने से मैंने कहा मैं एक माह बाद जयपुर से अवश्य ही भेज दूंगी । मैने एक माह बाद श्री धवला ग्रन्थ प्रथम के शंका-समाधान की फोटोकापी कराकर रुड़की आपके पास भेज दी, मगर ठंडी का मौसम होने से आप देखने मे असमर्थ रहे ।

मुझे हस्तिनापुर आने को आपने लिखा तो मै २० फरवरी १९८८ को हस्तिनापुर पहुँची, और वहॉ मैं मात्र १ माह ४ दिन रही, परन्तु पंडितजी को इतना उत्साह था कि जिस कारण वे दिन रात के मिलाकर कभी ६ घण्टे तो कभी ४-५ घण्टे बैठकर सुनते थे और सुधार भी कराते थे । इस कारण किन्ही किन्ही शकाओ मे किन्ही के समाधानो मे एव कही-कही शंका/समाधान दोनो मे भी सुधार कराया है । उनका कहना था कि इन शंका-समाधानो का किस प्रकरण से सबंध है, उसे भी दो । तो जयधवल के शंका-समाधानों आदि में कुछ अधिकारो की हेडिंग दी है उन अधिकारो के अन्तर्गत ये शंका-समाधान आदि समझना । लेकिन धवला और महाधवला मे तो २०-२५ पेज पहले से प्रकरण चला आ रहा और उसके अन्तर्गत ही ये शंका-समाधान आते है तो कौनसा अधिकार लिखे ? ऐसा सोचकर पंडितजी से कहा कि प्रकरण लिखना तो कठिन है, हमने तो पृष्ठ नम्बर लिखे हैं । पाठकगण पृष्ठ नम्बर खोलकर विषय का अनुसंधान करके समझ लेगे । कितनी ही शंकाओ को किसी गुणस्थान या मार्गणास्थानो मे घटित कर समझाया है वे भी यहॉ लिये गये हैं ।

मैंने शब्द-शब्द पडित श्री फूलचन्दजी शास्त्री को सुनाया है, उनकी आज्ञा

के अनुसार ही कतिपय सशोधन किये हैं। मैंने अपने स्वय का एक अक्षर मात्र भी नही लिखा है। इस पुस्तक मे श्री धवला जी के तो १६ ही ग्रन्थो से सामग्री ली है, लेकिन महाधवल और जयधवल के सभी ग्रन्थो का मैटर तो आ गया लेकिन ग्रन्थ नही आये; क्योकि उसी का अर्थ समझाने वाली सामग्री धवलाजी मे आ गई थी इस कारण पुन. वह सामग्री लेने से पुनरुक्ति आती है, जो उचित भी नही है। इसलिए जो धवलाजी से भिन्न नई सामग्री जिन भागो मे मिली, वही ली है। इस कारण महाधवल और जयधवल के क्रमवार सर्व ग्रन्थ नही आये हैं, जिन ग्रन्थो की सामग्री ली है, वही ग्रन्थ क्रमानुसार दिये गये हैं। इनके अतिरिक्त जीवकाण्ड, आर्यिका आदिमतिजी द्वारा सपादित कर्मकाण्ड, लब्धिसार, क्षपणासार गर्भित ब्र प रतनचन्दजी मुख्तार द्वारा सपादित और पंडित श्री फूलचन्दजी शास्त्री द्वारा संपादित त्रिलोकसार, त्रिलोकप्रज्ञप्ति द्वितीय भाग और करणानुयोग प्रवेशिका, करणदशक आदि छोटी किताबो का भी उपयोग किया है।

आदरणीय ब्र यशपालजी ने इस ग्रन्थ के बनाने की प्रेरणा दी एव श्री वीतराग विज्ञान प्रभावना मण्डल, कानपुर ने इस ग्रन्थ की फोटो आफसेट बनाने मे सहयोग दिया अत: उनका आभार मानती हूँ।

डॉ हुकमचन्दजी भारिल्ल एव श्री नेमीचन्दजी पाटनी महामत्री पंडित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का भी मैं आभार मानती हूँ जिन्होने इस ग्रन्थ के प्रकाशन मे मुझे सब तरह का सहयोग दिया है। श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल उदयपुर का भी मैं हृदय से आभार मानती हूँ जिसने इस महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ को प्रकाशित करने का उपक्रम किया है।

अन्त मे आदरणीय स्व. पंडित फूलचन्दजी सिद्धान्तशास्त्री की स्मृति मे उन्ही के द्वारा संशोधित यह कृति स्वाध्याय प्रेमी समाज को स्वाध्याय हेतु सादर समर्पित करती हूँ।

ब्र. विमला जैन
जबलपुर

नमः सिद्धेभ्यः

।। धवलासार ।।

(धवला, जयधवला एव महाधवला ग्रन्थ पर शंका - समाधान)

।। मगलाचरण ।।

दोहा

सिद्ध स्वरूप निजात्म को सिद्ध परम पद साध्य ।
सब सिद्धो को नमन कर परम शुद्ध निज साध ।।
सिद्ध शुद्ध है राजते सिद्ध लोक के माहिं ।
शुद्धातम निज लोक है अन्तर घट के माहिं ।।
साधा एक अखड को रच षट्खड महान ।
नित प्रति साध अखड को पहुचेगे शिवथान ।।

कुडली

वीर-प्रभु की देशना धरसेनाचार्य सुजान ।
पुष्पदत मुनि भूतबली दिया जिनागम ज्ञान ।।
दिया जिनागम ज्ञान महाश्रुत मगलकारी ।
षट्खंडागम रचे जगत को जो हितकारी ।।
श्री जिनवाणी हुई अवतरित लिए ज्ञान-श्री ।
महिमा अगमअपार जिनागम दिव्यध्वनि-श्री ।।

दोहा

महिमा केवलज्ञान की ज्ञान हिये विच धार ।
प्रारभिक रचना हुई ज्ञान प्रकाशन हार ।।
सिद्ध साध्य हो अत मे कहलाता सिद्धात ।
धवलादिक महाशास्त्र के संचित हैं सिद्धात ।।
जिनशासन सिद्धात सब धवलादिक के मांहि ।
अल्पबुद्धि के ग्राह्य हो प्रश्नोत्तर के मांहि ।।

धवला पुस्तक - १

(१) शंका - अकृत्रिम प्रतिमाओं मे स्थापना का व्यवहार कैसे सभव है ?

समाधान - इस प्रकार शका उचित नही है, क्योकि अकृत्रिम प्रतिमाओं मे भी वुद्धिद्वारा प्रतिनिधित्व मान लेने पर "ये जिनदेव है" इस प्रकार के मुख्य व्यवहार की उपलब्धि होती है । अथवा 'अग्नि तुल्य' वालक को भी जिसप्रकार अग्नि कहा जाता है, उसी प्रकार कृत्रिम प्रतिमाओं मे की गई स्थापना के समान यह भी स्थापना है, इसलिये अकृत्रिम जिन - प्रतिमाओं मे स्थापना का व्यवहार हो सकता है । - पृष्ठ २६ -

(२) शंका - मंगल किसे कहते है ?

समाधान - मग शब्द सुखवाची है, उसे जो लावे - प्राप्त करे , उसे मगल कहते है । यह मग शब्द पुण्यरूप अर्थ का प्रतिपादन करनेवाला माना गया है । उस पुण्य को जो लाता है, उसे मगल के इच्छुक सत्पुरुष मगल कहते है । उपचार से पाप को भी मल कहा है । इसलिये जो उसका गालन अर्थात् नाश करता है, उसे भी पण्डितजन (ज्ञानी जन) मगल कहते है । - पृष्ठ ३४-३५

(३) शका - मंगल क्या है ?

समाधान - जीव मगल है । किन्तु जीव को मगल कहने से सभी जीव मगलरूप नही हो जावेगे, क्योकि द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा मगलपर्याय से परिणत जीव को और पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा केवलज्ञानादि पर्यायो को मगल माना है । - पृष्ठ ३६

(४) शंका - मगल मे एक जीव की अपेक्षा अनादि - अनन्तपना कैसे बनता है अर्थात् एक जीव अनादि काल से अनन्त काल तक मंगल होता है, यह कैसे संभव है ?

समाधान - द्रव्यार्थिक नय की प्रधानता से मगल मे अनादि - अनतपना वन जाता है। अर्थात् द्रव्यार्थिक नय की मुख्यता से जीव अनादिकाल से अनन्तकाल तक सर्वथा एकरूप स्वभाव मे अवस्थित है । अतएव मगल मे भी अनादि - अनन्तपना वन जाता है । - पृष्ठ ३७

(५) शंका - इस तरह तो मिथ्यादृष्टि अवस्था मे भी जीव को मंगलपने की प्राप्ति हो जाएगी ?

समाधान - यह कोई दोष नही है, क्योंकि यह इष्ट है। किन्तु इससे मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद आदि को मंगलपना नही प्राप्त हो सकता है, क्योंकि उनमे जीवत्व नही पाया जाता है। मगल तो जीव ही है, और वह जीव केवलज्ञानादि अनन्त धर्मात्मक है। - पृष्ठ ३७

(६) शंका - मिथ्यादृष्टि जीव सुगति को प्राप्त नही होते है, क्योकि सम्यग्दर्शन के बिना मिथ्यादृष्टियो के ज्ञान मे समीचीनता नही पाई जाती तथा समीचीनता के बिना उन्हे सुगति नही मिल सकती है। फिर मिथ्यादृष्टियो के ज्ञान और दर्शन को मंगलपना कैसे है ?

समाधान - ऐसी शका नही करनी चाहिये, क्योंकि आप्त के स्वरूप को जानने वाले **छद्मस्थो के ज्ञान और दर्शन को केवलज्ञान और केवलदर्शन के अवयवरूप** से निश्चय करनेवाले और आवरण रहित अनन्तज्ञान और अनन्तदर्शन रूप शक्ति से युक्त आत्मा का स्मरण करने वाले सम्यग्दृष्टियो के ज्ञान और दर्शन मे जिस प्रकार पाप का क्षयकारीपना पाया जाता है, उसी प्रकार मिथ्यादृष्टियो के ज्ञान और दर्शन मे भी पाप का क्षयकारीपना पाया जाता है। इसलिये मिथ्यादृष्टियो के ज्ञान और दर्शन को भी मगलपना होने मे विरोध नही है। - पृष्ट ३६

(७) शंका - देवता नमस्कार भी अन्तिम अवस्था मे सम्पूर्ण कर्मो का क्षय करने वाला होता है, इसलिये मंगल और सूत्र ये दोनो ही एक कार्य को करने वाले है। फिर दोनो का कार्य भिन्न -भिन्न क्यो बतलाया गया है ?

समाधान - ऐसा नही है, क्योंकि सूत्रकथित विषय के परिज्ञान के विना केवल देवता नमस्कार मे कर्मक्षय की सामर्थ्य नही है। मोक्ष की प्राप्ति शुक्लध्यान से होती है, परन्तु देवता नमस्कार शुक्लध्यान नही है। - पृष्ठ ४३

(८) शंका - केवल मोह को ही अरि मान लेने पर शेष कर्मो का व्यापार निष्फल हो जाता है ?

समाधान - ऐसा नही है, क्योंकि बाकी के समस्त कर्म मोह के ही आधीन है। मोह के बिना शेष कर्म अपने-अपने कार्य की उत्पत्ति मे व्यापार करते हुए नही पाये जाते है। जिससे कि वे भी अपने कार्य मे स्वतन्त्र समझे जाये। इसलिये सच्चा अरि मोह ही है और शेष कर्म उसके आधीन है। - पृष्ठ ४४

(९) शंका - मोह के नष्ट हो जाने पर भी कितने ही काल तक शेष कर्मों की सत्ता रहती है, इसलिये उनका मोह के आधीन होना नही बनता ?

समाधान - ऐसा नही समझना चाहिये, क्योंकि मोहरूप अरि के नष्ट हो जाने पर जन्म-मरण की परम्परा रूप संसार के उत्पादन की सामर्थ्य शेष कर्मों मे नही रहने से उन कर्मों का सत्व, असत्व के समान हो जाता है। तथा केवलज्ञानादि सपूर्ण आत्म-गुणो के आविर्भाव के रोकने मे समर्थ कारण होने से भी मोह प्रधान शत्रु है और उस शत्रु के नाश करने से 'अरिहंत' यह सज्ञा प्राप्त होती है । - पृष्ठ ४४

(१०) शंका - सपूर्ण रत्न अर्थात् पूर्णता को प्राप्त रत्नत्रय ही देव है, रत्नो का एकदेश देव नही हो सकता ?

समाधान - ऐसा कहना भी उचित नही है, क्योंकि रत्नो के एकदेश मे देवपना का अभाव होने पर रत्नो की समग्रता मे भी देवपना नही वन सकता है, अर्थात् जो कार्य जिसके एकदेश मे नही देखा जाता है, वह उसकी समग्रता मे कहा से आ सकता है ? - पृष्ठ ५४

(११) शंका - आचार्यादिक मे स्थित रत्नत्रय समस्त कर्मों के क्षय करने मे समर्थ नही हो सकते है, क्योंकि उनके रत्न एक देश है ?

समाधान - यह कहना ठीक नही है, क्योंकि जिसप्रकार पलाल - राशि का दाहरूप अग्नि समूह का कार्य अग्नि के एक कण से भी देखा जाता है । उसी प्रकार यहा पर भी समझना चाहिये । इसलिये आचार्यादिक भी देव है, यह वात निश्चित हो जाती है । - पृष्ठ ५४

(१२) शंका - श्रोता कितने प्रकार के होते है ?

समाधान - दश प्रकार के श्रोता होते है । शैलघन, भग्नघट, अहि (सर्प), चालनी, महिष, अवि (मेढ़ा), जाहक (जोक), शुक (तोता), माटी और मशक के समान। श्रोताओं को जो मोह से श्रुत का व्याख्यान करता है, वह मूढ दृढ़ रूप से ऋद्धि आदि तीनो प्रकार के गारवो के अधीन होकर विषयो की लोलुपतारूप विष के वश से मूर्च्छित हो, बोधि अर्थात् रत्नत्रय की प्राप्ति से भ्रष्ट होकर भव वन मे चिरकाल तक परिभ्रमण करता है । - पृष्ठ ६६

(१) **शैलघन** - शैल नाम पाषाण का है और घन नाम मेघ का है । जिसप्रकार पाषाण, मेघो के चिरकाल तक वर्षा करने पर भी आर्द्र या मृदु नही होता है, उसी प्रकार कुछ ऐसे भी श्रोता होते है, जिन्हे गुरुजन चिरकाल तक भी धर्मामृत के वर्षण या सिचन द्वारा कोमल परिणामी नही बना सकते है, ऐसे श्रोताओं को शैलघन श्रोता कहा है ।

(२) **भग्नघट** - फूटे घड़े को कहते है । जिसप्रकार फूटे घड़े मे ऊपर से भरा गया जल नीचे की ओर से निकल जाता है, भीतर कुछ भी नही ठहरता । इसीप्रकार जो उपदेश को एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल देते है, उन्हे भग्नघट श्रोता कहा है ।

(३) **अहि** - अहि नाम सर्प, जिसप्रकार मिश्री मिश्रित दुग्ध के पान करने पर भी सर्प विष का ही वमन करता है । उसीप्रकार जो सुन्दर, मधुर और हितकर उपदेश के सुनने पर भी विष वमन करते है अर्थात् प्रतिकूल आचरण करते है, उन्हे अहि समान श्रोता समझना चाहिये ।

(४) **चालनी** - जैसे चालनी उत्तम आटे को नीचे गिरा देती है और भूसा या चोकर को अपने भीतर रख लेती है । इसी प्रकार जो उत्तम सारयुक्त उपदेश को तो बाहर निकाल देते है और नि सार तत्त्व को धारण करते है, वे चालनी समान श्रोता है ।

(५) **महिष** - भैसा जिसप्रकार जलाशय से जल तो कम पीता है, परन्तु बार बार डुबकी लगाकर उसे गदला कर देता है । उसी प्रकार जो श्रोता सभा मे उपदेश तो अल्प ग्रहण करते है, पर प्रसग पाकर क्षोभ या उद्वेग उत्पन्न कर देते है, वे महिष समान श्रोता है ।

(६) **अवि** - मेढा, जैसे मेढा पालने वाले को ही मारता है । उसीप्रकार जो उपदेश दाता की ही निन्दा करते है और समय आने पर घात तक करने को उद्यत रहते है, उन्हे अवि के समान श्रोता समझना चाहिए ।

(७) **जाहक** - नाम सेही आदि अनेक जीवो का है ; पर प्रकृत मे जोक अर्थ ग्रहण किया गया है । जैसे जोक को स्तन पर भी लगावे तो भी वह दूध न पीकर खून ही पीती है । इसीप्रकार जो उत्तम आचार्य या गुरू के समीप रहकर भी उत्तम तत्त्व को तो ग्रहण नही करते, पर अधम तत्त्व को ही ग्रहण करते है, वे जोक के समान श्रोता है ।

(८) **शुक** - तोता, तोते को जो कुछ सिखाया जाता है, वह सीख तो जाता है, पर उसे यथार्थ अर्थ प्रतिभासित नही होता । उसी प्रकार उपदेश स्मरण कर लेने पर भी जिनके हृदय मे भाव-भासना नही होती है, वे शुक समान श्रोता है।

(९) **मिट्टी** - जैसे मिट्टी जल के सयोग मिलने पर तो कोमल हो जाती है, पर जल के अभाव मे पुन कठोर हो जाती है । इसी प्रकार जो उपदेश मिलने तक तो मृदु परिणामी बने रहते है और वाद मे पूर्ववत् ही कठोर हृदय हो जाते है, वे मिट्टी के समान श्रोता है ।

(१०) **मशक** - मच्छर, पहले कानो मे आकर गुनगुनाता है, चरणो मे गिरता है, किन्तु अवसर पाते ही काट खाता है उसी प्रकार जो श्रोता, पहले तो गुरू या उपदेश दाता की प्रशसा करेगे, चरण-वदना भी करेगे, पर अवसर आते ही काटे विना न रहेगे, उन्हे मशक के समान श्रोता समझना चाहिये । उक्त सभी प्रकार के श्रोता अयोग्य है, उन्हे उपदेश देना व्यर्थ है । - पृष्ठ ६९

(१३) शंका - नय किसे कहते है ?

समाधान - अनेक गुण और उनके अनेक पर्यायो सहित अथवा उनके द्वारा एक परिणाम से दूसरे परिणाम मे, एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र मे और एक काल से दूसरे काल मे अविनाशी स्वाभाव रूप से रहनेवाले द्रव्य को जो ले जाता है अर्थात् उसका ज्ञान करा देता है, उसे नय कहते है । - पृष्ठ ७१

(१४) शंका - नयो मे प्रमाणता कैसे संभव है, अर्थात् उनमे प्रमाणता कैसे आ सकती है ?

समाधान - नही, क्योंकि नय प्रमाण के कार्य है, इसलिये उपचार से नयो मे प्रमाणता के मान लेने मे कोई विरोध नही आता है । - पृष्ठ ८१

(१५) शंका - उन पांच प्रकार के प्रमाणो मे से "जीवस्थान" यह कौन सा प्रमाण है?

समाधान - यह भाव प्रमाण है । मतिज्ञानादि रूप से भावप्रमाण के भी पाच भेद है । इसलिये उन पांच प्रकार के भाव प्रमाणो मे से इस जीवस्थान शास्त्र को श्रुतभावप्रमाण रूप जानना चाहिये । - पृष्ठ ८२

(१६) शंका - वक्तव्यता कितने प्रकार की है ?

समाधान - तीन प्रकार की है - स्वसमयवक्तव्यता, परसमयवक्तव्यता और तदुभयवक्तव्यता। - पृष्ठ ८३

(१७) शंका - श्रुतप्रमाण को किस वक्तव्यता रूप जानना चाहिए ?

समाधान - श्रुतप्रमाण को तदुभयवक्तव्यता रूप जानना चाहिये। - पृष्ठ ६७

(१८) शंका - अर्थाधिकार कितने प्रकार के है ?

समाधान - अर्थाधिकार दो प्रकार के है - अगवाह्य और अगप्रविष्ट।

(१६) शंका - अंगबाह्य के चौदह अर्थाधिकारो के नाम कौन - कौन से है ?

समाधान - वे इस प्रकार है - सामायिक, चतुर्विशतिस्तव, वन्दना, प्रतिक्रमण, वैनयिक, कृतिकर्म, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, कल्पव्यवहार, कल्पाकल्प, महाकल्प, पुण्डरीक, महापुण्डरीक और निषिद्धिका। - पृष्ठ ६७

(२०) शंका - अंगप्रविष्ट के बारह अर्थाधिकारो के नाम क्या है ?

समाधान- आचाराग, सूत्रकृताग, स्थानाग, समवायाग, व्याख्याप्रज्ञप्ति, नाथधर्मकथा, उपासकाध्ययन, अत कृद्दशाग, अनुत्तरौपपादिकदशाग, प्रश्नव्याकरणाग, विपाकसूत्राग और दृष्टिवादाग। - पृष्ठ१००

(२१) शंका - मार्गणा किसे कहते है ?

समाधान - सत्, सख्या, आदि अनुयोगद्वारो से युक्त चौदह जीवसमास जिसमे या जिसके द्वारा खोजे जाते है, उसे मार्गणा कहते है। - पृष्ठ १३२

(२२) शंका - यह चैतन्य क्या वस्तु है ?

समाधान - त्रिकालविषयक अनन्तपर्याय रूप जीव के स्वरूप का अपने क्षयोपशम के अनुसार जो सवेदन होता है, उसे चैतन्य कहते है। - पृष्ठ १४६

(२३) शंका - लेश्या किसे कहते है ?

समाधान - "लिम्पतीति लेश्या" जो लिम्पन करती है, उसे लेश्या कहते है। अर्थात् जो कर्मों से आत्मा को लिप्त करती है, उसको लेश्या कहते है। - पृष्ठ १५०

(२४) शंका - भव्य किसे कहते है ?

समाधान - जिसने निर्वाण को पुरस्कृत किया है, अर्थात् जो सिद्धिपद प्राप्त करने के योग्य है, उसको भव्य कहते है । - पृष्ठ १५१

(२५) शंका - जीवसमास किसे कहते है ?

समाधान - जिसमे जीव भले प्रकार रहते है अर्थात् पाये जाते है, उसे जीवसमास कहते है । - पृष्ठ १६१

(२६) शंका - सासादन गुणस्थान किसे कहते है ?

समाधान - सम्यक्त्व की विराधना को आसादन कहते है । जो इस आसादन से युक्त हैं, उसे सासादन कहते है । किसी एक अनन्तानुबन्धी कषाय के उदय से जिसका सम्यग्यदर्शन नष्ट हो गया है, किन्तु जो मिथ्यात्व कर्म के उदय से उत्पन्न हुए मिथ्यात्व रूप परिणामो को नही प्राप्त हुआ है, फिर भी मिथ्यात्व गुणस्थान के अभिमुख है, उसे सासादन कहते है । - पृष्ठ १६४

(२७) शंका - सासादन गुणस्थानवाला जीव मिथ्यात्वकर्म का उदय नही होने से मिथ्यादृष्टि नही है, समीचीन रूचि का अभाव होने से सम्यग्यदृष्टि भी नही है, तथा इन दोनो को विषय करनेवाली सम्यग्मिथ्यात्व रूप रूचि का अभाव होने से सम्यग्मिथ्यादृष्टि भी नही है। इनके अतिरिक्त और कोई चौथी दृष्टि है नही, क्योंकि समीचीन, असमीचीन और उभयरूप दृष्टि के आलम्बनभूत वस्तु के अतिरिक्त दूसरी कोई वस्तु पाई नही जाती है । इसलिये सासादन गुणस्थान असत्स्वरूप ही है । अर्थात् सासादन नाम का कोई स्वतन्त्र गुणस्थान नहीं मानना चाहिये ?

समाधान - ऐसा नही है, क्योंकि सासादन गुणस्थान मे विपरीत अभिप्राय रहता है, इसलिये उसे असद्दृष्टि ही समझना चाहिये । - पृष्ठ १६४-१६५

(२८) शंका - यदि ऐसा है तो इसे मिथ्यादृष्टि ही कहना चाहिये, सासादन संज्ञा देना उचित नही है?

समाधान - नही, क्योंकि सम्यग्दर्शन और स्वरूपाचरण चारित्र का प्रतिबन्ध करनेवाले अनन्तानुबन्धी कषाय के उदय से उत्पन्न हुआ विपरीताभिनिवेश दूसरे गुणस्थान मे पाया जाता है, इसलिये द्वितीय गुणस्थानवर्ती जीव मिथ्यादृष्टि है । किन्तु मिथ्यात्वकर्म के उदय से उत्पन्न हुआ विपरीताभिनिवेश वहा नही पाया

जाता है, इसलिये उसे मिथ्यादृष्टि नही कहते है, किन्तु सासादन सम्यग्दृष्टि कहते है । - पृष्ठ १६५

विशेषार्थ— विपरीताभिनिवेश दो प्रकार का होता है, अनन्तानुबन्धीजनित और मिथ्यात्वजनित । उनमे से दूसरे गुणस्थान मे अनन्तानुबन्धीजनित विपरीताभि निवेश ही पाया जाता है । इसलिये इसे मिथ्यात्वगुणस्थान से स्वतत्र माना है ।

(२६) शंका - पूर्व के कथनानुसार जब वह मिथ्यादृष्टि ही है, तो फिर उसे मिथ्यादृष्टि संज्ञा क्यो नही दी गई है ?

समाधान - ऐसा नही है, क्योंकि सासादन गुणस्थान को स्वतन्त्र कहने से अनन्तानुबन्धी प्रकृतियो की द्विस्वभावता का कथन सिद्ध हो जाता है ।

विशेषार्थ - सासादन गुणस्थान को स्वतन्त्र मानने का फल जो अनन्तानुबन्धी की द्विस्वभावता बतलाई गई है, वह द्विस्वभावता दो प्रकार से हो सकती है । एक तो अनन्तानुबन्धी कषाय सम्यक्त्व और चारित्र इन दोनो की प्रतिबन्धक मानी गई है और यही उसकी द्विस्वभावता है । इसी कथन की पुष्टि यहा पर सासादन गुणस्थान को स्वतंत्र मानकर की गई है । दूसरी अनन्तानुबन्धी जिस प्रकार सम्यक्त्व के विघात मे मिथ्यात्व प्रकृति का काम करती है, उस प्रकार वह मिथ्यात्व के उत्पाद मे मिथ्यात्वप्रकृति का काम नही करती है । इसप्रकार की द्विस्वभावता को सिद्ध करने के लिये सासादन गुणस्थान को स्वतत्र माना है । - पृष्ठ १६६

(३०) शंका - सम्यग्मिथ्यादृष्टि किसे कहते है ?

समाधान - दृष्टि, श्रद्धा, रूचि और प्रत्यय ये पर्यायवाची नाम है । जिस जीव के समीचीन और मिथ्या दोनो प्रकार की दृष्टि होती है, उसको सम्यग्मिथ्यादृष्टि कहते है। - पृष्ठ १६७

(३१) शंका - एक जीव मे एक साथ सम्यक् और मिथ्यारूप दृष्टि संभव नही है, क्योंकि इन दोनो दृष्टियो का एक जीव मे एक साथ रहने मे विरोध आता है । यदि कहा जावे कि ये दोनो दृष्टियॉ क्रम से एक जीव मे रहती है, तो उनका सम्यग्यदृष्टि और मिथ्यादृष्टि नाम के स्वतन्त्र गुणस्थानो मे ही अन्तर्भाव मानना चाहिये । इसलिये सम्यग्मिथ्यादृष्टि नाम का तीसरा गुणस्थान नही बनता है ?

समाधान - युगपत् समीचीन और असमीचीन श्रद्धा वाला जीव सम्यग्मिथ्यादृष्टि है, ऐसा मानते है । और ऐसा मानने मे विरोध भी नही आता है, क्योंकि आत्मा अनेक धर्मात्मक है, इसलिये उसमे अनेक धर्मों का सहानवस्थानलक्षण विरोध

असिद्ध है । अर्थात् एक साथ अनेक धर्मों के रहने मे कोई बाधा नही आती है। यदि कहा जाय कि आत्मा अनेक धर्मात्मक है, यह बात ही असिद्ध है - सो भी कहना ठीक नही है, क्योंकि, अनेकान्त के बिना उसके अर्थक्रियाकारीपना नही बन सकता । - पृष्ठ १६७-१६८

(३२) शंका - जिन धर्मो का एक आत्मा मे एक साथ रहने मे विरोध नही है, वे रहे परन्तु संपूर्ण धर्म तो एक साथ एक आत्मा मे रह नही सकते है ?

समाधान - कौन ऐसा कहता है कि परस्पर विरोधी और अविरोधी समस्त धर्मो का एक साथ एक आत्मा मे रहना सभव है ? यदि सपूर्ण धर्मो का एक साथ रहना मान लिया जावे तो परस्पर विरुद्ध चैतन्य - अचैतन्य, भव्यत्व - अभव्यत्व आदि धर्मों का एक साथ एक आत्मा मे रहने का प्रसग आ जायगा । इसलिये परस्पर विरोधी सपूर्ण धर्म एक आत्मा मे रहते है, अनेकान्त का यह अर्थ नही समझना चाहिये । *किन्तु अनेकान्त का यह अर्थ समझना* चाहिये कि जिन धर्मो का जिस आत्मा मे अत्यन्त - अभाव नही है वे धर्म उस आत्मा मे किसी काल और किसी क्षेत्र की अपेक्षा युगपत् भी पाये जा सकते है । - पृष्ठ १६८

(३३) शंका - मिथ्यादृष्टि गुणस्थान से सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान को प्राप्त होने वाले जीव को क्षायोपशमिक भाव कैसे संभव है ?

समाधान - वह इस प्रकार है, कि वर्तमान समय मे मिथ्यात्व कर्म के सर्वघाति स्पर्धको का उदयाभावी क्षय होने से, सत्ता मे रहनेवाले उसी मिथ्यात्व कर्म के सर्वघाति स्पर्धको का उदयाभाव लक्षण उपशम होने से और सम्यग्मिथ्यात्व कर्म के सर्वघाति स्पर्धको के उदय होने से सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान पैदा होता है, इसलिये वह क्षायोपशमिक है। - पृष्ठ १६६

(३४) शंका - तीसरे गुणस्थान मे सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति के उदय होने से वहां औदयिक भाव क्यो नहीं कहा है ?

समाधान - नही, क्योंकि मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से जिसप्रकार सम्यक्त्व का निरन्वय नाश होता है, उसप्रकार सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति के उदय से सम्यक्त्व का निरन्वय नाश नही पाया जाता है, इसलिए तीसरे गुणस्थान मे औदयिक भाव न कहकर क्षायोपशमिक भाव कहा है । - पृष्ठ १६६

(३५) शंका - सम्यग्मिथ्यात्व का उदय सम्यग्दर्शन का निरन्वय विनाश तो करता नही है, फिर उसे सर्वघाति क्यो कहा ?

समाधान - ऐसी शका ठीक नही है, क्योंकि वह सम्यग्दर्शन की पूर्णता का प्रतिवन्ध करता है, इस अपेक्षा से सम्यग्मिथ्यात्व को सर्वघाति कहा है।पृष्ठ १६९

(३६) शंका - जिस तरह मिथ्यात्व के क्षयोपशम से सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान की उत्पत्ति बतलाई है, उसीप्रकार वह अनन्तानुवन्धी कर्म के सर्वघाति स्पर्धको के क्षयोपशम से होता है, ऐसा क्यो नही कहा ?

समाधान - नही, क्योकि अनन्तानुवन्धी कषाय चारित्र का प्रतिवन्धक है, इसलिये यहा उसके क्षयोपशम से तृतीय गुणस्थान नही कहा गया है । जो अनन्तानुवन्धी कर्म के क्षयोपशम से तीसरे गुणस्थान की उत्पत्ति मानते है, उनके मत से सासादन गुणस्थान को औदयिक मानना पड़ेगा, पर ऐसा नही है, क्योंकि दूसरे गुणस्थान को औदयिक नही माना गया है । - पृष्ठ १७०

(३७) शंका - उपशम सम्यक्त्व से आये हुए जीव के तृतीय गुणस्थान मे सम्यकत्व प्रकृति, मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी इन तीनो का उदयाभावरूप उपशम तो पाया जाता है ?

समाधान - नही, क्योंकि इस तरह तो तीसरे गुणस्थान मे औपशमिक भाव मानना पड़ेगा । परन्तु औपशमिक भाव का प्रतिपादन करनेवाला कोई आर्ष वाक्य नही है । - पृष्ठ १७०

विशेषार्थ - दूसरे या तीसरे गुणस्थान मे मिथ्यात्व आदि कर्मों के क्षयोपशम से क्षयोपशम भाव की उत्पत्ति मान ली जावे, तो मिथ्यात्व गुणस्थान को भी क्षायोपशम मानना पड़ेगा, क्योंकि सादि मिथ्यादृष्टि की अपेक्षा मिथ्यात्व गुणस्थान में भी सम्यक्प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व कर्म के उदय अवस्था को प्राप्त हुए स्पर्धको का क्षय होने से सत्ता में स्थित उन्ही का उदयाभाव लक्षण उपशम होने से तथा मिथ्यात्व कर्म के सर्वघाति स्पर्धको के उदय होने से मिथ्यात्व गुणस्थान की उत्पत्ति पाई जाती है । इतने कथन से यह तात्पर्य समझना चाहिये कि तीसरे गुणस्थान मे मिथ्यात्व, सम्यक्प्रकृति और अनन्तानुवन्धी के क्षयोपशम से क्षायोपशमिक भाव न होकर केवल मिश्र प्रकृति के उदय से मिश्रभाव होता है। - पृष्ठ १७१

(३८) शंका - औदयिक आदि पाच भावो मे से किस भाव के आश्रय से संयमासंयम भाव पैदा होता है ?

समाधान - सयमासयम भाव क्षायोपशमिक है, क्योंकि अप्रत्याख्यानावरणीय कषाय के वर्तमान कालिन सर्वघाति स्पर्धको के उदयाभावीक्षय होने से और आगामी काल मे उदय मे आने योग्य उन्ही के सदवस्थारूप उपशम होने से तथा प्रत्याख्यानावरणीय कषाय के उदय से सयमासयम रूप अप्रत्याख्यान - चारित्र उत्पन्न होता है। - पृष्ठ १७५

(३९) शंका - सम्यग्दर्शन के विना भी देशसंयमी देखने मे आते है ?

समाधान - नही, क्योंकि जो जीव मोक्ष की आकाक्षा से रहित है और जिनकी विषयपिपासा दूर नही हुई है, उनके अप्रत्याख्यानसयम की उत्पत्ति नही हो सकती, कहा भी है जो जीव जिनेन्द्रदेव मे अद्वितीय श्रद्धा को रखता हुआ एक ही समय मे त्रसजीवो की हिसा से विरत और स्थावर जीवो की हिसा से अविरत होता है, उसको विरताविरत कहते है। - पृष्ठ १७६

(४०) शंका - पाच भावो मे से किस भाव का आश्रय लेकर यह प्रमत्तसंयत गुणस्थान उत्पन्न होता है ?

समाधान - सयम की अपेक्षा यह गुणस्थान क्षायोपशमिक है। - पृष्ठ १७७

(४१) शंका - प्रमत्तसंयत गुणस्थान क्षायोपशमिक किस प्रकार है ?

समाधान - क्योंकि वर्तमान मे प्रत्याख्यानावरण के सर्वघाति स्पर्धको के उदयक्षय होने से और आगामी काल मे उदय मे आनेवाले सत्ता मे स्थित उन्ही के उदय मे न आने रूप उपशम से तथा सज्वलन कषाय के उदय से प्रत्याख्यान (सयम) उत्पन्न होता है, इसलिये क्षायोपशमिक है। - पृष्ठ १७७

(४२) शंका - संज्वलन कषाय के उदय से संयम होता है, इसलिये उसे औदयिक नाम से क्यो नही कहा जाता है ?

समाधान - नही, क्योंकि सज्वलन कषाय के उदय से सयम की उत्पत्ति नही होती है। - पृष्ठ १७८

(४३) शंका - तो संज्वलन का व्यापार कहां पर होता है ?

समाधान - प्रत्याख्यानावरण कषाय के सर्वधाति स्पर्धको के उदयाभावी क्षय से (और सदवस्थारूप उपशम से) उत्पन्न हुए सयम मे मल के उत्पन्न करने मे सज्वलन का व्यापार होता है। - पृष्ठ १७८

(४४) शंका - उपशमश्रेणी मे मरण होता है या नही ?

समाधान - उपशमश्रेणीस्थ आठवे गुणस्थान के पहले भाग मे तो मरण नही होता है परन्तु द्वितीयादिक भागो मे (चढ़ते,उतरते दोनो मे) मरण सभव है । - पृष्ठ १८३

(४५) शंका - यदि केवलज्ञान असहाय है, तो वह प्रमेय को भी मत जाने ?

समाधान - ऐसा नही है, क्योंकि पदार्थों को जानना उसका स्वभाव है। और वस्तु के स्वभाव दूसरो के प्रश्नो के योग्य नही हुआ करते है । यदि स्वभाव मे भी प्रश्न होने लगे, तो फिर वस्तुओं की व्यवस्था ही नही बन सकेगी । - पृष्ठ२००

(४६) शंका - मनुष्य किसे कहते है ?

समाधान - जिस कारण जो हेय - उपोदय आदि का विचार करते है अथवा जो मन से गुणदोषादिक का विचार करने मे निपुण है अथवा जो मन से उत्कृट अर्थात् दूरदर्शन, सूक्षमविचार, चिरकाल धारण आदि रूप उपयोग से युक्त है अथवा जो मनु की सन्तान है, इसलिये उन्हे मनुष्य कहते है । - पृष्ठ २०४

(४७) शंका - मिथ्यादृष्टि गुणस्थान मे नारकियो का सत्त्व रहा आवे, क्योंकि मिथ्यादृष्टि उन नारकियो मे उत्पत्ति का निमित्त कारण मिथ्यादर्शन पाया जाता है । किन्तु दूसरे गुणस्थान मे नारकियो का सत्त्व नही पाया जाना चाहिये , क्योकि अन्य गुणस्थान सहित नारकियो मे उत्पत्ति का निमित्त कारण मिथ्यात्व नही माना गया है?

समाधान - ऐसा नही है, क्योंकि नरकायु के बन्ध बिना मिथ्यादर्शन अविरति और कषाय की नरक मे उत्पन्न कराने की सामर्थ्य नही है । और पहले वन्धी हुई आयु का पीछे से उत्पन्न हुए सम्यग्दर्शन से निरन्वय नाश भी नही होता है, क्योंकि ऐसा मान लेने पर आर्ष से विरोध आता है । जिन्होने नरकायु का वन्ध कर लिया है ऐसे जीव, जिसप्रकार संयम को प्राप्त नही हो सकते है, उसी प्रकार सम्यक्त्व को प्राप्त नही होते है, यह वात भी नही है, क्योंकि ऐसा मान लेने पर भी सूत्र से विरोध होता है । - पृष्ठ २०६

(४८) शंका - जिन जीवो ने पहले नरकायु का बन्ध किया और जिन्हे पीछे से सम्यग्दर्शन उत्पन्न हुआ ऐसे वद्धायुष्क सम्यग्दृष्टियो की नरक मे उत्पत्ति होती है, इसलिये नरक मे असंयतसम्यग्दृष्टि भले ही पाये जावे ; परन्तु सासादन गुणस्थानवालो की (मरकर) नरक मे उत्पत्ति नही होती है, क्योकि सासादन गुणस्थान का नरक में उत्पत्ति के साथ विरोध है । इसलिये सासादन गुणस्थानवालो का नरक मे सद्‌भाव कैसे पाया जा सकता है ?

समाधान - नही, क्योकि जिसप्रकार नरकगति मे अपर्याप्त अवस्था के साथ सासादन गुणस्थान का विरोध है, उसप्रकार पर्याप्त अवस्था सहित नरक गति के साथ सासादन गुणस्थान का विरोध नही है अर्थात् नारकियो के पर्याप्त अवस्था मे दूसरा गुणस्थान उत्पन्न हो सकता है । यदि कहो कि नरकगति मे अपर्याप्त अवस्था के साथ दूसरे गुणस्थान का विरोध क्यो है ? तो उसका यह उत्तर है कि यह नारिकियो का स्वभाव है, और स्वभाव दूसरे के प्रश्नो के योग्य नही होते है । - पृष्ठ२०६-७

(४६) शका - यदि ऐसा है तो अन्य गतियो के अपर्याप्त काल मे भी सासादन गुणस्थान का सद्भाव मत होओ, क्योकि अपर्याप्त काल के साथ सासादन गुणस्थान का विरोध है ?

समाधान - यह कहना ठीक नही, क्योकि जिस तरह नारकियो के अपर्याप्त काल के साथ सासादन गुणस्थान का विरोध है, उस तरह शेप गतियो के अपर्याप्त काल के साथ सासादन गुणस्थान का विरोध नही है । केवल सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान का तो सदा ही सभी गतियो के अपर्याप्त काल के साथ विरोध है, क्योंकि अपर्याप्त काल मे सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान का अस्तित्व वतानेवाले आगम का अभाव है । - पृष्ठ २०७

(५०) शका - तिर्यचगति मे कितने गुणस्थान होते है ?

समाधान - तिर्यचगति मे आदि के पाँच गुणस्थान होते है । - पृष्ठ२०६

(५१) शका - तिर्यचगति के अपर्याप्तकाल मे कितने गुणस्थान होते है ?

समाधान - मिथ्यात्व, सासादन, असयतसम्यग्दृष्टि ये तीन गुणस्थान सभव है ।

खुलासा - जिसप्रकार वद्धायुष्क असयतसम्यग्दृष्टि और सासादन गुणस्थानवालो का तिर्यचगति के अपर्याप्त काल मे सद्भाव सभव है, उस प्रकार सम्यग्मिथ्यादृष्टि और सयतासयतो का तिर्यचगति के अपर्याप्तकाल मे सद्भाव सभव नही है, क्योंकि तिर्यचगति मे अपर्याप्त काल के साथ सम्यग्मिथ्यादृष्टि और सयतासयत का विरोध है । और लब्ध्यपर्याप्तको मे एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान ही होता है । - पृष्ठ २०६

(५२) शका - तिर्यचनियो के अपर्याप्त काल मे कितने गुणस्थान होते है ?

समाधान - मिथ्यादृष्टि और सासादन ये दो गुणस्थान ही होते है । - पृष्ठ २१०

(५३) शका - उपशम किसे कहते है ?

समाधान - उदय, उदीरणा, उत्कर्षण, अपकर्षण, परप्रकृतिसक्रमण, स्थितिकाण्डकघात और अनुभागकाण्डकघात के विना ही कर्मों के सत्ता मे रहने को उपशम कहते है । - पृष्ठ २१३

(५४) शंका - क्षय किसे कहते है ?

समाधान - जिनके मूलप्रकृति और उत्तरप्रकृति के भेद से प्रकृतिवन्ध स्थितिवन्ध, अनुभागवन्ध ओर प्रदेशवन्ध अनेक प्रकार के हो जाते है, ऐसे आठ कर्मों का जीव से जो अत्यन्त विनाश हो जाता है, उसे क्षपण (क्षय) कहते है । अनन्तानुवन्धी क्रोध, मान, माया और लोभ तथा मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति इन सात प्रकृतियो का असयतसम्यग्दृष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसयत अथवा अप्रमत्तसयत जीव नाश करता है । - पृष्ठ २१६

(५५) शंका - इन सात प्रकृतियो का क्या युगपत नाश करता है या क्रम से ?

समाधान - नही, क्योकि तीन करण करके अनिवृत्तिकरण के चरम समय मे पहले अनन्तानुवन्धी चार का एकसाथ क्षय करता है । तत्पश्चात् फिर से तीनो ही करण करके, उनमे से अध करण और अपूर्वकरण इन दोनो को उल्लघन करके अनिवृत्तिकरण के सख्यात वहुभाग व्यतीत हो जाने पर मिथ्यात्व का क्षय करता है । इसके अनन्तर अन्तर्मुहुर्त व्यतीत कर सम्यग्मिथ्यात्व का क्षय करता है। तत्पश्चात् अन्तर्मुहूर्त व्यतीत कर सम्यक्प्रकृति का क्षय करता है । पृष्ठ - २१६

(५६) शंका - पर्याप्ति और प्राण मे क्या भेद हे ?

समाधान - इनमे हिमवान और विन्ध्याचल पर्वत के समान भेद पाया जाता है। आहार, शरीर, इन्द्रिय, आनापान, भाषा और मन रूप शक्तियो की पूर्णता के कारण को पर्याप्ति कहते है । और जिनके द्वारा आत्मा जीवन सज्ञा को प्राप्त होता है, उन्हे प्राण कहते है । यही इन दोनो मे भेद है । वे प्राण — पाच इन्द्रियाँ, मनोवल, वचनवल, कायवल, आनापान और आयु के भेद से दश प्रकार के है । - पृष्ठ २५८

(५७) शंका - पॉचो इन्द्रियॉ, आयु और कायबल ये प्राण सज्ञा को प्राप्त होवे, क्योंकि वे जन्म से लेकर मरण तक भव (पर्याय) को धारण करने रूप से पाये जाते है। और उनमे से किसी एक के अभाव होने पर मरण भी देखा जाता है। परन्तु उच्छ्वास, मनोबल और वचनबल इनको प्राण संज्ञा नही दी जा सकती है, क्योंकि इनके बिना भी अपर्याप्त अवस्था मे जीवन पाया जाता है ?

समाधान - नही, क्योंकि उच्छ्वास, मनोबल और वचनबल विना अपर्याप्त अवस्था के पश्चात् पर्याप्त अवस्था मे जीवन नही पाया जाता है, इसलिये उन्हे प्राण मानने मे कोई विरोध नही आता है। कहा भी है - जिसप्रकार नेत्रो का खोलना, बन्द करना वचनप्रवृत्ति आदि बाह्य प्राणो से जीव जीते है, उसी प्रकार जिन अभ्यन्तर इन्द्रयावरण कर्म के क्षयोपशमादिक के द्वारा जीव मे जीवितपने का व्यवहार हो, उनको प्राण कहते है। - पृष्ठ २५८

(५८) शंका - पर्याप्ति और प्राण के नाम मे अर्थात् कहने मात्र मे विवाद है, वस्तु मे कोई विवाद नही है। इसलिये दोनो का तात्पर्य एक ही मानना चाहिये ?

समाधान - नही, क्योंकि कार्य और कारण के भेद से उन दोनो मे भेद पाया जाता है तथा पर्याप्तियो मे आयु का सद्भाव नही होने से और मनोबल, वचनवल तथा उच्छ्वास इन प्राणो के अपर्याप्ति काल मे नही पाये जाने से पर्याप्ति और प्राण मे भेद समझना चाहिये। - पृष्ठ २५६

(५६) शका - वे पर्याप्तियां भी अपर्याप्त काल मे नही पाई जाती है, इसलिये अपर्याप्त काल मे उनका सद्भाव नही रहेगा ?

समाधान - नही, क्योंकि, अपर्याप्त काल मे अपर्याप्तरूप से उनका सद्भाव पाया जाता है। पर्याप्तियो की अपूर्णता को अपरियाप्ति कहते है। - पृष्ठ २५६

(६०) शका - जीव के नवीन भव को धारण करने के समय ही भावेन्द्रियो की तरह भावमन का भी सत्त्व पाया जाता है इसलिये जिसप्रकार अपर्याप्त काल मे भावेन्द्रियो का सद्भाव कहा जाता है; उसी प्रकार वहां पर भावमन का सद्भाव क्यो नही कहा?

समाधान - नही, क्योंकि वाह्य इन्द्रियो के द्वारा जिसके द्रव्य का ग्रहण नही होता ऐसे मन का अपर्याप्ति रूप अवस्था मे अस्तित्व स्वीकार कर लेने पर जिसका निरूपण विद्यमान है, ऐसे द्रव्यमन के असत्त्व का प्रसग आ जायेगा। - पृष्ठ २६२

(६१) शंका - पर्याप्ति के निरूपण से ही द्रव्यमन का अस्तित्व सिद्ध हो जायगा ?

समाधान - नही, क्योंकि बाह्यार्थ की स्मरणशक्ति की निष्पत्ति की पर्याप्ति सज्ञा होने से द्रव्यमन के अभाव मे भी पर्याप्ति का निरूपण बन जाता है । बाह्य पदार्थों को स्मरण की शक्ति के पहले द्रव्यमन का सद्भाव वन जायगा, ऐसा कहना भी ठीक नही है, क्योकि द्रव्यमन के योग्य द्रव्य की उत्पत्ति के पहले उसका सत्व मान लेने मे विरोध आता है । अतः अपर्याप्तिरूप अवस्था मे भावमन के अस्तित्व का निरूपण नही करना द्रव्यमन के अस्तित्व का ज्ञापक है, यह सिद्ध होता है । - पृष्ठ २६२

(६२) शंका - मन को इन्द्रिय संज्ञा क्यो नही दी गई ?

समाधान - नही, क्योंकि इन्द्र अर्थात् आत्मा के लिग को इन्द्रिय कहते है । जिसके कर्मों का सबन्ध दूर नही हुआ है, जो परमेश्वररूप शक्ति के संबन्ध से इन्द्र सज्ञा को धारण करता है, परंतु जो स्वतः पदार्थों को ग्रहण करने मे असमर्थ है, ऐसे उपभोक्ता आत्मा के उपयोग के उपकरण को लिग कहते है । परंतु मन उपयोग का उपकरण नही है; इसलिये मन को इन्द्रिय संज्ञा नही दी गई । - पृष्ठ २६२

(६३) शंका - त्रस जीव क्या सूक्ष्म होते है अथवा बादर ?

समाधान - त्रस जीव बादर ही होते है, सूक्ष्म नही होते । - पृष्ठ २७४

(६४) शंका - तीनो योगो की प्रवृत्ति युगपत होती है या नही ?

समाधान - युगपत् नही होती है, क्योंकि एक आत्मा के तीनो योगो की प्रवृत्ति युगपत् मानने पर योग के विरोध का प्रसग आ जायगा । अर्थात् किसी भी आत्मा के योग नही बन सकेगा । - पृष्ठ २८१

(६५) शंका - केवली जिनके सत्यमनोयोग का सद्भाव रहा आवे, क्योंकि वहां पर वस्तु के यथार्थ ज्ञान का सद्भाव पाया जाता है । परंतु उनके असत्यमृषामनोयोग का सद्भाव संभव नही है, क्योंकि वहां पर संशय और अनध्यवसायरूप ज्ञान का अभाव है ?

समाधान - नही, क्योंकि संशय और अनध्यवसाय के कारण रूप वचन का कारण मन होने से उसमे भी अनुभयरूप धर्म रह सकता है । अत· सयोगी जिन मे अनुभय मनोयोग का सद्भाव स्वीकार कर लेने मे कोई विरोध नही आता है । - पृष्ठ २८५

(६६) शंका - जिसकी कषाये क्षीण हो गई है, ऐसे जीव के वचन असत्य कैसे हो सकते है ?
समाधान - ऐसी शंका व्यर्थ है, क्योंकि असत्यवचन का कारण अज्ञान बारहवे गुणस्थान तक पाया जाता है, इस अपेक्षा से वहा पर असत्यवचन के सद्भाव का प्रतिपादन किया है। और इस लिये उभयसंयोगज सत्यमृषावचन भी बाहरवे गुणस्थान तक होता है, इस कथन मे कोई विरोध नही आता है। - पृष्ठ २६१

(६७) शंका - वचनगुप्तिका पूरी तरह से पालन करने वाले कषायरहित जीवो के वचनयोग कैसे संभव है?
समाधान - नही, क्योंकि कषायरहित जीवो मे भी अन्तर्जल्प के पाये जाने मे कोई विरोध नही आता है। - पृष्ठ २६१

(६८) शंका - तिर्यंच और मनुष्य भी वैक्रियिक शरीर वाले सुने जाते है, इसलिये यह बात कैसे घटित होगी ?
समाधान - नही, क्योंकि औदारिकशरीर दो प्रकार का है, विक्रियात्मक और अविक्रियात्मक। उनमें जो विक्रियात्मक औदारिक शरीर है, वह मनुष्य और तिर्यंचो के वैक्रियिकरूप से कहा है। उसका यहां पर ग्रहण नही किया गया है, क्योंकि उसमे नाना गुण और ऋद्धियो का अभाव है। यहा पर नाना गुण और ऋद्धियुक्त वैक्रियिक शरीर का ही ग्रहण किया है और वह देव और नारकियो के ही होता है। - पृष्ठ २८६

(६९) शंका - पर्याप्तक जीवो मे कार्मणकाययोग क्यो नही होता है ?

समाधान - विग्रहगति का अभाव होने से उनके कार्मणकाययोग नही होता है।- पृष्ठ ३०६

(७०) शका- सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानवालो के भी छह अपर्याप्तियां होती है ?
समाधान - नही, क्योंकि उस गुणस्थान मे अपर्याप्त काल नही पाया जाता है।- पृष्ठ ३१४

(७१) शंका-परिस्पन्द को बन्ध का कारण मानने पर सचार करते हुए मेघो के कर्मबन्ध प्राप्त हो जायगा, क्योंकि उनके भी परिस्पन्द पाया जाता है ?
समाधान - नही, क्योंकि कर्मजनित चैतन्यपरिस्पन्द ही आस्रव का कारण है, यह अर्थ यहाँ पर विवक्षित है। मेघो का परिस्पन्द कर्म जनित

तो है नही, जिससे वह कर्मवन्ध के आस्रव का हेतु हो सके अर्थात् नही हो सकता है। - पृष्ठ ३१८

(७२) शंका - आहारक शरीर को उत्पन्न करनेवाला साधु पर्याप्तक ही होता है अन्यथा उसे संयतपना नही वन सकता। ऐसी हालत मे आहारकमिश्रकाययोग अपर्याप्तक के होता है, यह कथन नही वन सकता है ?

समाधान - नही क्योकि ऐसा कहनेवाला आगम के अभिप्राय को ही नही समझा है। आगम का अभिप्राय तो इसप्रकार है कि आहारक शरीर को उत्पन्न करने वाला साधु औदारिक शरीरगत छह पर्याप्तियो की अपेक्षा पर्याप्तक भले ही रहा आवे किन्तु आहारक शरीर संवन्धी पर्याप्तियों के पूर्ण होने की अपेक्षा वह अपर्याप्तक है। - पृष्ठ ३१९

(७३) शंका - पर्याप्त और अपर्याप्तपना एक साथ एक जीव मे संभव नही है, क्योंकि एकसाथ एक जीव मे इन दोनो के रहने मे विरोध आता है ?

समाधान - नही, क्योंकि एक साथ एक जीव मे पर्याप्त और अपर्याप्त सवन्धी योग सभव नही है, यह वात हमे इष्ट ही है। लेकिन औदारिकशरीर सवधी पर्याप्तपने मे और आहारकमिश्रपने की अपेक्षा अपर्याप्तपने मे विरोध नही है। - पृष्ठ ३२०

(७४) शंका - जिस प्रकार वद्धायुष्क क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव नारकसंवन्धी नपुंसकवेद मे उत्पन्न होता हे, उसी प्रकार यहां पर स्त्रीवेद मे क्यो नही उत्पन्न होता है ?

समाधान - नही, क्योंकि नरक मे एक नपुसकवेद का ही सद्भाव है। जिस किसी गति मे उत्पन्न होने वाला सम्यग्दृष्टिजीव उस गति सवन्धी विशिष्ट वेदादिक मे ही उत्पन्न होता है, यह अभिप्राय यहा पर ग्रहण करना चाहिये। इससे यह सिद्ध हुआ कि सम्यग्दृष्टि जीव मरकर पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच योनिनी जीवो मे नही उत्पन्न होता हे। - पृष्ठ ३३०

(७५) शंका - वस्त्रसहित होते हुए भी उन द्रव्य स्त्रियो के भावसंयम के होने मे कोई विरोध नही है ?

समाधान - उनके भावसंयम नही है, क्योंकि अन्यथा अर्थात् - भावसयम के मानने पर उनके भावअसयम का अविनाभावी वस्त्रादिक का ग्रहण करना वन नही सकता है। - पृष्ठ ३३५

(७६) शंका - तो फिर स्त्रियो मे चौदह गुणस्थान होते है, यह कथन कैसे वन सकेगा ?

समाधान - नही, क्योंकि भाव स्त्री अर्थात् स्त्रीवेद युक्त मनुष्यगति मे चौदह गुणस्थानो के सद्भाव मान लेने मे कोई विरोध नही आता है । - पृष्ठ ३३५

(७७) शंका - बादरकषाय गुणस्थान के ऊपर भाववेद नही पाया जाता है, इसलिये भाववेद मे चौदह गुणस्थानो का सद्भाव नही हो सकता है ?

समाधान - नही, क्योंकि यहा पर अर्थात् गतिमार्गणा मे वेद की प्रधानता नही है किन्तु गति प्रधान है और वह पहले नष्ट नही होती है । - पृष्ठ ३३५

(७८) शंका - यद्यपि मनुष्यगति मे चौदह गुणस्थान संभव हैं फिर भी उसे वेद विशेषण से युक्त कर देने पर उसमे चौदह गुणस्थान संभव नही हो सकते है ?

समाधान - नही, क्योंकि विशेषण के नष्ट हो जाने पर भी उपचार से उस विशेषण युक्त सज्ञा को धारण करनेवाली मनुष्यगति मे चौदह गुणस्थानो का सद्भाव होने मे कोई विरोध नही आता है । - पृष्ठ ३३५

(७९) शंका - तृतीय गुणस्थान मे पर्याप्त ही होते है, इसप्रकार नियम के स्वीकार कर लेने पर तो एकान्तवाद प्राप्त होता है ?

समाधान - नही, क्योंकि अनेकान्तगर्भित एकान्तवाद के सद्भाव होने मे कोई विरोध नही आता है । - पृष्ठ ३३७

(८०) शंका - विग्रहगति मे वेद पाया जाता है क्या ?

समाधान - विग्रहगति मे भी वेद का अभाव नही है, क्योंकि यहा पर भी अव्यक्तवेद पाया जाता है । - पृष्ठ ३४८

(८१) शंका - तीनो वेदो की प्रवृत्ति क्रम से होती है या युगपत् ?

समाधान - (१०४न सूत्र मे, ३४७ पृष्ठ पर स्पष्ट ही कहा है कि यहा भाववेद की बात है) तीनो वेदो की प्रवृत्ति क्रम से ही होती है, युगपत् नही, क्योंकि वेद पर्याय है । पर्याय स्वरूप होने से जैसे विवक्षित कषाय केवल अन्तर्मुहूर्तपर्यन्त रहती है, वैसे सभी वेद केवल एक अन्तर्मुहूर्तपर्यन्त ही नही रहते है, क्योंकि जन्म से मरण तक किसी एक वेद का उदय पाया जाता है । - पृष्ट ३४८

(८२) शंका - लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यच और मनुष्य तथा संमूर्छन पंचेन्द्रिय जीव कौन वेदवाले होते है ?

समाधान - लब्ध्यपर्याप्तक तिर्यच और मनुष्य तथा समूर्छन पंचेन्द्रिय जीव नपुसक ही होते है। - पृष्ठ ३४६

(८३) शंका - अर्थावग्रह किसे कहते है ?

समाधान - अप्राप्त अर्थ के ग्रहण करने को अर्थावग्रह कहते है। - पृष्ठ ३५६

(८४) शंका - व्यंजनावग्रह किसे कहते हैं ?

समाधान - प्राप्त अर्थ के ग्रहण करने को व्यजनावग्रह कहते है। - पृष्ठ ३५७

(८५) शंका - अरिहंत परमेष्ठी मे मन का अभाव होने पर मन के कार्यरूप वचन का सद्भाव भी नही पाया जा सकता है ?

समाधान - नही, क्योंकि वचन ज्ञान के कार्य है, मन के नही। - पृष्ठ ३७०

(८६) शंका - अक्रम - ज्ञान से क्रमिक वचनों की उत्पत्ति कैसे हो सकती है ?

समाधान - नही, क्योंकि घटविषयक अक्रमज्ञान से युक्त कुभकार द्वारा क्रम से घट की उत्पत्ति देखी जाती है। इसलिये अक्रमवर्ती ज्ञान से क्रमिक वचनो की उत्पत्ति मान लेने मे कोई विरोध नही आता है। - पृष्ठ ३७०

(८७) शंका - श्रुतदर्शन क्यों नही कहा ?

समाधान - नही, क्योंकि मतिज्ञानपूर्वक होनेवाले श्रुतज्ञान को दर्शनपूर्वक मानने मे विरोध आता है। दूसरे यदि बहिरंग पदार्थ को सामान्यरूप से विषय करनेवाला दर्शन होता तो श्रुतदर्शन भी होता। परंतु ऐसा नही है, इसलिये श्रुतज्ञान के पहले दर्शन नही होता है। - पृष्ठ ३८६

(८८) शंका - अवधिदर्शन वाले जीवो के कितने गुणस्थान होते है ?

समाधान - अवधिदर्शन वाले जीव असयतसम्यग्दृष्टि से लेकर क्षीणकषाय वीतरागछद्मस्थ गुणस्थान तक होते है। - पृष्ठ ३८६

(८९) शंका - विभंगदर्शन का पृथक् रूप से उपदेश क्यो नही किया ?

समाधान - क्योंकि उसका अवधिदर्शन मे अन्तर्भाव हो जाता है। - पृष्ठ ३८७

(९०) शंका - तो मनःपर्ययदर्शन को भिन्न रूप से कहना चाहिये ?

समाधान - नही, क्योंकि मन पर्ययज्ञान मतिज्ञानपूर्वक होता है, इसलिये मन.पर्यय दर्शन नही होता है। - पृष्ठ ३८७

(६१) शंका - जिस राशि का निरन्तर व्यय चालू है, परंतु उसमे आय नही होती है तो उसके अनन्तपना कैसे वन सकता है ?

समाधान - नही, क्योकि यदि सव्यय और निराय राशि को भी अनन्त न माना जावे तो एक को भी अनन्त के मानने का प्रसग आ जायेगा। व्यय होते हुए भी अनन्त का क्षय नही होता है, यह एकान्त नियम नही है, इसलिये जिसके सख्यातवे और असख्यातवे भाग का व्यय हुआ है ऐसी अनन्त राशि का क्षय भी है, किन्तु दो - तीन आदि सख्येय राशि के व्ययमात्र से क्षय नही भी है, ऐसा स्वीकार किया है। पृष्ठ ३६४

(६२) शंका - अर्धपुद्गलपरावर्तनरूप काल अनन्त होते हुए भी उसका क्षय देखा जाता है, इसलिये भव्य राशि के क्षय न होने मे जो अनन्तरूप हेतु दिया है वह व्यभिचरित हो जाता है ?

समाधान - नही, क्योंकि, भिन्न भिन्न कारणो से अनन्तपने को प्राप्त भव्यराशि और अर्धपुद्गलपरावर्तनरूप काल इन दोनो राशियो मे समानता का अभाव है, इसलिये अर्धपुद्गलपरावर्तन काल वास्तव मे अनन्तरूप नही है। आगे इसी का स्पष्टीकरण करते है। अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल क्षयसहित होते हुए भी अनन्त है, क्योंकि छद्मस्थ जीवो के द्वारा उसका अन्त नही पाया जाता है। अथवा केवलज्ञान अनन्त है और उसका विषय होने से वह अनन्त है। जीवराशि तो सख्यातवे भागरूप राशि के क्षय हो जाने पर भी निर्मूल नाश नही होने से, अनन्त है। अथवा पहले जो भव्यराशि के क्षय नही होने मे अनन्तरूप हेतु दे आये है उसमे छद्मस्थ जीवो के द्वारा अनन्त की उपलब्धि नही होती हे, इस अपेक्षा के विना ही यह विशेषण लगा देने से अनैकान्तिक दोष नही आता है। दूसरे व्ययसहित अनन्त के सर्वथा क्षय मान लेने पर काल का भी सर्वथा क्षय हो जायगा, क्योंकि व्ययसहित होने के प्रति दोनो समान हे। - पृष्ठ ३६५

(६३) शका - यदि ऐसा ही मान लिया जाय तो क्या हानि है ?

समाधान - नही, क्योंकि ऐसा मानने पर काल की समस्त पर्यायो के क्षय हो जाने से सपूर्ण द्रव्यो की स्वलक्षण रूप पर्यायो का भी अभाव हो जायगा और इसलिये समस्त वस्तुओं के अभाव की आपत्ति आ जायगी। - पृष्ठ ३६५

(६४) शंका - शरीर से सन्यास ग्रहण कर लेने के कारण जिन्होने आहार का त्याग कर दिया है, ऐसे तिर्यचो के संयम क्यो नही होता है ?

समाधान - नही, क्योंकि उनके अन्तरग सकल-निवृत्ति का अभाव है।- पृष्ठ ४०४

(६५) शंका - तिर्यचो मे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव संयतासंयत क्यो नही होते है ?

समाधान - नही, क्योंकि तिर्यचो मे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव उत्पन्न होते है तो वे भोगभूमि मे ही उत्पन्न होते है, दूसरी जगह नही। परतु भोगभूमि मे उत्पन्न हुए जीवो के अणुव्रत की उत्पत्ति नही हो सकती है, क्योंकि वहां पर अणुव्रत के होने मे आगम से विरोध आता है। - पृष्ठ ४०५

(६६) शंका - समनस्क (संज्ञी) और अमनस्क (असंज्ञी) का क्या स्वरूप है ?

समाधान - जो कार्य करने से पूर्व कार्य और अकार्य का तथा तत्व और अतत्व का विचार करता है, दूसरो के द्वारा दी गई शिक्षाओं को सीखता है और नाम लेने पर आ जाता है, वह समनस्क है और जो इससे विपरीत है, वह अमनस्क है। - पृष्ठ ४१०

आत्मा का हित मोक्ष है। मोक्ष के बिना अन्य जो है, वह परसंयोगजनित है, विनाशिक है, दुखमय है और मोक्ष है वही निजस्वभाव है, अविनाशी है, अनन्त सुखमय है। इसलिये मोक्षपद की प्राप्ति का उपाय तुमको करना चाहिये।

मोक्ष का उपाय सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र है। इनकी प्राप्ति जीवादिक के स्वरूप जानने से होती है। उसे कहता हूं-

जीवादि तत्त्वो का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है, उसे बिना जाने श्रद्धान का होना आकाश के फूल के समान है। प्रथम जाने, तब फिर वैसे ही प्रतीति करने से श्रद्धान को प्राप्त होता है। इसलिये जीवादिक का जानना, श्रद्धान होने से पूर्व ही होता है, वही उनके श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शन का कारणरूप जानना।

तथा श्रद्धान होने पर जो जीवादिक का जानना होता है, उसी का नाम सम्यग्ज्ञान है।

श्रद्धानपूर्वक जीवादि को जानते ही स्वयमेव उदासीन होकर हेय का त्याग, उपादेय का ग्रहण करता है, तब सम्यक्चारित्र होता है; अज्ञानपूर्वक क्रियाकाण्ड से सम्यक्चारित्र नहीं होता है।

धवला पुस्तक -२

(६७) शंका - प्ररूपणा किसे कहते है ?

समाधान - सामान्य और विशेप की अपेक्षा गुणस्थानो मे, जीवसमासो मे, पर्याप्तियो मे, प्राणो मे, सज्ञाओं मे, गतियो मे, इन्द्रियो मे, कायो मे, योगो मे, वेदो मे, कपायो मे, ज्ञानो मे, सयमो मे, दर्शनो मे, लेश्याओं मे, भव्यो - अभव्यो मे, सम्यक्त्वो मे, सज्ञी असज्ञीयो मे, आहारी - अनाहारियो मे और उपयोगो मे, पर्याप्त - अपर्याप्त विशेपणो से विशेपित करके जो जीवो की परीक्षा की जाती है उसे प्ररूपणा कहते है। - पृष्ठ ४१३

(६८) शका - सज्ञा की परिभाषा एव उनके कितने भेद हे ?

समाधान - इस लोक मे जिनसे दाधित होकर तथा जिनका सेवन करते हुए ये जीव दोनो लोको मे दारुण दु ख को प्राप्त होत है, उन्हे सज्ञा कहते है । उसके चार भेद है - आहारसज्ञा, भयसज्ञा, मैथुनसज्ञा ओर परिग्रहसज्ञा । - पृष्ठ ४१५

(६९) शका - यह कैसे जाना जाता है कि उपशम सम्यग्दृष्टि जीव मरण नही करते है ?

समाधान - आचार्यों के वचन से और (सूत्र) व्याख्यान से जाना जाता है कि उपशम सम्यग्दृष्टि जीव नही मरते है । किन्तु चारित्रमोह के उपशम करने वाले अर्थात् द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि जीव मरते है और देवो मे उत्पन्न होते है । अत उनकी अपेक्षा अपर्याप्तकाल मे उपशमसम्यकृत्व पाया जाता हैं । - पृष्ठ ४३४

(१००) शंका - क्या चारो गतिओं मे वेदकसम्यक्त्व तथा क्षायिकसम्यकृत्व भी अपर्याप्त काल मे पाया जाता है ?

समाधान - वेदकसम्यकृत्व तो देव और मनुष्यो के अपर्याप्तकाल मे पाया ही जाता है, क्योंकि वेदकसम्यकृत्व के साथ मरण को प्राप्त हुए देव ओर मनुष्यो के परस्पर गमनागमन मे कोई विरोध नही पाया जाता है । कृतकृत्यवेदक की अपेक्षा तो वेदकसम्यकृत्व तिर्यच और नारकी जीवो के अपर्याप्त काल मे भी पाया जाता है । क्षायिकसम्यकृत्व भी सम्यग्दर्शन के पहले वाधी गई आयु के वध की अपेक्षा चारो ही गतियो के अपर्याप्तकाल मे पाया जाता है । इसलिए असयतसम्यग्दृष्टि जीव के अपर्याप्तकाल मे वेदक तथा क्षायिक सम्यकृत्व भी पाया जाता है । - पृष्ठ ४३४

(१०१) शंका - ध्यान मे लीन अपूर्वकरणगुणस्थानवर्ती जीवो के वचनवल का सद्भाव भले ही रहा आवे, क्योंकि भाषापर्याप्ति नामक पौद्गलिक स्कन्धो से उत्पन्न हुई शक्ति उनके पाई जाती है, किन्तु उनके वचनयोग या काययोग का सद्भाव नही मानना चाहिए ? ।

समाधान - नही, क्योंकि ध्यान अवस्था मे भी अन्तर्जल्प के लिये प्रयत्नरूप वचनयोग और कायगत सूक्ष्म प्रयत्नरूप काययोग का सत्व अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीवो के पाया ही जाता है, इसलिये वहा वचनयोग और काययोग भी सभव है है। - पृष्ठ ४३८

(१०२) शका - जब कि इस गुणस्थान (उपशान्तकषाय गुणस्थान) मे कषायो का उदय नही पाया जाता है, तो फिर यहां शुक्ललेश्या किस कारण से कही ?

समाधान - यहा पर कर्म और नोकर्म के लेप के निमित्तभूत योग का सद्भाव पाया जाता है, इसलिये शुक्लेश्या कही है । - पृष्ठ ४४३

(१०३) शंका - कपाट, प्रतर और लोकपूरण समुद्घात को प्राप्त केवली पर्याप्त है या अपर्याप्त?

समाधान - उन्हे पर्याप्त तो माना नही जा सकता, क्योकि 'औदारिकमिश्रकाययोग अपर्याप्तको के होता है' इस सूत्र से उनके अपर्याप्तपना सिद्ध है, इसलिये वे अपर्याप्तक ही है । - पृष्ठ ४४४

(१०४) शंका - मम्यग्मिथ्यादृष्टि संयतासंयत और संयतो के स्थान मे जीव नियम से पर्याप्तक होते है, इसप्रकार सूत्रनिर्देश होने के कारण यही सिद्ध होता है कि सयोगी को छोड़कर और औदारिकमिश्रकाययोगवाले जीव अपर्याप्तक है । यहाँ शंकाकार का यह अभिप्राय है कि औदारिकमिश्रयोगवाले जीव अपर्याप्तक होते हैं । यह सामान्यविधि है और सम्यग्मिथ्यादृष्टि, संयतासंयत और संयत जीव पर्याप्तक होते हैं यह विशेष विधि है । और संयतो मे सयोगियो का अन्तर्भाव हो ही जाता है । अत एव "विपेशविधिना सामान्यविधिर्वाध्यते" इस नियम के अनुसार उक्त विशेषविधि से सामान्यविधि वाधित हो जाती है, जिससे कपटादि समुद्घात्गत केवली को अपर्याप्तक सिद्ध करना असंभव है ?

समाधान - ऐसा नही है, क्योंकि यदि 'विशेपविधि से सामान्यविधि वाधित होती हैं' इस नियम के अनुसार औदारिकमिश्रकाययोगवाले जीव अपर्याप्तक होते है यह सामान्यविधि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि आदि पर्याप्तक होते हैं' इससे वाधी जाती है तो आहारकमिश्रकाययोग वाले प्रमत्तसयतो को भी पर्याप्त ही मानना पड़ेगा, क्योंकि वे भी सयत है । किन्तु ऐसा नहीं है, क्योंकि, 'आहारकमिश्रकाययोग अपर्याप्तको के होता है इस सूत्र से वे अपर्याप्तक ही सिद्ध होते है । - पृष्ठ ४४४

(१०५) शंका - जिसका आरंभ किया हुआ शरीर अर्ध अर्थात् अपूर्ण है, उसे अपर्याप्त कहते है । परंतु सयोगी अवस्था मे शरीर का आरंभ तो होता नहीं, अतः सयोगी के अपर्याप्तपना नहीं बन सकता है ?
समाधान - नहीं, क्योंकि कपाटादि समुद्घात अवस्था मे सयोगी छह पर्याप्तरूप शक्ति से रहित होते हैं, अतएव उन्हे अपर्याप्त कहा है । - पृष्ठ ४४७

(१०६) शका - अयोगकेवली के एक आयुप्राण के होने का क्या कारण है ?
समाधान - ज्ञानावरणकर्म के क्षयोपशमस्वरूप पाच इन्द्रिय प्राण तो अयोगकेवली के हैं नहीं, क्योंकि ज्ञानावरणादि कर्मो के क्षय हो जाने पर क्षयोपशम का अभाव पाया जाता है । आनापान, भाषा और मन प्राण भी उनके नहीं हैं, क्योंकि पर्याप्तिजनित प्राणसज्ञावली शक्ति का उनके अभाव है । उनके कायबल नाम का प्राण भी नहीं है क्योंकि उनके शरीर नामकर्म के उदयजनित कर्म और नोकर्मो के आगमन का अभाव है । इसलिये अयोगकेवली के एक आयुप्राण ही होता है । उपचार का आश्रय लेकर उनके एक प्राण, छह प्राण अथवा सात प्राण भी होते हैं । परतु यह पाठ अप्रघात है अर्थात् गौण है । (विशेष स्पष्टीकरण ग्रन्थ में देखिएगा) - पृष्ठ ४४९

(१०७) शका - प्रथमादि सात पृथिवियो मे कौन-कौनसी लेश्याएं होती है ?
समाधान - प्रथम पृथिवी मे जघन्य कापोतलेश्या होती है, दूसरी पृथिवी में मध्यम कापोतलेश्या होती है, तीसरी पृथिवी मे उत्कृष्ट कापोतलेश्या और जघन्य नीललेश्या होती है, चौथी पृथिवी मे मध्यम नीललेश्या होती है, पाचवी पृथिवी में उत्कृष्ट नीललेश्या और जघन्य कृष्णलेश्या होती है । छठी पृथिवी में मध्यम कृष्णलेश्या होती है और सातवी पृथिवी में परम कृष्णलेश्या होती है । - पृष्ठ ४५९

(१०८) शका - सामान्य तिर्यंचों के अपर्याप्तकाल मे तीनों अशुभ लेश्याए ही क्यो होती है ?
समाधान - क्योंकि, तेजोलेश्या और पद्मलेश्यावाले भी देव यदि तिर्यंचो मे उत्पन्न होते है तो नियम से उनकी शुभलेश्याए नष्ट हो जाती हैं । इसलिए सामान्य तिर्यंचों की अपर्याप्तअवस्था मे तीन अशुभ लेश्याए ही होती हैं । - पृष्ठ ४७२

(१०९) शका - भाववेदी की अपेक्षा मनुष्यनियो के कितने गुणस्थान होते हैं ?
समाधान - भाववेद की अपेक्षा मनुष्यनियो के चौदहों गुणस्थान होते हैं । - पृष्ठ ५१५

(११०) शका - मनुष्यनियो के और आहारककाययोग और आहारकमिश्रकाययोग नही होने का क्या कारण है ?

समाधान - यद्यपि जिनके भाव की अपेक्षा स्त्रीवेद और द्रव्य की अपेक्षा पुरुपवेद होता है, वे (भावस्त्री) जीव भी सयम को प्राप्त होते है। किन्तु द्रव्य की अपेक्षा स्त्रीवेदवाले मनुष्य - सयम को प्राप्त नही होते है, क्योकि वे सचेल अर्थात् वस्त्रसहित होते है। फिर भी भाव की अपेक्षा स्त्रीवेद और द्रव्य की अपेक्षा पुरुपवेदी सयमधारी मनुष्यो के आहारकऋद्धि उत्पन्न नही होती है, किन्तु द्रव्य और भाव इन दोनो ही वेदो की अपेक्षा से पुरुपवेदवाले मनुष्यो के ही आहारकऋद्धि उत्पन्न होती है। इसलिए स्त्रीवेदवाले मनुष्यो के आहारकद्विक के विना ग्यारह योग कहे गए है। - पृष्ठ ५१५

(१११) शंका - असयतसम्यग्दृष्टि देवो के अपर्याप्त काल मे औपशमिक सम्यक्त्व कैसे पाया जाता है ?

समाधान - वेदकसम्यक्त्व को उपशमा करके और उपशमश्रेणी पर चढ़कर फिर वहॉ से उतरकर प्रमत्तसयत, अप्रमत्तसयत, असयत और सयतासयत उपशमसम्यग्दृष्टि गुणस्थानो मे मध्यम तेजोलेश्या को परिणमा कर और मरणकरके सौधर्म ऐशान कल्पवासी देवो मे उत्पन्न होने वाले जीवो के अपर्याप्तकाल मे औपशमिकसम्यक्त्व पाया जाता है। तथा उपर्युक्त गुणस्थानवर्ती ही जीव उत्कृष्ट तेजोलेश्या को अथवा जघन्य पद्मलेश्या को परिणमा कर यदि मरण करते है तो औपशमिक सम्यक्त्व के साथ सनत्कुमार और माहेन्द्र कल्प मे उत्पन्न होते है तथा, वे ही उपशमसम्यग्दृष्टि जीव मध्यम पद्मलेश्या को परिणमा कर यदि मरण करते है, तो ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिष्टि, शुक्र और महाशुक्र कल्पो मे उत्पन्न होते है। तथा वे ही उपशम सम्यग्दृष्टि जीव उत्कृष्ट पद्मलेश्या को अथवा जघन्य शुक्ललेश्या को परिणमा कर यदि मरण करते है तो औपशमिक सम्यक्त्व के साथ शतार, सहस्रार कल्पवासी देवो मे उत्पन्न होते है तथा उपशमश्रेणी पर चढ़ करके और पुन उतरे विना ही मध्यम शुक्ललेश्या से परिणत होकर यदि मरण करते है तो उपशमसम्यक्त्व के साथ आनत, प्राणत, आरण, अच्युत और नौग्रैवेयक विमानवासी देवो मे उत्पन्न होते है। तथा पूर्वोक्त उपशम सम्यग्दृष्टि जीव ही उत्कृष्ट शुक्ललेश्या को परिणमा कर यदि मरण करते है तो उपशमसम्यक्त्व के साथ नौ अनुदिश और पाच अनुत्तर - विमानवासी देवो मे उत्पन्न होते है। इस कारण सौधर्म स्वर्ग से लेकर ऊपर के सभी असयतसम्यग्यदृष्टि देवो के अपर्याप्त काल मे औपशमिक - सम्यक्त्व पाया जाता है। - पृष्ठ ५६१

(११२) शका - नौ अनुदिश और पांच अनुत्तर विमानो के पर्याप्तकाल मे औपशमिकसम्यक्त्व किस कारण से नही होता हे ?

समाधान- नौ अनुदिश और पाच अनुत्तर विमानो मे विद्यमान देवो के अपर्याप्तकाल मे औपशमिकसम्यक्त्व तो सभव है, परतु पर्याप्तकाल मे वहॉ पर औपशमिकसम्यक्त्व नही होता है क्योकि मिथ्यादृष्टि जीवो का अभाव है । - पृष्ठ ५६८

(११३) शका - जबकि सयोगकेवली जिनेन्द्र, सज्ञी और असज्ञी इन दोनो ही व्यपदेशो से रहित है, इसलिए सयोगी जिनको अतीत जीवसमासवाला होना चाहिए?

समाधान - नही, क्योकि द्रव्यमन के अस्तित्व और भूतपूर्व न्याय के आश्रय से सयोगिकेवली के सज्ञीपना माना गया है । अथवा पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक,वायुकायिक,प्रत्येकशरीरवनस्पतिकायिक,साधारणवनस्पतिकायिक और त्रसकायिक जीवो के पर्याप्त और अपर्याप्त सबधी चौदह जीवसमासो मे सात अपर्याप्त जीवसमासो मे से कपाट, प्रतर और लोकपूरणसमुद्घातगत सयोगिकेवली का अन्तर्भाव माना जाने से उन्हे अतीत जीवसमास वाला नही कहा है । यही अर्थ सर्वत्र कहना चाहिए । - पृष्ठ ६५४

(११४) शका - औदारिकमिश्रकाययोगी जीवो के द्रव्य से एक कापोतलेश्या ही होने का क्या कारण है ?

समाधान - औदारिकमिश्रकाययोग मे वर्तमान मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि जीवो के शरीर की कापोतलेश्या ही होती है, क्योंकि धवलविस्त्रोपचय सहित छहो वर्णों के कर्मपरमाणुओं के साथ मिले हुए छहो वर्णवाले औदारिकशरीर के परमाणुओं के कापोत वर्ण की उत्पत्ति बन जाती है, इसलिए औदारिकमिश्रकाययोगी जीवो के द्रव्य से एक कापोतलेश्या ही होती है, कपाटसमुद्घातगत सयोगिकेवली के शरीर की भी कापोतलेश्या ही होती है। यहॉ पर भी पूर्व के समान ही कारण कहना चाहिए । - पृष्ठ ६५५

(११५) शका - औदारिकमिश्रकाययोगी जीवो के भाव से छहो लेश्याएं होने का क्या कारण है ?

समाधान - औदारिकमिश्रकाययोग मे वर्तमान मिथ्यादृष्टि और सासादन सम्यग्दृष्टि जीवो के भाव से कृष्ण, नील और कापोत लेश्याए ही होती है और कपाटसमुद्घातगत औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवली के एक शुक्ल लेश्या ही होती है । किन्तु जो देव और नारकी मनुष्यगति मे उत्पन्न हुए है, औदारिकमिश्रकाययोग मे वर्तमान है और जिनकी पूर्वभव

सम्बन्धी भावलेश्याए अभी तक नष्ट नही हुई है,ऐसे जीवो के भाव से छहो लेश्याए पाई जाती है । इसलिए औदारिकमिश्रकाययोगी जीवो क छहो लेश्याए कही गई है । - पृष्ठ ६५५

(११६) शंका - तिर्यंच और मनुष्यो मे उत्पन्न होने वाले सम्यग्दृष्टि अन्तर्मुहूर्त तक अपनी पहली लेश्याओं को नही छोडते हे, इसका क्या कारण हे ?

समाधान - इसका कारण यह है कि बुद्धि मे स्थित है पच परमेष्ठी जिनके अर्थात् - पाच परमेष्ठी के स्वरूप चिन्तवन मे जिनकी बुद्धि लगी हुई है, ऐसे सम्यग्दृष्टि देवो के मरणकाल मे मिथ्यादृष्टि देवो के समान सक्लेश पाया नही जाता है, इसलिये तिर्यच और मनुष्यो मे उत्पन्न होने पर अपर्याप्तकाल मे उनकी पहले की शुभ लेश्याए ज्यो की त्यो बनी रहती हैं । - पृष्ट ६५८

(११७) शंका - नारकी सम्यग्दृष्टि जीव मरते समय अपनी पुरानी कृष्णादि अशुभ लेश्याओं को क्यो नही छोडते है ?

समाधान - इसका कारण यह है कि नारकी जीवो के जातिविशेष से ही अर्थात् स्वभावत सक्लेश की अधिकता होती है, इस कारण मरणकाल मे भी वे उन्हे नही छोड़ सकते है । - पृष्ठ ६५८

(११८) शंका - सयोगिकेवली के मूलशरीर की तो छहो लेश्याएं होती है, फिर उन्हे यहाँ क्यो नही कहते है ?

समाधान - नही, क्योंकि पूर्वाभिमुख केवली के समुद्घात करने पर कपाटसमुद्घात मे जीव के प्रदेश ऊपर ओर नीचे चौदह राजुप्रमाण होते है तथा उत्तर - दक्षिण सात राजु फैल जाते है । तथा उत्तराभिमुख केवली कपाटसमुद्घात के समय ऊपर और नीचे चोदह राजु प्रमाण होते है और पूर्व-पश्चिम एक राजु से लेकर यथास्थान घट-वढ़ विस्तार के अनुसार फैल जाते है । एक राजु से लेकर वढ़े हुए विस्तार से स्थित जीव के प्रदेशो का सख्यात अगुल की अवगाहनावाले पूर्व शरीर के साथ सम्बन्ध नही हो सकता है । यदि सम्वन्ध माना जायगा तो जीव के प्रदेशो के परिमाणवाला ही औदारिक शरीर को होना पडेगा । किन्तु ऐसा नही हो सकता, क्योकि छोटे शरीर के पूर्वोक्त प्रमाणरूप से पसरने (फैलने) की शक्ति का अभाव है । यदि मूलशरीर के कपाटसमुद्घात प्रमाण प्रसरणशक्ति मानी जाय तो फिर उनकी औदारिकमिश्रकाययोगता नही बन सकती है । तथा कपाटसमुद्घातगत केवली का पुराने मूल शरीर के साथ सम्बन्ध है नही, अतएव यही निष्कर्ष निकलता है कि सयोगीकेवली के मूलशरीर की छहो लेश्याए होने पर भी कपाटसमुद्घात समय उनका ग्रहण नही किया जा सकता है । किन्तु

उस समय जो नोकर्मवर्गणाए आती है उन्ही की लेश्या ली जायगी । अत केवली के औदारिकमिश्रकाययोग की अवस्था मे द्रव्य से कापोतलेश्या कही है । (यह उत्तर, समाधान और विशेपार्थ दोनो मे से लिखा गया है) । - पृष्ठ ६६१

(११६) शका - कार्मणकाययोगी अवस्था मे भी कर्मवर्गणाओं के ग्रहण का अस्तित्व पाया जाता है, इस अपेक्षा कार्मणकाययोगी जीवो को आहारक क्यो नही कहा जाता है ?

समाधान - उन्हे आहारक नही कहा जाता है, क्यो कि कार्मणकाययोग के समय नोकर्मवर्गणाओं के आहार का अधिक से अधिक तीन समय तक ग्रहण नही पाया जाता है । - पृष्ठ ६७०

(१२०) शंका - प्रथमोपशमसम्यक्त्व के साथ मन पर्ययज्ञान की उत्पत्ति का निषेध क्यो कहा गया है ?

समाधान- यहॉ मन पर्ययज्ञानी के तीनो सम्यक्त्व वतलाये है, किन्तु इतनी विशेपता है कि द्वितीयोपशमसम्यक्त्व लेना चाहिए । क्योंकि प्रथमोपशमसम्यक्त्व अनादि या सादि मिथ्यादृष्टि ही उत्पन्न करता है और उसके रहने का जघन्य अथवा उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त ही है । यह अन्तर्मुहूर्त काल, सयम को ग्रहण करने के पश्चात् मन पर्ययज्ञान को उत्पन्न करने के योग्य सयम मे विशेपता लाने के लिये जितना काल लगता है, उससे छोटा है । इसलिए प्रथमोपशमसम्यक्त्व के काल मे मन पर्ययज्ञान की उत्पत्ति न हो सकने के कारण मन पर्ययज्ञान के साथ उसके होने का निषेध किया गया है । (यह उत्तर विशेषार्थ मे से लिया है) - पृष्ठ७२६

(१२१) शका - सिद्ध परमेष्ठी के क्या - क्या होता है ।

समाधान- अनाहारी सिद्ध जीवो के आलाप - अतीत गुणस्थान, अतीत जीवसमास, अतीत पर्याप्ति, अतीत प्राण, क्षीण सज्ञा, सिद्धगति, अतीत इन्द्रिय, अकाय, अयोग, अपगतवेद, अकषाय, केवलज्ञान, अनुसयम, केवलदर्शन, अलेश्या, अनुभव्य, क्षायिकसम्यक्त्व, अनुसज्ञी, अनाहारक, साकार - अनाकार उपयोग युगपत् ।

अनाहारी सिद्ध जीवों के आलाप

गु	जी	प	प्रा.	स	ग	इ	का	यो	वे	क	ज्ञा	सय	द.	ले	भ	स	सज्ञि	आ	उ
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	१	०	०	१	०	१	२

धवला पुस्तक -३

(१२२) शंका - द्रव्यप्रमाणानुगम किसे कहते है ?

समाधान - वस्तु के अनुरूप ज्ञान को अनुगम कहते है । अथवा केवली और श्रुतकेवलियो के द्वारा परपरा से आये हुए अनुरूप ज्ञान को अनुगम कहते है। द्रव्यगत प्रमाण के अथवा द्रव्य और प्रमाण के अनुगम को द्रव्यप्रमाणानुगम कहते है। - पृष्ठ ६

(१२३) शंका - निर्देश किसे कहते है ?

समाधान - जिसप्रकार के कथन करने से श्रोताओं को पदार्थ के विपय मे निश्चय होता है उसप्रकार के कथन को निर्देश कहते है । अथवा 'नि' का अर्थ अतिशय है, इससे निर्देश पद का यह अर्थ होता है कि कुतीर्थ अर्थात् सर्वथा एकान्तवाद के प्रतिपादक पाखण्डियो का उल्लंघन करके अतिशय रूप कथन करने को निर्देश कहते है। पृष्ठ ६

(१२४) शंका - द्रव्यप्रमाण के कितने भेद है ?

समाधान तीन भेद है - सख्यात, असख्यात और अनन्त । जो सख्या पचेन्द्रियो का विपय है, वह सख्यात है ।

(१२५) शंका - असंख्यात किसे कहते हे अर्थात् अनन्त से असंख्यात मे क्या भेद है ?

समाधान - एक-एक सख्या के घटाते जाने पर जो राशि समाप्त हो जाती है, वह राशि असख्यात है और जो राशि समाप्त नही होती, वह राशि अनन्त है (अथवा जो राशि अवधिज्ञान का विपय है, वह असख्यात है और उससे ऊपर जो राशि केवलज्ञान का विपय है, वह अनन्त है) । - पृष्ठ २६७

(१२६) शंका - लोक किसे कहते हें ?

समाधान - जगच्छ्रेणी के घन को लोक कहते है । - [illegible]

(त्रिलोकसार पृष्ठ २३ से ४८ पर्यत का भाग)

(१२८) शंका - अवसन्नासन्न किसे कहते है ?

समाधान - जो द्रव्य आदि, मध्य एव अत से रहित हो, एक प्रदेशी हो, इन्द्रियो द्वारा अग्राह्य एव विभाग रहित हो, उसे परमाणु कहते है। इस प्रकार के अनन्तानन्त परमाणु द्रव्यो से एक अवसन्नासन्न स्कन्ध उत्पन्न होता है । - पृष्ठ २३

(१२९) शका - योजन किसे कहते है ?

समाधान - छह अगुल का एक पाद, दो पाद की एक वितस्ति, दो वितस्ति का एक हाथ, चार हाथ का एक धनुष और दो हजार धनुष का एक योजन होता है । - पृष्ठ ४८

(१३०) शंका - द्रव्यप्रमाण के भेद तथा प्रभेदो का स्वरूप क्या है ?

समाधान - द्रव्यप्रमाण के तीन भेद है - सख्यात, असख्यात और अनन्त ।

सख्यात के तीन भेद जानना - जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट । असख्यात के मूल तीन भेद-परीतासख्यात, युक्तासख्यात और असख्यातासख्यात । इन प्रत्येक के जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट भेद से तीन तीन भेद है । अनन्त के मूल तीन भेद है - परीतानन्त, युक्तानन्त और अनन्तानन्त । इन प्रत्येक के भी जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट के भेद से तीन-तीन भेद है । ३+९+९= २१ भेद है ।

(१) **जघन्यसंख्यात** - सख्यात दो से प्रारम्भ होता है, अत २ यह सख्या जघन्य सख्यात है ।

(२) **मध्यमसख्यात** - जघन्य सख्यात से एकादि अङ्क द्वारा वृद्धि को प्राप्त तथा उत्कृष्ट सख्यात से एक-एक अङ्क हीन तक के जितने विकल्प हैं, वे सब मध्यमसख्यात है ।

(३) **उत्कृष्टसंख्यात** - जघन्यपरीतासख्यात मे से एक अङ्क हीन करने पर उत्कृष्टसख्यात की प्राप्ति होती है ।

(४) **जघन्यपरीतासंख्या** - का प्रमाण अनवस्था, शलाका, प्रतिशलाका और महाशलाका ऐसे चार कुड़ो को द्वीपसमुद्रो की गणनानुसार सरसो से भर भरकर निकालने का प्रकार बतलाया गया है । त्रिलोकसार गाथा १२८ से १३५ देखिये ।

(५) **मध्यमपरीतासंख्यात** - जघन्यपरीतासंख्यात से एक आदि अङ्क द्वारा वृद्धि को प्राप्त तथा उत्कृष्टपरीतासख्यात से एक अङ्क हीन तक के जितने विकल्प है, वे सव मध्यमपरीतासख्यात है।

(६) **उत्कृष्टपरीतासंख्यात**- जघन्ययुक्तासख्यात मे से एक अक कम कर देने पर उत्कृष्टपरीतासख्यात प्राप्त होता है।

(७) **जघन्ययुक्तासंख्यात** - जघन्यपरीतासख्यात का विरलन कर प्रत्येक एक-एक अक पर जघन्यपरीतासख्यात ही देय, देकर परस्पर गुणा करने से जो लब्ध प्राप्त हो उतनी सख्या प्रमाण जघन्ययुक्तासख्यात प्राप्त होता है जो आवली सदृश है। अर्थात् जघन्ययुक्तासख्यात की जितनी सख्या है, उतने समयो की एक आवली होती है। जैसे - मान लो जैसे अकसदृष्टि मे जघन्यपरीतासख्यात = ८ है अत जघन्यपरीतासख्यात (८) का विरलन कर उसी को देय देकर परस्पर गुणा करने से (८ ८ ८ ८ ८ ८ ८ ८=१६७७७२१६) जघन्ययुक्तासख्यात का प्रमाण हुआ। १ १ १ १ १ १ १ १

(८) **मध्यमयुक्तासंख्यात** - जघन्ययुक्तासख्यात से एक अधिक और उत्कृष्टयुक्तासख्यात से एक कम करने पर जितने विकल्प वनते है, वे सव मध्यमयुक्तासख्यात है।

(९) **उत्कृष्टयुक्तासंख्यात** - जघन्यअसख्यातासख्यात मे से एक घटाने पर जो प्राप्त होता है, वह उत्कृष्टयुक्तासख्यात का प्रमाण है।

(१०) **जघन्य असंख्यातासंख्यात** - आवली जो जघन्ययुक्तासख्यात प्रमाण है, उसकी कृति (वर्ग) करने पर जघन्य असख्यातासख्यात का प्रमाण प्राप्त होता है।

(११) **मध्यम असंख्यातासख्यात** - जघन्य असख्यातासख्यात से एक आदि अक द्वारा वृद्धि को प्राप्त तथा उत्कृष्ट असंख्यातासख्यात से एक अंक हीन करने पर जो प्रमाण प्राप्त होता है वह मध्यम असंख्यातासंख्यात है।

(१२) **उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात** - जघन्यपरीतानन्त मे से एक अक कम कर देने पर उत्कृष्ट असख्यातासख्यात होता है।

(१३) **जघन्यपरीतानन्त** - त्रिलोकसार गाथा ३८ से ४५ तक देखिए जघन्य असख्यातासख्यात को शलाका, विरलन और देय रूप से स्थापन कर दूसरी विरलन राशि का विरलन कर प्रत्येक एक - एक अक पर देय राशि देकर परस्पर गुणा करना और शलाका, राशि मे से एक अक घटा देना चाहिये। उपर्युक्त देय राशि का परस्पर गुणा करने से उत्पन्न हुई महाराशि का विरलन कर एक - एक प्रत्येक अक पर उसी को देय देना और परस्पर गुणा कर शलाका

राशि मे से एक अक घटा देना चाहिये। इस प्रकार शलाका राशि को समाप्त करने पर जो महाराशि उत्पन्न हो, उसे पूर्वोक्त प्रकार विरलन, देय और शलाका के रूप मे तीन प्रकार स्थापन करके द्वितीय शलाका और तृतीय शलाका का निष्ठापन होने पर जो मध्यम असख्यातासख्यात स्वरूप राशि उत्पन्न हो, उसमे (१) धर्मद्रव्य, (२) अधर्म द्रव्य, (३) एक जीव द्रव्य, (४) लोकाकाश - इन सबके प्रदेश तथा (५) अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति जीवो का प्रमाण, (६) प्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति जीवो का प्रमाण ये छह राशिया मिला देने पर मध्य· असख्यातासख्यात रूप जो महाराशि उत्पन्न हो, उपर्युक्त प्रक्रिया द्वारा शलाका विरलन एव देय रूप से स्थापित कर पुन पुन विरलन देय, गुणन और ऋण रूप क्रिया के द्वारा प्रथम शलाका, द्वितीय शलाका, और तृतीय शलाका राशि की पूर्ववत परिसमाप्ति होने के बाद जो महाराशि उत्पन्न हो उसमे (१) उत्सर्पिणी अवसर्पिणी स्वरूप कल्प काल के समयो का प्रमाण, (२) स्थितिवधाध्यवसाय स्थान, (३) अनुभागवधाध्यवसायस्थान, (४) योग के उत्कृष्ट अविभागप्रतिच्छेद, ये चार राशिया दूसरा प्रक्षेप है। अर्थात् पहले छह राशिया मिलाई थी पुन ये चार राशिया मिलाई इनसे उत्पन्न जो महाराशि उसको पूवोक्त प्रकार शलाका विरलन और देय रूप से स्थापन कर पुन पुन विरलन, देय, गुणन और ऋण रूप क्रिया करके शलाका त्रय निष्ठापन समाप्त करना चाहिए इस अन्तिम प्रक्रिया से जो राशि उत्पन्न हो वह जघन्यपरीतानन्त का प्रमाण है।

(१४) **मध्यमपरीतानन्त** - जघन्यपरीतानन्त से एकादि अक द्वारा वृद्धि को प्राप्त तथा उत्कृष्टपरीतानन्त से एक अक हीन तक के जितने विकल्प है, वे सब मध्यमपरीतानन्त है।

(१५) **उत्कृष्टपरीतानन्त** - जघन्ययुक्तानन्त मे से एक अक कम कर देने पर उत्कृष्टपरीतानन्त प्राप्त होता है। - पृष्ठ ४६

(१६) **जघन्ययुक्तानन्त** - जघन्यपरीतानन्त का विरलन कर प्रत्येक अक पर जघन्यपरीतानन्त ही देय देकर परस्पर गुणा करने से जो लब्ध प्राप्त हो, उतनी सख्या प्रमाण (जघन्यपरीतानन्त) जघन्यपरीतानन्त = जघन्ययुक्तानन्त होता है, जो अभव्य राशि के सदृश है। इसमे से एक अक घटाने पर उत्कृष्टपरीतानन्त होता है। तथा जघन्ययुक्तानन्त का वर्ग ग्रहण करने पर जघन्यअनन्तानन्त होता है, और इसमे से एक अक घटा देने पर उत्कृष्टयुक्तानन्त प्राप्त होता है।

(१७) **मध्यमयुक्तानन्त** - जघन्ययुक्तानन्त मे से एक अक अधिक और उत्कृष्टयुक्तानन्त मे से एक अक हीन करने पर जो प्रमाण प्राप्त होता है, वह सब मध्यमयुक्तानन्त है।

(१८) **उत्कृष्टयुक्तानन्त** - जघन्य अनन्तानन्त मे से एक अक घटाने पर जो लब्ध प्राप्त होता है, वह उत्कृष्टयुक्तानन्त है।

(१९) **जघन्य अनन्तानन्त** - जघन्ययुक्तानन्त का वर्ग (कृति) करने पर जघन्य अनन्तानन्त प्राप्त होता है।

(२०) **मध्यअनन्तानन्त** - जघन्य अनन्तानत से एक अक अधिक और उत्कृष्ट अनन्तानन्त से एक अक हीन तक के सभी विकल्प मध्यम अनन्तानन्त है।

(२१) **उत्कृष्टअनन्तानन्त** - जघन्य अनन्तानन्तरूप राशि का तीन वार पूर्वोक्त प्रकार विरलन, देय, गुणन और ऋणादि क्रिया को पुन· पुन करते हुए प्रथमशलाका, द्वितीयशलाका और तृतीयशलाका को पूर्वोक्त प्रकार से समाप्त करने के वाद मध्यम अनन्तानन्त स्वरूप जो लब्ध प्रमाण प्राप्त हो उसमे (१) सिद्ध राशि, (२) निगोद राशि, (३) प्रत्येक वनस्पति सहित निगोद वनस्पति राशि अर्थात् सम्पूर्ण वनस्पति, (४) जीव राशि से अनन्तगुणी पुद्गल राशि, (५) पुद्गल राशि, से अनन्तानन्त गुणी काल के समयो स्वरूप कालराशि, (६) कालराशि से अनन्त गुणे प्रमाणवाली अलोकाकाश राशि - इन छह राशियो को मिलाने पर जो लब्ध प्राप्त हो, उस महाराशि को तीन बार वर्गित, सवर्गित करना है स्वरूप जिसका ऐसे विरलन, देय, गुणन और ऋणादि क्रियाओं की पुनरावृत्ति द्वारा शलाका त्रय निष्ठापन कर जो विशद राशि उत्पन्न हो, उसमे धर्मद्रव्य और अधर्मद्रव्य के अगुरुलघुगुण के अविभागी प्रतिच्छेदो का प्रमाण मिला देने पर जो लव्ध राशि प्राप्त हो, उसको पुन तीन वार वर्गित, सवर्गित करे अर्थात् पूर्वोक्त प्रकार से विरलनादि क्रिया द्वारा शलाका त्रय की समाप्ति कर जो महाराशि रूप लब्ध प्राप्त होगा वह भी केवलज्ञान के बराबर नही होगा, अत· केवलज्ञान के अविभागप्रतिच्छेदो मे से उक्त महाराशि घटा देने पर जो लब्ध प्राप्त हो, उसको वैसा का वैसा उसी महाराशि मे मिला देने पर केवलज्ञान के अविभागप्रतिच्छेदो के प्रमाण स्वरूप उत्कृष्टअनन्तानन्त प्राप्त हो जावेगा। (त्रिलोकसार का अश यहा पर्यत है)

(१३१) शंका - तिर्यग्लोक का अन्त कहॉ पर होता है ?

समाधान - तीनो वातवलयो से वाह्य भाग मे तिर्यग्लोक का अन्त होता है। - पृष्ठ ३५

(१३२) शंका - अनन्त के कितने प्रकार है ?

समाधान - नामानन्त, स्थापनानन्त, द्रव्यानन्त, शाश्वतानन्त, गणनानन्त, अप्रदेशिकानन्त, एकानन्त, उभयानन्त, विस्तारानन्त, सर्वानन्त और भावानन्त इस प्रकार अनन्त के ग्यारह भेद है। - पृष्ठ ११

१- नामानन्त - उनमे से कारण के विना ही जीव, अजीव और मिश्र द्रव्य की अनन्त ऐसी सज्ञा करना नामानन्त है। - पृष्ठ १२

२- स्थापनानन्त - काष्ठकर्म, चित्रकर्म, पुस्तकर्म, लेप्यकर्म, लेनकर्म, शैलकर्म, भित्तिकर्म, गृहकर्म, भेडकर्म, अथवा दन्तकर्म मे अथवा अक्ष (पासा) हो या कौड़ी हो, अथवा दूसरी कोई वस्तु हो, उसमे यह अनन्त है, इस प्रकार की स्थापना करना यह सव स्थापनानन्त है। - पृष्ठ १२

३- द्रव्यानन्त - द्रव्यानन्त आगम और नोआगम के भेद से दो प्रकार का है, इनका स्वरूप सुगम है। - पृष्ठ १२,१५

४- शाश्वतानन्त - शाश्वतानन्त धर्मादि द्रव्यो मे रहता है, क्योकि धर्मादि द्रव्य शाश्वतिक होने से उनका कभी भी विनाश नही होता है। - पृष्ठ १५

५- गणनानन्त - एक से लेकर अनन्त तक की गणना करना (गिनती करना), यह गणनानन्त है, जो गणनानन्त है वह वहुवर्णनीय और सुगम है।

६- अप्रदेशिकानन्त - एक परमाणु को अप्रदेशिकानन्त कहते है। पृष्ठ १५

७- एकानन्त - लोक के मध्य से आकाश प्रदेशो की एक श्रेणी को देखने पर उसका अन्त नही पाया जाता है, इसलिये उसे एकानन्त कहते है। - पृष्ठ १६

८- उभयानन्त - लोक के मध्य से आकाश प्रदेशपक्ति को दो दिशाओं मे देखने पर उसका अन्त नही पाया जाता है, इसलिये उसे उभयानन्त कहते है। - पृष्ठ१६

९- विस्तारानन्त - आकाश को प्रतररूप से देखने पर उसका अन्त नही पाया जाता है, इसलिये उसे विस्तारानन्त कहते है। - पृष्ठ १६

१०- सर्वानन्त - आकाश को घनरूप से देखने पर उसका अन्त नही पाया जाता है, इसलिये उसे सर्वानन्त कहते है। - पृष्ठ १६

११- भावानन्त - आगम और नोआगम की अपेक्षा भावानन्त दो प्रकार का है। अनन्तविषयक शास्त्र को जाननेवाले और वर्तमान मे उसके उपयोग से उपयुक्त जीव को आगमभावानन्त कहते है। त्रिकालजात अनन्त पर्यायो से परिणत जीवादि द्रव्य, नोआगमभावानन्त है। - पृष्ठ १६

(१३३) शंका - कालप्रमाण की अपेक्षा मिथ्यादृष्टि जीवो का प्रमाण कैसे निकाला जाता है ?

समाधान - एक ओर अनन्तानन्त अवसर्पिणियो और उत्सर्पिणियो के समयो को स्थापित करके और दूसरी ओर मिथ्यादृष्टि जीवो की राशि को स्थापित करके काल के समयो मे से एक - एक समय और उसी के साथ मिथ्यादृष्टि जीवराशि के प्रमाण मे से एक - एक जीव कम करते जाना चाहिये । इस प्रकार उत्तरोत्तर काल के समय और जीवराशि के प्रमाण को कम करते हुए चले जाने पर अनन्तानन्त अवसर्पिणियो और उत्सर्पिणियो के सब समय समाप्त हो जाते है, परन्तु मिथ्यादृष्टि जीवराशि का प्रमाण समाप्त नही होता है । - पृष्ठ २८

(१३४) शंका - बुद्धि से मिथ्यादृष्टि जीव राशि कैसे मापी जाती है ?

समाधान - लोकाकाश के एक - एक प्रदेश पर एक - एक मिथ्यादृष्टि जीव को निक्षिप्त करके एक लोक हो गया । इस प्रकार मन से सकल्प करना चाहिये । इस प्रकार पुन पुन माप करने पर मिथ्यादृष्टि जीवराशि अनन्तलोक प्रमाण होती है इस प्रकार बुद्धि से मिथ्यादृष्टि जीवराशि मापी जाती है । - पृष्ठ ३३

(१३५) शका - प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत जीवो का प्रमाण कितना है ?

समाधान - प्रमत्तसयत जीवो का प्रमाण पाच करोड तेरानवे लाख, अट्ठानवे हजार, दो सौ छह है (५९३९८२०६) । और अप्रमत्तसयत जीवो का प्रमाण दो करोड़ छयानवे लाख, निन्यानवे हजार, एक सौ तीन है (२९६९९१०३) । - पृष्ठ ९०

(१३६) शंका - चारो गुणस्थानो मे (८, ९, १०, ११) उपशमक द्रव्यप्रमाण की अपेक्षा कितने है ?

समाधान - प्रवेश की अपेक्षा एक या दो अथवा तीन और उत्कृष्टरूप से चौवन होते है। यह कथन सामान्य से है । विशेष की अपेक्षा तो आठ समय अधिक वर्षपृथक्त्व के भीतर उपशमश्रेणी के योग्य (लगातार) आठ समय होते है । उनमे से प्रथम समय मे उत्कृष्ट सोलह, दूसरे समय मे उत्कृष्ट चौबीस, तीसरे समय मे उत्कृष्ट तीस, चौथे समय मे उत्कृष्ट छत्तीस, पाचवे समय मे उत्कृष्ट व्यालीस छठे समय मे अडतालीस, सातवे और आठवे इन दोनो समयो मे उत्कृष्ट रूप से चौवन,चौवन जीव तक उपशमश्रेणी पर चढ़ते है ।-पृष्ठ ९०

(१३७) शका - चारो गुणस्थानो के (८, ९, १०, १२) क्षपक और अयोगिकेवली जीव द्रव्य प्रमाण की अपेक्षा कितने है ?

समाधान - प्रवेश की अपेक्षा एक या दो अथवा तीन और उत्कृट रूप से एक सौ आठ है । निरन्तर आठ समयपर्यन्त क्षपकश्रेणी पर चढ़नेवाले जीवो मे पहले समय मे वत्तीस, दूसरे समय मे अडतालीस,तीसरे समय मे साठ, चौथे समय मे वहत्तर, पाचवे समय मे चौरासी, छठे समय मे छयानवे, सातवे समय मे एक सौ आठ और आठवे समय मे एक सौ आठ जीव क्षपकश्रेणी पर चढ़ते है ।-पृष्ठ ९३

गाथा ५५ का विशेषार्थ - पूर्व मे सयोगकेवलियो की सख्या (५२९९४८) वतला आये हैं । उसमे चारो उपशमको की सख्या ११९६ और पाचो क्षपको की सख्या २९९० और मिला देने पर तीनो की सख्या ५३३८३४ हो जाती है ।-पृष्ठ १०१

(१३८) शका - कदाचित् असंख्यातासख्यात अवसर्पिणियो और उत्सर्पिणियो के निकल जाने पर तिर्यचगति के पचेन्द्रिय तिर्यचो का विच्छेद हो जायेगा, क्योंकि पचेन्द्रिय तिर्यच की स्थिति के ऊपर तिर्यचगति मे उनका अवस्थान नही रह सकता है ?

समाधान - यह कोई दोष नही है, क्योंकि एकेन्द्रियो और विकलेन्द्रियो मे से तथा देव, नारकी और मनुष्यो मे से पचेन्द्रिय तिर्यचो मे उत्पन्न होनेवाले जीव सभव है। जो राशि व्ययसहित और आयरहित होती है, उसका ही सर्वथा विच्छेद होता है । परन्तु यह पचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टि राशि तो व्यय और आय इन दोनो सहित है, इसलिये इसका विच्छेद नही होता है । - पृष्ठ २१८

(१३९) शका - जिसप्रकार सम्यग्मिथ्यादृष्टि राशि कदाचित् विच्छिन्न हो जाती है, उसीप्रकार यह भी राशि विच्छिन्न क्यो नही होती है ?

समाधान - नही, क्योंकि वहा पर गुणस्थान के काल से अन्तरकाल वड़ा है, इसलिये सम्यग्मिथ्यादृष्टि राशि का कदाचित् विच्छेद हो जाता है । परतु यहा पचेन्द्रिय तिर्यचो मे भवस्थिति के काल से विरहकाल वड़ा नही है, क्योंकि आगम मे पचेन्द्रिय तिर्यचो के अन्तरकाल का अन्तर्मुहूर्तमात्र उपदेश पाया जाता है और भवस्थिति काल का कुछ अधिक तीन पल्योपम का उपदेश दिया है । इसलिये पचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टि राशि का विच्छेद नही होता है । अथवा नाना जीवो की अपेक्षा पचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टि जीव सर्वकाल रहते है । इस सूत्र से भी पचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टियो का विरहाभाव जाना जाता है । - पृष्ट २१८

(१४०) शका - सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थान से लेकर संयतासंयत गुणस्थान तक प्रत्येक गुणस्थान मे मनुष्य द्रव्यप्रमाण की अपेक्षा कितने है । ?

समाधान - इन चार गुणस्थानो मे प्रत्येक गुणस्थानवर्ती मनुष्यराशि सख्यात है । सासादनसम्यग्दृष्टि मनुष्य बावन करोड़ है । सम्यग्मिथ्यादृष्टि मनुष्य सासादनसम्यग्दृष्टि के प्रमाण से दूने है । असयत सम्यदृष्टि मनुष्य सात सौ करोड़ प्रमाण है । सयतासयतो का प्रमाण तेरह करोड है । कितने ही आचार्य सासादन सम्यग्दृष्टि मनुष्यो का प्रमाण पचास करोड़ कहते है । सम्यग्मिथ्यादृष्टि मनुष्यो का प्रमाण सासादन सम्यग्दृष्टि मनुष्यो के प्रमाण से दूना कहते है । पर पूर्वोक्त प्रमाण का ही ग्रहण करना चाहिये, क्योकि पूर्वोक्ति प्रमाण आचार्य परम्परा से आया हुआ है । - पृष्ठ २५१

(१४१) शंका - जिन जीवो के दो इन्द्रियॉ पाई जाती है, वे द्वीन्द्रिय जीव है - ऐसा ग्रहण करने मे क्या दोष आता है ?

समाधान - नही, क्योंकि उपर्युक्त अर्थ के ग्रहण करने पर अपर्याप्त काल मे विद्यमान जीवो के द्रव्य इन्द्रियॉ नही पाई जाने से उनके नही ग्रहण होने का प्रसग प्राप्त हो जायगा । - पृष्ठ ३११

(१४२) शंका - क्षयोपशम को इन्द्रिय कहते है, द्रव्येन्द्रिय को इन्द्रिय नही कहते है, इसलिये अपर्याप्त काल मे द्रव्यन्द्रियो के नही रहने पर भी द्वीन्द्रियादि पदो के द्वारा उन जीवो का ग्रहण हो जायगा ?

समाधान - नही, क्योंकि यदि इन्द्रिय का अर्थ क्षयोपशम किया जाय तो जिनका क्षयोपशम नष्ट हो गया है, ऐसे सयोगिकेवली को अतिन्द्रियपने का प्रसग आ जाता है। - पृष्ठ ३११

(१४३) शंका - आ जाने दो ?

समाधान - नही, क्योकि सूत्र मे सयोगिकेवली को पचेन्द्रिय कहा है। - पृष्ठ ३११

(१४४) शंका - सयोगिकेवली और अयोगिकेवली के संपूर्ण इन्द्रियां नष्ट हो गई है, अतएव उनके पंचेन्द्रिय यह संज्ञा कैसे घटित होती है ?

समाधान - नही, क्योंकि पचेन्द्रियजाति नामकर्म की अपेक्षा सयोगिकेवली और अयोगिकेवलियो के पचेन्द्रिय संज्ञा बन जाती है । - पृष्ठ ३१७

(१४५) शका - आपर्याप्त काल मे पचेन्द्रियो मे गुणस्थानप्रतिपन्न (प्राप्त) जीव होते है, क्योकि वैक्रियिकमिश्र, औदारिकमिश्र और कार्मणकाययोग मे सम्यग्दर्शन, ज्ञान तथा दर्शन की उपलब्धि पाई जाती है ?

समाधान - यदि ऐसा है तो निर्वृत्ति की अपेक्षा अपर्याप्तको मे गुणस्थानप्रतिपन्न जीवो का अस्तित्व रहा आवे, परन्तु लब्ध्यपर्याप्तको मे गुणस्थानप्रतिपन्न जीवो का अस्तित्व नही है, क्योकि अपर्याप्त नामकर्म के उदय के साथ सम्यग्दर्शन आदि गुणो का सद्भाव मानने मे विरोध आता है । - पृष्ठ ३१८

(१४६) शंका - शरीर ग्रहण होने के प्रथम समय मे दोनो शरीरो मे से किसी एक का उदय होता है, इसलिये विग्रहगति मे रहने वाले जीवो के प्रत्येक शरीर और साधारणशरीर इन दोनो मे से कोई भी संज्ञा नही प्राप्त होती है ?

समाधान - इस शका का समाधान दो प्रकार से किया गया है । एक तो यह कि यद्यपि विग्रह अर्थात् मोडेवाली गति मे उक्त दोनो कर्मों (प्रत्येक, साधारण शरीर) मे से किसी कर्म का उदय नही पाया जाता है, यह ठीक है, फिर भी प्रत्यासत्ति से ऐसे जीव को भी प्रत्येक या साधारण कह सकते है । अर्थात् ऐसा जीव एक दो या तीन समय के अनन्तर ही प्रत्येक या साधारण नामकर्म के उदय से युक्त होने वाला है, अतएव उपचार से उसे प्रत्येक या साधारण कहने मे कोई आपत्ति नही है ।

दूसरे विग्रह का अर्थ मोड़ा न लेकर शरीर ले लेने पर इषुगति की अपेक्षा विग्रहगति मे अर्थात् नूतन शरीर के ग्रहण करने के लिये होने वाली गति मे साधारण या प्रत्येक नामकर्म का उदय पाया ही जाता है, क्योकि इषुगति से उत्पन्न होने वाला जीव आहारक ही होता है । (प्रत्येक या साधारण नामकर्म का उदय शरीर ग्रहण करने के प्रथम समय से लेकर होता है । पृष्ठ ३३४

(१४७) शका - असंयतसम्यग्दृष्टि और सयोगिकेवली औदारिकमिश्रकाययोगी कितने है?

समाधान - औदारिकमिश्रकाययोगी सम्यग्दृष्टि सख्यात ही है । सयोगिकेवली जीव चालीस होते है । इसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है - कपाट समुद्घात मे आरोहण करनेवाले औदारिकमिश्रकाययोगी बीस और उतरते हुए बीस होते है। पृष्ठ ३१७-३१८

(१४८) शंका - सोपक्रमकाल किसे कहते है ?

समाधान - उत्पत्ति को उपक्रमण कहते है और इस सहित काल को सोपक्रमकाल कहते है । - पृष्ठ ४००

(१४६) शंका - वैक्रियिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवो से औदारिक मिश्रकाययोगी सासादन सम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणे किस कारण से है ?

समाधान - यह कोई दोष नही है, क्योकि देवो मे उत्पन्न होनेवाले तिर्यच सासादनसम्यग्दृष्टि जीवो के तिर्यचो मे उत्पन्न होने वाले देव सासादनसम्यग्दृष्टि जीव असख्यागुणे पाये जाते है । - पृष्ठ ४०१

(१५०) शंका - क्या चक्षुदर्शनावरणकर्म के क्षयोपशम से युक्त जीव चक्षुदर्शनी कहे जाते है, या चक्षुदर्शनरूप उपयोग से युक्त जीव चक्षुदर्शनी कहे जाते है ?

समाधान - चक्षुइन्द्रिय के प्रतिघात के नही रहने पर चक्षुदर्शनोपयोग युक्त चक्षुदर्शनावरण के क्षयोपशम वाले जीव चक्षुदर्शनी कहे जाते है। - पृष्ठ ४५४

(१५१) शंका - सर्व सम्यक्त्वो मे संयतो से संयतासंयत और संयतासंयतो से असंयत बहुत होते है, यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान - चूँकि चारित्रावरण मोहनीयकर्म का क्षयोपशम सर्व सम्यत्त्वों मे प्रायः संभव नही है, इसलिये यह माना जाता है कि सर्व सम्यत्त्वो में संयतो से सयतासंयत और संयतासंयतो से असंयत जीव अधिक होते है । - पृष्ठ ४८१

जीवादिक को जानने से ही सम्यग्दर्शनादि मोक्ष के उपाय की प्राप्ति होती है – ऐसा निश्चय करना चाहिये । इस शास्त्र के अभ्यास से जीवादि का जानना यथार्थ होता है । जो संसार है, वह जीव का कर्म का सम्बन्ध रूप है तथा विशेष जानने से इनके सम्बन्ध का अभाव होता है, वही मोक्ष है । इसलिये इस शास्त्र में जीव और कर्म का ही विशेष निरूपण है। अथवा जीवादिक षट्द्रव्य, सप्त तत्त्वादिक का भी इसमे यथार्थ निरूपण है, अतः इस शास्त्र का अभ्यास अवश्य करना ।

धवला पुस्तक - ४

(१५२) शंका - यहाँ क्षेत्रानुयोगद्वार के अवतार का क्या फल हैं ?
समाधान - सत्प्ररूपणा नाम के अनुयोगद्वार से जिनका अस्तित्व जान लिया है तथा द्रव्यानुयोगद्वार मे जिनका सख्यारूप प्रमाण जान लिया है, ऐसे चौदह जीवसमासो के (गुणस्थानो के) क्षेत्रसबधी प्रमाण का जानना ही क्षेत्रानुयोगद्वार के अवतार का फल है। अथवा असख्यात प्रदेशवाले लोकाकाश मे अनन्त प्रमाण वाली जीवराशि क्या समाती है या नही समाती है इस प्रकार के सदेह से घुलने वाले शिष्य के सदेह के विनाश करने के लिए क्षेत्रानुयोगद्वार का अवतार हुआ है । - पृष्ठ २

(१५३) शंका - ओघनिर्देश की अपेक्षा मिथ्यादृष्टि जीव कितने क्षेत्र मे रहते है ?
समाधान - सर्वलोक मे रहते है । - पृष्ठ १०

(१५४) शका - स्वस्थानस्वस्थान नाम किसका है ?
समाधान - अपने उत्पन्न होने के ग्राम मे, नगर मे अथवा अरण्य मे सोना, वैठना, चलना आदि व्यापार से युक्त होकर रहने का नाम स्वस्थानस्वस्थान है । - पृष्ठ २६

(१५५) शंका - विहारवत्स्वस्थान किसका नाम है ?
समाधान - अपने उत्पन्न होने के ग्राम, नगर अथवा अरण्य आदि को छोड़कर अन्यत्र शयन, निषीदन (बैठना) और परिभ्रमण आदि व्यापार से युक्त होकर रहने का नाम विहारवत्स्वस्थान हैं । - पृष्ठ २६

(१५६) शंका - वेदनासमुद्घात किसे कहते है ?
समाधान - नेत्रवेदना, शिरोवेदना, आदि के द्वारा जीवो के प्रदेशो का उत्कृष्त शरीर से तिगुणे प्रमाण विसर्पण (फैलना) का नाम वेदनासमुद्घात है । पृष्ठ २६

(१५७) शंका - कषायसमुद्घात किसे कहते हैं ?
समाधान - क्रोध, भय आदि के द्वारा जीव के प्रदेशो का शरीर से तिगुणे प्रमाण प्रसर्पण (फैलना) का नाम कषायसमुद्घात है । - पृष्ठ २६

(१५८) **शंका - वैक्रियिकसमुद्घात किसे कहते है ?**

समाधान - वैक्रियिकशरीर के उदयवाले देव और नारकी जीवो का अपने स्वाभाविक आकार को छोड़कर अन्य आकार से रहने का नाम वैक्रियिकसमुद्घात है। - पृष्ठ २६

(१५९) **शंका - मारणान्तिकसमुद्घात किसे कहते है ?**

समाधान - अपने वर्तमान शरीर को नही छोडकर ऋजुगति द्वारा अथवा विग्रहगति द्वारा आगे जिसमे उत्पन्न होना है, ऐसे क्षेत्र तक जाकर शरीर से तिगुणे विस्तार से अथवा अन्य प्रकार से अन्तर्मुहूर्त तक रहने का नाम मारणान्तिकसमुद्घात है । - पृष्ठ २७

(१६०) **शंका - तैजसशरीरसमुद्घात किसे कहते है ?**

समाधान - तैजसशरीर के विसर्पण (फैलने) का नाम तैजसशरीरसमुद्घात है। वह दो प्रकार का होता है - निस्सरणात्मक और अनिस्सरणात्मक । उनमे जो निस्सरणात्मक तैजसशरीर विसर्पण है, वह भी दो प्रकार का है प्रशस्त तैजस और अप्रशस्त तैजस।

अप्रशस्तनिस्सरणात्मक तैजसशरीरसमुद्घात, बारह योजन लम्बा, नौ योजन विस्तारवाला, सूच्यगुल के सख्यातवे भाग मोटाईवाला, जपाकुसुम के सदृश लाल वर्णवाला, भूमि और पर्वतादि के जलाने मे समर्थ, प्रतिपक्षरहित, रोषरूप इन्धनवाला, बाये कंधे से उत्पन्न होने वाला और इच्छितक्षेत्र प्रमाण विसर्पण करनेवाला होता है ।

तथा जो प्रशस्तनिस्सरणात्मक तैजसशरीरसमुद्घात है, वह भी विस्तार आदि में तो अप्रशस्त तैजस के ही समान है किन्तु इतनी विशेषता है कि वह हस के समान धवल वर्णमाला है, दाहिने कधे से उत्पन्न होता है प्राणियो की अनुकम्पा के निमित्त से उत्पन्न होता है, और मारी, रोग आदि के प्रशमन करने मे समर्थ होता है । - पृष्ठ २७,२८

(१६१) **शंका - आहारकसमुद्घात किसे कहते है ?**

समाधान - जिनके आहारकादि ऋद्धियाँ प्राप्त हुई है, ऐसे महर्षियो को आहारक समुद्घात होता है। वह हस्तप्रमाण ऊँचा, हस के समान धवल वर्णमाला, सर्वाग सुन्दर, क्षणमात्र मे कई लाख योजन गमन करने मे समर्थ, अप्रतिहत गमनवाला अर्थात् विष, अग्नि एवं शस्त्रादि समस्त बाधाओं से मुक्त, वज्र, शिला, स्तम्भ, जल व पर्वत मे गमन करने में दक्ष, उत्तमाग अर्थात् मस्तक से उत्पन्न होने वाला

तथा जो आज्ञा की अर्थात् श्रुतज्ञान की कनिष्ठता अर्थात् हीनता के होने पर और असयम के परिहार हेतु तपादि कल्याणकत्रय हो, जिन तथा जिनमन्दिर की वन्दनार्थ आहारक शरीर उत्पन्न होता है। यह शरीर अव्याघाति होता है। कदाचित् पर्याप्ति पूर्ण होने पर आयुक्षय होने से इस शरीरधारी मुनि का मरण भी होना सभव है। आहारक तथा तैजस समुद्घात मनुष्यिनी के नही होते (मणुसिणीसुते जाहरणत्थि - खु व) धवला पुस्तक ३ के २८ पृष्ठ तथा गोम्मटसार जीवकाण्ड, महावध भाग १ के २०७ पृष्ठ पर।

(१६२) शंका - केवलीसमुद्घात किसे कहते है ?

समाधान - दड, कपाट, प्रतर और लोकपूरण के भेद से केवलीसमुद्घात चार प्रकार का है। उनमे जिसकी अपने विष्कभ से कुछ अधिक तिगुनी परिधि है, ऐसे पूर्वशरीर के वाहल्यरूप अथवा पूर्वशरीर से तिगुने वाहल्यरूप दडाकार (ऊपर नीचे दडाकार) से केवली के जीवप्रदेशो का कुछ कम चौदह राजु फैलने का नाम दडसमुद्घात है। दडसमुद्घात मे वताया गया वाहल्य और आयाम के द्वारा वातवलय से रहित सपूर्ण क्षेत्र के व्याप्त करने का नाम कपाटसमुद्घात है। केवली भगवान के जीव प्रदेशो का वातवलय से रुके हुए लोकक्षेत्र को छोड़कर सपूर्ण लोक मे व्याप्त होने का नाम प्रतर समुद्घात है। घनलोकप्रमाण केवली भगवान के जीवप्रदेशो का सर्व लोक के व्याप्त करने को केवलीसमुद्घात कहते है। - पृष्ठ २८,२९

(१६३) शंका - ऋजुगति मे आनुपूर्वी नामकर्म का उदय होता है या नही ?

समाधान - ऋजुगति मे आनुपूर्वी नामकर्म का उदय नही होता है, क्योंकि आनुपूर्वी नामकर्म का उदय कार्मणकाययोगवाली विग्रहगति मे ही होता है। ऋजुगति मे तो कार्मणकाययोग न होकर औदारिकमिश्र या वैक्रियिकमिश्रकाययोग ही होता है। इन दोनो मिश्रयोगो मे सस्थान नामकर्म का उदय वताया गया है, आनुपूर्वी का नही। - पृष्ठ ३०

(१६४) शंका - सामान्यलोकादि पांच लोक किसे कहते है ?

समाधान - सामान्यलोक, अधोलोक, ऊर्ध्वलोक, तिर्यक्लोक और मनुष्यलोक ये पाँच लोक है। (१) तीन सौ तेतालीस घनराजु प्रमाण सर्वलोक को सामान्यलोक कहते है। (२) एक सौ छयानवे घनराजु प्रमाण या चार राजु मोटे जगत्प्रतर प्रमाण लोक के अधोभाग को अधोलोक कहते है। (३) एक सौ सैतालीस घनराजु या तीन राजु मोटे जगत्प्रतर प्रमाण लोकके ऊर्ध्व भागको ऊर्ध्वलोक

कहते है। (४) ऊर्ध्वलोक और अधोलोक के मध्य मे स्थित, पूर्व-पश्चिम दिशा मे एक राजु चौडे, उत्तर-दक्षिण दिशा मे सात राजु लम्बे ओर एक लाख योजन ऊचे क्षेत्र को तिर्यकूलोक या मध्यलोक कहते है। (५) ढाई द्वीप प्रमाण विस्तृत अर्थात् पैतालीस लाख योजन चौड़े और एक लाख योजन ऊचे क्षेत्र को मनुष्यलोक कहते है। - पृष्ठ ३१ -३२

(१६५) शंका - भोगभूमि मे विकलेन्द्रिय जीव होते है या नही ?

समाधान - भोगभूमि मे विकलेन्द्रिय जीव नही होते है और वहॉ पर पचेन्द्रिय जीव भी स्वल्प होते है, क्योकि शुभकर्म के उदय की अधिकतावाले वहुत जीवो का होना असभव है। - पृष्ठ ३३

(१६६) शंका - स्वयप्रभ पर्वत के परभाग मे स्थित जीवो की अवगाहना सबसे बड़ी होती है, तो उस बड़ी अवगाहना का क्या प्रमाण है ?

समाधान - शख नामक द्वीन्द्रिय जीव वारह योजन की लम्बी अवगाहनावाला होता है। गोम्ही (गिजाई) नामक त्रीन्द्रिय जीव तीन कोस की लम्बी अवगाहनावाला होता है। भ्रमर नामक चतुरिन्द्रिय जीव एक योजन की लम्बी अवगाहनावाला होता है और महामत्स्य नामक पचेन्द्रिय जीव एक हजार योजन की लम्बी अवगाहनावाला होता है। - पृष्ठ ३३

(१६७) शंका - स्वयंप्रभनगेन्द्र पर्वत के उस ओर जघन्य अवगाहनावाले भी जीव पाये जाते है या नही ?

समाधान - नही, क्योकि जघन्य अवगाहनारूप मूल अर्थात् आदि और उत्कृष्ट अवगाहनारूप अन्त इन दोनो को जोड़कर आधा करने पर भी सख्यात घनागुल देखे जाते है। सख्यात घनागुल कैसे देखे जाते है, स्पष्टीकरण के लिए भ्रमरक्षेत्र के घनफल के निकालने का विधान कहते है - पृष्ठ ३३

स्पष्टीकरण - एक योजन लम्बे, आधे योजन ऊचे और आधे योजन की परिधिप्रमाण विष्कभवाले भ्रमर क्षेत्र को स्थापित करके, विष्कभ के आधे को उत्सेध से गुणा करके जो लब्ध आवे उसे आयाम से गुणित करने पर एक योजन के आठ भागो मे से तीन भाग लब्ध आते है और यही भ्रमरक्षेत्र का योजनो मे घनफल है।

उदाहरण - भ्रमर का आयाम सौयोजन, उत्सेध $\frac{१}{२}$ योजन, विष्कभ $\frac{१}{२}$ योजन की परिधि प्रमाण। $\frac{१}{२}$ योजन की स्थूल परिधि $१\frac{१}{२}$ यो जन $\frac{३}{२} - २ = \frac{३}{४}$

(१७६) शंका - राजुप्रतर प्रमाण पृथिवी ऊपर नही है। देव भी सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवो मे नही उत्पन्न होते है और वायुकायिक जीवो को छोडकर शेष वादर एकेन्द्रिय जीव पृथिवी के बिना अन्यत्र रहते नही है । इसलिए सासादनसम्यग्दृष्टि जीवो के मारणान्तिकक्षेत्र का बारह बटे चौदह ($\frac{१२}{१४}$) भाग का उपदेश घटित नही होता है ?

समाधान - यह कोई दोष नही है, क्योंकि ईषत्प्राग्भार पृथिवी से ऊपर सासादनसम्यग्दृष्टियो का अप्कायिक जीवो मे मारणान्तिकसमुद्घात सभव है तथा एक राजुप्रतर के भीतर सर्वक्षेत्र को व्याप्त करके स्थित आठवी पृथिवी मे उन जीवो के मारणान्तिकसमुद्घात करने के प्रति कोई विरोध भी नही है । - पृष्ठ १६३

(१७७) शका - सासादनसम्यग्दृष्टि जीव, वायुकायिक जीवो मे मारणान्तिक समुद्घात को क्यो नही करते है ?

समाधान - नही, क्योंकि सकल सासादनसम्यग्दृष्टि जीवो का देवो के समान तैजसकायिक और वायुकायिक जीवो मे मारणान्तिकसमुद्घात का आगम मे अभाव माना गया है और पृथिवी के परिणमन स्वरूप विमान, शय्या, शिला, स्तम्भ, स्थूल, तलभाग तथा खडी हुई शालभजिका (पुतली) भित्ति और तोरणादिक उनकी उत्पत्ति के योग्य देखे जाते है । - पृष्ठ १६४

(१७८) शका - सम्यग्मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि जीवो ने अतीतकाल की अपेक्षा कितना स्पर्श किया है ?

समाधान - कुछ कम आठ बटे चौदह भाग स्पर्श किये है । दोनो गुणस्थानो के वर्तमानकाल विशिष्ट क्षेत्र का पहले प्ररूपण किया जा चुका है । सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवो ने स्वस्थान की अपेक्षा सामान्यलोक आदि तीन लोको का असख्यातवा भाग, अढ़ाईद्वीप से असख्यातगुणा तथा तिर्यग्लोक का सख्यातवा भाग स्पर्श किया है । विहारवत्स्वस्थान, वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात और वैक्रियिकसमुद्घातगत सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवो ने कुछ कम आठ वटे चौदह($\frac{८}{१४}$) भाग स्पर्श किया है । (यहा तक ओघ की अपेक्षा कथन है) - पृष्ठ १६६

(१७९) शका - लब्ध्यपर्याप्त मनुष्यों ने अतीत और अनागत काल की अपेक्षा कितना क्षेत्र स्पर्श किया है ?

समाधान - सर्वलोक स्पर्श किया है । स्वस्थानस्वस्थान, वेदना और कषायसमुद्घा-तगत लब्ध्यपर्याप्त मनुष्यो ने सामान्यलोक आदि चार लोको का असख्यातवा

भाग,मनुष्यक्षेत्र का सख्यातवा भाग अथवा सख्यात बहुभाग अतीतकाल मे स्पर्श किया है। मारणान्तिकसमुद्घात और उपपादगत मनुष्यो ने सर्वलोक स्पर्श किया है, क्योकि,उनके सर्वत्र गमनागमन मे कोई विरोध नही। - पृष्ठ २२४

(१८०) शंका - दिशा किसे कहते है ?

समाधान - अपने स्थान से वाण की तरह सीधे क्षेत्र को दिशा कहते है। वे दिशाए छह ही होती है, क्योंकि अन्य दिशाओं का होना असभव है। - पृष्ठ २२६

(१८१) शंका - विदिशा किसे कहते है ?

समाधान - अपने स्थान से कर्णरेखा के आकार से स्थिति क्षेत्र को विदिशा कहते है। - पृष्ठ २२६

(१८२) शंका - मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि भवनत्रिक देवो ने अतीत और अनागत काल की अपेक्षा कितना स्पर्श किया है ?

समाधान - लोकनाली के चौदह भागो मे से कुछ कम साढ़े तीन भाग, आठ भाग और नौ भाग स्पर्श किये है। स्वस्थानस्वस्थान परिणत भवनवासी मिथ्यादृष्टि देवो ने सामान्यलोक आदि चार लोको का असख्यातवा भाग और अढ़ाई द्वीप से असख्यातगुणा क्षेत्र स्पर्श किया है। विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कषाय और वैक्रियिकसमुद्घातगतपदवाले उक्त देवो ने चौदह भागो मे से देशोन साढ़े तीन भाग ($\frac{७}{२८}$) अथवा आठ ($\frac{८}{१४}$) भाग प्रमाण क्षेत्र स्पर्श किया है। भवनवासी देव साढ़े तीन राजु प्रमाण क्षेत्र स्वय ही विहार करते है। - पृष्ठ २२६

(१८३) शंका - साढ़े तीन कैसे हुए ?

समाधान - मदराचल के तलभाग से नीचे तीसरी पृथिवी तक दो राजु और ऊपर सौधर्मकल्प के विमान के शिखर पर स्थित ध्वजादड तक डेढ़ राजु, इस प्रकार मिलकर साढ़े तीन राजु हुए। - पृष्ठ २२६

(१८४) शंका - सनत्कुमारादि से लेकर सहस्रारकल्प तक के मिथ्यादृष्टि आदि चारो गुणस्थानवर्ती देवो ने अतीत और अनागत काल में कितना क्षेत्र स्पर्श किया है ?

समाधान - कुछ कम आठ बटे चौदह भाग स्पर्श किया है। (प्रत्येक का पृथक् - प्रथक् स्पर्श ग्रन्थ मे दिखिएगा)। - पृष्ठ २३७

(१८५) शंका - आनतकल्प से लेकर आरण-अच्युत तक कल्पवासी देवो मे मिथ्यादृष्टि गुणस्थान से लेकर असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान तक के देवो ने अतीत और अनागत काल की अपेक्षा कितना क्षेत्र स्पर्श किया है ?

समाधान - विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कपाय, वैक्रियिक और मारणान्तिक समुद्घात इन पदो से परिणत उक्त जीवो ने कुछ कम छह वटे चौदह (६/१४) भाग स्पर्श किये है, क्योंकि चित्रा पृथिवी के उपरिम तल से नीचे इनके गमन का अभाव है, उक्त मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि देवो का उपपाद की अपेक्षा स्पर्शनक्षेत्र सामान्यलोक आदि चार लोको का असख्यातवा भाग और मनुष्यक्षेत्र से असख्यातगुणा है, क्योंकि पैंतालीस लाख योजन विष्कम्भवाला और सख्यात राजुप्रमाण आयत उक्त देवो का उपपादक्षेत्र भी तिर्यग्लोक के सख्यातवे भाग को नही प्राप्त होता है। सम्यग्मिथ्यादृष्टि देवो के मारणान्तिक समुद्घात और उपपादपद नही होते है। आनत-प्राणत कल्प के उपपादपरिणत असयतसम्यग्दृष्टि देवो ने कुछ कम साढ़े पाच बटे चौदह (११/२८)भाग स्पर्श किये है। आरण और अच्युतकल्प मे उक्त पदपरिणत जीवो ने कुछ कम छह वटे चौदह (६/१४) भाग स्पर्श किये है। इसका कारण यह है कि वैरी देवो के सम्बन्ध से सर्वद्वीप और सागरो मे विद्यमान तिर्यच असयतसम्यग्दृष्टि और संयतासयतो का आरण-अच्युत कल्प मे उपपाद पाया जाता है। - पृष्ठ २३८,२३९

(१८६) शंका - वादर एकेन्द्रिय और वादर एकेन्द्रियपर्याप्त जीवो का सामान्यलोक आदि तीन लोको के संख्यातवे भाग प्रमाण स्पर्श क्षेत्र होने का क्या कारण है ?

समाधान - इसका कारण यह है कि पाच राजु बाहल्यवाला राजुप्रतरप्रमाण क्षेत्र वायुकायिक जीवो से परिपूर्ण है और बादर एकेन्द्रिय जीवो से आठो पृथवियां व्याप्त है। उन पृथवियो के नीचे स्थित बीस-बीस हजार योजन बाहल्यवाले तीन-तीन वातवलयो को और लोकान्त मे स्थित वायुकायिक जीवो के क्षेत्र को एकत्रित करने पर सामान्यलोक आदि तीन लोको का सख्यातवा भाग हो जाता है। इन्ही उक्त जीवो ने अतीतकाल मे भी इतना ही क्षेत्र स्पर्श किया है, क्योंकि विवक्षित पद परिणत इन उक्त जीवो के सभी कालो मे अन्यत्र रहने का अभाव है। - पृष्ठ २४१

(१८७) शंका - पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रियपर्याप्त जीवो नेअतीत और अनागत काल की अपेक्षा कितना क्षेत्र स्पर्श किया है ?

समाधान - विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कषाय और वैक्रिययिकसमुघात परिणत उक्त (दोनों प्रकार के पंचेन्द्रिय जीवों ने आठ बटे चौदह (८/१४) भाग स्पर्श किया हैं, क्योंकि मेरुपर्वत के मूलभाग से ऊपर छह राजुऔर नीचे दो राजु, इस प्रकार आठ राजु क्षेत्र के भीतर सर्वत्र पूर्वपदपरिणत) दोनों प्रकार के पंचेन्द्रिय जीव पाये जाते हैं । मारणान्तिकसमुद्घात और उपपादपदपरिणत उक्त दोनो प्रकार के जीवो ने सर्वलोक स्पर्श किया है, क्योंकि अतीतकाल की यहाँ पर विवक्षा की गई है । - पृष्ठ २४४,२४५

(१८८) शंका - लब्ध्यपर्याप्त पंचेन्द्रिय जीवो ने अतीत और अनागत काल की अपेक्षा कितना स्पर्श किया है ?

समाधान - स्वस्थानस्वस्थान, वेदना और कषायसमुद्घातपरिणत उक्त लब्ध्यपर्याप्त पचेन्द्रिय जीवो ने अतीतकाल मे सामान्यलोक आदि तीन लोको का असख्यातवा भाग, तिर्यग्लोक का सख्यातवां भाग और मनुष्यक्षेत्र से असख्यात गुणा क्षेत्र स्पर्श किया है। यहॉ पर लब्ध्यपर्याप्त पचेन्द्रिय तिर्यच जीवो के समान ही तिर्यग्लोक का सख्यातवा भाग दिखाना चाहिए । यह सूत्रोक्त'वा' शब्द से सूचित अर्थ है। मारणान्तिकसमुद्घात और उपपादपरिणत लब्ध्यपर्याप्त पचेन्द्रिय जीवो ने सर्वलोक स्पर्श किया है, क्योकि सम्पूर्ण लोक मे इन दोनो पदों के साथ सभी पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्त जीवो के गमन और आगमन के प्रतिषेध का अभाव है । - पृष्ठ २४६

(१८९) शंका - बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येक शरीर पर्याप्त जीवो के तिर्यग्लोक के संख्यातवे भाग मात्र स्पर्शनक्षेत्र होने का क्या कारण है ?

समाधान - सर्व पृथवियो मे बादरवनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्त जीव नही होते है, क्योकि चित्रापृथिवी के उपरिम भाग मे ही बादरवनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्त जीव होते है, इस प्रकार आचार्यो का वचन है । अथवा प्रत्येकशरीर पर्याप्त जीव तिर्यग्लोक से सख्यातगुणे क्षेत्र को स्पर्श करते है, क्योकि वादरनिगोदप्रतिष्ठित पर्याप्त जीवो का तिर्यग्लोक से संख्यातगुणा स्पर्शनक्षेत्र स्वीकार किया गया है । तथा प्रत्येकशरीर पर्याप्त जीवो को छोड़कर वादरनिगोद प्रतिष्ठित पर्याप्त नाम के कोई अन्य जीव नही होते है । इसलिए उनका स्पर्शन क्षेत्र तिर्यग्लोक से सख्यातगुणा बन जाता है । - पृष्ठ २५१

(१६०) शंका - वादरनिगोदप्रतिष्ठित जीव सभी प्रत्येक शरीरी ही होते है, यह कैसे जाना?

समाधान - योनीभूत वीज मे वही पूर्व पर्यायवाला जीव अथवा अन्य दूसरा भी जीव सक्रमण करता है और जो वीज, मूलादिक वादरनिगोदप्रतिष्ठित वनस्पतिकायिक जीव है, वे सव प्रथम अवस्था मे प्रत्येक शरीर ही होते है । । - पृष्ठ २५१

(१६१) शंका - वनस्पतिकायिक जीव, निगोद जीव, वनस्पतिकायिक वादर और सूक्ष्म जीव, वनस्पतिकायिक वादर पर्याप्त ओर अपर्याप्त जीव, वनस्पतिकायिक सूक्ष्म पर्याप्त और अपर्याप्त जीव, निगोद वादर पर्याप्त ओर अपर्याप्त जीव, निगोद सूक्ष्म ण्र्याप्त और अपर्याप्त जीवो ने कितना क्षेत्र स्पर्श किया है ?

समाधान - सर्वलोक स्पर्श किया है। स्वस्थान, वेदना, कषाय,मारणान्तिकसमुद्घात और उपपाद, इन पदो से परिणत वनस्पतिकायिक निगोद जीव और उनके सूक्ष्म तथा पर्याप्त और अपर्याप्त जीवो ने तीनो ही कालो मे सर्वलोक स्पर्श किया है। स्वस्थान, वेदना और कपायसमुद्घात पदपरिणत वादर वनस्पतिकायिक, वादरनिगोद उनके पर्याप्त तथा अपर्याप्त जीवो ने तीनो ही कालो मे सामान्यलोक आदि तीन लोको का असंख्यातवा भाग, तिर्यग्लोक से संख्यातगुणा और मनुष्य क्षेत्र से असख्यात गुणा क्षेत्र स्पर्श किया है। मारणान्तिक समुद्घात और उपपादपद परिणत उक्त जीवो ने तीनो ही कालो मे सर्वलोक स्पर्श किया है । - पृष्ठ २५३

(१६२) शंका - औदारिककाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवो ने अतीत और अनागत काल की अपेक्षा कितना क्षेत्र स्पर्श किया है ?

समाधान - स्वस्थानस्वस्थान, विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कषाय और वैक्रियिकपदपरिणत सासादनसम्यग्दृष्टियो ने सामान्यलोक आदि तीन लोको का असंख्यातवा भाग, तिर्यग्लोक का सख्यातवा भाग और मानुषक्षेत्र से असख्यात गुणा क्षेत्र स्पर्श किया है । इन जीवो के उपपाद पद नही होता है । मारणान्तिक पदपरिणत उक्त जीवो ने कुछ कम सात वटे चौदह (७/१४) भाग स्पर्श किये है । - पृष्ठ २६०-२६१

(१६३) शंका - यह कैसे जाना जाता है कि औदारिककाययोगी सयोगिकेवली के कपाट आदि तीन समुद्घात नही होते है ?

समाधान - यह बात सयोगिकेवलियो ने लोक का असख्यात बहुभाग और सर्वलोक स्पर्श किया है, इस सूत्र से निर्दिष्ट नही की गई है । (अत हम जानते है कि औदारिककाययोगी सयोगिजिन मे कपाटादि तीन समुद्घात नही होते है)।

विशेषार्थ - औदारिककाययोगी की अवस्था में केवल एक दड समुद्घात ही होता है, कपाट समुद्घात आदि नही । इसका कारण यह है कि कपाट समुद्घात मे औदारिकमिश्रकाययोग और प्रतर तथा लोकपूरण समुद्घात मे कार्मणकाययोग होता है ऐसा नियम है । इसलिए यहाँ, औदारिककाययोगी की प्ररूपणा करते समय सयोगिकेवली मे कपाट, प्रतर और लोक पूरणसमुद्घात नही होते है, ऐसा कहा है ।- पृष्ठ २६३

(१६४) शंका - वैक्रियिककाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवो ने तीनो कालो की अपेक्षा कितना क्षेत्र स्पर्श किया है ?

समाधान - स्वस्थानस्वस्थानपदपरिणत वैक्रियिककाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवो ने सामान्यलोक आदि तीन लोको का असख्यातवा भाग, तिर्यग्लोक का सख्यातवा भाग और मनुष्यलोक से असख्यात गुणा क्षेत्र का स्पर्श किया है । विहारवत्स्वस्थान वेदना, कषाय और वैकियिकसमुद्घात पदपरिणत उक्त जीवो ने कुछ कम आठ बटे चौदह (८/१४) भाग स्पर्श किये है । यहॉ पर उपपादपद नही होता है (क्योंकि मिश्रयोग और कार्मणकाययोग के सिवाय अन्य योगो के साथ उपपाद पद का सहानवस्थानलक्षण विरोध है) मारणान्तिकसमुद्घात पदपरिणत उक्त जीवो ने (कुछ कम) तेरह बटे चौदह (१३/१४) भाग स्पर्श किये है, जो कि मेरुतल से नीचे छह राजु और ऊपर सात राजु जानना चाहिए । घनाकार लोक को एक रूप के आठ बटे तेरह (८/१३) भाग से कम सत्ताइस ($२६\frac{५}{१३}$) रूपो से खडित करने पर एक खड प्रमाण क्षेत्र का स्पर्श करते है , ऐसा अर्थ कहा गया समझना चाहिए । - पृष्ठ २६६

(१६५) शंका - कार्मणकाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवो ने तीनो कालो की अपेक्षा कितना क्षेत्र स्पर्श किया है ?

समाधान - यहॉ पर उपपाद पद को छोड़कर शेष पद नही है, क्योंकि कार्मणकाययोग की विवक्षा की गई है । उपपाद पद मे वर्तमान सासादनसम्यग्दृष्टि जीव मेरु के मूलभाग से नीचे पाच राजु और ऊपर अच्युतकल्प तक छह राजु प्रमाण क्षेत्र का स्पर्श करते है, इसलिए ग्यारह बटे चौदह (११/१४) भाग प्रमाण स्पर्श किया हुआ क्षेत्र हो जाता है । - पृष्ठ २७०

(१९६) शंका - सनत्कुमार और माहेन्द्रकल्प मे तेजोलेश्या होती है, इसलिए उपपाद का देशोन तीन वटे चौदह (३/१४) भाग प्रमाण स्पर्शन क्षेत्र क्यो नही होता है ?

समाधान - नही, क्योकि सौधर्म और ईशानकल्प से सख्यात योजन ही ऊपर जाकर सनत्कुमार और माहेन्द्रकल्प प्रारम्भ होकर डेढ़ राजु ($1\frac{1}{2}$) पर समाप्त हो जाता है । - पृष्ठ २९६

(१९७) शका - शुक्ललेश्यावाले तिर्यंच, शुक्ललेश्यावाले देवो मे नही उत्पन्न होते है, यह कैसे जाना ?

समाधान - चूकि, पाच वटे चौदह भाग प्रमाण स्पर्शनक्षेत्र के उपदेश का अभाव है, इससे जाना जाता है कि शुक्ललेश्यावाले तिर्यच जीव मरकर शुक्ललेश्यावाले देवो मे नही उत्पन्न होते है । - पृष्ठ ३००

(१९८) शंका - उपपादगत असंयत्त क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवो का स्पर्शनक्षेत्र तिर्यग्लोक के संख्यातवे भाग प्रमाण कैसे पाया जाता है ?

समाधान - तिर्यचो मे उत्पन्न होनेवाले वद्धायुष्क क्षायिकसम्यग्दृष्टि मनुष्यो के असख्यात द्वीपो मे रह करके पुन मरणकर सौधर्म और ईशानकल्पो मे उत्पन्न होनेवाले क्षायिकसम्यग्दृष्टियो से स्पर्शित क्षेत्र को तथा वहा से चयकर मनुष्यो मे उत्पन्न होनेवाले क्षायिकसम्यग्दृष्टियो के स्पर्शित क्षेत्र को ग्रहण करके तिर्यग्लोक के सख्यातवे भाग प्रमाण स्पर्शन क्षेत्र पाया जाता है ।-पृष्ठ ३०२

(१९९) शंका - यह काल किसका है, अर्थात् काल का स्वामी कौन है ?

समाधान - जीव और पुद्गलो का अर्थात् ये दोनो काल के स्वामी है, क्योंकि काल तत्परिणामात्मक है । अथवा परिवर्तन या प्रदक्षिणा लक्षणवाले इस सूर्यमडल के उदय और अस्त होने से दिन और रात्रि आदि की उत्पत्ति होती है । - पृष्ठ ३२०

(२००) शका - काल किससे किया जाता है, अर्थात् काल का साधन क्या है ?

समाधान- परमार्थकाल से काल, अर्थात् व्यवहारकाल निष्पन्न होता है।-पृष्ठ ३२८

(२०१) शंका - काल कहॉ पर है अर्थात् काल का अधिकरण क्या है ?

समाधान - त्रिकालगोचर अनन्त पर्यायो से परिपूरित एक मात्र मानुषक्षेत्रसम्बन्धी सूर्यमडल मे ही काल है, अर्थात् काल का आधार मानुषक्षेत्रसम्बन्धी सूर्यमडल है । - पृष्ठ ३२०

(२०२) शंका - सासादनसम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्व को क्यो नही प्राप्त कराया गया? अर्थात् सासादनसम्यग्दृष्टि को भी मिथ्यात्व गुणस्थान मे पहुँचाकर उसका जघन्य काल क्यो नही बतलाया ?

समाधान - नही, क्योकि सासादनसम्यक्त्वसे पीछे आनेवाले, अतितीव्र सक्लेश वाले मिथ्यात्वरूपी तृष्णा से विडम्बित मिथ्यादृष्टि जीव के जघन्य काल से गुणान्तरसक्रमण का अभाव है अर्थात् सासादनगुणस्थान से आया हुआ मिथ्यादृष्टि अति शीध्र अन्य गुणस्थान को प्राप्त नही हो सकता । - पृष्ठ ३२५

(२०३) शंका - प्रथम समय मे गृहीत पुद्गलपुंज द्वितीय समय मे निर्जीर्ण हो, अकर्मरूप अवस्था को धारण कर, पुनः तृतीय समय मे उसी ही जीव मे नोकर्मपर्याय से परिणत हो जाता है, यह कैसे जाना ?

समाधान - क्योंकि आबाधाकाल के बिना ही नोकर्म के उदय आदि के निषेको का उपदेश पाया जाता है । - पृष्ठ ३२७

(२०४) शंका - त्रिकाल में भी असंयतसम्यग्दृष्टिराशि का व्युच्छेद क्यो नहीं होता?

समाधान - ऐसा स्वभाव ही है । - पृष्ठ ३४६

(२०५) शंका - अपूर्वकरण आदि चारो क्षपक और अयोगिकेवली कितने काल तक होते है ?

समाधान - नाना जीवो की अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

खुलासा - सात, आठ जन अथवा अधिक से अधिक एक सौ आठ अप्रमत्तसयत जीव अप्रमत्तकाल के क्षीण हो जाने पर, अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती क्षपक हुए। वहॉ पर अन्तर्मुहूर्त काल रह करके अनिवृत्तिकरण गुणस्थान को प्राप्त हुए । इसी प्रकार से अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय, क्षीणकषायवीतरागछद्मस्थ और अयोगिकेवली इन चारो क्षपको के जघन्य काल और उत्कृष्ट काल की प्ररूपणा जान करके कहलाना चाहिए । - पृष्ठ ३५४

(२०६) शंका - एक जीव की अपेक्षा चारो क्षपको का जघन्य और उत्कृष्ट काल कितना है ?

समाधान - एक अप्रमत्तसयत जीव अपूर्वकरण क्षपक हुआ, वहॉ पर सर्वोत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त काल तक रह करके अनिवृत्तिकरण गुणस्थान को प्राप्त हुआ । यह एक जीव को आश्रय करके अपूर्वकरण का उत्कृष्ट काल हुआ । इसी प्रकार से चारो क्षपको का काल जान करके कहना चाहिए । यहां पर जघन्य और उत्कृष्ट, ये दोनो ही काल सदृश है, क्योंकि अपूर्वकरण आदि के परिणामो की अनुकृष्टि का अभाव होता है । - पृष्ठ ३५५

(२०७) शंका - 'कर्मस्थिति' इस प्रकार कहने पर क्या सर्व कर्मों की स्थितियां ग्रहण की जा रही हैं अथवा एक ही कर्म की स्थिति ग्रहण की जा रही है ?

समाधान - सर्वकर्मों की स्थितिया नही ग्रहण की जा रही है, किन्तु एक मोहकर्म की ही स्थिति यहाँ पर 'कर्मस्थिति' शब्द से ग्रहण की जा रही है, क्योंकि इस प्रकार का गुरु का उपदेश है। उसमे भी केवल दर्शनमोहनीय कर्म की ही सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट स्थिति का ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि वही प्रधान है। - पृष्ठ ४०२

(२०८) शंका - दर्शनमोहनीय कर्म की स्थिति को प्रधानता कैसे ?

समाधान - क्योंकि, उसमे सर्व कर्मों की स्थिति सगृहीत है। - पृष्ठ ४०३

(२०९) शंका - त्रसकायिक जीवो का अन्तर्मुहूर्त काल है, ऐसा न कहकर 'क्षुद्रभवग्रहण प्रमाण काल है' ऐसा क्यो नही कहा ?

समाधान - नही, क्योंकि क्षुद्रभवग्रहण के काल को देखकर अर्थात् उसकी अपेक्षा जघन्य मिथ्यात्व का काल और भी छोटा है। - पृष्ठ ४०७

(२१०) शंका - अप्रमत्तसंयत के व्याघात किसलिए नही है ?

समाधान - क्योंकि, अप्रमाद और व्याघात इन दोनों का सहानवस्थानलक्षण विरोध है। इसलिए अप्रमत्तसयत के व्याघात नही होता है। - पृष्ठ ४१२

(२११) शंका - एक जीव की अपेक्षा औदारिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवों का जघन्य काल कितना है ?

समाधान - जैसे - एकेन्द्रिय जीव अधोलोक के अन्त मे स्थित और क्षुद्रभवग्रहण प्रमाण आयुस्थितिवाले सूक्ष्मवायुकायिको मे तीन विग्रह करके उत्पन्न हुआ। वहाँ पर तीन समय कम क्षुद्रभवग्रहणकाल तक लब्ध्यपर्याप्त हो जीवित रह कर मरा। पुन विग्रह करके कार्मणकाययोगी हो गया। इस प्रकार से तीन समय कम क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण औदारिकमिश्रकाययोग का जघन्य काल सिद्ध हुआ। पृष्ठ ४१९

(२१२) शंका - एक जीव की अपेक्षा औदारिकमिश्रकाययोगी असंयतसम्यग्दृष्टि का उत्कृष्टकाल कितना है ?

समाधान - अन्तर्मूहूर्त है। - पृष्ठ ४२२

(२१३) शंका - यह उत्कृष्ट काल किस जीव के होता है ?

समाधान - तैतीस सागरोपम काल तक सुख से लालित - पालित हुए तथा दुखो से रहित सर्वार्थसिद्धिविमानवासी देव के विष्ठा, मूत्र, आतड़ी, पित्त, खरीस (कफ), चर्बी, नासिकामल, लोहू, और शुक्र व्याप्त, अति दुर्गन्धित, कुत्सितरस, दुर्वर्ण और दुष्ट स्पर्शवाले चमार के कुड के सदृश मनुष्य के गर्भ मे उत्पन्न होने पर औदारिकमिश्रकाययोग का उत्कृष्ट काल होता है, क्योंकि उसके विग्रह गति मे तथा उसके पश्चात् भी मंदयोग होता है, इस प्रकार का आचार्यपरम्परागत उपदेश है । मदयोग से अल्प पुद्गलों को ग्रहण करने वाले जीव के औदारिकमिश्रकाययोग का काल दीर्घ होता है, यह अर्थ कहा गया है । अथवा, यहॉ पर चाहे योगकाल बड़ा ही रहा आवे और योग के वश से पुद्गल भी बहुत से आते रहे, तो भी उक्त प्रकार के जीव के अपर्याप्तकाल बड़ा ही होता है, क्योंकि विलास से दूषित जीव के शीघ्रतापूर्वक पर्याप्तियो के सम्पूर्ण करने मे असामर्थ्य है । - पृष्ठ ४२३

(२१४) शंका - औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेवली कितने काल तक होते है ?

समाधान - नाना जीवो की अपेक्षा जघन्य से एक समय होते है । - पृष्ठ ४२३

(२१५) शंका - यह एक समय किसके होता है ?

समाधान - दडसमुद्घात से कपाट समुद्घात को प्राप्त होकर वहा एक समय रहकर प्रतरसमुद्घात को प्राप्त हुए सात आठ केवलियो के यह एक समय होता है । अथवा [1]रुचक समुद्घात से कपाटसमुद्घात को प्राप्त होकर और एक समय रह करके दडसमुद्घात को प्राप्त होने वाले केवलियो के यह एक समय होता है । - पृष्ठ ४२३

(२१६) शंका - वैक्रियिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टि जीव कितने काल तक होते है ?

समाधान - नाना जीवो की अपेक्षा जघन्य से एक समय होते है । जैसे- सात आठ जन, अथवा बहुत से सासादनसम्यग्दृष्टि जीव अपने गुणस्थान के काल मे एक समय अवशेष रहने पर देवो मे उत्पन्न हुए और द्वितीय समय मे सबके सब मिथ्यात्व को प्राप्त हुए । इस प्रकार एक समय प्राप्त हो गया । - पृष्ठ ४२६

नोट - १ लोकपूरण से लौटते समय प्रतरसमुद्घात को ही रुचक समुद्घात कहते हैं ।

(२१७) शंका - यहॉ पर (अर्थात् एक जीव की अपेक्षा तीनो अशुभ लेश्यावाले जीवो का जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहते समय) योगपरावर्तन के समान एक समयरूप जघन्य काल क्यो नही पाया जाता है ?

समाधान- नही, क्योंकि योग और कषायो के समान लेश्या से लेश्या के परिवर्तनद्वारा अथवा गुणस्थान के परिवर्तनद्वारा अथवा मरण और व्याघात द्वारा एक समय काल का पाया जाना असभव है । इसका कारण यह है कि न तो लेश्यापरिवर्तन के द्वारा एक समय पाया जाता है, क्योंकि विवक्षित लेश्या से परिणत हुए जीव के द्वितीय समय मे उस लेश्या के विनाश का अभाव हे । तथा इसी प्रकार विवक्षित लेश्या के साथ अन्य गुणस्थान को गये हुए जीव के द्वितीय समय मे अन्य लेश्या मे जाने का भी अभाव है । न गुणस्थानपरिवर्तन की अपेक्षा एक समय सभव है, क्योकि विवक्षित लेश्या से परिणत हुए जीव के द्वितीय समय मे अन्य गुणस्थान के गमन का अभाव है । न व्याघात की अपेक्षा ही एक समय सभव है, क्योंकि एक समय मे, वर्तमान लेश्या के व्याघात का अभाव है। और न मरण अपेक्षा ही एक समय सभव है, क्योंकि विवक्षित लेश्या से परिणत हुए जीव के द्वितीय समय मे मरण का अभाव है । - पृष्ठ ४५६

(२१८) शंका - उपशमसम्यग्दृष्टि असयम और संयमासंयत का एक जीव की अपेक्षा उत्कृष्ट काल कितना है ?

समाधान - अन्तर्मुहूर्त है । जैसे-दो मिथ्यादृष्टि जीव है । उनमे से एक उपशमसम्यक्त्व को और दूसरा देशसयम को प्राप्त हुआ । वहाँ वे दोनो ही जीव सर्वोत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त काल रह करके सम्यग्मिथ्यात्व, मिथ्यात्व अथवा वेदकसम्यक्त्व इन तीनो मे से किसी एक को प्राप्त हुए । - पृष्ठ ४८३

(२१९) शंका - एक जीव की अपेक्षा संज्ञी मिथ्यादृष्टि जीवो का उत्कृष्ट काल कितना है ?

समाधान - सागरोपमशतपृथक्त्व है । जैसे - कोई एक असज्ञी जीव सज्ञियो मे उत्पन्न हुआ और सागरोपमशतपृथक्त्व के अन्त तक सज्ञियो मे ही भ्रमण करके पुन असज्ञित्व को प्राप्त हुआ । - पृष्ठ ४८५

(२२०) शंका - एक जीव की अपेक्षा आहारक मिथ्यादृष्टि जीवो का उत्कृष्ट काल कितना है ?

समाधान - जैसे - एक मिथ्यादृष्टि जीव विग्रह करके (आहारक मिथ्यादृष्टियो मे) उत्पन्न हुआ । अगुल के असंख्यातवे भाग प्रमाण असख्यातासख्यात अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी तक उनमे परिभ्रमण करता हुआ आहारक रहा । पुन अन्त मे विग्रह करके अनाहारकपने को प्राप्त हुआ । इस प्रकार से आहारक मिथ्यादृष्टि जीवो का उत्कृष्ट काल अगुल के असख्यातवे भाग प्रमाण सिद्ध हो जाता है । - पृष्ठ ४८७

जो यह शास्त्राभ्यास ज्ञानधन है, वह अविनाशी है, भयरहित है, धर्मरूप है, स्वर्ग-मोक्ष का कारण है; अत. महत पुरुष तो धनादिक को छोडकर शास्त्राभ्यास मे ही लगते हैं, और तू पापी शास्त्राभ्यास को छोड़कर धन पैदा करने की बढ़ाई करता है, तो तू अनन्त ससारी है ।

तूने कहा कि प्रभावनादि धर्म भी धन से होता है, किन्तु वह प्रभावनादि धर्म तो किचित् सावद्य क्रिया सयुक्त है; इसलिये समस्त सावद्यरहित शास्त्राभ्यासरूप धर्म है, वह प्रधान है । यदि ऐसा न हो तो गृहस्थ अवस्था मे प्रभावनादि धर्म साधन थे, उनको छोडकर सयमी होकर शास्त्राभ्यास मे किसलिये लगते हैं ?

शास्त्राभ्यास करने से प्रभावनादि भी विशेष होती है ।

तूने कहा कि धनवान के निकट पंडित भी आकर रहते हैं । सो लोभी पंडित हो और अविवेकी धनवान हो, वहां ऐसा होता है । और शास्त्राभ्यास वालो की तो इन्द्रादिक भी सेवा करते हैं । यहा भी बडे-बडे महंत पुरुष दास होते देखे जाते हैं, इसलिये शास्त्राभ्यासवालो से धनवानो को महत न जान ।

तूने कहा कि धन से सर्व-कार्य-सिद्धि है(किन्तु ऐसा नहीं है ।) उस धन से तो इस लोक सम्बन्धी कुछ विषयादिक कार्य इस प्रकार के सिद्ध होते हैं, जिससे बहुत काल तक नरकादिक के दु:ख सहन करने पडते हैं और शास्त्राभ्यास से ऐसे कार्य सिद्ध होते हैं कि जिससे इस लोक-परलोक मे अनेक सुखो की परम्परा प्राप्त होती है, इसलिये धन पैदा करने के विकल्प को छोड़कर शास्त्राभ्यास करना और जो ऐसा सर्वथा न बने तो संतोष पूर्वक धन पैदा करने का साधन कर शास्त्राभ्यास मे तत्पर रहना ।

धवला पुस्तक ५

(इस पुस्तक के कितने ही प्रश्नो के उत्तर सक्षिप्त मे लिखे हुए है विशेप खुलासा के लिए ग्रन्थ को देखिए)

(२२१) शंका - ओघ से मिथ्यादृष्टि जीवो का अन्तर कितने काल होता है ?
समाधान - नाना जीवो की अपेक्षा अन्तर नही है, निरन्तर है । पृष्ठ ४

(२२२) शंका - एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर काल कितना है ?
समाधान- जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है । जैसे एक मिथ्यादृष्टि जीव, सम्यग्मिथ्यात्व, अविरतसम्यक्त्व, सयमासयम और सयम मे वहुतवार परिवर्तित होता हुआ परिणामो के निमित्त से सम्यक्त्व को (असयतसम्यग्दृष्टि को) प्राप्त हुआ और वहॉ पर सर्वलघु अन्तर्मुहूर्तकाल तक सम्यक्त्व के साथ रहकर मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ । इस प्रकार से सर्वजघन्य अन्तर्मुहूर्त प्रमाण मिथ्यात्व गुणस्थान का अन्तर प्राप्त हो गया। - पृष्ठ ५

(२२३) शका - मिथ्यात्व का उत्कृष्ट अन्तर कितना है ?
समाधान- कुछ कम दो छयासठ सागरोपम काल है । (विशेष खुलासा के लिए ग्रन्थ को देखिए) पृष्ठ ६,७

(२२४) शंका - सासादन सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवो का जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर काल कितना है ?
समाधान- नाना जीवो की अपेक्षा जघन्य काल एक समय होता है और उत्कृष्ट अन्तर पल्योपम के असख्यातवे भाग है । पृष्ठ ७-८

(२२५) शंका - सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान का एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल कितना है ?
समाधान - जघन्य अन्तर सासादनसम्यग्दृष्टि का पल्योपम के असख्यातवे भाग और सम्यग्मिथ्यादृष्टि का अन्तर्मुहूर्त है । पृष्ठ ६

(२२६) शंका - पल्योपम के असंख्यातवे भाग प्रमाण काल के स्थान मे अन्तर्मुहूर्त कालद्वारा सासादन गुणस्थान को क्यो नही प्राप्त कराया ?

समाधान- नही,क्योंकि उपशमसम्यक्त्व के बिना सासादन गुणस्थान के ग्रहण करने का अभाव है। उपशमसम्यक्त्व का उत्कृष्ट अन्तर काल पल्योपम के असख्यातवे भाग प्रमाण है इसलिए उपशमसम्यक्त्व का अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त नही वन सकता । - पृष्ठ १०

(२२७) शंका - वही जीव उपशमसम्यक्त्व को भी अन्तर्मुहूर्त काल के पश्चात् ही क्यों नही प्राप्त होता है ?

समाधान - नही,क्योंकि,उपशमसम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्व को प्राप्त होकर,सम्यक्त्व प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति की उद्वेलना करता हुआ,उनकी अन्त कोड़ाकोड़ीप्रमाण स्थिति को घात करके जबतक सागरोपम से अथवा सागरोपम पृथक्त्व से नीचे नही करता है, तब तक उपशम सम्यक्त्व का ग्रहण करना संभव नही है। -पृष्ठ १०

(२२८) शंका - सम्यक्त्वप्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति की स्थितियो का अन्तर्मुहूर्तकाल मे घात करके सागरोपम से,अथवा सागरोपमपृथक्त्व काल से नीचे क्यो नही करता ?

समाधान - ऐसा स्वभाव हे; क्योकि पल्योपम के असख्यातवे भाग प्रमाण आयाम वाले तथा अन्तर्मुहूर्त उत्कीरणकाल वाले उद्वेलनाकाडको से घात की जानेवाली सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति की स्थिति का पल्योपम के असंख्यातवे भाग प्रमाण काल के विना सागरोपम, अथवा सागरोपम पृथक्त्व प्रमाण स्थिति से नीचे पतन नही हो सकता है। - पृष्ठ १०

(२२९) शंका - सासादन गुणस्थान से पीछे लौटे हुए मिथ्यादृष्टि जीव को संयम ग्रहण कराकर और दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृतियो का उपशमन कराकर पुनः चारित्रमोह का उपशम करा और नीचे उतारकर सासादन गुणस्थान को प्राप्त हुए जीव के अन्तर्मुहूर्त प्रमाण अन्तर क्यो नही बताया ?

समाधान- नहीं, क्योंकि, उपशमश्रेणी से उतरने वाले जीवो के सासादनगुणस्थान में गमन करने का अभाव है । पृष्ठ १०-११

(२३०) शंका - सासादन और सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान का उत्कृष्ट अन्तर कितना है?

समाधान - उक्त दोनो गुणस्थानों का उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गल परावर्तन

प्रमाण है अर्थात् एक समय अधिक चौदह अन्तर्मुहूर्तों से कम अर्धपुद्गलपरावर्तन सासादनसम्यग्दृष्टि का तथा चौदह अन्तर्मूहूर्तों से कम अर्धपुद्गलपरावर्तन सम्यग्मिथ्यात्वगुणस्थान का उत्कृष्ट अन्तरकाल होता है । - पृष्ठ ११,१२,१३

(२३१) शंका - असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान से लेकर अप्रमत्तसंयत गुणस्थान तक के प्रत्येक गुणस्थानवर्ती जीवो का अन्तर कितने काल तक होता है ?

समाधान - नाना जीवो की अपेक्षा अन्तर नही है,निरन्तर है । - पृष्ठ १३

(२३२) शंका - ४ से ७ वे तक के गुणस्थानो का एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल कितना है ?

समाधान - जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है । चौथे, पाचवे,छट्ठे गुणस्थान का खुलासा सुगम है । एक अप्रमत्तसयत जीव उपशमश्रेणि पर चढ़कर पुन: लौटा और अप्रमत्तसयत हो गया । इस प्रकार से अन्तर्मुहूर्त प्रमाण जघन्य अन्तर अप्रमत्तसयत का उपलब्ध हुआ । - पृष्ठ १४

(२३३) शंका - नीचे के प्रमत्तादि गुणस्थानो मे भेजकर अप्रमत्तसंयत का जघन्य अन्तर क्यों नही बताया ?

समाधान - नही,क्योंकि,उपशमश्रेणी के सभी गुणस्थानो के कालो से प्रमत्तादि नीचे के एक गुणस्थान का काल भी सख्यातगुणा होता है। - पृष्ठ १४

(२३४) शंका - उक्त असंयतादि चारों गुणस्थानो का उत्कृष्ट अन्तरकाल कितना है?

समाधान - उक्त चारो गुणस्थानो का उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्धपुद्गलपरावर्तन प्रमाण है । ग्यारह, ग्यारह अन्तर्मुहूर्तों से कम अर्धपुद्गलपरावर्तन काल असयतसम्यग्दृष्टि और सयतासंयतगुणस्थान का तथा दश,दश अन्तर्मुहूर्तकम प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानो का उत्कृष्ट अन्तर है । - पृष्ठ १५,१६,१७ (विशेष के लिए ग्रन्थ देखिए)

(२३५) शंका - उपशमश्रेणी के चारो उपशामको का जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर कितना होता है ?

समाधान - नाना जीवो की अपेक्षा जघन्य से एक समय अन्तर है । तथा उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है । - पृष्ठ १७ - १८

(२३६) शंका - चारो उपशमकों का एक जीव की अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर कितना होता है ?

समाधान - एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल है । अट्ठाईस अन्तर्मुहूर्तो से कम अर्धपुद्गलपरावर्तन काल अपूर्वकरण का, छब्बीस अन्तर्मुहूर्त कम अनिवृत्तिकरण का, चौबीस अन्तर्मुहूर्त कम सूक्ष्मसांपराय का और बाईस अन्तर्मुहूर्त कम अर्धपुद्गलपरावर्तन काल उपशान्तकषाय उपशामको का उत्कृष्ट अन्तर होता है।-पृष्ठ१६-२०

(२३७) शंका - चारों क्षपक और अयोगिकेवली का नाना जीवो की अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल कितना है ?

समाधान - नाना जीवो की अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय तथा उत्कृष्ट अन्तर छह मास है । - पृष्ठ २०-२१

(२३८) शंका - एक जीव की अपेक्षा उक्त चारो क्षपको का और अयोगिकेवली का (जघन्य और उत्कृष्ट) अन्तर काल कितना है ?

समाधान - अन्तर नही है,निरंतर है । - पृष्ठ २१

(२३९) शंका - सयोगिकेवलियों का नाना जीव और एक जीव की अपेक्षा कितना अन्तर है ?

समाधान - अन्तर नही है,निरंतर है । - पृष्ठ २१

(२४०) शंका - तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीवों का एक जीव की अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर काल कितना है ?

समाधान - कुछ कम तीन पल्योपम है। इसका उदाहरण- मोहकर्म की अट्ठाईस प्रकृत्तियो की सत्तावाला कोई एक तिर्यच अथवा मनुष्य तीन पल्योपम की आयुस्थितिवाले कुक्कुट, मर्कट आदि मे उत्पन्न हुआ और दो मास गर्भ मे रहकर निकला । (इस विषय मे दो उपदेश है। वे इस प्रकार है (१) तिर्यचो मे उत्पन्न हुआ जीव,दो मास और मुहूर्त पृथक्त्व से ऊपर सम्यक्त्व और सयमासंयम को प्राप्त करता है । मनुष्यों में गर्भकाल से प्रारम्भकर अन्तर्मुहूर्त से अधिक आठ वर्षो के व्यतीत हो जाने पर सम्यक्त्व सयम और संयमासंयम को प्राप्त होता है। यह आचार्य-परम्परागत है । (२) तिर्यचों में उत्पन्न हुआ जीव तीन पक्ष,तीन दिवस और अन्तर्मुहूर्त के ऊपर सम्यक्त्व और संयमासंयम को प्राप्त होता है यह कथन आचार्यपरंपरा से अनागत है)

पुन मुहूर्तपृथक्त्व से विशुद्ध होकर वेदकसम्यक्त्व को प्राप्त हुआ। पश्चात् अपनी आयु के अन्त मे आयु को बाधकर मिथ्यात्व को प्राप्त हुआ। पुन. सम्यक्त्व को प्राप्त हो काल करके (मरण करके) सौधर्म-ऐशान देवो मे उत्पन्न हुआ। इस प्रकार आदि के मुहूर्तपृथक्त्व से अधिक दो मासो से और आयु के अवसान मे उपलब्ध दो अन्तर्मुहूर्तो से कम तीन पल्योपमकाल मिथ्यात्व का उत्कृष्ट अन्तर होता है। - पृष्ठ ३२-३३

(२४१)शंका - संयतासंयत,प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत वाले मनुष्य , मनुष्य पर्याप्तक और मनुष्यनियों का उत्कृष्ट अन्तर कितना है ?

समाधान - मोहकर्म की अट्ठाईस प्रकृतियो की सत्ता रखने वाला कोई एक जीव अन्यगति से आकर मनुष्यो मे उत्पन्न हो आठ वर्ष का हुआ। और वेदक सम्यक्त्व और सयमासयम को एक साथ प्राप्त हुआ (१) पुनः मिथ्यात्व को जाकर अन्तर को प्राप्त हो अड़तालीस पूर्वकोटिया परिभ्रमण कर आयु के अन्त मे देवायु को बांधकर सयमासयम को प्राप्त हुआ। इस प्रकार से उक्त अन्तर लब्ध हुआ (२) पुन मरा और देव हुआ। इस प्रकार आठ वर्ष और दो अन्तर्मुहूर्तों से कम अड़तालीस पूर्वकोटियां सयतासंयत का उत्कृष्ट अन्तर होता है। मोहकर्म की अट्ठाईस प्रकृतियो की सत्ता वाला मनुष्यो मे उत्पन्न हुआ पुन· गर्भ को आदि लेकर आठ वर्ष से वेदकसम्यक्त्व और संयम को प्राप्त हुआ। पश्चात् वह अप्रमत्तसंयत (१) प्रमत्तसंयत होकर (२) मिथ्यात्व मे जाकर अन्तर को प्राप्त होकर अड़तालीस पूर्वकोटिया परिभ्रमण कर अन्तिम पूर्वकोटिया परिभ्रमण कर अन्तिम पूर्वकोटि मे बद्धायुष्क होता हुआ अप्रमत्तसयत होकर पुनः प्रमत्तसयत हुआ। इस प्रकार से अन्तर लब्ध हो गया (३) पश्चात् मरा और देव हो गया। इस प्रकार तीन अन्तर्मुहूर्तों से अधिक आठ वर्ष से कम अड़तालीस पूर्वकोटिया प्रमत्तसयत का उत्कृष्ट अन्तर होता है। इसी प्रकार अप्रमत्तसयत का भी समझना। विशेषता यह है कि - प्रमत्तसयत हो अन्तर को प्राप्त हुआ। इस प्रकार कथन है। - पृष्ठ ५२-५३

(२४२) शंका - संज्ञी सम्मूर्च्छिम पंचेन्द्रियो में उत्पन्न कराकर और सम्यक्त्व को ग्रहण कराकर मिथ्यात्व के अन्तर को प्राप्त क्यो नही कराया ?

समाधान -नही,क्योंकि,सज्ञी सम्मूर्च्छिम पचेन्द्रियो में प्रथमोपशमसम्यक्त्व के ग्रहण करने का अभाव है। - पृष्ठ ७३

(२४३) शंका - वेदकसम्यक्त्व को क्यो नही प्राप्त कराया ?

समाधान - नही,क्योंकि,एकेन्द्रियो मे दीर्घकाल तक रहने वाले और उद्वेलना की है सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति की जिसने ऐसे जीव के वेदकसम्यक्त्व का उत्पन्न कराना संभव नही है । - पृष्ठ ७३

(२४४) शंका - एक योग के परिणमन - काल से गुणस्थान का काल संख्यातगुणा है,यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान -एक जीव के अन्तर का अभाव बताने वाले सूत्र से जाना जाता है,कि एक योग के परिवर्तन-काल से गुणस्थान का काल संख्यातगुणा है । - पृष्ठ ८६

(२४५) शंका - यह कैसे जाना जाता है कि संज्ञी सम्मूर्च्छिम पर्याप्तक जीवों मे अवधिज्ञान और उपशमसम्यक्त्व का अभाव है ?

समाधान - पचेन्द्रियो मे दर्शनमोह का उपशमन करता हुआ गर्भोत्पन्न जीवों में ही उपशमन करता है,सम्मूच्छिमो मे नही इस प्रकार के चूलिका सूत्र से जाना जाता है । - पृष्ठ ११८

(२४६) शंका - संज्ञी सम्मूर्च्छिम जीवों में अवधिज्ञान का अभाव कैसे जाना जाता है ?

समाधान - क्योंकि सम्मूर्च्छिमो मे अवधिज्ञान को उत्पन्न कराके अन्तर के प्ररूपण करनेवाले आचार्यो का अभाव है । अर्थात् किसी भी आचार्य ने इस प्रकार अन्तर की प्ररूपणा नही की इसीलिए सम्मूर्च्छिमों मे अवधिज्ञान नही होता । - पृष्ठ ११६

(२४७) शंका - सामायिक और छेदोपस्थापनासंयमी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण इन दोनो उपशमको का नाना जीवो की अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर कितना है ?

समाधान - जघन्य अन्तर एक समय तथा उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है । - पृष्ठ १२६

(२४८) शंका - सामायिक और छेदोपस्थापनासंयमी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण इन दोनो उपशामको का एक जीव की अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर कितना है ?

समाधान - जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है तथा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटि है। जैसे - कोई एक जीव पूर्वकोटि की आयु वाले मनुष्यो मे उत्पन्न हुआ और

आठ वर्ष के पश्चात् सयम को प्राप्त हुआ (१) पुन प्रमत्त और अप्रमतसयत गुणस्थान मे साता और असातावेदनीय के सहस्रो वध-परावर्तनो को करके (२) उपशमश्रेणी के योग्य अप्रमत्तसयत हुआ (३) पश्चात् अपूर्वकरण (४) अनिवृत्तिकरण (५) सूक्ष्मसाम्पराय (६) उपशान्तकषाय (७) होकर फिर भी सूक्ष्मसाम्पराय (८) अनिवृत्तिकरण (६) अपूर्वकरण (१०) हो नीचे गिरकर अन्तर को प्राप्त हुआ। प्रमत्त और अप्रमत्तसयतगुणस्थान मे पूर्वकोटि काल तक रहकर अनुदिश आदि विमानो मे आयु को वाधकर जीवन के अन्तर्मुहूर्त अवशिष्ट रहने पर अपूर्वकरण उपशामक हुआ और निद्रा तथा प्रचला प्रकृतियो के व्युच्छिन्न होने पर मरण को प्राप्त हो देव हुआ। इस प्रकार आठ वर्ष और ग्यारह अन्तर्मुहूर्तों से कम पूर्वकोटि प्रमाण सामायिक और छेदोपस्थापनासयमी अपूर्वकर , उपशामक का उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है। इसी प्रकार अनिवृत्तिकरण उपशामक का भी उत्कृष्ट अन्तर है। विशेषता यह है कि इनका अन्तर एक समय अधिक नौ अन्तर्मुहूर्त कम करना चाहिए। - पृष्ठ १३०

(२४६) शंका - उपशान्तकषायवीतराग छद्मस्थो का एक जीव की अपेक्षा कितना अन्तर है ?

समाधान - अन्तर नही है निरतर है। - पृष्ठ १६६

(२५०) शका - नीचे के गुणस्थानो मे अन्तर को प्राप्त कराकर सर्व जघन्य काल से पुनः उपशांतकषायता को प्राप्त हुए जीव के जघन्य अन्तर क्यो नही कहते है ?

समाधान - नही, क्योकि उपशमश्रेणी से नीचे उतरे हुए जीव के वेदकसम्यक्त्व को प्राप्त हुए विना पहलेवाले उपशमसम्यक्त्व के द्वारा पुन उपशमश्रेणी पर समारोहण करने की सभावना का अभाव है। - पृष्ठ १७०

(२५१) शंका - यह कैसे जाना ?

समाधान - क्योंकि, उपशमश्रेणी के दूसरी वार समारोहण योग्य काल स शेष उपशमसम्यक्त्व का काल अल्प पाया जाता है। - पृष्ठ १७०

(२५२) शका - भाव प्ररूपणा मे द्रव्य का "भाव" ऐसा व्यपदेश कैसे हो सकता है ?

समाधान - नही, क्योंकि "भवन भाव " अथवा "भूतिर्वा भाव " इस प्रकार भाव शव्द की व्युत्पत्ति के अवलबन से द्रव्य के भी 'भाव' ऐसा व्यपदेश बन जाता है। - पृष्ठ १८४

(२५३) शंका - भाव नाम किस वस्तु का है ?

समाधान - द्रव्य के परिणाम को अथवा पूर्वापर कोटि से व्यक्तिरिक्त वर्तमान-पर्याय से उपलक्षित द्रव्य को भाव कहते है । - पृष्ठ १८७

(२५४) शंका - भाव किससे होता है अर्थात् भाव का साधन क्या है ?

समाधान - भाव, कर्मों के उदय से, क्षय से, क्षयोपशम से, कर्मों के उपशम से, अथवा स्वभाव से होता है । उनमे से जीवद्रव्य के भाव उक्त पाचो ही कारणो से होते है, किन्तु पुद्गल द्रव्य के भाव कर्मों के उदय से, अथवा स्वभाव से उत्पन्न होते है। तथा शेष चार द्रव्यो के भाव स्वभाव से ही उत्पन्न होते है । - पृष्ठ १८८

(२५५) शंका - स्थान क्या वस्तु है ?

समाधान - भाव की उत्पत्ति के कारण को स्थान कहते है । कहा भी है गति लिग, कषाय, मिथ्यादर्शन, असिद्धत्व, अज्ञान, लेश्या, असयत, ये औदयिक भाव के आठ स्थान होते है । - पृष्ठ १८६

(२५६) शंका - असिद्धत्व किसे कहते है ?

समाधान - अष्ट कर्मों के सामान्य - उदय को असिद्धत्व कहते है ।

(२५७) शंका - पांच जातियां, छह संस्थान, छह संहनन आदि का किस भाव मे अन्तर्भाव होता है ?

समाधान - उक्त जातियो आदि का गतिनामक औदयिक भाव में अन्तर्भाव होता है, क्योंकि इन जाति, सस्थान आदि का उदय गतिनामकर्म के उदय का अविनाभावी है, क्योंकि उन भावो मे उस प्रकार की विवक्षा का अभाव है । - पृष्ठ १८६

(२५८) शंका - सांनिपातिक संज्ञा किस भाव की है ?

समाधान - एक ही गुणस्थान या जीवसमास मे जो बहुत से भाव आकर एकत्रित होते है, उन भावों की सानिपातिक ऐसी सज्ञा है ।

अव उक्त भावो के एक, दो, तीन, चार और पाच भावो के सयोग से होने वाले भग कहे जाते है। उनमे से एक सयोगीभग इस प्रकार है -

औदयिक-औदयिकभाव, जैसे-यह जीव मिथ्यादृष्टि और असयत है। दर्शनमोहनीय कर्म के उदय से मिथ्यादृष्टि यह भाव उत्पन्न होता है। सयमघाती कर्मों के उदय से 'असयत' यह भाव उत्पन्न होता है। इसी प्रकार क्रम से सभी विकल्पो की प्ररूपणा करनी चाहिए।

एक एक उत्तर पद से वढ़ते हुए गच्छ को रूप (एक) आदि पद प्रमाण वढ़ाई गई राशि से भाजित करे और परस्पर गुणा करे, तव सम्पातफल अर्थात् एकसयोगी, द्विसयोगी आदि भगो का प्रमाण आता है। तथा इन एक, दो, तीन आदि भगो को जोड़ देने पर सन्निपातफल अर्थात् सन्निपातिकभग प्राप्त हो जाते है। - पृष्ठ १६३

(२५६) शंका - तो फिर सम्यकृत्व मे क्षायोपशमिकभाव कैसे घटित होता है ?

समाधान - वीरसेन स्वामी इस प्रश्न का उत्तर देते हुए लिखते है कि यथास्थिति अर्थ के श्रद्धान को घात करने वाली शक्ति जव सम्यकृत्वप्रकृति के स्पर्धको मे क्षीण हो जाती है, तव उनकी क्षय सज्ञा है। क्षय को प्राप्त हुए स्पर्धको के उपशम को अर्थात् प्रशन्नता को क्षयोपशम कहते है। उसमे उत्पन्न होने से वेदकसम्यकृत्व क्षायोपशमिक है। यह कथन घटित हो जाता है। (इस प्रकार सम्यकृत्व मे तीन भाव होते है, अन्य भाव नही होते है। - पृष्ठ २००

(२६०) शंका - (दर्शनमोहनीय के उदयाभाव लक्षण वाले उपशम के द्वारा उपशम समयग्दृष्टि के औपशमिक भाव है।) यदि उदयाभाव को भी उपशम कहते है तो देवपना भी औपशमिक होगा, क्योंकि वह शेष तीनो गतियो के उदयाभाव से उत्पन्न होता है ?

समाधान - नही, क्योंकि वहाँ पर तीनो गतियो का स्तिवुकसक्रमण के द्वारा उदय पाया जाता है, अथवा देवगति नामकर्म का उदय पाया जाता है, इसलिए देवपर्याय को औपशमिक नही कहा जा सकता। - पृष्ठ २१०

(२६१) शंका - उनमे (पंचेन्द्रियतिर्यच स्त्रीवेदी जीवो मे) क्षायिकभाव क्यो नही होता?

समाधान - क्योकि, वद्धायुष्क क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवो की स्त्रीवेदियो मे उत्पत्ति नही होती है, तथा मनुष्यगति के अतिरिक्त शेष गतियो मे दर्शनमोहनीय कर्म की क्षपणा के प्रारभ का अभाव है, इसलिए पचेन्द्रियतिर्यच योनिनीयो मे क्षायिकभाव नही पाया जाता है। - पृष्ठ २१३

(२६२) शंका - यहाँ पर (आहारक और आहारकमिश्रकाय योगियो मे) प्रमत्त संयत यह क्षायोपशमिकभाव कैसे कहा ?

समाधान - आहारक और आहारकमिश्रकाययोगियो मे क्षायोपशमिकभाव होने का कारण यह है कि उदय को प्राप्त चार सज्वलन और सात नोकषाय, इन ग्यारह चारित्रमोहनीय प्रकृतियो के देशघाती स्पर्धको की उपशम सज्ञा है, क्यो कि सम्पूर्णरूप से चारित्र घातने की शक्ति का वहा पर उपशम पाया जाता है। तथा उन्ही ग्यारह चारित्रमोहनीय प्रकृतियो के सर्वघाति स्पर्धको की क्षय सज्ञा है, क्योंकि वहाँ पर उनका उदय मे आना नष्ट हो चुका है। इस प्रकार क्षय और उपशम इन दोनो से उत्पन्न होने वाला सयम क्षायोपशमिक कहलाता है। अथवा चारित्रमोहसम्बन्धी उक्त ग्यारह कर्मप्रकृतियो के उदय की ही क्षयोपशम सज्ञा है, क्योंकि चारित्र के घातने की शक्ति के अभाव की ही क्षयोपशम सज्ञा है। इस प्रकार के क्षायोपशम से उत्पन्न होने वाला प्रमादयुक्त सयम क्षायोपशमिक है। - पृष्ठ २२०

(२६३) शंका - मिथ्यादृष्टि जीवो के ज्ञान को अज्ञानपना कैसे कहते है ?

समाधान - क्योकि उन (मिथ्यादृष्टियो) का ज्ञान (सम्यक) ज्ञान का कार्य नही करता है। इसलिए उसे अज्ञान कहते है। - पृष्ठ २२४

(२६४) शंका - ज्ञान का क्या कार्य है ?

समाधान- जाने हुए पदार्थ का (सम्यक्) श्रद्धानकरना ज्ञान का कार्य है।-पृष्ठ२२४

(२६५) शका - सयोग, यह कौनसा भाव है ?

समाधान - 'सयोग' यह अनादि पारिणामिक भाव है। इसका कारण यह है कि यह योग न तो औपशमिकभाव है, क्योकि मोहनीयकर्म के उपशम नही होने पर भी योग पाया जाता है। न वह क्षायिक भाव है, क्योंकि आत्मस्वरूप से रहित योग की कर्मों के क्षय से उत्पत्ति मानने मे विरोध आता है। योग घातिकर्मोदय जनित भी नही है, क्योंकि, घातिकर्मोदय नष्ट होने पर भी सयोगिकेवली मे योग का सद्भाव पाया जाता है, न योग अघातिकर्मोदय जनित भी है, क्योकि अघातिकर्मोदय के रहने पर भी अयोगिकेवली मे योग नही पाया जाता। योग शरीर नामकर्मोदय जनित भी नही है, क्योंकि पुद्गलविपाकी प्रकृतियो के जीव - परिस्पदन का कारण होने मे विरोध है। इसलिए सयोग ये पारिणामिक भाव है। - पृष्ठ २२५

(२६६) शंका - कार्मणशरीर पुद्गलविपाकी नही है, क्योंकि, उससे पुद्गलो के वर्ण, रस, गन्ध, स्पर्श और संस्थान आदि का आगमन आदि नही पाया जाता है। इसलिए योग को कार्मणशरीर से उत्पन्न होने वाला मान लेना चाहिए ?

समाधान - नही, क्योकि सर्व कर्मों का आश्रय होने से कार्मणशरीर भी पुद्गलविपाकी ही है । इसका कारण यह है कि वह सर्व कर्मों का आश्रय या आधार है । - पृष्ठ २२६

(२६७) शंका - कार्मणशरीर के उदय विनष्ट होने के समय मे ही योग का विनाश देखा जाता है । इसलिए योग कार्मणशरीर जनित है, ऐसा मानना चाहिए ?

समाधान - नही, क्योंकि यदि ऐसा माना जाय तो अघातिकर्मोदय के विनाश होने के अनन्तर ही विनष्ट होने वाले पारिणामिक भव्यत्वभाव के भी औदयिकपने का प्रसग प्राप्त होगा । इस प्रकार पूर्वोक्त विवेचन से योग के पारिणामिकपना सिद्ध हुआ। अथवा 'योग' यह औदयिकभाव है, क्योंकि शरीरनामकर्म के उदय का विनाश होने के पश्चात् ही योग का विनाश पाया जाता है । और ऐसा मानने पर भव्यत्वभाव के साथ व्यभिचार भी नही आता है, क्योंकि, कर्मसम्बन्ध भव्यत्वभाव के विरोधी पारिणामिक की कर्म से उत्पत्ति मानने मे विरोध आता है । -पृष्ठ २२६

(२६८) शंका - अल्पबहुत्व कितने प्रकार का है ?

समाधान - मार्गणाओं के भेद से गुणस्थानो के जितने भेद होते है, उतने प्रकार का अल्पबहुत्व होता है । - पृष्ठ २४३

(२६९) शंका - यहाँ (अल्पबहुत्व की प्ररूपणा मे) संयतासंयत गुणस्थान मे क्षायिकसम्यग्दृष्टि तिर्यंचो का अल्पबहुत्व क्यो नही कहा ?

समाधान - नही, क्योंकि असख्यात वर्ष की आयुवाले भोगभूमिया तिर्यंचो मे ही क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवो का उत्पाद पाया जाता है । और पचम गुणस्थानवाले भोगभूमि मे नही होते । - पृष्ठ २७२

(२७०) शंका - (मनुष्य, मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यनियो) ये तीनो प्रकार के मनुष्य संयतासंयत गुणस्थान मे क्षायिक सम्यग्दृष्टि सबसे कम क्यो है ?

समाधान - क्योंकि दर्शनमोहनीयकर्म का क्षय करने वाले और देशसयत मे वर्तमान वहुत जीवो का अभाव है । दर्शनमोहनीय का क्षय करने वाले मनुष्य प्राय असयमी होकर रहते हैं । वे सयम को प्राप्त होते हुए प्राय महाव्रतो को ही

धारण करते है, अणुव्रतो को नही, इसलिए क्षायिकसम्यग्दृष्टियो की अपेक्षा वे कम कहे गये है । - पृष्ठ २७७

(२७१) शंका - उपशमसम्यकृत्व के साथ आहारकऋद्धि क्यों उत्पन्न होती है ?
समाधान - क्योंकि अत्यन्त अल्प उपशमसम्यकृत्व के काल में आहारक-ऋद्धि का उत्पन्न होना सम्भव नही है । न उपशमसम्यकृत्व के साथ उपशमश्रेणी मे आहारक-ऋद्धि पाई जाती है, क्योंकि वहॉ पर प्रमाद का अभाव है । न उपशम श्रेणी से उतरे हुए जीवो के भी उपशमसम्यकृत्व के साथ आहारक-ऋद्धि पाई जाती है । क्योकि जितने काल के द्वारा आहारक-ऋद्धि उत्पन्न होती है, उपशमसम्यकृत्व का उतने काल तक अवस्थान नही रहता है । - पृष्ठ २६८

(२७२) शंका - पल्योपम के असंख्यातवे भाग प्रमाण क्षायिकसम्यग्दृष्टियो से असंख्यात जीव विग्रह क्यो नही करते हैं ?
समाधान - ऐसी आशका पर आचार्य कहते है कि न तो असख्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टि देव एक साथ मरते है, अन्यथा मनुष्यो मे असख्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टियो के होने का प्रसंग आ जायेगा । न मनुष्यो मे ही असख्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव मरते है । क्योकि, उनमे असख्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टियो का अभाव है । न असख्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टि तिर्यच ही मारणान्तिकसमुद्धात् करते है, क्योंकि, उनमे आय के अनुसार व्यय होता है । इसलिए विग्रहगति मे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सख्यात ही होते है । तथा सख्यात होते हुए भी वे उपशमसम्यग्दृष्टियो से सख्यातगुणित होते है, क्योंकि उपशमसम्यग्दृष्टियो के (आय के कारण से क्षायिक सम्यग्दृष्टियो के (आय का) कारण) सख्यात गुणा है । - पृष्ठ २६६

(२७३) शंका - उपशमको से क्षपको का गुणकार दुना होने का कारण क्या है ?
समाधान - चूकि, ज्ञान, वेद आदि सर्व विकल्पो मे उपशमश्रेणी पर चढ़ने वाले जीवो से क्षपकश्रेणी पर चढ़ने वाले जीव दुगने होते है, इस प्रकार आचार्यों का उपदेश पाया जाता है । - पृष्ठ ३२३

(२७४) शंका - एक समय मे एक साथ क्षपकश्रेणी पर तीर्थकर, प्रत्येकबुद्ध, वोधितबुद्ध उत्कृष्ट , जघन्य मध्यम अवगाहना वाले, पुरुषवेद, नपुंसकवेद तथा स्त्रीवेद वाले कितने जीव रहते है ?
समाधान - तीर्थकर छह, प्रत्येकबुद्ध दश, वोधितबुद्ध एक सौ आठ, उत्कृष्ट अवगाहना वाले दो, जघन्य अवगाहना वाले चार, मध्यम अवगाहना वाले आठ,

पुरुषवेद उदय वाले एक सौ आठ, नपुसकवेद के उदय वाले दश, स्त्रीवेद के उदय वाले वीस जीव क्षपकश्रेणी पर चढ़ते है। - पृष्ठ ३२३

(२७५) शंका - परिहारशुद्धिसंयत मे प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत गुणस्थान मे क्षायिकसम्यग्दृष्टियो से वेदकसम्यग्दृष्टि संख्यात गुणे क्यो होते है ?
समाधान - क्योंकि क्षायिकसम्यकृत्व की अपेक्षा क्षायोपशमिकसम्यकृत्व का प्रचुरता से होना सभव है। यहा परिहारशुद्धिसयत और उपशमसम्यकृत्व साथ नही होते है क्योंकि तीस वर्ष के विना परिहारशुद्धिसयम का होना सभव नही है। और न उत्तने काल तक उपशमसम्यकृत्व का अवस्थान रहता है, जिससे कि परिहार शुद्धिसयम के साथ उपशमसम्यकृत्व की उपलब्धि हो सके।

दूसरी वात यह है कि परिहारशुद्धि सयम को नही छोड़ने वाले जीव के उपशम श्रेणी पर चढ़ने के लिए दर्शन मोहनीय कर्म का उपशमन होना भी सभव नही है, जिससे कि उपशमश्रेणी मे उपशमसम्यकृत्व और परिहारविशुद्धिसयम इन दोनो का भी सयोग हो सके। - पृष्ठ ३२७

*** शंका– यह शास्त्र किस हेतु से पढ़ा जाता है ?**
समाधान – मोक्ष के हेतु पढ़ा जाता है, ''मोक्खट्ठं''।
-ध.पु.९, पृ. १०६
*** शंका - ज्ञान से विशिष्ट जिनो को पहले ही नमस्कार किस लिये किया ?**
समाधान - चारित्र की अपेक्षा ज्ञान की प्रधानता बतलाने के लिये ज्ञान विशिष्ट जिनो को पहिले ही नमस्कार किया है।
*** शंका– चारित्र से ज्ञान की प्रधानता क्यो है ?**
समाधान – चूंकि बिना ज्ञान के चारित्र होता नहीं, अतः ज्ञान प्रधान है। - ध.पु.९, पृ. ७३,७४

धवला पुस्तक - ६

(२७६) शंका - समुत्कीर्तन किसे कहते है ?
समाधान - वर्णन अथवा प्ररूपण को समुत्कीर्तन कहते है । - पृष्ठ ७६

(२७७) शंका - प्रकृति- समुत्कीर्तन किसे कहते है ?
समाधान - प्रकृतियो के समुत्कीर्तन को (वर्णन को) प्रकृति-समुत्कीर्तन कहते है। इसीप्रकार स्थिति आदि मे समझ लेना चाहिए । - पृष्ठ ५

(२७८) शंका - आव्रियमाण किसे कहते है ?
समाधान - अपने विरोधी द्रव्य के सन्निधान अर्थात् सामीप्य होने पर भी जो निर्मूलत विनष्ट नही होता है, उसे आव्रियमाण कहते है । - पृष्ठ ५

(२७९) शंका - आवारक किसे कहते है ?
समाधान - दूसरे अर्थात् आवरण करनेवाले विरोधी द्रव्य को आवारक कहते है। - पृष्ठ ८

(२८०) शका - श्रुतज्ञान के अन्तर्गत पद संज्ञा किसकी है ?
समाधान - सोलह सो चौतीस करोड, तेरासी लाख, अठहत्तर सौ अठासी (१६३४,८३०,७८८८) अक्षरो को लेकर द्रव्यश्रुत का एक पद होता है। इन अक्षरो से उत्पन्न हुआ भावश्रुत भी उपचार से 'पद' ऐसा कहा जाता है। - पृष्ठ २३

(२८१) पाप किसे कहते है, और पाप क्रियाएं कौन कौन है ?
समाधान - घातिया कर्मों को पाप कहते है, तथा मिथ्यात्व, असयम और कषायो सम्वन्धी ये पाप की क्रियाए है । - पृष्ठ ४०

(२८२) शका - अनन्तानुबन्धी कषायो की शक्ति दो प्रकार की है - इस विषय मे क्या युक्ति है ?
समाधान - सम्यक्त्व और चारित्र इन दोनो को घात करनेवाले ये अनन्तानुवन्धी क्रोधादिक न तो दर्शनमोहनीयस्वरूप माने जा सकते है, क्योंकि सम्यक्त्वप्रकृति, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व के द्वारा ही आवरण किये जानेवाले सम्यग्दर्शन के आवरण करने मे फल का अभाव है, और न उन्हे चारित्रमोहनीयस्वरूप भी

माना जा सकता है, क्योंकि अप्रत्याख्यानावरण आदि कषायो के द्वारा आवरण किये गये चारित्र के आवरण करने मे फल का अभाव है। इसलिए उपर्युक्त प्रकार से अनन्तानुवन्धी क्रोधादि कषायो का अभाव ही सिद्ध होता है। किन्तु उनका अभाव है नही, क्योंकि सूत्र मे इनका अस्तित्व पाया जाता है, इसलिए इन अनन्तानुवन्धी क्रोधादि कषायों के उदय से सासादन भाव की उत्पत्ति अन्यथा हो नही सकती है, इस अन्यथानुपपत्ति से उनके दर्शनमोहनीयता और चारित्रमोहनीयता, अर्थात् सम्यक्त्व और चारित्र को घात करने की शक्ति का होना सिद्ध होता है। तथा चारित्र मे अनन्तानुवन्धी चतुष्क का व्यापार निष्फल भी नही है, क्योंकि अप्रत्याख्यानादि के अनन्त उदयरूप प्रवाह के कारणभूत अनन्तानुवन्धी कषाय के निष्फलत्व का विरोध है। - पृष्ठ ४२

(२८३) शंका - इन कर्मो का अस्तित्व कैसे जाना जाता है ?

समाधान - प्रत्यक्ष के द्वारा पाये जानेवाले अज्ञान, अदर्शन आदि कार्यों की उत्पत्ति अन्यथा हो नही सकती है, इस अन्यथानुपपत्ति से उक्त कर्मों का अस्तित्व जाना जाता है। - पृष्ठ ४८

(२८४) शंका - जीव को पीडा देनेवाले शरीर के अवयव कौन - कौन है ?

समाधान - उपघात नामकर्म के उदय से होनेवाले महाशृग (वारहसिगो के समान वड़े सीग) लम्वे स्तन, विशाल तोदवाला पेट आदि जीव को पीड़ा करनेवाले शरीर के अवयव है। यदि उपघात नामकर्म जीव के न हो तो वात, पित्त और कफ से दूषित शरीर से जीव के पीड़ा नही होना चाहिए। किन्तु ऐसा है नही क्योंकि वैसा पाया नही जाता है। - पृष्ठ ५६

(२८५) शंका - जीव के दुःख उत्पन्न करने मे असाता वेदनीयकर्म के उदय का व्यापार होता है, (फिर यहां उपघात कर्म का उदय) जीव पीडा का कारण कैसे बताया जा रहा है ?

समाधान - जीव के दु ख उत्पन्न करने मे असातावेदनीय का उदय का व्यापार रहा आवे, किन्तु उपघातकर्म का उदय भी उस असातावेदनीय का निमित्त कारण होता है, क्योंकि उसके उदय के निमित्त से दु ख को उत्पन्न करने मे निमित्त ऐसे पुद्गल द्रव्यो का सम्पादन (समागम) होता है। - पृष्ठ ५६

(२८६) शंका - स्थान किसे कहते है ?

समाधान - जिस सख्या मे अथवा जिस अवस्थाविशेष मे प्रकृतिया पाई जाती

है, उसे 'स्थान' कहते है । इसी के समान अनुभागादि स्थानो को भी समझ लेना चाहिए । - पृष्ठ ७६

(२८७) शंका - मोहनीय कर्म के बन्धस्थान कितने है ?

समाधान - मोहनीयकर्म के दश बन्धस्थान है - बाईस प्रकृतिक, इक्कीस प्रकृतिक, सत्तरह प्रकृतिक, तेरह प्रकृतिक, नौ प्रकृतिक, पाच प्रकृतिक, चार प्रकृतिक, तीन प्रकृतिक, दो प्रकृतिक, और एक प्रकृतिक वन्ध स्थान । - पृष्ठ ८८

(२८८) शंका - देवगति के साथ छह संहननो का उदय क्यो नही मानते ?

समाधान - नही, क्योंकि देवो मे सहननो के उदय का अभाव है । क्योंकि (वैक्रियिक शरीर होने से) सहनन नही होते । - पृष्ठ १२३

(२८६) शंका - संक्लेश नाम किसका है ?

समाधान - असाता वेदनीय आदि के बध-योग्य परिणाम को सक्लेश कहते है।- पृष्ठ १८०-१८१

(२६०) शंका - विशुद्धि किसे कहते है ?

समाधान - साता वेदनीय आदि के बन्धयोग्य परिणाम को विशुद्धि कहते है । कषाय की वृद्धि और हानि को सक्लेश और विशुद्धि का लक्षण नही समझना चाहिए, क्योकि इन दोनो का लक्षण स्वतत्र है । - पृष्ठ १८१

इनका खुलासा - (१) जो जघन्य स्थिति सम्बन्धी परिणाम और उत्कृष्ट स्थिति सम्बन्धी परिणाम को छोडकर शेष सब मध्य के परिणाम एक तरफ से सक्लेश सज्ञा को प्राप्त हो जायेगे और दूसरी तरफ से उन्ही की विशुद्धि संज्ञा हो जायेगी जो युक्त प्रतीत नही होना । - पृष्ठ १८०,८१

(२) कषाय की वृद्धि भी सक्लेश का लक्षण नही है, क्योंकि अन्यथा स्थितिबध की वृद्धि वन नही सकती है तथा विशुद्धि के काल मे वर्धमान कषायवाले जीव के भी सक्लेश का प्रसग आता है और विशुद्धि के काल मे कषायो की वृद्धि नही होती है - ऐसा कहना भी युक्त नही है, क्योंकि वैसा मानने पर साता आदि के भुजाकारबध के अभाव का प्रसग प्राप्त होगा ।

(३) तथा असाता और साता इन दोनो के बन्ध का सक्लेश और विशुद्धि इन दोनो को छोड़कर अन्य कोई कारण नही है, क्योंकि वैसा

कोई कारण पाया नही जाता है।

(४) कषायो की वृद्धि केवल असाता के वन्ध का कारण नही है, क्योकि उसके अर्थात् कषायो की वृद्धि के काल मे साता का बन्ध भी पाया जाता है। इसीप्रकार कषायो की हानि केवल साता के वन्ध का कारण नही है, क्योंकि वह भी साधारण है, अर्थात् कषायो की हानि के काल मे असाता का भी बन्ध पाया जाता है। - पृष्ठ १८०-१८१

(२६१) शंका - तीस कोडाकोड़ी सागरोपम की उत्कृष्ट स्थितिवाले दर्शनावरणीय कर्म की अन्तर्मुहूर्तमात्र जघन्यस्थिति को बांधनेवाले सूक्ष्मसांपराय संयतःबीसकोड़ाकोड़ी सागरोपम की उत्कृष्टि स्थितिवाले वेदनीयकर्म के भेदस्वरूप पन्द्रह कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमित उत्कृष्ट स्थितिवाले सातावेदनीय कर्म की वारह मुहूर्त वाली जघन्य स्थिति को कैसे वांधता है ?

समाधान - नही, क्योंकि दर्शनावरणीय कर्म की अपेक्षा शुभ प्रकृति रूप सातावेदनीय कर्म की विशुद्धि के द्वारा स्थितिवन्ध की अधिक अपवर्तना का अभाव है। अर्थात् सातावेदनीय पुण्य प्रकृति है, अतएव विशुद्धि के द्वारा उसकी स्थिति का घात अधिक नही होता है। किन्तु दर्शनावरणीय पाप प्रकृति है, अतएव विशुद्धि से उसकी स्थिति का अधिक घात होता है। - पृष्ठ १८६ जघन्य स्थिति अनुभाग प्रदेश बध विधान.

(२६२) शंका - यहाँ पर (प्रकृतिवंध और स्थितिवंध मे) सत्त्व, उदय, और उदीरणा इन तीनो का प्ररूपण क्यो नही किया ?

समाधान - नही, क्योंकि बन्ध ही बधने के दूसरे समय से लेकर निर्लेपन अर्थात् क्षपणा होने के अन्तिम समय तक सत्कर्म या सत्त्व कहलाता है। वही बन्ध बधावली के अर्थात् वधने की आवली के व्यतीत होने पर अपकर्षण कर जब उदय मे सक्षुभ्यमान (उदय मे लाया जाता है) किया जाता है, तब वह उदीरणा कहलाता है। वही बन्ध दो समय अधिक बधावली के व्यतीत हो जाने पर स्थिति के अर्थात् निषेकस्थिति के क्षय से उदय मे पतमान अर्थात् गिरता हुआ 'उदय' इस सज्ञावाला होता है। इसप्रकार बन्ध की प्ररूपणा से सत्त्व, उदय और उदीरणा की भी प्ररूपणा सिद्ध हो जाती है। - पृष्ठ २०१

(२६३) शंका - प्रॉच लब्धियो के नाम सहित परिभाषाओं का वर्णन क्या है ?

समाधान - क्षयोपशमलब्धि, विशुद्धिलब्धि, देशनालब्धि, प्रायोग्यलब्धि, और करणलब्धि - ये पाच लब्धिया है । - पृष्ठ २०४ - २०५

(१) **क्षयोपशमलब्धि** - पूर्व सचित कर्मो के मलरूप पटल के अनुभाग स्पर्धक जिस विशुद्धि के द्वारा प्रतिसमय अनन्तगुणे हीन होते हुए उदीरणा को प्राप्त किये जाते है, उसे क्षयोपशमलब्धि कहते है ।

(२) **विशुद्धिलब्धि** - प्रति समय अनन्तगुणित हीन क्रम से उदीरित अनुभागस्पर्धको से उत्पन्न हुआ, साता आदि शुभ कर्मो के वन्ध का निमित्तभूत और असाता आदि अशुभ कर्मों के वध का विरोधी जो जीव का परिणाम है, उसे विशुद्धि कहते है, उसकी प्राप्ति का नाम विशुद्धिलब्धि है ।

(३) **देशनालब्धि** - छह द्रव्यो और नौ पदार्थों के उपदेश का नाम देशना है। उस देशना से परिणत आचार्य आदि की उपलब्धि को और उपदिष्ट अर्थ के ग्रहण, धारण तथा विचारण की शक्ति के समागम को देशनालब्धि कहते है ।

(४) **प्रायोग्यलब्धि** - सर्व कर्मो की उत्कृष्ट स्थिति और उत्कृष्ट अनुभाग को घात करके अन्त. कोडाकोडी स्थिति मे और द्विस्थानीय अनुभाग मे अवस्थान करने को प्रायोग्यलब्धि कहते है ।

(५) **करणलब्धि** - अध करण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण रूप परिणामो के लाभ को करणलब्धि कहते है । - पृष्ठ ३५६ करणानुयोग प्रवेशिका ।

(२६४) शंका - उदय और उदीरणा मे क्या भेद है ?

समाधान - जो कर्मस्कन्ध अपकर्षण, उत्कर्षण आदि प्रयोग के बिना स्थितिक्षय को प्राप्त होकर अपना-अपना फल देते है, उन कर्म स्कन्धो की 'उदय' सज्ञा है। जो महान स्थिति और अनुभागो मे अवस्थित कर्म स्कन्धो को अपकर्पण करके फल देनेवाले किये जात्ते है, उन कर्म-स्कन्धो की उदीरणा संज्ञा है, क्योंकि अपक्व कर्मस्कन्ध के पाचन करने को उदीरणा कहते है । - पृष्ठ २१३

(२६५) शंका - निर्वर्गणाकांडक किसे कहते हैं ?

समाधान - वर्गणा नाम समयो की समानता का है । उस समानता से रहित उपरितन समयवर्ती परिणामो के खडो के काडक या पर्व को निर्वर्गणाकाडक कहते है । - पृष्ठ २१५

(२६६) शंका - कौन निषेक निक्षेप रूप और कौन निषेक अतिस्थापना रूप कहलाते है?

समाधान - अपकर्षण या उत्कर्षण किया हुआ द्रव्य जिन निषेको मे मिलाते है, वे निषेक निक्षेप रूप कहलाते है । उक्त द्रव्य जिन निषेको मे नही मिलाया जाता है, वे निषेक अतिस्थापना रूप कहलाते है । - पृष्ठ २२६

(२६७) शंका - अपकर्षण के विषय मे जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापना का स्वरूप क्या है ?

समाधान - अपकर्षण के विषय मे निक्षेप अतिस्थापना का क्रम यही है कि उदयावली मे से एक कम कर शेष मे तीन का भाग दीजिए । एक रूप सहित प्रारभ का त्रिभाग तो निक्षेपरूप है, अर्थात् उदयावली से उपरिम प्रथम निषेक का वह अपकृष्ट द्रव्य एक रूपसहित प्रथम त्रिभाग मे मिलाया जाता है, और एक समय कम उदयावली के अन्त के दो भाग अतिस्थापना रूप है अर्थात् उनमे यह अपकृष्ट किया हुआ द्रव्य नही मिलाया जाता है ।

उदाहरणार्थ - उदयावली या प्रथमावली के एक से लेकर सोलह निषेक कल्पना कीजिए। और सतरह से लेकर वत्तीस तक के निषेक दूसरी आवली कल्पना कीजिए । इस कल्पना के अनुसार दूसरी आवली के सत्तरहवे निषेक का द्रव्य अपकर्षण करके नीचे उदयावली मे देना है, तो उक्त क्रम के अनुसार १६ मे से एक कम करने पर १५ रहे। उसका त्रिभाग ५ हुआ । उसमे १ के मिलाने पर ६ होते है । सो इन प्रारभ के ६ समयो के निषेको मे उक्त अपकृष्ट द्रव्य का निक्षेप होगा, इसलिए वे निषेक निक्षेपरूप कहे जाते है । बाकी के ७ से लेकर १६ तक के जो प्रथमावली के १० निषेक है, उनमे निक्षेप नही होगा । इसलिए वे अतिस्थापना रूप कहे जाते है । यह अपकर्षण के विषय मे जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापना का स्वरूप है, इसीप्रकार उत्कर्षण मे भी समझ लेना । - पृष्ठ २२६

(२६८) शंका - निषेक किसे कहते है ?
समाधान - बध होने के बाद आवाधाकाल व्यतीत होने के अनन्तर समय मे विवक्षित एक कर्म का जो द्रव्य प्रत्येक समय मे प्राप्त किया जाता है, उसे निषेक कहते है।

(२६९) शंका - मनुष्य और तिर्यच प्रथमोपशमसम्यक्त्व का प्रस्थापक और निष्ठापक कौनसा उपयोग और योगवाला तथा कौनसी लेश्या का कम से कम अंशवाला होता है ?
समाधान - साकार अर्थात् ज्ञानोपयोग की अवस्था मे ही जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्व का प्रस्थापक होता है, किन्तु निष्ठापक अर्थात् पूर्ण करनेवाला, मध्य अवस्थावर्ती जीव भजनीय है अर्थात् वह साकारोपयोगी अथवा अनाकारोपयोगी भी हो सकता है। मनोयोगादि तीनो योगो मे से किसी भी एक योग में वर्तमान जीव प्रथमोपशमसम्यक्त्व को प्राप्त कर सकता है। कम से कम तेजोलेश्या के जघन्य अश मे वर्तमान मनुष्य या तिर्यच जीव प्रथमोपशमसम्यक्त्व को प्राप्त करता है। - पृष्ठ २३९

(३००) शंका - अनादि अथवा सादि मिथ्यादृष्टि के प्रथम बार सम्यक्त्व का लाभ किस उपशामना से होता है ?
समाधान - अनादिमिथ्यादृष्टि के सम्यक्त्व का प्रथम वार लाभ सर्वोपशामना से होता है। इसीप्रकार विप्रकृष्ट जीव-के अर्थात् जिसने पहले कभी सम्यक्त्व को प्राप्त किया था, किन्तु पश्चात् मिथ्यात्व को प्राप्त होकर और वहाँ सम्यक्त्व प्रकृति एवं सम्यग्मिथ्यात्व कर्म की उद्वेलना कर बहुत काल तक मिथ्यात्व सहित परिभ्रमण कर पुन सम्यक्त्व को प्राप्त किया है, ऐसे जीव के प्रथमोपशम सम्यक्त्व का लाभ सर्वोपशामना से होता है, किन्तु जो जीव सम्यक्त्व से गिरकर अभीक्ष्ण अर्थात् जल्दी ही पुन· पुन सम्यक्त्व को ग्रहण करता है, वह सर्वोपशम और देशोपशम से भजनीय है। - पृष्ठ २४१

(३०१) शंका - दूरापकृष्टि स्थितिसत्व किसे कहते हैं ?
समाधान - अनिवृत्तिकरण के काल मे स्थितिकाण्डकघात के द्वारा अनन्तानुबन्धी

व दर्शनमोहनीय कर्मो के स्थितिसत्व के चार पर्व या विभाग होते है। पहले पर्व मे पृथक्त्व लाख सागरोपम, दूसरे मे पल्योपम मात्र, तीसरे मे पल्योपम के सख्यात से लेकर असख्यातवे भाग और चौथे मे उच्छिष्टावली मात्र स्थितिसत्व शेप रहता है। इनमे से तीसरे पर्व अर्थात् पल्योपम के अन्तिम सख्यात भाग से पल्योपम के असख्यातवे भाग प्रमाण स्थितिसत्व के शेप रहने को ही दूरापकृष्टि स्थितिसत्व कहते है। - पृष्ठ २५१-२५२

(३०२) शंका - गुणितकर्माशिक वन्ध किसे कहते है ?
समाधान - जो जीव अनेक भवो मे उत्तरोत्तर गुणितक्रम से कर्मप्रदेशो का वन्ध करता रहा है, उसे गुणितकर्माशिक कहते है। - पृष्ठ २५७

(३०३) शंका - सर्वार्थसिद्धि विमान से च्युत होकर मनुष्य होनेवाले जीवो के वासुदेवत्व क्यो नही होता ?
समाधान - नही, क्योंकि वासुदेवत्व की उत्पत्ति मे उससे पूर्व मिथ्यात्व के अविनाभावी निदान का होना अवश्यभावी है। - पृष्ठ ५०१

(३०४) शका - सम्पूर्ण गुणितकर्माशिक वन्ध किसके और कब होता है ?
समाधान - जो जीव उत्कृष्ट योगो सहित वादर पृथ्वीकायिक एकेन्द्रिय पर्याप्त व अपर्याप्त भवो से लेकर पूर्वकोटिपृथक्त्व से अधिक दो हजार सागरोपम प्रमाण बादर त्रसकाय मे परिभ्रमण करके जितने बार सातवी पृथिवी मे जाने योग्य होता है, उतनी बार जाकर पश्चात् सप्तम पृथिवी मे नारक पर्याय को धारण कर व शीघ्रातिशीघ्र पर्याप्त होकर उत्कृष्ट योगस्थानो व उत्कृष्ट कपायो सहित होता हुआ उत्कृष्टकर्म प्रदेशो का सचय करता है और अन्तर्मुहूर्त प्रमाण आयु के शेष रहने पर त्रिचरम और द्विचरम समय मे वर्तमान रहकर उत्कृष्ट सक्लेशस्थान को तथा चरम और द्विचरम समय उत्कृष्ट योगस्थान को भी पूर्ण करता है, वह जीव उसी नारक पर्याय के अन्तिम समय मे सपूर्ण गुणितकर्माशिक होता है। पृष्ठ २५७

(३०५) शंका - उत्कृष्ट क्षपितकर्माशिक कब होता है ?

समाधान - जो जीव पल्योपम के असंख्यातवें भाग से हीन सत्तर कोड़ाकोड़ी सागरोपम प्रमाण काल तक निगोद पर्याय में रहा और भव्य जीव के योग्य जघन्य कर्मप्रदेशसंचयपूर्वक सूक्ष्म निगोद से निकलकर बादर पृथिवीकायिक हुआ और अन्तर्मुहूर्त काल में निकलकर तथा सात माह में ही गर्भ से उत्पन्न होकर पूर्वकोटि आयुवाले मनुष्यो में उत्पन्न और विरतियोग्य त्रसों में उत्पन्न हुआ तथा आठ वर्ष में संयम को प्राप्त करके संयम सहित ही मनुष्यायु पूर्ण कर पुनः देव, बादरपृथिवीकायिक व मनुष्यों में अनेक बार उत्पन्न होता हुआ पल्योपम के असंख्यातवें भाग प्रमाण असंख्यात वार सम्यक्त्व, उससे स्वल्पकालिक देशविरति, आठ बार विरति को प्राप्त कर व आठ ही बार अनन्तानुबन्धी का विसंयोजन व चार बार मोहनीय का उपशम कर शीघ्र ही कर्मों का क्षय करता है, वह उत्कृष्ट क्षपितकर्मांशिक होता है। - पृष्ठ २५७-२५८

(१०६) शंका - गुणित-क्षपित-घोलमान कौन है ?
समाधान - जो जीव पूर्वोक्त प्रकार से न गुणितकर्मांशिक है, और न क्षपित कर्मांशिक है, किन्तु अनवस्थित रूप से कर्म संचय करता है वह, गुणति-क्षपित-घोलमान है। - पृष्ठ २५८

(१०७)शंका - मोहकर्म की अट्ठाईस प्रकृतियों की सत्तावाला मिथ्यादृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि अथवा संयतासंयत जीव संयम को प्राप्त करता है, तो उसके कितने करण होते हैं?
समाधान - दो ही करण होते हैं, क्योंकि उसके अनिवृत्तिकरण का अभाव है। पृष्ठ२८१

(१०८) शंका - संयमासंयमलब्धि किसे कहते हैं ?
समाधान - अप्रत्याख्यानावरण कषाय के उदय के अभाव से देशचारित्र को प्राप्त करनेवाले जीव के जो विशुद्ध परिणाम होते है, उसे संयमासयमलब्धि कहते है।-(जयधवला पुस्तक११) - पृष्ठ ८४

(१०९) शंका - संयमलब्धि के कितने स्थान हैं ?
समाधान - तीन स्थान हैं - प्रतिपातस्थान, उत्पादस्थान और लब्ध्यांतरितस्थान । - पृष्ठ२८३

(११०) शंका - उत्पादस्थान कौन है ?

समाधान - जिस स्थानपर जीव संयम को प्राप्त होता है, वह उत्पादस्थान है।-पृष्ठ२८३

(३११) शंका - तद्व्यतिरिक्त स्थान किसे कहते हैं ?

समाधान - (प्रतिपातस्थान,उत्पादस्थान) इनके अतिरिक्त शेष सर्व ही चारित्रस्थानो को तद्व्यतिरिक्त स्थान कहते हैं । - पृष्ठ २८३

(३१२) शंका - अपूर्वकरण के काल में जो परभविक नामकर्म का बंध होता है, उसका क्या स्वरूप है ?

समाधान - अपूर्वकरण के काल मे नामकर्म की जिन प्रकृतियो का परभवसबधी देवगति के साथ बंध होता है, उन्हें परभविक नामकर्म कहा जाता है । - पृष्ठ२६३

कुछ शब्दों के अर्थ - **सत्कर्मिक** = सत्ता वाला हो । **प्रस्थापक** = प्रारम करने वाला । **निष्ठापक** = पूर्ण करने वाला । **भजनीय** = हो अथवा न भी हो । **उपशान्ताद्धा** = उपशान्त करने का काल । **निरासन** = सासादनपरिणाम से सर्वथा रहित । **निर्व्याघात**= उपसर्गादिक के आने पर भी विच्छेद और मरण से रहित होना । **चतुःस्थानीय** = (१) पाप कर्म का चतुःस्थानीय अनुभाग निब, काजीर, विष, हलाहल रूप होता है। (२) पुण्य कर्म का चतुःस्थानीय अनुभाग गुड़, खांड, शर्करा और अमृत रूप होता है। (३) घाति कर्मों का लता, दारु, अस्थि और शैल रूप होता है ।

(३१३) शंका - उपशान्त (उपशामना) करण, निधत्तिकरण और निकाचित करण किसे कहते हैं ?

समाधान - जो कर्म उदय में न दिया जा सके, वह उपशान्त करण है । जो संक्रमण व उदय दोनों मे ही न दिया जा सके, वह निधत्तिकरण है, तथा जो उत्कर्षण, अपकर्षण, संक्रमण व उदय, चारों में ही न दिया जा सके, वह निकाचित करण है। - पृष्ठ २६५

(३१४) शंका - सम्पूर्ण चारित्र को प्राप्त करने वाला क्षपक अन्तर्मुहूर्त मात्र ही स्थिति को क्यों स्थापित करता है ?

समाधान - चूकि उपशामक की विशुद्धियो से क्षपक की विशुद्धिया अनन्तगुणी हैं अतएव अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थिति को स्थापित करता है । - पृष्ठ ३४३

(३१५) शंका - द्वितीयोपशमसम्यक्त्वकाल के भीतर क्या - क्या प्राप्त कर सकता

है और क्या - क्या नही कर सकता है ?

समाधान - इस द्वितीयोपशमसम्यक्त्व काल के भीतर असंयम को भी प्राप्त हो सकता है, संयमासंयम को भी प्राप्त हो सकता है, और छह आवलियो के शेष रहने पर सासादन को भी प्राप्त हो सकता है। परन्तु सासादन को प्राप्त होकर यदि मरता है तो नरकगति, तिर्यंचगति और मनुष्यगति को प्राप्त करने के लिये समर्थ नही होता नियम से देवगति को ही प्राप्त करता है। यह कषायप्राभृतचूर्णिसूत्र (यतिवृषभाचार्यकृत) का अभिप्राय है।

किन्तु भगवान भूतबलि के उपदेशानुसार उपशमश्रेणी से उतरता हुआ सासादन गुणस्थान को प्राप्त नहीं करता। निश्चयतः नारकायु, तिर्यगायु और मनुष्यायु, इन तीन आयु में से पूर्व में बांधी गई एक भी आयु से कषायों को उपशमाने के लिये समर्थ नही होता। इसी कारण से नरक, तिर्यंच व मनुष्यगति को प्राप्त नही करता। - पृष्ठ ३३१

(३१६) शंका - नारकी जीव प्रथमसम्यक्त्व कब उत्पन्न करते हैं ?

समाधान - नारकी जीव पर्याप्तकों में उत्पन्न होने के अन्तर्मुहूर्त बाद मे अन्तिम अन्तर्मुहूर्त के पहले तक प्रथमसम्यक्त्व उत्पन्न कर सकते है। निर्वृत्यपर्याप्त की अवस्था में नहीं करते। - पृष्ठ ४१६

(३१७) शंका - चारों गतियों में प्रथम अन्तर्मुहूर्त काल के बिना प्रथमसम्यक्त्व उत्पन्न क्यों नही करते ?

समाधान - पर्याप्त होने के प्रथम समय से लगाकर तत्प्रायोग्य अन्तर्मुहूर्त तक निश्चय से जीव प्रथम समक्त्व उत्पन्न नहीं करते, क्योंकि अन्तर्मुहूर्त काल के बिना सम्यक्त्व उत्पन्न करने के योग्य विशुद्धि की उत्पत्ति का अभाव है। - पृष्ठ ४२०

(३१८) शंका - आयु के अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर भी नारकी जीव प्रथम सम्यक्त्व को प्राप्त नहीं करते हैं, इसलिये (छठे नरक तक) उस काल में भी सम्यक्त्व उत्पत्ति का अभाव कहना चाहिये। ?

समाधान - नही, पर्यायार्थिक नय के अवलम्बन से प्रत्येक समय पृथक् - पृथक् सम्यक्त्व की उत्पत्ति होने पर जीवन के द्विचरम समय तक भी वेदक सम्यक्त्व की उत्पत्ति हो सकती है। चरम समय में भी सम्यक्त्वोत्पत्ति का प्रतिषेध नहीं कहा जा सकता, क्योंकि दर्शनमोहनीय

कर्म के उदय के बिना उत्पन्न होनेवाले चरमसमयवर्ती सासादनभाव का भी उपचार से प्रथमसम्यक्त्व सज्ञा मानी जा सकती है । - पृष्ठ ४२०

विशेष - सप्तमी पृथिवी मे यह लागू नही होता, क्योंकि वहाँ केवल एक मिथ्यात्व गुणस्थान के साथ ही मरण होता है ।

(३१९) शंका - तिर्यंच जीव पंचेन्द्रिय पर्याप्तकों मे ही प्रथम सम्यक्त्व को उत्पन्न करते है, एकेन्द्रियो और विकलेन्द्रियो मे असंज्ञिओं में नहीं करते, इसका क्या कारण है ?

समाधान - क्योंकि एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियो तथा असज्ञिओं मे त्रिविध करणयोग्य परिणामो का अभाव है । - पृष्ठ ४२५

(३२०) शंका - एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियो और असंज्ञिओं मे त्रिविध करण के योग्य परिणामो का अभाव क्यों है ?

समाधान - उक्त जीवो मे स्वभाव से ही त्रिविध करणयोग्य परिणामो का अभाव है । तथा उनके मन नही होता, इसलिए उनमे वस्तु स्वरूप के श्रवण, ग्रहण, धारण और कालांतर मे स्मरण करने की शक्ति का अभाव है । - पृष्ठ ४२५

विशेषता - प्रथमोपशम सम्यक्त्व को प्राप्त करनेवाला जीव सज्ञी पंचेन्द्रिय, गर्भोत्पन्न भव्य हो, जागरूक, साकारोपयोगवाला, पर्याप्त तिर्यंच जीव ही प्रथम सम्यक्त्व उत्पन्न करता है इससे विपरीत अभव्य, असंज्ञी, एकेन्द्रिय से विकलेन्द्रिय पर्यंत, सम्मूर्च्छिम तथा अपर्याप्त तिर्यंच जीव के प्रथम सम्यक्त्व की उत्पत्ति का प्रतिषेध होने से प्रथम सम्यक्त्व की उत्पत्ति का अत्यन्ताभाव ही है । (इसीप्रकार मनुष्यादि जीवो का भी समझना चाहिए)। - पृष्ठ ४२५,४२६

(३२१) शंका - यहाँ अत्यन्ताभाव क्या है ?

समाधान - यहाँ करणपरिणामो का अभाव ही प्रकृत मे अत्यन्ताभाव कहा गया है ।- पृष्ठ ४२६

(३२२) शंका - सब द्वीप समुद्रों में तिर्यंच प्रथम सम्यक्त्व उत्पन्न करते हैं तो भोगभूमि के प्रतिभागी समुद्रों में मत्स्य या मगर नहीं है, ऐसा वहाँ त्रस जीवो का प्रतिषेध किया गया है । इसलिए उन समुद्रों मे प्रथम सम्यक्त्व की उत्पत्ति मानना उपयुक्त नहीं है ?

समाधान - यह कोई दोष नही, क्योंकि पूर्वभव के बैरी देवो के द्वारा उन समुद्रो मे डाले गये पंचेन्द्रिय तिर्यंचो की संभावना है । इस अपेक्षा प्रथम सम्यक्त्व की

मे डाले गये पचेन्द्रिय तिर्यंचो की सभावना है। इस अपेक्षा प्रथम सम्यक्त्व की उत्पत्ति भी सभव है। - पृष्ठ ४२६-४२७

(३२३) शंका - नरक से निकले हुए जीवों का देव या नरक गति मे न जाने का कारण क्या है ?
समाधान- ऐसा स्वभाव है। - पृष्ठ ४४७

(३२४) शंका - संख्यात वर्ष की आयुवाले मनुष्य व मनुष्यपर्याप्तको मे सम्यक्त्व सहित प्रवेश करनेवाले देव और नारकी जीवो का वहां से सासादनसम्यक्त्व के साथ किस प्रकार निर्गमन होता है ?
समाधान - वह इसप्रकार है - देव और नारकी सम्यग्दृष्टि जीवो का मनुष्यो मे उत्पन्न होकर, उपशमश्रेणी का आरोहण करके, और फिर नीचे उतरकर सासादन गुणस्थान मे जाकर मरने पर सासादन गुणस्थान सहित निर्गमन होता है। - पृष्ठ ४४४

खुलासा इसप्रकार - अन्तरप्ररूपणा के सूत्र ७ मे वतलाया जा चुका है कि सासादनसम्यग्दृष्टि का जघन्य अन्तर काल पल्योपम के असख्यातवे भाग प्रमाण होता है। इसका कारण धवलाकार ने यह वतलाया है कि सासादन से मिथ्यात्व मे आये हुए जीव के जव तक सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतियो की उद्वेलनघात द्वारा सागरोपम या सागरोपमपृथक्त्व मात्र स्थिति नही रह जाती तव तक वह जीव पुन उपशमसम्यक्त्व प्राप्त नही कर सकता, जहॉ से कि सासादनभाव की पुन. उत्पत्ति हो सके। और उद्वेलनघात द्वारा उक्त क्रिया के होने में कम से कम पल्योपम के असख्यातवे भाग प्रमाण काल लगता ही है। यह व्यवस्था भूतवलि आचार्य के अभिप्रायानुसार है।

असख्यात वर्षवालो मे घटित होगी। सासादनसम्यक्त्व सहित मनुष्यगति मे आया हुआ जीव मिथ्यादृष्टि होकर पुन· द्वितीयोपशमसम्यक्त्वी हो उपशम श्रेणी चढ़ पुन सासादन होकर मर सकता है और इसलिये यह वात सख्यात वर्ष की आयुवाले मनुष्यो मे भी घटित हो सकती है। यह व्यवस्था चूर्णिसूत्रो के कर्त्ता यतिवृषभाचार्य के अभिप्रायानुसार हैं। - पृष्ठ ४४५

धवला पुस्तक - ७

(३२५) शंका - गति किसे कहते है ?
समाधान - जिस पर्याय को गमन किया जाय, उस पर्याय की गति सज्ञा है । - पृष्ठ६

(३२६) शंका - गति की इसप्रकार निरुक्ति करने से तो ग्राम, नगर, खेड़ा, कर्वट आदि स्थानो को भी गति मानने का प्रसंग आता है ?
समाधान - नही आता, क्योंकि रूढि के वल से गतिनामकर्म द्वारा जो पर्याय निष्पन्न की गई है, उसी मे गति शब्द का प्रयोग किया जाता है । गतिनामकर्म के उदय के अभाव के कारण सिद्धगति, अगति कहलाती है । अथवा एक भव से दूसरे भव मे सक्रान्ति का नाम गति है और सिद्धगति असक्रान्ति रूप है।-पृष्ठ६

(३२७) शंका - संयम किसे कहते है ?
समाधान - व्रतरक्षण, समितिपालन, कषायनिग्रह, दडत्याग और इन्द्रियजय का नाम सयम है, अथवा सम्यक् रूप से आत्मनियत्रण को सयम कहते है। - पृष्ठ ७

(३२८) शंका - अनिन्द्रिय जीव अवन्धक क्यो हैं ?
समाधान - क्योंकि निरजन सिद्धो मे समस्त वध का अभाव है, निरामय अर्थात् निर्विकार जीवो मे वध का कोई कारण नही रहता । - पृष्ठ १६

(३२९) शंका - बन्ध और मोक्ष के कारण कौन है ?
समाधान - मिथ्यात्व, असयम, कषाय और योग ये चार बन्ध के कारण ह, और सम्यग्दर्शन, सयम, अकषाय और अयोग ये चार मोक्ष के कारण है। -पृष्ठ९

(३३०) शंका - पांच भावो मे से कौन किसका कारण है ?
समाधान - औदयिक भाव बध करनेवाले है, औपशमिक, क्षायिक, और क्षयोपशमिक भावमोक्ष के कारण है तथा पारिणामिक भाव वन्ध और मोक्ष दोनो के कारण से रहित है । - पृष्ठ ९

(३३१) शंका - जिन्होने केवलज्ञान और केवलदर्शन से समस्त प्रमेय अर्थात् ज्ञेय पदार्थों को देख लिया है और जो करण अर्थात् इन्द्रियो के व्यापार से रहित है, ऐसे सयोगी और अयोगी केवलीयो को पंचेन्द्रिय कैसे कह सकते हैं ?

समाधान - यह कोई दोष नही, क्योकि उनमे पचेन्द्रिय नामकर्म का उदय विद्यमान है, अत उसकी अपेक्षा से उन्हे पचेन्द्रिय कहा गया है । - पृष्ठ १६

(३३२) शंका - जीव केवलज्ञानी कैसे होता है ?

समाधान - औदयिक, औपशमिक, क्षायोपशमिक, पारिणामिक और क्षायिक भाव से केवलज्ञान नही होता । क्षायिकलब्धि से जीव केवलज्ञानी होता है । - पृष्ठ ६०

(३३३) शंका - यदि ऐसा है तो शरीर के रहते हुए जीव अयोगी हो ही नही सकते, क्यो कि शरीरगत जीव द्रव्य को निष्क्रिय मानने मे विरोध आता है ?

समाधान - यह कोई दोष नही, क्योकि आठो कर्मों के क्षीण हो जाने पर जो ऊर्ध्वगमन क्रिया होती है, वह जीव का स्वाभाविक गुण है, क्योंकि यह कर्मोदय के विना स्वय प्रवृत्त होती है । [1]आकाश प्रदेशो मे जहा है वहॉ रहते हुए अथवा न रहते हुए अर्थात् ऊर्ध्वगमन करते हुए । स्वस्थित प्रदेश को न छोड़ते हुए अथवा छोड़कर जो जीवद्रव्य का अपने अवयवो द्वारा परिस्पन्द होता है, वह अयोग है, क्योकि वह कर्मक्षय होने पर स्वय उत्पन्न होता है । अत स्वय सक्रिय होने पर तथा शरीर के रहते हुए भी जीव अयोगी सिद्ध होते है, क्योंकि उनके जीवप्रदेशो के तप्तायमान जलप्रदेशो के सदृश उद्वर्तन और परिवर्तन रूप क्रिया का अभाव है । - पृष्ठ १७

(३३४) शंका - नारकी जीवो के नामकर्म जनित पांच उदयस्थान कौन से है ?

समाधान - नारकी जीवो के नामकर्म जनित २१, २५, २७, २८, २६, ये पाच उदय स्थान होते है । विशेष के लिए ग्रन्थ देखिए । - पृष्ठ ३२

(३३५) शंका - नामकर्म की इक्कीस प्रकृतियो वाला उदयस्थान किसके और कब होता है ?

समाधान - विग्रहगति मे वर्तमान नारकी जीवो के यह इक्कीस प्रकृतियो वाला उदय स्थान होता है । - पृष्ठ ३३

नोट (१)आकाश प्रदेशो मे जहॉं हैं वहाँ रहते हुए अथवा न रहते हुए अर्थात् ऊर्ध्वगमनकरते

(३३६) शंका - उपर्युक्त इक्कीस प्रकृतियो मे से नरकगति आनुपूर्वी को छोड़कर और वैक्रियिकशरीर, हुंडसस्थान, वैक्रियिकशरीराङ्गोपाङ्ग, उपघात और प्रत्येकशरीर इन पाच प्रकृतियो को मिला देने से नामकर्म की पच्चीस प्रकृतियो वाला उदयस्थान किसे होता है?

समाधान - जिस नारकी जीव ने शरीर ग्रहण कर लिया है, उसके यह पच्चीस प्रकृतियो वाला उदयस्थान होता है। - पृष्ठ ३३

(३३७) शंका - पूर्वोक्त पच्चीस प्रकृतियो मे परघात तथा अप्रशस्तविहायोगति मिल देने से नामकर्म की सत्ताईस प्रकृतियो वाला उदय स्थान किसे होता है ?

समाधान - शरीरपर्याप्ति पूर्ण हो जाने के प्रथम समय को आदि लेकर आनप्राणपर्याप्ति अपूर्ण रहने के अतिम समय पर्यन्त - इतने काल तक यह सत्ताईस प्रकृतियो वाला उदयस्थान होता है। - पृष्ठ ३४

(३३८) शंका - पूर्वोक्त सत्ताईस प्रकृतियो मे उच्छवास प्रकृति को मिला देने से नामकर्म की अट्ठाईस प्रकृतियो वाला उदयस्थान किसे होता है ?

समाधान - आनप्राणपर्याप्ति के पूर्ण हो जाने के प्रथम समय को आदि लेकर भाषापर्याप्ति अपूर्ण रहने के अतिम समय तक के काल मे अट्ठाईस प्रकृतियो वाला उदयस्थान होता है। - पृष्ठ ३४

(३३६) शका - पूर्वोक्त अट्ठाईस प्रकृतियो मे दुःस्वर को मिला देने से नामकर्म की उनतीस प्रकृतियो वाला उदयस्थान किसे होता है ?

समाधान - भाषापर्याप्ति पूर्ण कर लेनेवाले के प्रथम समय को लेकर अपनी अपनी आयुस्थिति के अन्तिम समय पर्यन्त, इतने काल मे वह उनतीस प्रकृतियो वाला उदयस्थान होता है। - पृष्ठ ३५

(३४०) शंका - तिर्यच, मनुष्य और देवो मे क्रमशः नामकर्म के उदयस्थान कितने कितने होते हैं ?

समाधान - तिर्यचो मे २१, २४, २५, २६, २७, २८, २६, ३०, ३१ ये नौ उदय स्थान होते है। - पृष्ठ ३५

मनुष्यो मे २०, २१, २५, २६, २७, २८, २६, ३०, ३१, ६, ८ ये ग्यारह उदयस्थान होते है। - पृष्ठ ५२

देवो मे २१, २५, २७, २८, २६ ये पांच उदयस्थान होते है । -पृठ ५८

(३४१) **शंका - जीव कषायरहित किन लब्धियो से होते है ?**

समाधान - औपशमिक व क्षायिक लब्धियो से जीव कषाय रहित होते है ।

खुलासा - चारित्रमोहनीय के उपशम से और क्षय से जो लब्धि उत्पन्न होती है उसी से अकपायत्व उत्पन्न होता है। शेप कर्मो के क्षय व उपशम से अकषायत्व उत्पन्न नही होता, क्योंकि उससे जीव के (तत्प्रायोग्य) औपशमिक या क्षायिक लब्धियॉ उत्पन्न नही होतीं । - पृष्ठ ८३

(३४२) **शंका - मतिअज्ञानी जीव के क्षायोपशमिक लब्धि कैसे मानी जा सकती है?**

समाधान - क्योंकि, उस जीव के मत्यज्ञानावरण कर्म के देशघाति स्पर्धको के उदय से मति अज्ञानपना पाया जाता है । - पृष्ठ ८६

(३४३) **शंका - यदि देशघाति स्पर्धको के उदय से अज्ञानपना होता है, तो अज्ञानपने को औदयिक भाव मानने का प्रसंग आता है ?**

समाधान - नही आता, क्योंकि वहॉ सर्वघाति स्पर्धको के उदय का अभाव है। – पृष्ठ ८६

(३४४) **शंका - तो फिर अज्ञानपने मे क्षायोपशमिकपना क्या है ?**

समाधान - आवरण के होते हुए भी आवरणीय ज्ञान का एक देश जहॉ पर उदय मे पाया जाता है, उसी भाव को क्षायोपशमिक नाम दिया गया है । इससे अज्ञान को क्षायोपशमिक भाव मानने मे कोई विरोध नही आता । - पृष्ठ ८६

(३४५) **शंका - संयत के क्षायोपशमिक लब्धि किसप्रकार होती है ?**

समाधान - चारो सज्चलन कषायो और नोकषायो के देशघाति स्पर्धको के उदय से सयम की उत्पत्ति होती है । इस प्रकार सयत के क्षयोपशमलब्धि वन जाती है । - पृष्ठ ६२

(३४६) **शंका - नोकषायो के देशघाति स्पर्धको के उदय को क्षयोपशम नाम क्यो दिया गया ?**

समाधान - सर्वघाति स्पर्धक अनन्त गुणे हीन होकर और देशघाति स्पर्धको मे परिणत होकर उदय मे आते है । उन सर्वघाति

स्पर्धको का अनन्तगुणहीनपना ही क्षय कहलाता है और उनका देशघाति स्पर्धको के रूप से अवस्थान होना उपशम है । उन्ही क्षय और उपशम से सयुक्त उदय, क्षयोपशम कहलाता है । उसी क्षयोपशम से उत्पन्न सयम 'भी इसी कारण क्षायोपशमिक होता है । इसी प्रकार सामायिक और छेदोपस्थान शुद्धिसयतो के विषय मे भी जान लेना चाहिये। - पृष्ठ ६२

(३४७) शंका - जीव असंयत कैसे होता है ?

समाधान - सयम के घाति कर्मो के उदय से जीव असयत होता है । - पृष्ठ ६५

(३४८) शंका - एक अप्रत्याख्यानावरण का उदय ही असंयत का हेतु माना गया है, क्योंकि वही संयमासंयम के प्रतिषेध से प्रारम्भ कर समस्त संयम का घाती होता है । तब फिर ''संयमघाती कर्मो के उदय से असंयत होता'' ऐसा कहना कैसे घटित होता है ?

समाधान - नही, क्योकि दूसरे भी चारित्रावरण कर्मो के उदय के विना केवल अप्रत्याख्यानावरण के देशसंयम को घात करने का सामर्थ्य नही होता । - पृष्ठ ६५

(३४९) शंका - चूंकि सम्यग्मिथ्यात्व नामक दर्शनमोहनीय प्रकृति के सर्वघाति स्पर्धको के उदय से सम्यग्मिथ्यादृष्टि होता है, इसलिए उसमे क्षायोपशमिकपना घटित नही होता ?

समाधान - सम्यक्त्व की अपेक्षा भले ही सम्यग्मिथ्यात्व के स्पर्धको मे सर्वघातिपना हो, किन्तु अशुद्धनय की विवक्षा से सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति के स्पर्धको मे सर्वघातिपना नही होता, क्योंकि उनका उदय रहने पर भी मिथ्यात्वमिश्रित सम्यक्त्व का कण पाया जाता है । सर्वघाति स्पर्धक तो उन्हे कहते है, जिनका उदय होने से समस्त (प्रतिपक्षी गुण का) घात हो जाय । किन्तु सम्यग्मिथ्यात्व की उत्पत्ति मे तो हम सम्यक्त्व का निर्मूल विनाश नही देखते, क्योंकि यहा सद्भूत और असद्भूत पदार्थों मे समान श्रद्धान होता देखा जाता है । इसलिये सम्यग्मिथ्यात्व को क्षायोपशमिकपना घटित होता है । चूकि इस गुणस्थान मे दो स्थानीय अनुभाग पाया जाता है ।– पृष्ठ ११०

(३५०) शंका - तिर्यचो मे दान देना कैसे संभव हो सकता है ?
समाधान - क्योंकि जो तिर्यच सयतासयत जीव सचित्तभोजन के प्रत्याख्यान अर्थात् व्रत को ग्रहणकर लेते है, उनके लिये शल्लकी के पत्तो आदि का दान करने वाले तिर्यचो के दान देना मानलेने मे कोई विरोध नही आता । पृष्ठ १२३

(३५१) शंका - जीव त्रसकायिक और त्रसकायिक पर्याप्त कितने काल तक रहते है?
समाधान - जघन्य से क्षुद्रभवग्रहण और अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव क्रम से त्रसकायिक और त्रसकायिकपर्याप्त रहते है । - पृष्ठ १४१

अधिक से अधिक पूर्वकोटिपृथक्त्व से अधिक दो सागरोपमसहस्र और केवल दो सागरोपमसहस्र काल तक जीव क्रमश त्रसकायिक और त्रसकायिकपर्याप्त रहते है । - पृष्ठ १४२

(३५२) शका - अभिनिवोधिक ज्ञानी, श्रुतज्ञानी एवं अवधिज्ञानी जीव कितने काल तक रहते है ?
समाधान - देव अथवा नारकी के प्राप्त हुए उपशमसम्यक्त्व के साथ मति, श्रुत और अवधिज्ञान को उत्पन्न करके वेदकसम्यक्त्व को प्राप्त कर अविनष्ट तीनो ज्ञानो के साथ अन्तर्मुहूर्त काल तक रहकर, इस अन्तर्मुहूर्त से हीन पूर्वकोटि आयुवाले मनुष्यो मे उत्पन्न होकर, पुन वीस सागरोपमप्रमाण आयुवाले देवों मे उत्पन्न होकर, पुन पूर्वकोटि आयुवाले मनुष्यो मे उत्पन्न होकर, पुन. वाईस सागरोपम आयुवाले देवो मे उत्पन्न होकर, पुन. पूर्वकोटि आयुवाले मनुष्यो मे उत्पन्न होकर, क्षायिक सम्यक्त्व का प्रारम्भ करके चौवीस सागरोपम आयु स्थितिवाले देवो मे उत्पन्न होकर, पुन पूर्वकोटि आयुवाले मनुष्यो मे उत्पन्न होकर जीवित के थोड़ा शेष रहने पर केवलज्ञानी होकर अवन्धक अवस्था को प्राप्त होने पर चार पूर्वकोटियो से अधिक छ्यासठ सागरोपम काल तक ये तीनो ज्ञान जीव के पाये जाते है । - पृष्ठ १६५

(३५३) शंका - असंयत जीव कम से कम अन्तर्मुहूर्त काल तक कैसे रहते है ?
समाधान - क्योंकि संयत जीव के परिणामो के निमित्त से असंयम को प्राप्त होकर और वहां सर्वजघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक रहकर पुन. संयम को प्राप्त करने पर असंयत जीवो के जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त वन जाता है । - पृष्ठ १७१

(३५४) शंका - अभव्य के समान भी तो भव्य जीव होता है, तव फिर भव्यभाव को अनादि और अनन्त क्यो नही प्ररूपण किया ?

समाधान - नही किया, क्योंकि भव्यत्त्व मे अविनाश शक्ति का अभाव है। अर्थात् यद्यपि अनादि से अनन्त काल तक रहने वाले भव्य जीव है तो सही, पर उनमे शक्ति रूप से ससारविनाश की सभावना है, अविनाशत्व नही। - पृष्ठ १७६

(३५५) शंका - व्रह्म-व्रह्मोत्तर व लान्तव-कापिष्ठ कल्पवासी देवो का देवगति से अन्तर कितने काल तक होता है ?

समाधान - कम से कम दिवसपृथक्त्वमात्र व्रह्म-व्रह्मोत्तर और लान्तव-कापिष्ठ कल्पवासी देवो का अपना देवगति से अन्तर होता है, क्योंकि उक्त देवो द्वारा जो आगामी भव की आयु वाधी जाती है उसका स्थितिवन्ध दिवसपृथक्त्व से कम होता ही नही है। - पृष्ठ १६२

(३५६) शका - पांच मनोयोगी और पांच वचनयोगी जीवो का एक योग से दूसरे मे जाकर पुनः उसी योग मे लौटने पर एक समय प्रमाण अन्तर क्यो नही पाया जाता ?

समाधान - नही पाया जाता, क्योंकि जव एक मनयोग या वचनयोग का विघात हो जाता है या विवक्षित योगवाले जीव का मरण हो जाता है, तव केवल एक समय के अन्तर से पुन अनन्तर समय मे उसी मनयोग या वचनयोग की प्राप्ति नही हो सकती; इसलिए एक समय का अन्तर इन दोनो योगो का नही पाया जाता। - पृष्ठ २०५

(३५७) शंका - जीवप्रदेशो के संकोच और विकोच अर्थात् विस्तार रूप परिस्पंद को योग कहते है। यह परिस्पंद कर्मों के उदय से उत्पन्न होता है, क्योंकि कर्मोदय से रहित सिद्धो के वह नही पाया जाता। अयोगिकेवली मे योग के अभाव से यह कहना उचित नही है कि योग औदयिक नही होता, क्योंकि अयोगिकेवली के यदि योग नही होता तो शरीर नामकर्म का उदय भी तो नही होता। शरीर नामकर्म के उदय से उत्पन्न होनेवाला योग उस कर्मोदय के बिना नही हो सकता, क्योंकि वैसा मानने से अतिप्रसंग दोष उत्पन्न होगा। इस प्रकार जब योग औदयिक होता है, तो उसे क्षायोपशमिक क्यो कहते हो ?

समाधान - ऐसा नही, क्योंकि जव शरीर नामकर्म के उदय से शरीर वनने के योग्य बहुत से पुद्गलो का सचय होता है और वीर्यान्तराय कर्म के सर्वघाति

स्पर्धको के उदयाभाव से व उन्ही स्पर्धको के सत्त्वोपशम से तथा देशघाति स्पर्धको के उदय से उत्पन्न होने के कारण क्षायोपशमिक कहलाने वाला वीर्य (वल) वढ़ता है, तव उस वीर्य को पाकर चूकि जीवप्रदेशो का सकोच-विकोच वढ़ता है, इसलिए योग क्षायोपशमिक कहा गया है। - पृष्ठ ७५

(३५८) शंका - यदि योग वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न होता है तो सयोगिकेवली मे योग के अभाव का प्रसंग आता है ?
समाधान - नही आता, क्योंकि योग में क्षायोपशमिक भाव तो उपचार से माना गया है। असल मे तो योग औदयिक भाव ही है और औदयिक योग का सयोगकेवली मे अभाव मानने मे विरोध आता है। - पृष्ठ ७६

असद्भूत हो सद्भूत हों सब द्रव्य की पर्याय सब।
सद्ज्ञान मे वर्तमानवत् ही हैं सदा वर्तमान सब ।।
पर्याय जो अनुत्पन्न हैं या नष्ट जो हो गई हैं।
असद्भावी वे सभी पर्याय ज्ञानप्रत्यक्ष हैं ।।
पर्याय जो अनुत्पन्न है या हो गई हैं नष्ट जो।
फिर ज्ञान की क्या दिव्यता यदि ज्ञात होवे नहीं वो ।।
अरहत-भासित ग्रथित-गणधर सूत्र से ही श्रमणजन।
परमार्थ का साधन करे अध्ययन करो हे भव्यजन ! ।।
डोरा सहित सुई नहीं खोती गिरे चाहे वन-भवन।
संसार-सागर पार हों जिनसूत्र के ज्ञायक श्रमण ।।
तत्त्वार्थ को जो जानते प्रत्यक्ष या जिनशास्त्र से।
दृगमोह क्षय हो इसलिए स्वाध्याय करना चाहिए ।।
जिन-आगमो से सिद्ध हो सब अर्थ गुण-पर्यय सहित।
जिन-आगमो से ही श्रमणजन जानकर साधे स्वहित ।।
स्वाध्याय से जो जानकर निज अर्थ मे एकाग्र हैं।
भूतार्थ से वे ही श्रमण स्वाध्याय ही बस श्रेष्ठ है ।।

धवला पुस्तक - ८

वन्धस्वामित्व विचय वन्ध के स्वामित्व का विचय अर्थात् विचारणा, मीमासा या परीक्षा।

(३५६) - सान्तरवन्धी प्रकृतियां किसे कहते है ?

समाधान - जिस - जिस प्रकृतियो का कालक्षय से वन्धव्युच्छेद सभव है, वे सान्तर वधी प्रकृतिया है। - पृष्ठ १७

(३६०) शंका - सान्तरवन्धी प्रकृतियां कितनी है ?

समाधान - वे ३४ है - असातावेदनीय, स्त्रीवेद, नपुसकवेद, अरति, शोक, नरकगति, एकेन्द्रियादि ४ जाति, समचतुरुस्रसस्थान को छोडकर शेप ५ सस्थान, वज्रवृषमनाराचसहनन को छोड़कर शेष ५ अशुभ सहनन,नरकगत्यानुपूर्वी, आतार्प, उद्योत, अप्रशस्तविहायोगति, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण शरीर, आस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और अयशकीर्ति। - पृष्ठ १७-१८

(३६१) शंका - निरन्तरवन्धी प्रकृतियां किसे कहते है ?

समाधान - जो प्रकृतिया जघन्य से भी अन्तर्मुहूर्त काल तक निरन्तर रूप से वधती है, वे निरन्तरवन्धी प्रकृतिया कहलाती है। - विषय परिचय पृष्ठ १

(३६२) शंका - निरन्तरवन्धी प्रकृतियां कितनी हैं ?

समाधान - वे ५४ है, ध्रुववन्धी ४७, वे इस प्रकार है - ५ ज्ञानावरण, ६ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, १६ कषाचे, भय, जुगुप्सा, तैजस व कार्मणशरीर, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और ५ अन्तराय ये ४७ तथा ४ आयु,तीर्थकर, आहारकशरीर और आहारकशरीरागोपाग- ये कुल मिलकर ५४ है। - पृष्ठ १६

(३६३) शंका - सान्तर - निरन्तरवन्धी प्रकृतियां किसे कहते है ?

समाधान - जो जघन्य से एक समय तक वधे और उत्कृष्टत एक समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त के आगे भी वधती रहे, उन्हे सान्तर-निरन्तरवन्धी प्रकृतिया कहते है। - विषय परिचय पृष्ठ १

(३६४) **शंका - सान्तर-निरन्तरबन्धी प्रकृतियां कितनी है ?**

समाधान - वे ३२ है - सातावेदनीय, पुरुषवेद, हास्य, रति, तिर्यग्गति, मनुष्यगति, देवगति, पंचेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, औदारिकशरीररांगोपांग, वैक्रियिकशरीररांगोपांग, वज्रवृषभनाराचसंहनन, तिर्यग्गत्यानुपूर्वी, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, देवगत्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्तविहायोगति, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, यशकीर्ति, नीचगोत्र और उच्चगोत्र । - पृष्ठ १६

(३६५) **शंका - गतिसंयुक्त किसे कहते है ?**

समाधान - किसी विवक्षित प्रकृति के बन्ध के साथ चार गतियों मे से कम से कम एक गति के साथ और अधिक से अधिक चारों गतियों के साथ वध होता है, उसे गतिसयुक्त कहते है । जैसे- मिथ्यादृष्टि जीव ५ ज्ञानावरण को चारो गतियो के साथ, उच्चगोत्र को मनुष्य और देवगति के साथ तथा यशकीर्ति को नरकगति के बिना शेष ३ गतियो से सयुक्त बाधता है । - विषय परिचय पृष्ठ१

(३६६) **शंका - गतिस्वामित्व का क्या अर्थ है ?**

समाधान - विवक्षित प्रकृतियो को बाधनेवाले कौन - कौन सी गतियो के जीव है यह इसका अर्थ है । जैसे - ५ ज्ञानावरण को मिथ्यादृष्टि से असयतगुणस्थान तक चारो गतियो के, सयतासयत तिर्यच व मनुष्यगति के, तथा प्रमत्तादि उपरिम गुणस्थानवर्ती मनुष्यगति के ही जीव बाधते है । - विषय परिचय पृष्ठ १

(३६७) **शंका - अध्वान किसे कहते है ?**

समाधान - विवक्षित प्रकृति का बन्ध किस गुणस्थान से किस गुणस्थान तक होता है, उसे अध्वान कहते है । जैसे - ५ ज्ञानावरण का वन्ध मिथ्यादृष्टि से लेकर सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान तक होता है । - विषय परिचय पृष्ठ १

(३६८) **शंका - सादिबन्ध किसे कहते है ?**

समाधान - विविक्षित (जो कही जा रही हो) प्रकृति के वन्ध का एक बार व्युच्छेद हो जाने पर जो उपशमश्रेणी से भ्रष्ट हुए जीव के पुन उसका बन्ध प्रारम्भ हो जाता है, वह सादि वन्ध है । (उपशम श्रेणी का उल्लेख तो उपलक्षण मात्र है)

जैसे - उपशान्त कषाय गुणस्थान से भ्रष्ट होकर सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान को प्राप्त हुए जीव के ५ ज्ञानावरण का वन्ध पुन होने लगता है।- विपय परिचय पृष्ठ १

(३६९) शंका - अनादिवन्ध किसे कहते है ?

समाधान - अनादि से लेकर गुणस्थान की अपेक्षा व्युच्छित्ति काल तक जिन प्रकृतियो का अनादि से वध होता आ रहा है, उसे अनादिवन्ध कहते है । जैसे- सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान को प्राप्त हुए विना उसके पहले भी जो ज्ञानावरणादि का बन्ध होता आ रहा है, वह अनादिवन्ध है ।

(३७०) शंका - ध्रुववन्ध किसे कहते है ?

समाधान - अभव्य जीवो के जिन ध्रुववन्धी प्रकृतियो का वन्ध होता है, वह अनादि अनन्त होने से ध्रुव वन्ध कहलाता है । - विषय परिचय पृष्ठ २

(३७१) शंका - ध्रुववन्धी प्रकृतिया कितनी है ?

समाधान - वे ४७ है - ५ ज्ञानावरण, ९ दर्शनावरण, मिथ्यात्व, १६ कपाये, भय, जुगुप्सा, तैजस, व कार्मणशरीर, वर्ण, गन्ध, रस,स्पर्श,अगुरुलघु,उपघात, निर्माण और ५ अन्तराय । - पृष्ठ १७

(३७२) शंका - अध्रुववन्ध किसे कहते है ?

समाधान - भव्य जीवो के जो कर्मवन्ध होता है, वह विनश्वर होने गे अध्रुव वन्ध कहलाता है । - विषय परिचय पृष्ठ २

(३७३) शंका - अध्रुववन्धी प्रकृतिया कितनी है ?

समाधान - ध्रुववन्धी प्रकृतियो से शेष ७३ प्रकृतिया अध्रुवबन्धी है । - विषय परिचय पृष्ठ २

(३७४) शका - ध्रुवबन्धी प्रकृतियो का कितने प्रकार का बन्ध होता है ?

समाधान - गुणस्थानो की अपेक्षा ध्रुवबन्धी प्रकृतियो का सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव चारो ही प्रकार का बन्ध सभव है । - पृष्ठ १७

(३७५) शंका - शेष प्रकृतियो का कितने प्रकार का वन्ध होता है ?

समाधान - शेष प्रकृतियो का सादि व अध्रुव वन्ध ही होता है ।

(३७६) शंका - वन्ध किसे कहते है ?

समाधान - जीव और कर्मों का मिथ्यात्व, असयम, कषाय और योगो से जो एकत्व परिणाम होता है, उसे वन्ध कहते है । - पृष्ठ २

(३७७) शंका - उत्पादानुच्छेद किसे कहते है ?

समाधान - उत्पाद का अर्थ सत्त्व और अनुच्छेद का विनाश, अभाव अथवा निरूपीपना है। पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा सत्त्व के विनाश को उत्पादानुच्छेद कहते है। - पृष्ठ ५

(३७८) शंका - अनुत्पादानुच्छेद किसे कहते है ?

समाधान - अनुत्पाद का अर्थ असत्त्व और अनुच्छेद का अर्थ विनाश है, असत् के अभाव को अनुत्पादानुच्छेद कहते है । - पृष्ठ ६

(३७९) शंका - निरन्तरवन्ध और ध्रुववन्ध मे क्या भेद है ?

समाधान - जिस प्रकृति का प्रत्यय जिस किसी भी जीव मे अनादि एव ध्रुव भाव से पाया जाता है, वह ध्रुवबंधप्रकृति है और जिस प्रकृति का प्रत्यय नियम से सादि एव अध्रुव तथा अन्तर्मुहूर्त आदि काल तक अवस्थित रहनेवाला है, वह निरन्तर वध प्रकृति है । - पृष्ठ १७

(३८०) शका - भोगभूमियो मे सर्व गुणस्थानवर्ती जीव केवल उच्चगोत्र को क्या सान्तर बांधते है या निरन्तर बांधते है ?

समाधान - भोगभूमियो मे सर्व गुणस्थानवर्ती जीव केवल उच्चगोत्र को निरन्तर ही वाधते है, क्योंकि वहा पर्याप्तकाल मे देवगति को छोडकर अन्य गतियो का वन्ध नही होता । - पृष्ठ १९

(३८१) शंका - दर्शनविशुद्धता किसे कहते है ?

समाधान - 'दर्शन' का अर्थ सम्यग्दर्शन है । उसकी विशुद्धता का नाम दर्शनविशुद्धता है । तीन मूढ़ताओं से रहित और आठ मलो से व्यतिरिक्त जो सम्यग्दर्शन भाव होता है उसे दर्शनविशुद्धता कहते है । व्यवहार नय की अपेक्षा दर्शनविशुद्धता तीर्थकर नामकर्म के वन्ध का मुख्य कारण है । - पृष्ठ ७६-८०

(३८२) शका - विनयसम्पन्नता का स्वरूप तथा तीर्थकर नामकर्म के वंध का कारण कैसे है ?

समाधान - विनयसम्पन्नता से ही तीर्थकर नामकर्म को वाधते है । वह इस प्रकार से ज्ञानविनय, दर्शनविनय और चारित्रविनय के भेद से विनय तीन प्रकार है उनमे वारवार ज्ञानोपयोग से युक्त रहने के साथ वहुश्रुतभक्ति और प्रवचनभक्ति का नाम ज्ञानविनय है । आगमोपदिष्ट सर्व पदार्थो के श्रद्धान के साथ तीन मूढ़ताओं से रहित होना, आठ मलो को छोड़ना, अरहतभक्ति, सिद्धभक्ति, क्षणलवप्रतिवुद्धता और लब्धिसवेगसम्पन्नता को दर्शनविनय कहते है । शीलव्रतो मे निरतिचारता, आवश्यको मे अपरिहीनता अर्थात् परिपूर्णता, और शक्त्यानुसार तप का नाम चारित्रविनय है । साधुओं के लिये प्रासुक आहारादिक का दान, उनकी समाधि का धारण करना, उनकी वैयावृत्ति मे उपयोग लगाना, और प्रवचनवत्सलता, यह ज्ञान, दर्शन एव चारित्र तीनो की ही विनय है, क्योंकि रत्नत्रय समूह को साधु व प्रवचन सज्ञा प्राप्त है । इसी कारण चूकि विनयसम्पन्नता एक भी होकर सोलह अवयवो से सहित है, अत उस एक ही विनय सम्पन्नता से मनुष्य तीर्थकर नामकर्म को वाधते है । - पृष्ठ ८०-८१

(३८३) शका - यह विनयसम्पन्नता देव, नारकियो के कैसे संभव है ?

समाधान - उक्त शका ठीक नही, क्योंकि देव नारकियो मे भी ज्ञानविनय और दर्शनविनय की सम्भावना देखी जाती है । - पृष्ठ ८१

(३८४) शंका - शीलव्रतो मे निरतिचारता किसे कहते है और क्या यह भी तीर्थकर नामकर्म के बन्ध का कारण है ?

समाधान - शीलव्रतो मे निरतिचारता ही तीर्थकर नामकर्म के वध का कारण है। वह इस प्रकार से - हिसा, असत्य, चौर्य, अब्रह्म और परिग्रह से विरत होने का नाम व्रत है। व्रतो की रक्षा को शील कहते है। सुरापान एव मासभक्षण, क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद एव

नपुसकवेद, इनके त्याग न करने का नाम अतिचार और इनके विनाश का नाम निरतिचार या सम्पूर्णता है, इसके भाव को निरतिचारता कहते है । - पृष्ठ ८२

(३८५) शंका - आवश्यको में अपरिहीनता किसे कहते है ?

समाधान - समता, स्तव, वन्दना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान, और व्युत्सर्ग के भेद से छह प्रकार के आवश्यक होते है ।

समता - शत्रु,- मित्र - मणि-पाषाण और सुवर्ण-मृत्तिका मे राग-द्वेष के अभाव को समता कहते है ।

स्तव - अतीत, अनागत और वर्तमान काल विषयक पाच परमेष्ठियो के भेद को न करके अरहन्तो को नमस्कार, जिनो को नमस्कार, इत्यादि द्रव्यार्थिकनिबन्धन नमस्कार का नाम स्तव है ।

वन्दना - ऋषभ, अजित, सम्भव, अभिनन्दन, सुमति, पद्मप्रभ, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ, पुष्पदन्त, शीतल, श्रेयास, वासुपूज्य, विमल, अनन्त, धर्म, शान्ति, कुन्थु,अर, मल्लि,मुनिसुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्व और वर्धमानादि तीर्थकर तथा भरतादिक केवली, आचार्य एव चैत्यालयादिको के भेद को करके अथवा गुणगत भेद के आश्रित, शब्दकलाप से व्याप्त गुणानुस्मरण रूप नमस्कार करने को वन्दना कहते है ।

प्रतिक्रमण - चौरासी लाख उत्तर गुणो के समूह से सयुक्त पाच महाव्रतो मे उत्पन्न हुए मल को धोने का नाम प्रतिक्रमण है ।

प्रत्याख्यान - महाव्रतो के विनाश व मलोत्पादन के कारण जिस प्रकार न होगे वैसा करता हूँ, ऐसी मन से आलोचना करके चौरासी लाख व्रतो की शुद्धि के प्रतिग्रह का नाम प्रत्याख्यान है ।

व्युत्सर्ग - शरीर व आहार मे मन एव वचन की प्रवृत्तियो को हटाकर ध्येय वस्तु की ओर एकाग्रता से चित्त का निरोध करने को व्युत्सर्ग कहते है। इन छह आवश्यको की अपरिहीनता अर्थात् अखण्डता का नाम आवश्यकापरिहनता है। - पृष्ठ ८३-८५

(३८६) शका— क्षण - लवप्रतिबुद्धता किसे कहते है ?

समाधान - क्षण और लव ये काल विशेष के नाम है । सम्यग्दर्शन, ज्ञान, व्रत और शील गुणो को उज्वल करने, मल को धोने अथवा जलाने का नाम प्रतिबोधन

और इसके भाव का नाम प्रतिवोधनता है । प्रत्येक क्षण व लव मे होने वाले प्रतिबोध को क्षण लवप्रतिवुद्धता कहते है । - पृष्ठ ८५

(३८७) शंका - लव्धिसंवेगसम्पन्नता किसे कहते है ?

समाधान- सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र मे जो जीव का समागम होता है, उसे लव्धि कहते है और हर्ष व सात्विक भाव का नाम सवेग है । लव्धि से या लव्धि मे सवेग का नाम-लव्धिसवेग और उसकी सम्पन्नता का अर्थ सप्राप्ति है । इस एक ही लव्धिसवेगसम्पन्नता से तीर्थकर नामकर्म का वन्ध होता है ।- पृष्ठ ८६

(३८८) शंका - शकुत्यनुसार तप किसे कहते है तथा क्या यह तीर्थकर नामकर्म के वन्ध का कारण है ?

समाधान - वल, वीर्य और थाम (स्थामन्) ये समानार्थक शव्द है । तप दो प्रकार का है वाह्य तप और अभ्यन्तर । इनमे अनशनादिक का नाम वाह्य तप और विनयादिक का नाम आभ्यन्तर तप है । छह वाह्य और छह आभ्यन्तर इस प्रकार मिलाकर यह सव तप वारह प्रकार है । जैसा वल हो वैसा तप करने पर तीर्थकर नामकर्म वधता है । इसका कारण यह है कि यथाशक्ति तप मे तीर्थकर नामकर्म के बन्ध के सभी शेष कारण सम्भव है, क्योंकि यथाथाम तप ज्ञान- दर्शन से युक्त सामान्य वलवान और धीर व्यक्ति के होता है और इसलिये उसमे दर्शनविशुद्धतादिको का अभाव नही हो सकता, क्योंकि ऐसा होने पर यथाथाम तप बन नही सकता । - पृष्ठ ८६

(३८९) शंका - साधुओं को प्रासुकपरित्यागता किसे कहते है ?

समाधान - साधुओं के द्वारा विहित प्रासुक अर्थात् निरवद्य ज्ञान दर्शन आदिक के त्याग से (दान से) तीर्थकर नामकर्म वधता है । अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तवीर्य, विरति और क्षायिक सम्यक्त्वादि गुणो के जो साधक है, वे साधु कहलाते है । जिससे आस्रव दूर हो गये है, उसका नाम प्रासुक है अथवा जो निरवद्य है, उसका नाम प्रासुक है । वे ज्ञान, दर्शन व चारित्रादिक ही तो हो सकते है । उनके परित्याग अर्थात् विसर्जन करने को प्रासुकपरित्याग और इसके भाव को प्रासुकपरित्यागता कहते है । अर्थात् दयाबुद्धि साधुओं द्वारा किये जानेवाले ज्ञान, दर्शन व चारित्र के परित्याग या दान का नाम प्रासुक परित्यागता है । यह कारण गृहस्थो मे सम्भव नही है , क्योकि उनमे चारित्र का अभाव है।

रत्नत्रय का उपदेश भी गृहस्थो मे सम्भव नही है, क्योंकि दृष्टिवादादिक उपरिम श्रुत के उपदेश देने मे उनका अधिकार नही है । अतएव यह कारण महर्षियो के ही होता है । - पृष्ठ ८७

(३६०) शंका - साधुओं की समाधिसंधारणता क्या तीर्थंकर नामकर्म के वन्ध का कारण है तथा उसका स्वरूप क्या है ?

समाधान - दर्शन, ज्ञान व चारित्र मे सम्यक् अवस्थान का नाम समाधि है । सम्यक् प्रकार से धारण या साधन का नाम सधारण है । समाधि का सधारण और उसके भाव का नाम समाधिसधारणता है । उससे तीर्थकर नामकर्म वधता है । किसी भी कारण से गिरती हुई समाधि को देखकर सम्यग्दृष्टि, प्रवचनवत्सल, प्रवचनप्रभावक, विनयसम्पन्न, शीलव्रतातिचार वर्जित और अरहतादिको मे भक्तिमान होकर चूकि उसे धारण करता है , इसलिए वह समाधिसधारण है । - पृष्ठ ८८

(३६१) शंका - साधुओं की वैयावृत्ययोगयुक्तता किसे कहते है तथा क्या इससे भी तीर्थकर नामकर्म का वन्ध होता है ?

समाधान - व्यापृत अर्थात् रोगादि से व्याकुल साधु के विपय मे जो किया जाता है, उसका नाम वैयावृत्य है । जिस सम्यक्त्व, ज्ञान, अरहन्तभक्ति, वहुश्रुतभक्ति एव प्रवचनवत्सलत्वादि से जीव वैयावृत्य मे लगता है, वह वैयावृत्ययोग अर्थात् दर्शनविशुद्धतादि गुण है, उनसे सयुक्त होने का नाम वैयावृत्ययोगयुक्तता है । इसप्रकार की उस एक ही वैयावृत्ययोगयुक्तता से तीर्थकर नामकर्म वधता है। - पृष्ठ ८८

(३६२) शंका - क्या अरहन्तभक्ति से तीर्थकर नामकर्म वंधता है तथा इसका स्वरूप क्या है ?

समाधान - जिन्होंने घातिया कर्मो को नष्ट कर केवलज्ञान के द्वारा सम्पूर्ण पदार्थों को देख लिया है, वे अरहन्त है । अथवा आठो कर्मों को दूर कर देने वाले और घातिया कर्मो को नष्ट कर देनेवालो का नाम अरहन्त है । क्योकि कर्म शत्रु के विनाश के प्रति दोनो मे कोई भेद नही है । अर्थात् - अरहन्त शव्द का अर्थ चूकि 'कर्म शत्रु को नष्ट करने वाला' है, अतएव जिस प्रकार चार घातिया कर्मों को नष्ट कर देनेवाले सयोगी और अयोगी जिन 'अरहन्त' शव्द के वाच्य है,

उसीं प्रकार आठो कर्मों को नष्ट कर देनेवाले सिद्ध भी ' अरहन्त ' शव्द के वाच्य हो सकते है, क्योकि निरुक्त्यर्थ की अपेक्षा दोनो मे कोई भेद नही है। उन अरहन्तो मे जो गुणानुरागरूप भक्ति होती है, वही अरहन्तभक्ति कहलाती है। इस अरहन्तभक्ति से तीर्थकर नामकर्म वधता है। - पृष्ठ ८६

(३६३) शंका - बहुश्रुतभक्ति किसे कहते है ?

समाधान - जो बारह अगों के पारगामी है, वे वहुश्रुत कहे जाते है। उनके द्वारा उपदिष्ट आगमार्थ के अनुकूल प्रवृत्ति करने या उक्त अनुष्ठान के स्पर्श करने को वहुश्रुतभक्ति कहते है। - पृष्ठ ८६

(३६४) शंका - प्रवचनभक्ति किसे कही जाती है

समाधान - सिद्धान्त या बारह अगो का नाम प्रवचन है, क्योंकि प्रकृष्ट वचन प्रवचन या प्रकृष्ट (सर्वज्ञ) के वचन, प्रवचन है, ऐसी व्युत्पत्ति है। उस प्रवचन मे कहे हुए अर्थ का अनुष्ठान करना, यह प्रवचन मे भक्ति कही जाती है। - पृष्ठ ६०

(३६५) शंका - प्रवचनवत्सलता क्या है ?

समाधान - उन प्रवचनो अर्थात्, देशव्रती,महाव्रती और असयतसम्यग्दृष्टियो मे जो अनुराग, आकाक्षा अथवा "यह मेरा है ऐसी" बुद्धि होती है, उसका नाम प्रवचनवत्सलता है। - पृष्ठ ६०

(३६६) शंका - प्रवचनप्रभावना किसे कहते है ?

समाधान - आगमार्थ का नाम प्रवचन है, उसके वर्णजनन अर्थात् कीर्तिविस्तार या वृद्धि करने को प्रवचन की प्रभावना और उसके भाव को प्रवचनप्रभावना कहते है। - पृष्ठ ६१

(३६७) शका - क्या अभीक्ष्ण-अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग भी तीर्थंकर नामकर्म के वन्ध का कारण है तथा उसका स्वरूप क्या है ?

समाधान - अभीक्ष्ण-अभीक्ष्ण का अर्थ "बहुत बार" है। ज्ञानोपयोग से भावश्रुत अथवा द्रव्यश्रुत की अपेक्षा है। उनमे बार-बार उपयुक्त रहने से तीर्थकर नामकर्म बधता है,क्योकि दर्शनविशुद्धतादिको के बिना यह अभीक्ष्ण-अभीक्ष्ण योगयुक्तता बन नही सकती। - पृष्ठ ६१

(३९८) शंका - व्रत किसे कहते है ?

समाधान - जो असख्यात गुणित श्रेणीसे कर्मनिर्जरा का कारण है, वही व्रत है । - पृष्ठ ८३

(३९९) शंका - असातावेदनीय का बन्ध और उदय व्युच्छेद किस - किस गुणस्थानो में होता है ?

समाधान - असातावेदनीय का प्रमत्तगुणस्थान मे वन्धव्युच्छेद हो जाने पर पीछे अयोगकेवली के अन्तिम समय मे उदय का व्युच्छेद होता है । - पृष्ठ ४१

(४००) शंका - मिथ्यात्व प्रकृति स्वोदय से बंधती है, इसका कारण क्या है ?

समाधान - मिथ्यात्व के उदय मे ही बधती है, ऐसा स्वभाव है । स्वोदयी अन्य प्रकृतियो का भी ऐसा ही जानना । - पृष्ठ ४४

(४०१) शंका - परोदय प्रकृति किसे कहते है ?

समाधान - पर के उदय मे कोई विवक्षित प्रकृति का वध हो, उसे परोदयी कहते है। जैसे - देवायु का वध मनुष्यायु या तिर्यचायु के उदय मे होता है, क्योकि मनुष्य या तिर्यच ही देवायु का वध करते है ।

(४०२) शंका - स्वोदय प्रकृति किसे कहते है ?

समाधान - अपने ही उदय मे जिसका बध हो, उसे स्वोदयी प्रकृति कहते है । जैसे - मिथ्यात्व का बन्ध मिथ्यात्व के उदय मे ही होता है ।

जो धर्मात्मा श्रावक शास्त्र का व्याख्यान करते है तथा पुस्तक लिखकर तथा लिखवा कर देते है और पढ़ना पढ़ाना इत्यादि ज्ञानदान मे प्रवृत्त होते हैं, उन श्रावको को थोड़े ही काल मे समस्त लोकालोक को प्रकाश करने वाले केवलज्ञान की प्राप्ति होती है । इसलिये अपने हित के चाहने वाले भव्यजीवो ! को यह उत्तम ज्ञानदान अवश्य ही करना चाहिए । -पद्मनन्दि पंचविंशतिका. पृ. २१४

धवला पुस्तक - ६

(४०३) शंका - कृति किसे कहते है ?

समाधान - जो राशि वर्गित होकर वृद्धि को प्राप्त होती है और अपने वर्ग मे से अपने वर्ग के मूल को कम कर वर्ग करने पर वृद्धि को प्राप्त होती है, उसे कृति कहते है । - पृष्ठ २७४

(४०४) शंका - नोकृति किसे कहते है ?

समाधान - एक सख्या का वर्ग करने पर वृद्धि नही होती तथा उसमे से वर्गमूल के कम कर देने पर वह निर्मूल नष्ट हो जाती है । इस कारण एक सख्या नोकृति है । - पृष्ठ २७४

(४०५) शंका - कृति के कितने प्रकार है ?

समाधान - सात प्रकार है - नामकृति, स्थापनाकृति, द्रव्यकृति, गणनकृति, ग्रन्थकृति, करणकृति और भावकृति । - पृष्ठ २३७

(४०६) शंका - नामकृति किसे कहते हैं ?

समाधान - एक व अनेक जीव एव अजीव मे से किसी का 'कृति' ऐसा नाम रखना नामकृति है । - पृष्ठ २४७

(४०७) शंका - स्थापना कृति क्या कहलाती है ?

समाधान - काष्ठकर्म, चित्रकर्म, पोत्तकर्म, लेप्यकर्म, लयनकर्म, शैलकर्म, गृहकर्म, भित्तिकर्म, दन्तकर्म व भेडकर्म मे स्थापना रूप तथा अक्ष एव वराटक (कोडी) आदि मे असद्भावस्थापना रूप 'यह कृति है' ऐसा अभेदात्मक आरोप करना स्थापनाकृति कहलाती है । - पृष्ठ २४८

(४०८) शंका - काष्ठकर्म किसे कहते है ?

समाधान - वह स्थापनाकृति काष्ठ कर्म है, ऐसा कहने पर 'काष्ठ मे जो किये जाते है, वे काष्ठकर्म है । इस निरुक्ति के अनुसार नाचना, हॅसना, गाना तथा तुरई एव वीणा आदि वाद्यो के बजाने रूप क्रियाओं मे प्रवृत्त

हुए देव, नारकी, तिर्यच और मनुष्यो की काष्ठ से निर्मित प्रतिमाओं को काष्ठकर्म कहते है । - पृष्ठ २४६

(४०६) शंका - चित्रकर्म किसे कहते है ?

समाधान - पट, कुड्य (भित्ति) एव फलहिका (काष्ठादि का तख्ता) आदि मे नाचने आदि क्रिया मे प्रवृत्त देव, नारकी, तिर्यच और मनुष्यो की प्रतिमाओं को चित्रकर्म कहते है । क्योकि चित्र से जो किये जाते है, वे चित्रकर्म है । - पृष्ठ २४६

(४१०) शका - पोत्तकर्म क्या है ?

समाधान - पोत्त का अर्थ वस्त्र है, उससे की गई प्रतिमाओं का नाम पोत्तकर्म है । - पृष्ठ २४६

(४११) शका - लेप्यकर्म क्या कहलाता है ?

समाधान - कट (तृण), शर्कग (वालु) व मृत्तिका आदि के लेप का नाम लेप्य है । उससे निर्मित प्रतिमाये लेप्यकर्म कहलाती है । - पृष्ठ २४६

(४१२) शंका - लयनकर्म क्या है ?

समाधान - लयन का अर्थ पर्वत है, उसमे निर्मित प्रतिमाओं का नाम लयन कर्म है । - पृष्ठ २४६

(४१३) शंका - शैलकर्म क्या है ?

समाधान - शैल का अर्थ पत्थर है, उसमे निर्मित प्रतिमाओं का नाम शैलकर्म है । - पृष्ठ २४६

(४१४) शंका - गृहकर्म क्या है ?

समाधान - गृहो से अभिप्राय जिनगृहादिको का है, उनमे की गई प्रतिमाओं का नाम गृहकर्म है । - पृष्ठ २४६

(४१५) **शंका - भित्तिकर्म क्या है ?**

समाधान - घर की दीवालो मे उनसे अभिन्न रची गई प्रतिमाओं का नाम भित्तिकर्म है । - पृष्ठ २५०

(४१६) **शंका - दन्तकर्म किसे कहते है ?**

समाधान - हाथी-दातो पर खोदी हुई प्रतिमाओं का नाम दन्तकर्म है। - पृष्ठ २५०

(४१७) **शंका - भेडकर्म क्या है ?**

समाधान - भेड सुप्रसिद्ध है । उससे निर्मित प्रतिमाओं का नाम भेडकर्म है इस प्रकार ये दस स्थापनाकृति कहलाती है ।

(४१८) **शंका - द्रव्यकृति का स्वरूप और भेद किस प्रकार है ?**

समाधान - आगम द्रव्यकृति और नोआगम द्रव्यकृति ये दो भेद है । आगम, सिद्धान्त व श्रुतज्ञान इन शव्दो का एक ही अर्थ है । जो आप्तवचन पूर्वापर विरुद्ध आदि दोषो के समूह से रहित और सव पदार्थों का प्रकाशक है, वह आगम कहलाता है ।

इस आगम से जो द्रव्य विवक्षित है, वह आगम द्रव्य है, उसकी कृति आगमद्रव्य कृति कहलाती है । आगम से भिन्न नोआगम कहा जाता है, उससे जो द्रव्य है, वह नोआगम द्रव्य और उसकी कृति नोआगम द्रव्यकृति कहलाती है । - पृष्ठ २५१

(४१९) **शंका - आगम द्रव्यकृति है, उसके कितने अर्थाधिकार है ?**

समाधान - स्थित, जित, परिजित, वाचनोपगत, सूत्रसम, अर्थसम, ग्रन्थसम, नामसम और घोषसम इस प्रकार नौ अर्थाधिकार है । अवधारण किये हुए मात्र का नाम स्थित आगम है । अर्थात् जो पुरुष भाव आगम मे वृद्ध व व्याधिपीड़ित मनुष्य के समान धीरे-धीरे सचार करता है, वह उसप्रकार के सस्कार से युक्त पुरुष और वह भावागम भी स्थित होकर प्रवृत्ति करने से अर्थात् रुक-रुक कर चलने से स्थित कहलाता है । स्वाभाविक प्रवृत्ति का नाम जित है । अर्थात् जिस सस्कार से पुरुष भावागम मे अस्खलित रूप से सचार करता है, उससे युक्त पुरुष और वह भावागम भी जित, इस प्रकार कहा जाता है । जिस जिस विषय

मे प्रश्न किया जाता है उस उस मे शीघ्रतापूर्ण प्रवृत्ति का नाम परिचित है। अर्थात् क्रम से, अक्रम से और अनुभय रूप से भावागम रूपी समुद्र मे मछली के समान अत्यन्त चचलता पूर्ण प्रवृत्ति करने वाला जीव और भावागम भी परिचित कहा जाता है। शिष्यो को पढ़ाने का नाम वाचना है। वह चार प्रकार है। नन्दा, भद्रा, जया और सौम्या। अन्य दर्शनो को पूर्वपक्ष करके उनका निराकरण करते हुए अपने पक्ष को स्थापित करनेवाली व्याख्या का नाम **नन्दा वाचना** कहलाती है। युक्तियो द्वारा समाधान करके पूर्वापर विरोध का परिहार करते हुए सिद्धान्त मे स्थित समस्त पदार्थो की व्याख्या का नाम **भद्रा वाचना** है। पूर्वापर विरोध के परिहार के बिना सिद्धान्त के अर्थों का कथन **जया वाचना** कही जाती है। कही - कही स्खलनपूर्ण वृत्ति से जो व्याख्या की जाती है वह **सौम्या वाचना** कहलाती है। इन चार प्रकार की वाचनाओं को प्राप्त वाचनोपगत कहलाता है। अभिप्राय यह है कि जो दूसरो को ज्ञान कराने के लिये समर्थ है वह वाचनोपगत है। - पृष्ठ २५१-२५३

(४२०) शंका - सूत्र तथा सूत्रसम किसे कहते है ?

समाधान - अल्पाक्षरमसंदिग्ध सारवद् गूढनिर्णयम्।
निर्दोषं - हेतुमत्तथ्यं सूत्रमिच्युते बुधै : ।। ११७।।
- पृष्ठ २५६

जो थोड़े अक्षरो से सयुक्त हो, सन्देह से रहित हो, परमार्थ सहित हो, गूढ़ पदार्थो का निर्णय करनेवाला हो, निर्दोष हो, युक्तियुक्त हो और यथार्थ हो उसे पण्डित जन सूत्र कहते है। इस वचन के अनुसार तीर्थकर के मुख से निकला वीजपद सूत्र कहलाता है। उस सूत्र के साथ चूकि रहता अर्थात् उत्पन्न होता है, अत गणधर देव मे स्थित श्रुतज्ञान सूत्रसम कहलाता है। - पृष्ट २५६

(४२१) शंका - अर्थसम, ग्रन्थसम और नामसम क्या कहलाता है ?

समाधान - अर्थसम - जो "अर्यते" अर्थात् जाना जाता है, वह द्वादशाग का विपयभूत अर्थ है। उस अर्थ के साथ रहने के कारण अर्थसम कहलाता है।

अर्थसम - द्रव्यश्रुत आचार्यो की अपेक्षा न करके सयम से उत्पन्न हुए श्रुतज्ञानावरण के क्षयोपशम से जन्य स्वयबुद्धो मे रहनेवाला द्वादशाग श्रुत अर्थसम है, यह अभिप्राय है।

ग्रन्थसम - गणधर देव से रचा गया द्रव्यश्रुत, ग्रन्थ कहा जाता है। उसके साथ रहने अर्थात् उत्पन्न होने के कारण वोधितवुद्ध आचार्यों मे स्थित द्वादशाग श्रुतज्ञान ग्रन्थसम कहलाता है।

नामसम - "नाना मिनोति" अर्थात् नाना रूप से जो जानता है, उसे नाम कहते है अर्थात् अनेक प्रकारो से अर्थज्ञान को नामभेद द्वारा करने के कारण एक आदि अक्षरो स्वरूप बारह अगो के अनुयोगो के मध्य मे स्थित द्रव्य श्रुतज्ञान के भेद नाम है, यह अभिप्राय है। उस नाम के अर्थात् द्रव्यश्रुत के साथ रहने अर्थात् उत्पन्न होने के कारण शेप आचार्यो मे स्थित श्रुतज्ञान नामसम कहलाता है। - पृष्ठ २५९-२६०

(४२२) शंका - अनुयोग के समानार्थक नाम कौन - कौन है ?

समाधान - अनुयोग, नियोग, भाषा, विभाषा और वर्तिका ये पाच अनुयोग के समानार्थक नाम है। - पृष्ठ २६०

(४२३) शंका - गणनकृति क्या है ?

समाधान - जो वह गणनकृति है, वह अनेक प्रकार है। वह इस प्रकार से है - एक सख्या नोकृति है, दो सख्या कृति और नोकृति रूप से अवक्तव्य है, तीन को आदि लेकर सख्यात, असख्यात और अनन्त कृति कहलाते है, वह गणनकृति है। - पृष्ठ २७४

(४२४) शंका - अवक्तव्य क्या है ?

समाधान - दो रूपो का वर्ग करने पर चूकि वृद्धि देखी जाती है, अत दो को नोकृति नही कहा जा सकता है। और चूकि उसके वर्ग मे से मूल को कम करके वर्गित करने पर वह वृद्धि को प्राप्त नही होती, किन्तु पूर्वोक्त राशि ही रहती है , अत "दो" कृति भी नही हो सकता। इस बात को मन से निश्चित कर " दो सख्या अवक्तव्य है।" ऐसा सूत्र मे निर्दिष्ट किया है। यह द्वितीय गणना की जाती है। - पृष्ठ २७४

अथवा कृतिगत सख्यात, असख्यात व अनन्त भेदो से गणनाकृति अनेक प्रकार है। उनमे एक को आदि लेकर एक अधिक क्रम से वृद्धि को प्राप्त राशि नोकृतिसकलना है। जैसे १,२,३,४,५,६,७ आदि दो को आदि

लेकर दो अधिक क्रम से वृद्धि को प्राप्त राशि अवक्तव्यसकलना है । जैसे २,४,६,८,१०, १२, १४ आदि ।

तीन व चार इत्यादिको मे अन्यतर को आदि करके उनमे ही अन्यतर के अधिक क्रम से वृद्धिगत राशि कृतिसकलना है । जैसे - ३,६,९,१२, आदि, ४,८,१२,१६, आदि , ५,१०,१५,२० इत्यादि । - पृष्ठ २७५

(४२५) शंका - ग्रन्थकृति क्या कहलाती है ?

समाधान - जो वह ग्रन्थकृति है, वह लोक मे, वेद मे व समय मे शब्दसन्दर्भ रूप अक्षरात्मक काव्यादिको के द्वारा जो ग्रन्थरचना की जाती है, वह सब ग्रन्थकृति कहलाती है । - पृष्ठ ३२१

(४२६) शंका - करणकृति का स्वरूप तथा भेद - प्रभेद कितने है ?

समाधान - करणकृति दो प्रकार की है - मूलकरणकृति और उत्तरकरणकृति मूलकरणकृति पाच प्रकार की है- औदारिकशरीरमूलकरणकृति, वैक्रियिक शरीरमूलकरणकृति, आहारकशरीरमूलकरणकृति, तैजसशरीरमूलकरणकृति. और कार्मणशरीरमूलकरणकृति, यहॉ शरीर को ही करण कहा गया है, ये सब करणकृतिया है । - पृष्ठ ३२४-३२५

(४२७) शंका - उत्तरकरणकृति का स्वरूप क्या है ?

समाधान - जो वह उत्तरकरणकृति है, वह अनेक प्रकार की है । यथा - असि, वासि, परशु, कुदारी, चक्र, दण्ड, वेम, नालिका, शलाका, मृत्तिका, सूत्र और उदकादिक कार्यों की समीपता से उत्तरकरणकृति कहलाते है । - पृष्ठ ४५०

(४२८) शंका - मृत्तिका आदि उत्तरकरण किस प्रकार है ?

समाधान - जीव से अपृथक् होने के कारण अथवा समस्त कारणो के कारण होने से मूलकरण सज्ञा को प्राप्त हुए पाच शरीरो के चूकि वे मृत्तिका आदि करण हे, अत वे उत्तरकरण कहे जाते है । - पृष्ठ ४५०

(४२९) शंका - कर्ता रूप जीव से शरीर अभिन्न है, अत : कर्त्तापने को प्राप्त हुए शरीर के करणपना कैसे सम्भव है ?

समाधान - यह कहना ठीक नही है, क्योकि जीव से शरीर का कथचित् भेद पाया जाता है । यदि जीव से शरीर को सर्वथा अभिन्न स्वीकार किया जावे तो

चेतनता और नित्यत्व आदि जीव के गुण शरीर मे भी होने चाहिये । परन्तु ऐसा है नही, क्योकि शरीर मे इन गुणो की उपलब्धि नही होती । इस कारण शरीर के करणपना विरुद्ध नही है । - पृष्ठ ३२५

(४३०) शंका - मूलकरणकृति किसे कही जाती है ?

समाधान - वह मूलकरणकृति औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस और कार्मण शरीर के भेद से पाच प्रकार की ही है, क्योकि इससे अधिक शरीर नही पाये जाते है । इन मूल करणो की कृति अर्थात् सघातनादि कार्य मूलकरण कृति कही जाती है । - पृष्ठ ३२५-३२६

(४३१) शका - सघातनकृति किसे कहते है ?

समाधान - (ऊपर कहे गये शरीरो मे से) उनमे से विवक्षित शरीर के परमाणुओं का निर्जरा के विना जो सचय होता है, उसे सघातनकृति कहते है । - पृष्ठ ३२६-३२७

(४३२) शंका - परिशातन कृति क्या कहलाती है ?

समाधान - उन्ही विवक्षित शरीर के पुद्गलस्कन्धो की सचय के बिना जो निर्जरा होती हे, वह परिशातनकृति कहलाती है । - पृष्ठ ३२७

(४३३) शका - सघातन-परिशातन कृति किसे कही जाती है ?

समाधान - विवक्षित शरीर के पुद्गलस्कन्धो का आगमन और निर्जरा का एक साथ होना सघातन - परिशातनकृति कही जाती है । - पृष्ठ ३२७

(४३४) शंका - यह शास्त्र किस हेतु से पढ़ा जाता है ?

समाधान - मोक्ष के हेतु से पढ़ा जाता है । - पृष्ठ १०६

(४३५) शका - भाव और गुण मे क्या भेद है ?

समाधान - गुण यावद्द्रव्यभावी अर्थात् समस्त द्रव्य मे रहनेवाले होते है, परन्तु भाव यावद्द्रव्यभावी नही होते, यह उन दोनो मे भेद है । - पृष्ठ १३७

(४३६) शंका - अनुगम क्या कहलाता है ?

समाधान - जहॉ या जिसके द्वारा वक्तव्य की प्ररूपणा की जाती है, वह अनुगम कहलाता है । अधिकार सज्ञा युक्त अनुयोगद्वारो के जो अधिकार होते है, उनका 'अनुगम' यह नाम है । जैसे वेदनानुयोग द्वार के पदमीमासा आदि अनुगम । वह अनुगम अनेक प्रकार है, क्योकि उसकी सख्या का कोई नियम नही है । अथवा जिसके द्वारा जीवादिक पदार्थ जाने जाते है, वह अनुगम कहलाता है । - पृष्ठ १४१

(४३७) शंका - प्रमाण किसे कहते है ?

समाधान - निर्बाध ज्ञान से विशिष्ट आत्मा को प्रमाण कहते है । - पृष्ठ १४१

(४३८) शंका - स्वसमयवक्तव्यता, परसमयवक्तव्यता और तदुभयवक्तव्यता का स्वरूप क्या है ?

समाधान - स्वसमयवक्तव्यता - स्वसमय सबधी प्ररूपणा का नाम स्वसमयवक्तव्यता है।

परसमयवक्तव्यता - परसमय सबधी प्ररूपणा का नाम परसमयवक्तव्यता है ।

तदुभयवक्तव्यता - दोनो को मिलाकर कथन करना तदुभयवक्तव्यता है । - पृष्ठ१४०

(४३९) शका - ज्ञायकशरीर भावि तद्व्यतिरिक्त द्रव्यकृति क्या है ?

समाधान -ग्रन्थिम, वाइम, वेदिम, पूरिम, सघातिम, अहोदिम, णिक्खोदिम, ओवेल्लिम, उद्वेल्लिम, वर्ण, चूर्ण, गन्ध, और विलेपन आदि तथा और जो इसी प्रकार अन्य है, वह सब ज्ञायक शरीर भावितद्व्यतिरिक्तद्रव्यकृति कही जाती है ।

ग्रन्थिम - गूथने रूप क्रिया से सिद्ध हुए फूल आदि द्रव्य को ग्रन्थिम कहते है।

वाइम - बुनना क्रिया से सिद्ध हुए सूप, टिपारी, चगेर (एक प्रकार की बडी टोकरी), किदय (कृतक?), चालनी, कम्बल और वस्त्रादि द्रव्य वाइम कहलाते है ।

वेदिम - वेधन क्रिया से सिद्ध हुए सूति (सोम निकालने का स्थान), इधुव (एधी अर्थात् भट्टी), कोश और पल्य आदि द्रव्य वेधिम कहे जाते है ।

पूरिम - पूरण क्रिया से सिद्ध हुए तालाब का बाध व जिनगृह का चबूतरा आदि द्रव्य का नाम पूरिम है ।

संघातिम - काष्ठ, ईट और पत्थर आदि की सघातन क्रिया से सिद्ध हुए कृत्रिम जिनभवन, ग्रह, प्राकार और स्तूप आदि द्रव्य सघातिम कहलाते है ।

अहोदिम या अधोधिम - नीम, आम, जामुन और जबीर आदि अधोधिम क्रिया से सिद्ध हुए द्रव्य को अधोधिम कहते है । अधोधिम क्रिया का अर्थ सचित्त व अचित्त द्रव्यो की रोपन क्रिया है, यह तात्पर्य है ।

णिक्खोदिम - पुष्करिणी, वापी, कूप, तड़ाग, लयन, और सुरग आदि निष्खनन (खोदना) क्रिया से सिद्ध हुए द्रव्य णिक्खोदिम कहलाते है ।

ओवेल्लिम या उपवेल्लन - उपवेल्लन क्रिया से सिद्ध हुए, एक गुणे, दुगुणे एव तिगुणे सूत्र, डोरा व वेष्ट आदि द्रव्य उपवेल्लन कहलाते है ।

उद्वेल्लिम - ग्रन्थिम व वाइम आदि द्रव्यो के उद्वेल्लन से उत्पन्न द्रव्य उद्वेल्लिम कहे जाते है ।

वर्ण - चित्रकार एव वर्णों के उत्पादन मे निपुण दूसरो की क्रिया से सिद्ध मनुष्य व तुरग आदि अनेक आकार रूप द्रव्य वर्ण कहे जाते है ।

चूर्ण - चूर्णन क्रिया से सिद्ध हुए पिष्ट, पिष्टिका और कणिका (आटा) आदि द्रव्य को चूर्ण कहते है ।

गन्ध - वहुत द्रव्यो के सयोग से उत्पादित गन्ध की प्रधानता रखनेवाले द्रव्य का नाम गन्ध है ।

विलेपन - घिसे व पीसे गये चन्दन और कुकुम आदि द्रव्य विलेपन कहे जाते है। इनको आदि लेकर जो वे और द्रव्य है, इस वचन से अवधान व सुरण अर्थात् जोडकर व काटकर वनाने व द्विसयोग आदि द्रव्यो के अस्तित्व की प्ररूपणा होती है । - पृष्ठ २७२ - ७३

संघातनकृति आदि कृतियों के कुछ उल्लेख

(४४०) **शंका - औदारिक शरीर की उत्कृष्ट संघातन कृति किसके होती है ?**

समाधान - जो कोई मनुष्य या मनुष्यनी अथवा तिर्यच या तिर्यचयोनिनी पचेन्द्रिय है, पर्याप्त है, सज्ञी है, सख्यात वर्ष की आयुवाला है, तीसरे समय मे तद्भवस्थ हुआ है, तद्भवस्थ होने के प्रथम समयवर्ती आहारक है एव उत्कृष्ट योगवाला है, उसके उत्कृष्ट सघातन कृति होती है। - पृष्ठ ३२६

(४४१) **शंका - औदारिक शरीर की उत्कृष्ट परिशातन कृति किसके होती है ?**

समाधान - जो कोई मनुष्य या मनुष्यनी अथवा पचेन्द्रिय तिर्यच या पचेन्द्रिय तिर्यचयोनिनी सज्ञी है, पर्याप्त है, पूर्वकोटि प्रमाण आयुवाला है, कर्मभूमिज है अथवा कर्मभूमिप्रतिभाग मे उत्पन्न हुआ है। जिसने विवक्षित भव मे स्थित होने के प्रथम समय से लेकर उत्कृष्टयोग के द्वारा आहार ग्रहण किया है, जो उत्कृष्ट वृद्धि को प्राप्त हुआ है जो उत्कृष्ट-योगस्थानो को बहुत-बहुत वार प्राप्त होता है, जघन्य योगस्थानों को प्राप्त नही होता, जो तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट योगी बहुत-बहुत वार होता, तत्प्रायोग्य जघन्ययोगी बहुत-बहुत वार नही होता, जिसके अधस्तन स्थितियो के निषेक का जघन्य पद होता है और उपरिम स्थितियो के निषेक का उत्कृष्ट पद होता है, जो मध्य काल मे विक्रिया को प्राप्त नही होता, जिसने मध्य काल मे शरीर का छेद नही किया है, जिसका भाषाकाल स्तोक है, मनोयोगकाल स्तोक है, भाषा काल ह्रस्व है, मनोयोगकाल ह्रस्व है, जो जीवित के अन्तर्मुहूर्त मात्र शेष रहने पर योगस्थानो के उपरिम भाग मे अन्तर्मुहूर्त काल तक स्थित है, जो अन्तिम जीवगुणहानि स्थान के मध्य मे आवली के असख्यातवे भाग काल तक स्थित है, त्रिचरम और द्विचरम समय मे जो उत्कृष्ट योग को प्राप्त हुआ है तथा जो अन्तिम समय मे उत्तर शरीर की विक्रिया करता है, उसके उत्तर शरीर की विक्रिया करने के प्रथम समय मे उत्कृष्ट योगयुक्त होने पर उत्कृष्ट परिशातनकृति होती है। उससे भिन्न अनुत्कृष्ट परिशातनकृति होती है।- पृष्ठ३२०

(४४२) **शंका - द्रव्यशुद्धि, क्षेत्रशुद्धि, कालशुद्धि और भावशुद्धि किसे कहते है ?**

समाधान - यहाँ व्याख्यान करनेवालो और सुननेवालो को भी द्रव्यशुद्धि, क्षेत्रशुद्धि, कालशुद्धि और भावशुद्धि से व्याख्यान करने या पढ़ने मे प्रवृत्ति करना चाहिये। - पृष्ठ २५३

द्रव्यशुद्धि - उनमे ज्वर, कुक्षिरोग, शिरोरोग, कुत्सित स्वप्न, रुधिर, विष्ठा, मूत्र, लेप, अतीसार और पीव का वहना, इत्यादिकों का शरीर मे न रहना द्रव्यशुद्धि कही जाती है । - पृष्ठ २५३

क्षेत्रशुद्धि - व्याख्याता से अधिष्ठित प्रदेश से चारो ही दिशाओं मे अट्ठाईस हजार (धनुष) प्रमाण क्षेत्र मे विष्ठा, मूत्र, हड्डी, केश, नख और चमड़े आदि के अभाव को तथा छह अतीत वाचनाओं से समीप मे (या दूरी तक) पचेन्द्रिय जीव के शरीर सम्वन्धी गीली हड्डी, चमड़ा, मास और रुधिर के सम्वन्ध के अभाव को क्षेत्रशुद्धि कहते है । - पृष्ठ २५३

कालशुद्धि - विजली, इन्द्र धनुष, सूर्य-चन्द्र का ग्रहण, अकालवृद्धि, मेघगर्जन,मेघो के समूह से आच्छादित दिशाये, दिशादाह, धूमिकापात (कुहरा), सन्यास, महोपवास, नन्दीश्वर महिमा और जिनमहिमा इत्यादि के अभाव को कालशुद्धि कहते है । - पृष्ठ २५३

भावशुद्धि - राग, द्वेष, अहकार, आर्त व रौद्र ध्यान से रहित, पाच महाव्रतो से युक्त, तीन गुप्तियो से रक्षित तथा ज्ञान, दर्शन व चारित्र आदि आचार से वृद्धि को प्राप्त भिक्षु के भावशुद्धि होती है । - पृष्ठ २५४

(१) यमपटहका, (वाजो का) शव्द सुनने पर, अग से रक्तस्राव के होने पर, अतिचार के होने पर तथा दाताओं के अशुद्धकाय होते हुए भोजन कर लेने पर स्वाध्याय नही करना चाहिये । - २५५

(२) तिलमोदक, चिउड़ा, लाई और पुआ आदि चिक्कण एव सुगन्धित भोजनो के खाने पर तथा दावानल का धुआ होने पर अध्ययन नही करना चाहिये । - पृष्ठ २५५

(३) एक योजन के घेरे मे सन्यासविधि, महोपवासविधि,आवश्यकक्रिया एव केशो का लोच होने पर तथा आचार्य का स्वर्गवास होने पर सात दिन तक अध्ययन का प्रतिषेध है । उक्त घटनाओं के योजन मात्र मे होने पर तीन दिन तक तथा अत्यन्त दूर होने पर एक दिन तक अध्ययन निषिद्ध है । - पृष्ठ २५५

(४) प्राणी के तीव्र दु ख से मरणासन्न होने पर या अत्यन्त वेदना से तडफड़ाने पर तथा एक निर्वर्त्तन (एक वीघा या गुठा) मात्र मे तिर्यचो का सचार होने पर अध्ययन नही करना चाहिए । - पृष्ठ २५५

(५) उतने मात्र मे स्थावरकाय जीवो के घातरूप कार्य मे प्रवृत्त होने पर, क्षेत्र की अशुद्धि होने पर, दूर से दुर्गन्ध आने पर अथवा अत्यन्त सड़ी गन्ध के आने पर ठीक अर्थ समझ मे न आने पर अथवा अपने शरीर की

शुद्धि मे रहित होने पर मोक्ष सुख के चाहनेवाले व्रती पुरुषो को सिद्धान्त का अध्ययन नही करना चाहिये । - पृष्ठ २५५, ५६, गाथा ६७-६८

(६) मल छोड़ने की भूमि से सौ अरत्नि प्रमाण दूर, तनुसलिल अर्थात् मूत्र के छोड़ने मे भी इस भूमि से पचास अरत्नि दूर, मनुष्य शरीर के लेशमात्र अवयव के स्थान से पचास धनुष तथा तिर्यचो के शरीर सम्बन्धी अवयव के स्थान से उससे आधी मात्र अर्थात् पचीस धनुष प्रमाण भूमि को शुद्ध करना चाहिये । - पृष्ठ २५६, गाथा ६६-१००

(७) व्यन्तरो के द्वारा भेरीताड़न करने पर, उनकी पूजा का सकट होने पर, कर्षण के होने पर, चाण्डालवालको के समीप मे झाडा-वुहारी करने पर, अग्नि, जल व रुधिर की तीव्रता होने पर, तथा जीवो के मास व हड्डियो के निकाले जाने पर क्षेत्र की विशुद्धि नही होती, जैसा कि सर्वज्ञो ने कहा है। क्षेत्र की शुद्धि करने के पश्चात् अपने हाथ और पैरो को शुद्ध करके तदनन्तर विशुद्ध मन युक्त होता हुआ प्रासुक देश मे स्थित होकर वाचना को ग्रहण करो। - पृष्ठ २५६, गाथा १०१,१०२,१०३,

(८) वाजू और काख आदि अपने अग का स्पर्श न करता हुआ उचित रीति से अध्ययन करे और यत्नपूर्वक अध्ययन करके पश्चात् शास्त्रविधि मे वाचना को छोड़ दे । - पृष्ठ २५७,गाथा१०४

साधु पुरुपो ने वारह प्रकार के तप मे स्वाध्याय को श्रेष्ठ कहा है । इसलिये विद्वानो को स्वाध्याय न करने के दिनो को जानना चाहिये ।

(६) पर्वदिनो (अष्टमी व चतुर्दशी आदि), नन्दीश्वर के श्रेष्ठ महिमादिवसो अर्थात् अष्टाह्निका दिनो मे, सूर्य-चन्द्र का ग्रहण होने पर विद्वान व्रती को अध्ययन नही करना चाहिये । - पृष्ठ २५७, गाथा १०६

(१०) अष्टमी मे अध्ययन गुरु और शिष्य दोनो के वियोग को करता है। पूर्णमासी के दिन किया गया अध्ययन कलह को और चतुर्दशी के दिन किया गया अध्ययन विघ्न को करता है । - पृष्ठ २५७, गाथा१०७

(११) यदि साधुजन कृष्ण चतुर्दशी और अमावस्या के दिन अध्ययन करते है, तो विद्या और उपवासविधि सव विनाशवृत्ति को प्राप्त होते हैं । - पृष्ठ २५७,गाथा१०८

(१२) मध्याह्न काल में किया गया अध्ययन जिनरूप को नष्ट करता है, दोनो सध्याकालो मे किया गया अध्ययन व्याधि को करता है

तथा मध्यम रात्रि मे किये गये अध्ययन से अनुरक्त जन भी द्वेष को प्राप्त होते है । - पृष्ठ २५७ गाथा १०६

(१३) अतिशय तीव्र दुख से युक्त और रोते हुए प्राणियो को देखने या समीप मे होने पर, मेघो की गर्जना व विजली के चमकने पर और अतिवृष्टि के साथ उल्कापात होने पर (अध्ययन नही करना चाहिये)। - पृष्ठ २८५ गाथा ११०

(१४) जेठ मास की प्रतिपदा एव पूर्णमासी को पूर्वाह्न काल मे वाचना की समाप्ति मे एक पाद अर्थात् एक वितस्ति प्रमाण (जाघो की) वह छाया कही गई है। अर्थात् इस समय पूर्वाह्न काल मे वारह अगुल प्रमाण छाया के रह जाने पर अध्ययन समाप्त कर देना चाहिए । - पृष्ठ २५८, गाथा १११

(१५) वही समय (एक पाद) अपराह्नकाल मे वाचना की विधि मे अर्थात् प्रारम्भ करने मे कहा गया है। पूर्वाह्नकाल मे वाचना का प्रारभ करने और अपराह्नकाल मे उसके छोड़ने मे सात पाद (वितस्ति) प्रमाण छाया कही गई है (अर्थात् प्रात काल जव सात पाद छाया हो जावे तव अध्ययन प्रारम्भ करे और अपराह्न मे सान पाद छाया रह जाने पर समाप्त करे) ।-पृष्ठ २५८, गाथा ११२

(१६) ज्येष्ठ मास के आगे पौष मास तक प्रत्येक मास मे दो अगुल प्रमाण वृद्धि होती है । यह क्रम से वाचना समाप्त करने की छाया का प्रमाण कहा गया हैं । - पृष्ठ २५८, गाथा११३

(१७) इस प्रकार क्रम से वृद्धि होने पर पौष मास तक दो पाद हो जाते है । पश्चात् पौष मास से ज्येष्ठ मास तक दो अगुल ही क्रमश कम होते जाते है, ऐसा जानना चाहिये । - पृष्ठ २५८, गाथा ११४

(१८) सूत्र और अर्थ की शिक्षा के लोभ से किया गया द्रव्यादिक का अतिक्रमण असमाधि अर्थात् सम्यक्त्वादि की विराधना, अस्वाध्याय अर्थात् शास्त्रादिको का अलाभ, कलह, व्याधि और वियोग को करता है । - पृष्ठ २५६, गाथा ११५

(१६) विनय से पढ़ा गया श्रुत यदि किसीप्रकार भी प्रमाद से विस्मृत हो जाता है, तो परभव मे वह उपस्थित हो जाता है और केवलज्ञान को भी प्राप्त कराता है । - पृष्ठ २५६, गाथा ११६

नृत्य कुतूहल तत्त्व को, मरियवि देखो धाय ।
निजानन्द रस मे छको, आन सवै छिटकाय ।।

धवला पुस्तक - १०

(४४३) शंका - वेदना-निक्षेप किसे कहते है ?

समाधान - आठ कर्मो के निमित्त से उत्पन्न हुई वेदना को नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव इन चार भेदो मे निक्षिप्त करना, उसे वेदना-निक्षेप कहते है । नाम, स्थापना और द्रव्य निक्षेप वेदना का अर्थ सुगम है । भाववेदना मे भी जीवभाववेदना का स्वरूप कहते है ।

(४४४) शंका - जीवभाववेदना का स्वरूप क्या है एवं उसके कितने भेद है ?

समाधान - (आठ कर्मो की सापेक्षता मे उत्पन्न हुए जीव मे जो भाव उनकी वेदना, वह जीवभाववेदना है) जीवभाववेदना औदयिक आदि के भेद से पाच प्रकार की है।

(१) आठ प्रकार के कर्मा के उदय से उत्पन्न हुई वेदनाऔदयिकवेदनाहै।

(२) कर्मो के उपशम से उत्पन्न हुई वेदना औपशमिकवेदना है ।

(३) कर्मो के क्षय से उत्पन्न हुई वेदना क्षायिकवेदना है ।

(४) कर्मो के क्षयोपशम से उत्पन्न हुई अवधिज्ञानादि स्वरूप वेदना क्षायोपशमिक वेदना है ।

(५) जीवत्व, भव्यत्व व उपयोग आदि स्वरूप पारिणामिकवेदना है । सुवर्ण, पुत्र व सुवर्णसहित कन्या आदि से उत्पन्न हुई वेदनाओं का इन पाचो मे ही अन्तर्भाव हो जाता है । - पृष्ठ ८

(४४५) शंका - कौन नय किन वेदनाओं को स्वीकार करता है ?

समाधान - नैगम सग्रह और व्यवहार नय सब वेदनाओं को स्वीकार करता है। - पृष्ठ १०

(४४६) शंका - शब्दनय किस वेदना को स्वीकार करता है ?

समाधान - शब्दनय नामवेदना और भाववेदना को स्वीकार करता है। - पृष्ठ ११

(४४७) शंका - वेदना द्रव्यविधान का क्या अर्थ है ?

समाधान - वेदना जो द्रव्य, वह वेदना द्रव्य है । 'त्रिधान' शब्द का व्युत्पत्त्यर्थ है "विधीयते अनेन" जिसके द्वारा विधान (भेद) किया जाय, यह "वेदना द्रव्यविधान" पद का अर्थ है । - पृष्ठ १८

(४४८) शंका - पदमीमांसा अनुयोगद्वार क्या है ?

समाधान - " पद्यते गम्यते परिच्छिद्यते" जो जाना जाय, वह पद है। उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य, अजघन्य, सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव, ओज, युग्म, ओम, विशिष्ट और नोओम - नोविशिष्ट पद के भेद से यहा तेरह पद हैं। इन पदो की मीमासा अर्थात् परीक्षा जिस अधिकार मे की जाती है, वह पदमीमासा अनुयोगद्वार है। - पृष्ठ १६

(४४९) शंका - युग्म किसे कहते है ?

समाधान - समान को युग्म कहते है। युग्म और सम एकार्थवाचक शब्द है। - पृष्ठ २२

(४५०) शंका - कृतयुग्म, वादरयुग्म, कलिओज राशि और तेजोज राशि क्या है ?

समाधान - (१) जो राशि चार से अवहृत होती है, वह कृतयुग्म कहलाती है।

(२) जिस राशि को चार से अवहृत करने पर दो रूप शेष रहते है, वह वादरयुग्म कही जाती है।

(३) जिसको चार से अवहृत करने पर एक अक शेष रहता है, वह कलिओज राशि है।

(४) जिसको चार से अवहृत करने पर तीन अक शेष रहता है, वह तेजोज राशि है।

जैसे - यहाँ चौदह को वादरयुग्म, सोलह को कृतयुग्म, तेरह को कलिओज और पन्द्रह को तेजोज राशि कहते है। - पृष्ठ २३

(४५१) शंका - (गुणितकर्मांशिक के कथन की विवक्षा मे वेदना महा अधिकार के अन्तर्गत स्वामित्व का कथन करते समय यह प्रश्न उपस्थित किया गया है)कि स्थावर का प्रतिषेध करने से ही सूक्ष्मता का प्रतिषेध हो जाता है, क्योंकि सूक्ष्म जीव और दूसरी पर्याय मे नही पाये जाते ?

समाधान - नही, क्योंकि यहाँ पर सूक्ष्म नामकर्म के उदय से जो सूक्ष्मता उत्पन्न होती है, उसके बिना विग्रहगति मे वर्तमान त्रसो की सूक्ष्मता स्वीकार की गई है - पृष्ट ४७

(४५२) शंका - वे सूक्ष्म कैसे हैं ?

समाधान - क्योंकि उनका शरीर अनन्तानन्त विस्रसोपचयो से उपचित औदारिक नोकर्म स्कन्धो से रहित है, अत वे सूक्ष्म है। - पृष्ठ ४८

(४५३) शंका - पर्याप्तभव क्या कहलाते है ?

समाधान - उत्पत्ति के वारो का नाम भव है और पर्याप्तको के भव पर्याप्तभव कहलाते है। वे बहुत है । पर्याप्तो मे उत्पन्न होने की वारशलाकाये बहुत है । - पृष्ठ ३५

(४५४) शंका - गुणितकर्मांशिक जीवो के आवासको के कितने भेद होते है ?

समाधान - सात भेद होते है - भवावास, अद्धावास, आयुआवास, अपकर्षण - उत्कर्षण आवास, योगावास, सक्लेशावास । - पृष्ठ ५०-५१

भवावास - एक भव मे या अनेक भवो मे रहने के काल को भवावास कहते है। वहा परिभ्रमण करनेवाले उक्त जीव के पर्याप्त भव बहुत होते है और अपर्याप्त भव थोड़े होते है । इस सूत्र द्वारा भवावास की प्ररूपणा की ।१५। - पृष्ठ ५०

अद्धावास - पर्याप्तकाल दीर्घ होता है और अपर्याप्तकाल थोड़ा होता है, यह अद्धावास है ।१६। - पृष्ट ५०

आयुआवास - जब - जव आयु को वाधता है, तब उसके योग्य जघन्य योग से वाधता है । यह आयुआवास की प्ररूपणा है ।१७। - पृष्ठ ५१

अपकर्षण - उत्कर्ष्ण आवास - उपरिम स्थितियो के निषेक का उत्कृष्ट पद होता हैं और नीचे की स्थितियो के निषेक का जघन्य पद होता है, ये अपकर्षण - उत्कर्षणआवास का कथन हुआ ।।१८।। - पृष्ठ ५१

योगावास - बहुत-बहुत बार उत्कृष्ट योगस्थानो को प्राप्त होता है । ये योगावास का कथन हुआ ।१९। - पृष्ठ ५१

संक्लेशावास - बहुत-बहुत बार वहुत संक्लेश परिणामवाला होता है । ये सक्लेशावास का कथन हुआ ।२०। - पृष्ठ ५१

(४५५) शंका - उत्कर्षण किसे कहते है ?

समाधान - कर्मप्रदेशो की स्थिति अनुभाग को बढ़ाना, उत्कर्षण कहलाता है। - पृष्ठ ५२

(४५६) शंका - किन स्थितियो का उत्कर्षण होता है और किनका नही होता ?

समाधान - उदयावली की स्थिति के प्रदेशो का उत्कर्षण नही किया जाता है, क्योंकि ऐसा स्वभाव है । तथा उदयावली के बाहिर की सभी स्थतियो का उत्कर्षण (नही) किया जाता है । किन्तु चरम स्थिति का आवली के असख्यातवे भाग को अतिस्थापना रूप से स्थापित करके आवली के असख्यातवे भाग मे

उत्कर्षण होता है, क्योंकि ऊपर स्थितिवन्ध का अभाव है। यह जघन्य उत्कर्षण है। पुन उपरिम स्थितियो मे अतिस्थापना को आवली मात्र प्राप्त होने तक वढ़ाना चाहिये। फिर ऊपर निक्षेप की ही वृद्धि होती है। अतिस्थापना और निक्षेप का अभाव होने से नीचे उत्कर्षण नही होता है। - पृष्ठ ५२

(४५७) शंका - उत्कृष्ट और जघन्य अतिस्थापना का प्रमाण क्या है ?

समाधान - उत्कृष्ट अतिस्थापना एक समय अधिक आवली से न्यून आवाधा प्रमाण है और जघन्य अतिस्थापना आवली प्रमाण है। - पृष्ट ५२-५३

(४५८) शंका - योगो की अपेक्षा यवमध्य क्या कहलाता है ?

समाधान - यहाँ इन योगस्थानो का विशेषणभूत काल अपनी सख्या की अपेक्षा यवाकार हो जाता है, क्योंकि वह मध्य मे तो स्थूल है और दोनो ही पार्श्वभागो मे क्रम से हीन - हीन होता गया है। जैसे - ४।५।६।७।८।७।६।५।४।३।२। यहाँ योग को ही यव कहा है और उसका मध्य यवमध्य कहलाता है। यवमध्य से आठ समय वाले योगस्थान लिये जाते है, उनकी ही यवमध्य सज्ञा है। - पृष्ठ५६

(४५९) शका - योगस्थान के कितने भेद है ?

समाधान - तीन भेद है - उपपादयोगस्थान, एकान्तानुवृद्धियोगस्थान, परिणामयोगस्थान।

(४६०) शंका - उपपादयोगस्थान, एकान्तानुवृद्धियोगस्थान और परिणामयोगस्थान किसे कहते है ?

समाधान - भव के प्रथम समय मे स्थित जीव के उपपाद योगस्थान होते है, इसके पश्चात् शरीरपर्याप्ति के पूर्ण होने तक एकान्तानुवृद्धियोगस्थान होता है। यदि लब्ध्यपर्याप्त जीव होता है, तो आयु के अन्तिम तीसरे भाग को छोड़कर उपपादयोग के वाद अन्यत्र एकान्तानुवृद्धियोगस्थान होता है। इसके बाद शरीरपर्याप्ति के पूर्ण होने के समय से लेकर या लब्ध्यपर्याप्तक के अन्तिम तीसरे भाग मे परिणामयोगस्थान होते है। ये परिणामयोगस्थान द्वीन्द्रिय पर्याप्त के जघन्य योगस्थानो से लेकर सज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त जीवो के उत्कृष्ट योगस्थानो तक क्रम से वृद्धि को लिये हुए होते है। - पृष्ठ ५९-६०

(४६१) शंका - यवमध्य के जीवो का प्रमाण कब आता है ?

समाधान - मोटा नियम है कि समस्त त्रसपर्याप्तराशि मे तीन जीवगुणहानियो के काल का भाग देने पर यवमध्य के जीव आते है। - पृष्ठ ६२

(४६२) शंका - अनन्तरोपनिधा और परम्परोपनिधा का क्या अर्थ है ?

समाधान - उपनिधा का अर्थ मार्गणा है, इसलिये अनन्तरोपनिधा का अर्थ हुआ अव्यवहित समीप के स्थान का विचार करना। प्रत्येक गुणहानि के जितने निषेक होते है, उनमे से प्रथम निषेक से दूसरे निषेक में और दूसरे निषेक से तीसरे निषेक में कितना-कितना द्रव्य कम होता जाता है, यही अनन्तरोपनिधा है।

परम्परोपनिधा की अपेक्षा प्रथम समय में निषिक्त प्रदेशाग्र से पल्योपम के असख्यातवे भाग स्थान प्रमाण जाकर दुगुणी हानि होती है। इस प्रकार अन्तिम दुगुणहानि तक ले जाना चाहिए यही परम्परोपनिधा है। - पृष्ठ ११५

(४६३) शंका - नामादि के भेद से योगो के कितने भेद है ?

समाधान - यहाँ योग चार प्रकार है - नामयोग, स्थापनायेग, द्रव्ययोग, भावयोग। नाम और स्थापना योग चूकि सुगम है, अत· उनका अर्थ नही कहते है।

द्रव्य योग दो प्रकार है - आगमद्रव्ययोग और नोआगमद्रव्ययोग। उनमे योगप्राभृत का जानकार उपयोग रहित जीव **आगमद्रव्ययोग** कहलाता है। **नोआगमद्रव्ययोग** तीन प्रकार है - ज्ञायक, भावी और तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्य-योग। ज्ञायकशरीर और भावी नोआगमद्रव्ययोग सुगम है। तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्ययोग अनेक प्रकार है। यथा- सूर्य-नक्षत्रयोग, चन्द्र-नक्षत्रयोग,ग्रह-नक्षत्रयोग, कोण-आगारयोग, चूर्णयोग व मन्त्रयोग इत्यादि।

भावयोग दो प्रकार है - आगमभावयोग और नोआगमभावयोग उनमे से योगप्राभृत का जानकार उपयोग युक्त जीव **आगमभाव योग** कहा जाता है। **नोआगमभावयोग** तीन प्रकार है - गुणयोग, सम्भवयोग और योजनायोग। उनमे से गुणयोग दो प्रकार है - सचित्तगुणयोग और अचित्तगुणयोग।

उनमे से अचित्तगुणयोग - जैसे - रूप, रस, गन्ध और स्पर्श आदि गुणो से पुद्गलद्रव्य का योग अथवा आकाश आदि द्रव्यों का अपने-अपने गुणो के साथ योग।

उनमे से सचित्तगुणयोग पाच प्रकार का है - औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक। उनमे से गति, लिग और कषाय आदिको से जो जीव का योग होता है, वह औदयिक सचित्त गुणयोग है।

औपशमिक सम्यक्त्व और संयम होने के समय जो जीव का योग होता है, वह औपशमिक सचित्तगुणयोग कहा जाता है।

केवलज्ञान, केवलदर्शन एव यथाख्यात सयम आदिको से होनेवाला जीव का योग क्षायिक सचित्तगुणयोग कहा जाता है ।

अवधि व मन पर्यय ज्ञान आदिको के साथ होनेवाले जीव के योग को क्षायोपशमिक सचित्तगुणयोग कहते है ।

जीवत्व व भव्यत्व आदि के साथ होने वाला योग पारिणामिक सचित्तगुणयोग कहलाता है ।

इन्द्र मेरु पर्वत के चलाने के लिये समर्थ है, इस प्रकार का जो शक्ति का योग है, वह सम्भवयोग कहा जाता है ।

जो योजना (मन - वचन व काय का व्यापार) योग है, वह तीन प्रकार है - उपपाद योग, एकान्तानुवृद्धियोग और परिणामयोग ।

स्थान - यहाँ नाम, स्थापना आदि से लेकर ज्ञायकशरीर और भावीनोआगम द्रव्य स्थान पूर्ववत् ही जानना । तद्व्यतिरिक्ति नोआगम द्रव्यस्थान तीन प्रकार है - सचित्त, अचित्त और मिश्र नोआगमद्रव्यस्थान । जो सचित्त नोआगमद्रव्यस्थान है, वह दो प्रकार है - वाह्य और अभ्यन्तर । इनमे जो वाह्य है, वह दो प्रकार है - ध्रुव और अध्रुव । जो ध्रुव है, वह सिद्धो का अवगाहनास्थान है, क्योकि वृद्धि और हानि का अभाव होने से उनकी अवगाहना स्थिर स्वरूप से अवस्थित है । जो अध्रुव सचित्तस्थान है, वह ससारी जीवो की अवगाहना है, क्योंकि उसमे वृद्धि और हानि पाई जाती है । जो अभ्यन्तर सचित्तस्थान है वह दो प्रकार है - सकोच - विकोचात्मक और तद्विहीन । इनमे जो सकोच - विकोचात्मक अभ्यन्तर सचित्तस्थान है, वह योग युक्त सब जीवो का जीवद्रव्य है। जो तद्विहीन अभ्यन्तर सचित्तस्थान है वह केवलज्ञान व केवलदर्शन को धारण करनेवाले एव मोक्ष व स्थितिबन्ध से अपरिणत ऐसे सिद्धो का अथवा अयोगकेवलियो का जीव द्रव्य है ।

जो अचित्तद्रव्यस्थान है, वह दो प्रकार है - रूपी अचित्तद्रव्यस्थान और अरूपी अचित्तद्रव्यस्थान । इनमे जो रूपी अचित्तद्रव्य स्थान है, वह दो प्रकार है - अभ्यन्तर और बाह्य । जो अभ्यन्तर रूपी अचित्तद्रव्य स्थान है वह दो प्रकार है - जहद्वृत्तिक और अजहद्वृत्तिक । जो जहद्वृत्तिक अभ्यन्तर रूपी अचित्तद्रव्यस्थान है, वह कृष्ण, नील, रुधिर, हारिद्र, शुक्ल, सुरभिगन्ध, दुरभिगन्ध, तिक्त, कटुक, कषाय, आम्ल, मधुर, स्निग्ध, रुक्ष, शीत व उष्ण आदि के भेद से अनेक प्रकार है ।

जो अजहद्वृत्तिक अभ्यन्तर रूपी अचित्त द्रव्यस्थान है, वह पुद्गल का मूर्तित्व, वर्ण, गध, रस, स्पर्श, व उपयोगहीनता आदि के भेद से अनेक

प्रकार है। जो वाह्य रूपी अचित्तद्रव्यस्थान है, वह एक आकाशप्रदेश आदि के भेद से असख्यात भेद रूप है।

जो अरूपी अचित्त द्रव्य स्थान है, वह दो प्रकार है - अभ्यन्तर अरूपी अचित्त द्रव्यस्थान और वाह्य अरूपीअचित्तद्रव्यस्थान। जो अभ्यन्तर अरूपी अचित्त द्रव्यस्थान है। वह धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशअस्तिकाय, और काल द्रव्यो के अपने स्वरूप मे अवस्थान के हेतुभूत परिणामो स्वरूप है। जो वाह्य अरूपी अचित्त द्रव्यस्थान है, वह धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय वाकालद्रव्य से अवष्टब्ध आकाश प्रदेशों स्वरूप है।आकाशअस्तिकायका बाह्य स्थान नही है, क्योंकि आकाश को स्थान देने वाले दूसरे द्रव्य का अभाव है। जो मिश्र द्रव्यस्थान है, वह लोकाकाश है।

भावस्थान आगम और नोआगम भावस्थान के भेद से दो प्रकार है। उनमें स्थानप्राभृत का जानकार उपयोग युक्त जीव आगमभावस्थान है। नोआगमभाव-स्थान औदयिक आदि के भेद से पांच प्रकार है। (योग का स्थान योगस्थान, योगस्थान की प्ररूपणा योगस्थानप्ररूपणा कहलाती है।) - पृष्ठ ४३३ से ४३७

(४६४) शंका - योग किसे कहते है ?

समाधान - जीवप्रदेशो का जो सकोच विकोच व परिभ्रमण रूप परिस्पन्दन होता है, वह योग कहलाता है। जीव के गमन को योग नही कहा जा सकता, क्योंकि ऐसा मानने पर अघातिया कर्मों के क्षय से ऊर्ध्वगमन करनेवाले अयोगकेवली के सयोगत्व का प्रसग आवेगा। - पृष्ठ ४३७

(४६५) शंका - यहाँ योगयवमध्य के दो अर्थ कौन से लिये गये है ?

समाधान - प्रथम तो आठ समय के योग्य जो श्रेणी के असख्यातवे भाग मात्र योगस्थान होते हैं, उनकी योगयवमध्य सज्ञा है, क्योकि स्थिति से उस स्थितिवाले योगों का कथचित् अभेद है। इसलिए यहां योग ही यवमध्य, योगयवमध्य कहलाता है। दूसरे, जो योगयव का मध्य आठ समय काल है, वह योगयवमध्य कहलाता है। - पृष्ठ २३६

(४६६) शंका - अवलम्बनाकरण किसे कहते है ?

समाधान - परभव सम्बन्धी आयु की उपरिम स्थिति मे स्थित द्रव्य का आपकर्षण द्वारा नीचे पतन करना अवलम्बनाकरण कहा जाता है। - पृष्ठ ३३०

(४६७) शंका - अवलम्बनाकरण की स्थिति की अपकर्षण संज्ञा क्यो नही की ?

समाधान- नही, क्योंकि परभविक आयु का उदय नही होने से इसका उदयावली के वाहर पतन नही होता, इसलिये इसकी अपकर्षण सज्ञा करने मे विरोध आता है। (आशय यह है कि परभव सवन्धी आयु का अपकर्षण होने पर भी उसका पतन आबाधाकाल के भीतर न होकर आवाधा से ऊपर स्थित स्थितिनिषेको मे ही होता है, इसीसे इसे अपकर्षण से जुदा वतलाया गया है।) - पृष्ठ ३३७

(४६८) शंका - एक संयमकाण्डक कब होता है ? और संयमकाण्डक कितने होते है ?

समाधान - चार बार संयम को प्राप्त करने पर एक सयमकाण्डक होता है, ऐसे आठ ही सयमकाण्डक होते है, क्योंकि इससे आगे ससार नही रहता। आठ सयमकाण्डको के भीतर कपायोपशमना के वार चार ही होते है (भाव सयम जीव को ३२ बार और उपमश्रेणी ४ बार होती है)। - पृष्ठ २६४

(४६९) शंका - संयमासंयमकाण्डक और सम्यक्त्वकाण्डक कितने होते है ?

समाधान - सयमासयमकाण्डक पल्योपम के असख्यातवे भाग प्रमाण होते है। सयमासयमकाण्डको से सम्यक्त्वकाण्डक विशेष अधिक है, जो पल्योपम के असख्यातवे भाग मात्र है। - पृष्ठ २६४

(४७०) शंका - जघन्य वीणा की प्ररूपणा किसप्रकार की गई है ?

समाधान- द्वीन्द्रिय को आदि लेकर सज्ञी पचेन्द्रिय तक इन निर्वृत्तिपर्याप्तको के ये जघन्य परिणामयोग होते है। वह किसके होता है ? वह शरीरपर्याप्ति से पर्याप्त होने के प्रथम समय मे रहनेवाले के होता है। वह कितने काल होता है? वह जघन्य से एक समय और उत्कृष्ट से चार समय होता है। यह जघन्य वीणा की प्ररूपणा है। उत्कृष्टवीणा की भी प्ररूपणा इसी प्रकार ही करनी चाहिये। विशेषता केवल इतनी है कि वहॉ पर जहाँ उत्कृष्ट से चार समय कहे गये है, यहॉ पर दो समय कहना चाहिए। - पृष्ठ ४२७

(४७१) शंका - यहाँ (स्पर्धक प्ररूपणा मे) "क्रम" का क्या अर्थ है ?

समाधान - अपने-अपने जघन्यवर्ग के अविभागप्रतिच्छेदो से एक-एक अविभागप्रतिच्छेद की वृद्धि और उत्कृष्ट वर्ग के अविभागप्रतिच्छेदो से एक-एक अविभागप्रतिच्छेद की जो हानि है, उसे क्रम कहते है। दो व तीन आदि अविभागप्रतिच्छेदो की हानि व वृद्धि का नाम अक्रम है। - पृष्ठ ४५२

(४७२) शंका - सकलप्रक्षेपभागहार ऐसी संज्ञा किसकी है ?

समाधान - श्रेणी के असंख्यातवे भाग मात्र उत्कृष्ट योग सम्बन्धी प्रक्षेपभागहार को उत्कृष्ट बन्धककाल से गुणा करके विरलन कर उत्कृष्ट बन्धककाल मात्र समयप्रवद्धो को समखण्ड करके देने पर एक-एक अक के प्रति सकलप्रक्षेप का प्रमाण प्राप्त होता है। इस विरलन की "सकलप्रक्षेपभागहार" ऐसी सज्ञा है। यह सामान्य से कहा। - पृष्ठ २५५

विशेष का अवलम्बन करने पर जिन - जिन योगस्थानो के साथ उत्कृष्ट बन्धककाल प्रतिवद्ध है, उन-उन योगस्थानो के प्रक्षेपभागहारो को मिलाकर विरलन करने पर सकलप्रक्षेपभागहार होता है। - पृष्ठ २५५

अथवा आयु के उत्कृष्ट द्रव्य को उत्कृष्ट बन्धककाल से अपवर्तित करने पर आदेश उत्कृष्ट योगस्थान का द्रव्य होता है और उसके प्रक्षेपभागहार को उत्कृष्ट बन्धककाल से गुणा करने पर सकलप्रक्षेपभागहार होता है।-पृष्ठ २५६

(४७३) शंका - विकलप्रक्षेप नाम किसका है ?

समाधान - यहॉ विरलन राशि के एक अक के प्रति प्राप्त राशि का नाम सकलप्रक्षेप है। एक सकलप्रक्षेप से प्रकृति व विकृति स्वरूप से गले हुए दोनो दव्यो के लाने मे कारणभूत सख्यात अको का विरलन कर सकलप्रक्षेप को समखण्ड करके देने पर प्रत्येक एक के प्रति सकलप्रक्षेपो से प्रकृति व विकृति स्वरूप से गला हआ द्रव्य आता है। यहॉ विरलनराशि के एक अक के प्रति प्राप्त द्रव्य को छोडकर वहुभागो की "विकलप्रक्षेप" यह सज्ञा है। - पृष्ठ २५६

(४७४) शंका - उत्कृष्ट पद और जघन्य पद किसका होता है ?

समाधान - उपरिम स्थितियो के निषेक का उत्कृष्ट पद होता है; और अधस्तन (नीचे की) स्थितियो के निषेक का जघन्य पद होता है। - पृष्ठ ४७

(४७५) शंका - प्रथम प्रक्षेप का स्वरूप कैसे प्राप्त किया जाता है ?

समाधान - सर्वप्रथम गुणहानि के काल का जघन्य योगस्थान के जीवो की सख्या मे भाग देकर प्रथम प्रक्षेप प्राप्त किया जाता है। उदाहरणार्थ - गुणहानि के काल ४ का जघन्य योगस्थान के जीवो की सख्या १६ मे भाग देने पर ४ लब्ध आते है। अत यह प्रथम प्रक्षेप हुआ। - पृष्ठ ७१

(४७६) **शंका - रूपाधिकभागहार किसे कहा है ?**

समाधान - यवमध्य के आगे पूर्व के समान वहाँ के अनुरूप प्रक्षेप प्राप्त करके घटाते जाना चाहिये । किन्तु अन्तिम गुणहानि मे अन्तिम स्थान से पीछे की तरह प्रक्षेप का निक्षेप करते हुए लौटना चाहिये । वहॉ अन्त के स्थान के जीवों की सख्या हो, उसमे एक अधिक गुणहानि के काल का भाग देकर प्रक्षेप प्राप्त करना चाहिये और उसे मिलाते हुए गुणहानि के प्रथम स्थान तक आना चाहिये । उदाहरणार्थ - अन्तिम गुणहानि के अन्तिम स्थान के जीवो की सख्या ५ है । इसमे १ अधिक गुणहानि के काल ४ अर्थात् ५ भाग देकर १ सख्या प्रमाण प्रक्षेप प्राप्त होता है । इसे अन्तिम स्थान के जीवो की सख्या मे मिला देने पर द्विचरम योगस्थान के जीवों की सख्या होती है। इसी प्रकार आगे भी एक एक मिलाते जाना चाहिये । यहॉ सर्वत्र पूर्व प्रक्षेप मे एक- एक वढ़ाकर उसके भाग द्वारा नया प्रक्षेप प्राप्त किया गया है । इसलिये इसे रूपाधिक भागहार कहा है । - पृष्ठ ७१

(४७७) **शका - रूपोनभागहार कैसे प्राप्त होता है ?**

समाधान - जहॉ विवक्षित भागहारो मे से एक कम करके उससे आगे के स्थान की सख्या प्राप्त की जाती है, वह रूपोनभागहार होता है । उदाहरणार्थ - दो गुणहानियो के काल ८ से यवमध्य १२८ क्रे भाजित करने पर प्राप्त हुई राशि १६ को यवमध्य मे से घटा देने पर पार्श्वस्थ दोनो राशिया ११२,११२ प्राप्त होती है । इसी प्रकार नीचे ऊपर रूपोनभागहार होता है । - पृष्ठ ७२

(४७८) **शंका - अग्रस्थितिप्राप्तकर्म संज्ञा किसकी है ?**

समाधान - जो समयप्रबद्ध कर्मस्थिति काल तक रह कर निर्जीर्ण होने वाला है, उसके उदयस्थिति को प्राप्त हुए पुद्गलस्कन्धो की अग्रस्थितिप्राप्तकर्म सज्ञा है । - पृष्ठ ११३

(४७९) **शंका - निषेकस्थितिप्राप्तकर्म कौन कहलाता है ?**

समाधान - जो कर्म जिस स्थिति मे निषिक्त है, वह अपकर्षण और उत्कर्षण द्वारा अधस्तन व उपरिमस्थिति को प्राप्त होकर फिर से अपकर्षण व उत्कर्षण द्वारा उसी स्थिति को प्राप्त होकर यथानिषिक्त परमाणुओं के साथ उदय मे दिखता है, वह निषेकस्थितिप्राप्त कहलाता है । - पृष्ठ ११३

(४८०) शंका - अद्धानिषेकस्थितिप्राप्तकर्म कौन कहलाता है ?

समाधान - जो कर्म जिस स्थिति मे निषिक्त होकर अपकर्षण व उत्कर्षण के बिना उसी स्थिति मे उदय में दिखता है, वह अद्धानिषेकस्थितिप्राप्त कहलाता है। - पृष्ठ ११३

(४८१) शंका - उदयस्थिति प्राप्त कर्म कौन कहलाता है ?

समाधान - जो कर्म (मार्गणा की अपेक्षा) जहॉ तहॉ उदय मे देखा जाता है, वह उदयस्थितिप्राप्त कहलाता है । - पृष्ठ ११४

(४८२) शंका - निषेकावास की प्ररूपणा किस प्रकार की है ?

समाधान - बन्ध और अपकर्षण द्वारा प्रदेशरचना को करता हुआ सर्वजघन्य स्थिति मे वहुत देता है । उससे उपरिमस्थिति मे एक चय कम देना है । इस प्रकार चरमस्थिति के प्राप्त होने तक ले जाना चाहिये । यह इसका अर्थ है । इसके द्वारा निषेकावास की प्ररूपणा की । (निषेकावास का प्रथम अर्थ अपकर्षण और उत्कर्षण को ध्यान मे लेकर किया और दूसरा अर्थ निषेकरचना की मुख्यता से किया है) - पृष्ठ २७३

(४८३) शंका - निषेकभागहार किसे कहते है ?

समाधान - दो गुणहानि प्रमाण निषेकों के भागहार को निषेकभागहार कहते है। - पृष्ठ ३६०

यदि तुम लोक मे ही पंडित कहलाना चाहते हो, तो तुम उसीका अभ्यास किया करो । और यदि अपना (हितरूप) कार्य करने की चाह है, तो ऐसे जैन ग्रन्थों का ही अभ्यास करने योग्य है । तथा जैनी तो जीवादिक तत्वो के निरूपण करनेवाले जो जैन ग्रन्थ है, उन्हीं का अभ्यास होने पर पडित मानेंगे । वह कहता है कि मै जैन ग्रन्थो के विशेष ज्ञान होने के लिए ही व्याकरणादिक का अभ्यास करता हूँ।

धवला पुस्तक -११

(४८४) शंका - वेदनाक्षेत्रविधान क्या है ?

समाधान - आठ प्रकार के कर्मद्रव्य की वेदना सज्ञा है। वेदना का क्षेत्र वेदनाक्षेत्र, वेदनाक्षेत्र का विधांन (कथन करना) वेदनाक्षेत्रविधान है। - पृष्ठ २

(४८५) शंका - क्षेत्र का निक्षेप किसलिये करते हैं ?

समाधान - अप्रकृत क्षेत्रस्थान का प्रतिषेध करके प्रकृत क्षेत्र की अर्थप्ररूपणा करने के लिये, सशय को नष्ट करने के लिये और तत्त्वार्थ का निश्चय करने के लिये क्षेत्रनिक्षेप करते है। - पृष्ठ १

(४८६) शंका - आगमद्रव्य जघन्य किसे कहा जाता है ?

समाधान - जघन्य प्राभृत का जानकार उपयोग रहित जीव आगमद्रव्य जघन्य कहा जाता है। - पृष्ठ ११

(४८७) शंका - तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यजधन्य के भेद - प्रभेदो का क्या स्वरूप है?

समाधान - तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यजघन्य दो प्रकार है - ओघजघन्य और आदेशजघन्य। इनमें ओघजघन्य द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा चार प्रकार है। उनमे द्रव्यजघन्य एक परमाणु। क्षेत्रजघन्य दो प्रकार है - कर्मक्षेत्रजघन्य और नोकर्मक्षेत्रजघन्य। उनमे सूक्ष्मनिगोद जीव की जघन्य अवगाहना कर्मक्षेत्रजघन्य है। नोकर्मक्षेत्रजघन्य एक आकाश प्रदेश है। एक समय कालजघन्य है। परमाणु मे रहने वाला स्निग्धत्व आदि गुण भावजघन्य है।

आदेशजघन्य भी - द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के भेद से चार प्रकार है। तीन प्रदेशवाले स्कन्ध को देखकर दो प्रदेशवाला स्कन्ध आदेश से द्रव्यजघन्य है। इसी प्रकार शेष स्कन्धो मे (चार प्रदेशवाले की अपेक्षा तीन प्रदेशवाला, पाच प्रदेश वाले की अपेक्षा चार प्रदेशवाला स्कन्ध इत्यादि) भी ले जाना चाहिये। तीन प्रदेशो को अवगाहन करनेवाले द्रव्य की अपेक्षा दो प्रदेशो को अवगाहन करनेवाला द्रव्य क्षेत्र की अपेक्षा आदेशजघन्य है। इसी प्रकार शेष प्रदेशो मे भी कथन करना चाहिये। तीन समय परिणत द्रव्य को देखकर दो समय परिणत द्रव्य आदेश से कालजघन्य है। इसी प्रकार शेष समयो मे भी कथन करना

चाहिये। तीन गुण (अविभागप्रतिच्छेद) परिणत द्रव्य को देखकर दो गुण परिणत द्रव्य भाव से आदेश जघन्य है।

भावजघन्य - आगमभावजघन्य और नोआगमभावजघन्य के भेद से दो प्रकार है। उनमे जघन्यप्राभृत का जानकार उपयोग युक्त जीव आगमभाव जघन्य है। सूक्ष्मनिगोद जीव लब्ध्यपर्याप्तक का जो सबसे जघन्य ज्ञान है, वह नोआगमभावजघन्य है। - पृष्ठ १२

(४८८) शंका - तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्य उत्कृष्ट के भेद प्रभेदो का क्या स्वरूप है ?

समाधान - ओघउत्कृष्ट और आदेशउत्कृष्ट के भेद से दो प्रकार है तथा दोनो ही द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा चार - चार प्रकार के है।

ओघउत्कृष्ट - उनमे द्रव्य से उत्कृष्ट महास्कन्ध है। क्षेत्र की अपेक्षा उत्कृष्ट क्षेत्र दो प्रकार है - कर्मक्षेत्र और नोकर्मक्षेत्र लोकाकाश कर्मक्षेत्रउत्कृष्ट है।आकाश द्रव्य नोकर्मक्षेत्रउत्कृष्ट है। अनन्त लोक काल से उत्कृष्ट है। भाव से उत्कृष्ट सर्वोत्कृष्ट वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श है।

आदेशुत्कृष्ट - एक परमाणु को देखकर दो प्रदेशवाला स्कन्ध द्रव्य से आदेशुत्कृष्ट है। इसीप्रकार दो से तीन, तीन से चार आदि शेष स्कन्धों में भी लगा लेना चाहिये। क्षेत्र की अपेक्षा एक क्षेत्रप्रदेश को देखकर दो क्षेत्रप्रदेश आदेश की अपेक्षा उत्कृष्ट क्षेत्र है। इसी प्रकार शेष प्रदेशों में भी लगा लेना चाहिये। काल की अपेक्षा एक समय को देखकर दो समय आदेशुत्कृष्ट है। इसी प्रकार शेष समयो मे भी लगा लेना चाहिये। भाव की अपेक्षा एक गुण (अविभागप्रतिच्छेद) युक्त द्रव्य को देखकर दो गुण युक्त द्रव्य आदेश उत्कृष्ट है। इसीप्रकार शेष गुणों में भी लगा लेना चाहिये।

भावउत्कृष्ट - आगमभावउत्कृष्ट और नोआगमभावउत्कृष्ट के भेद दो प्रकार हैं। जो उत्कृष्ट प्राभृत का जानकार उपयोग युक्तजीव आगमभाव उत्कृष्ट है। नोआगमभावउत्कृष्ट केवलज्ञान है। - पृष्ठ १३-१४

(४८९) शंका - तनुवातवलय की काकलेश्या संज्ञा क्यो दी ?

समाधान - तनुवातवलय का काक के समान वर्ण होने से उसकी काकलेश्या सज्ञा है। - पृष्ठ १९

(४९०) शका - तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यकाल का स्वरूप क्या है ?

समाधान - वह दो प्रकार है - प्रधान और अप्रधान । उनमे जो प्रदेशो की अपेक्षा लोक के वरावर है, शेष पाच द्रव्यो के परिवर्तन मे कारण है, रत्नराशि के समान प्रदेशप्रचय से रहित है, अमूर्त व अनादिनिधन है वह प्रधान द्रव्यकाल है । - पृष्ठ ७५

वह काल न स्वय परिणमता है और न अन्य पदार्थ को अन्यस्वरूप से परिणमाता है । किन्तु स्वय अनेक पर्यायो मे परिणत होनेवाले पदार्थों के परिणमन मे उदासीन निमित्त मात्र होता है । यह निश्चयकाल है । व्यवहारकाल यद्यपि उत्पन्न होकर नष्ट होने वाला है तथापि वह समयसन्तान की अपेक्षा व्यवहारनय से आवली व पल्य आदि स्वरूप से दीर्घ काल तक स्थित रहनेवाला है । - पृष्ठ ७६

अप्रधान द्रव्यकाल तीन प्रकार रहै - सचित्त, अचित्त, मिश्र । उनमे दशकाल, मशककाल इत्यादि सचित्त द्रव्यकाल है । क्योंकि इनमे दश व मशक के ही उपचार से काल का विधान किया गया है । धूलिकाल, कर्दमकाल, उष्णकाल, वर्षाकाल, एव शीतकाल इत्यादि सव अचित्तकाल है । सदश शीतकाल इत्यादि मिश्रकाल है । - पृष्ठ ७६

(४९१) शंका - समाचारकाल क्या है ?

समाधान - वह लौकिक और लोकोत्तरीय से दो का प्रकार है । लोकोत्तरीयसमाचारकाल, वन्दनाकाल, नियमकाल, स्वाध्यायकाल व ध्यानकाल इत्यादि लोकोत्तरीयसमाचारकाल है । आतापनकाल, वृक्षमूलकाल व बाह्यशयनकाल इत्यादि कालो का लोकोत्तरीय समाचारकाल मे अन्तर्भाव हो जाता है क्योंकि क्रियाकाल के प्रति कोई भेद नही है ।

लौकिकसमाचारकाल - कर्षणकाल (जोतने का काल), लुननकाल (काटने का काल) व वपनकाल (बोने का काल) इत्यादि लौकिक समाचारकाल है । - पृष्ठ ७६

(४९२) शंका - काल कितने प्रकार का है ?

समाधान - काल सात प्रकार का है - नामकाल, स्थापनाकाल, द्रव्यकाल, समाचारकाल, अद्धाकाल, प्रमाणकाल, और भावकाल । "काल" शब्द नामकाल है । "वह यह है" इस प्रकार बुद्धि से अभेद करके स्थापित द्रव्य स्थापनाकाल है । शेष सुगम है । - पृष्ठ ७५

(४६३) शंका - अद्धाकाल के कितने प्रकार है ?

समाधान - अद्धाकाल - अतीत, अनागत और वर्तमान के भेद से तीन प्रकार है। प्रमाणकाल, पल्योपम, सागरोपम, उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी और कल्पादि के से भेद वहुत प्रकार है। भावकाल के दो प्रकार है - आगमभावकाल और नोआगमभावकाल। प्रथम सुगम है। नोआगमभावकाल औदयिक आदि पाच भावो स्वरूप है। - पृष्ठ ७७

(४६४) शंका - वेदनाकाल विधान किसे कहा जाता है ?

समाधान - जो काल का विधान है, वह कालविधान है। वेदना का कालविधान, वेदनाकालविधान कहा जाता है। - पृष्ठ ७७

(४६५) शंका - देव और नारकियो की उत्कृष्ट आयु के बन्धक कौन है ?

समाधान - देवो की उत्कृष्ट आयु के वन्धक स्थलचारी सयतमनुष्य तथा नारकियो की उत्कृष्ट आयु के बन्धक स्थलचारी मिथ्यादृष्टि मनुष्य एव जलचारी व स्थलचारी सज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यच मिथ्यादृष्टि है। - पृष्ठ ११५

(४६६) शंका - आकाशचारी जीव देव व नारकियो की उत्कृष्ट आयु को क्यो नही बांधते है ?

समाधान - नही, क्योंकि पक्षियो के सप्तम पृथिवी के नारकियो अथवा अनुत्तर विमानवासी देवो मे उत्पन्न होने की सामर्थ्य नही है। यदि कहा जाय कि विद्याधर भी तो आकाशचारी है, वे वहां उत्पन्न हो सकते है। तो ऐसा कहना भी ठीक नही है, क्योंकि, विद्या की सहायता के बिना जो स्वभाव से ही आकाशगमन मे समर्थ है, उनमे ही खगचरत्व की प्रसिद्धि है, विद्याधरो के नही। - पृष्ठ ११५

(४६७) शंका - स्थितिबन्धस्थान किसे कहा जाता है ?

समाधान - जो बाधा जाता है, वह बन्ध कहलाता है। 'स्थितिश्चासौ बन्धश्च स्थितिबन्ध' इस कर्मधारय समास के अनुसार स्थिति को ही यहॉ बन्ध कहा गया है। उसके स्थान अर्थात् विशेष का नाम स्थितिबन्धस्थान है। अभिप्राय यह कि यहॉ स्थितिबन्धस्थान से आबाधास्थान को लिया गया है। अथवा बन्धन क्रिया का नाम बन्ध है, स्थिति का वन्ध "स्थितिबन्ध" इस प्रकार यहॉ तत्पुरुषसमास है। वह स्थितिबन्ध जहॉ रहता है, वह स्थितिबन्धस्थान कहा जाता है। - पृष्ठ १६२

(४६८) शका - आवाधास्थान किसे कहते है ? -

समाधान - उत्कृष्ट आवाधा मे से जघन्य आवाधा को घटाकर जो शेप रहे, उसमे एक अक को मिला देने पर आवाधास्थान होता है । - पृठ १६२

(४६६) शंका - मिथ्यात्व के अभिमुख हुए अन्तिम समयवर्ती प्रमत्तसयत के उत्कृष्ट स्थितिवन्ध से भी सयतासंयतजीव का जघन्य स्थितिवन्ध सख्यात गुणा क्यो है ?

समाधान - क्योकि देशघाति सज्वलनकषाय के उदय की अपेक्षा सर्वधाति प्रत्याख्यानावरण कषाय का उदय अनन्त गुणा है । और कारण के स्तोक होने पर कार्य का आधिक्य सम्भव नही है क्योंकि वेसा होने मे विरोध है । पृठ २३८

(५००) शका - निषेकप्ररूपणा करने समय यहॉ उत्कृष्ट स्थिति ओर उत्कृष्ट आवाधा की प्ररूपणा का क्या संवध है ?

समाधान— यह केवल निषेकप्ररूपणा ही नही है, किन्तु उत्कृष्टस्थिति, उत्कृष्ट आवाधा और निषेको की भी यह प्ररूपणा है । - पृठ २३८

जो जीव प्रथम जीव-समासादि जीवो के विशेष जानकर पश्चात् यथार्थ ज्ञान से हिंसादिक का त्यागी बनकर व्रत धारण करे, वही व्रती है । तथा जीवादिक के विशेष को जाने बिना कथचित् हिंसादिक के त्याग से आपको व्रती माने, तो व्रती नहीं है । इसलिये व्रत पालन मे भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है ।

तप के दो प्रकार हैं– बहिरग तप और अन्तरग तप । जिससे शरीर का दमन हो, वह बहिरग तप है और जिससे मन का दमन होवे, वह अन्तरंग तप है। इनमे बहिरंग तप से अन्तरग तप उत्कृष्ट है । उपवासादिक तो बहिरंग तप है, ज्ञानाभ्यास अन्तरग तप है । सिद्धान्त मे भी छह प्रकार के अन्तरग तपो मे चौथा स्वाध्याय नाम का तप कहा है, उससे उत्कृष्ट व्युत्सर्ग और ध्यान ही है ।

- इसलिये तप करने मे भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है ।

द्वितीय चूलिका

(५०१) शंका - स्थितबन्धाध्यवसानस्थान कषायोदयस्थान नही है, यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान - नाम व गोत्र के **स्थितिबन्धाध्यवसानस्थानों** की अपेक्षा चार कर्मों के स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान असख्यात गुणे है, इस अल्प-वहुत्वसूत्र से यह जाना जाता है। यदि कषायोदयस्थान ही स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान हो **तो यह अल्प वहुत्व घटित** नही हो सकता है, क्योकि कषायोदयस्थान के विना मूल प्रकृतियो का वन्ध न हो सकने से सभी मूल प्रकृतियो के स्थितिबन्धाध्यवसानस्थानो की समानता का प्रसग आता है। अपने कारण होने से स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान सज्ञा है । - पृष्ट ३१०

(५०२) शका - इनमे स्थितिबन्धाध्यवसानस्थानो की प्ररूपणा मे जीवसमुदाहार किसलिये आया है ?

समाधान - साता व असाता की एक एक स्थिति मे इतने जीव है व इतने नही है इस वात के ज्ञापनार्थ जीवसमुदाहार प्राप्त हुआ है । - पृष्ट ३१०

(५०३) शका - प्रकृतिसमुदाहार किसलिये आया है ?

समाधान - इस प्रकृति के स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान इतने होते है और इतने नही होते है - इस वात का परिज्ञान कराने के लिये प्रकृतिसमुदाहार का अवतार हुआ । - पृष्ठ ३१०

(५०४) शंका - स्थितिसमुदाहार किसलिये आया है ?

समाधान - इस स्थिति के इतने स्थितिबन्धाध्यवसानस्थान होते है और इतने नही होते है - इसका परिज्ञान कराने के लिये स्थितिसमुदाहार प्राप्त हुआ है । - पृष्ठ ३११

(५०५) शका - एक जीव मे एक साथ साता व असातादिको का वन्ध क्यो नही होता है ?

समाधान - नही। उनकी युगपत् प्रवृत्ति अत्यन्ताभाव से प्रतिषिद्ध है अर्थात् साता व असाता आदिको का एक साथ वाँधने मे जीवो की शक्ति नही है, यह अभिप्राय है । - पृष्ठ ३१२

(५०६) शंका - यद्यपि बन्ध की अपेक्षा एकस्थान अनुभाग की सम्भावना नही है, तथापि सत्व की अपेक्षा तो उसकी सम्भावना है ही । फिर एकस्थानानुभाग की प्ररूपणा यहाँ क्यो नही की गई ?

समाधान - नही, क्योंकि वन्ध के अधिकार मे सत्व की प्ररूपणा सगत नही है । - पृष्ठ ३१३

(५०७) शका - साता के चतुःस्थानादि बन्धक क्या कहलाते है ?

समाधान - यहाँ जघन्य स्पर्धक से लेकर उत्कृष्ट स्पर्धक तक श्रेणि के आकार से साता के अनुभाग की रचना करना चाहिये । उसमे प्रथम भाग गुड़ के समान एक स्थान, द्वितीय भाग खाँड़ के समान दूसरा स्थान, तृतीय भाग शक्कर के समान तीसरा स्थान और चतुर्थ भाग अमृत के समान चौथा स्थान है । इस प्रकार जिस साता के अनुभाग मे ये चार स्थान हो, वह अनुभागवन्ध चतुर्थस्थान कहा जाता है । उसको वाधनेवाले जीव चतु स्थानवन्धक कहलाते है । इसी प्रकार त्रिस्थान और द्विस्थानवन्धको की भी प्ररूपणा करना चाहिये । इस अनुभाग के भेद से सातावन्धक तीन प्रकार के है । - पृष्ठ ३१३

(५०८) शंका - असाता के चतु.स्थानादि बन्धक क्या कहलाते हैं ?

समाधान - यहाँ असाता के अनुभाग को पहले के ही समान श्रेणि के आकार से स्थापित करके चार भाग करने पर उनमे से प्रथम भाग नीम के समान एक स्थान, द्वितीय भाग काजीर के समान दूसरे स्थान, तृतीय भाग विष के समान तीसरा स्थान, और चतुर्थ भाग हलाहल के समान चौथे स्थान रूप है । उनमे से जिस अनुभागवन्ध मे दो स्थान है, वह द्विस्थान अनुभागवन्ध कहलाता है । उसको वाधनेवाले जीव द्विस्थानवन्धक कहे जाते है । इसी प्रकार त्रिस्थान न्धक और चतु स्थानवन्धक जीवो की प्ररूपणा करना चाहिये । इस प्रकार अनुभाग वन्ध का आश्रय करके असातावन्धक तीन प्रकार के होते है । - पृष्ठ ३१३-३१४

(५०९) शंका - स्वस्थान से ज्ञानावरणीय की जघन्य स्थिति किसे कहते है ?

समाधान - असातावेदनीय के साथ वन्ध के योग्य जो ज्ञानावरणीय की सबसे जघन्य स्थिति है । वह स्वस्थान जघन्य स्थिति कही जाती है । - पृष्ठ ३१९

(५१०) शंका - ज-स्थितिबन्ध किसे कहा जाता है ?

समाधान - आबाधा से सहित जघन्य स्थितिबन्ध को ज-स्थितिबन्ध कहा जाता है, क्योकि वहाँ काल की प्रधानता है । आबाधा से हीन जघन्य स्थितिबन्ध जघन्य बन्ध कहलाता है। क्योकि उसमे निषेकस्थिति की प्रधानता है। - पृष्ठ ३३६

(५११) शंका - दाहस्थिति किसका नाम (संज्ञा) है ?

समाधान - दाह का अर्थ उत्कृष्ट स्थिति के योग्य सक्लेश है । उस दाह की कारणभूत स्थिति, कारण मे कार्य का उपचार करने से दाहस्थिति कही जाती है । उसमे जघन्य दाहस्थिति से लेकर उत्कृष्ट दाहस्थिति पर्यत्त जाति के एकता को प्राप्त हुई इन सब स्थितियो की दाहस्थिति सज्ञा है । - पृष्ठ ३४१

(५१२) शंका - जघन्य स्थिति का अर्थ क्या है ?

समाधान - जघन्य स्थिति का अर्थ ध्रुवस्थिति है, क्योकि उसके नीचे स्थितिबन्ध का अभाव है । - पृष्ठ ३५०

(५१३)शंका -अनन्त सर्व जीवराशि को एक जघन्य स्थितिवन्धाध्यवसानस्थान का भागहार कैसे किया जा रहा है ?

समाधान - क्योंकि एक जघन्यस्थितिवन्धाध्यवसान मे भी अनन्त सब जीवराशि प्रमाण अविभागप्रतिच्छेद पाये जाते है । - पृष्ठ ३५०

(५१४) शंका - एक समय अधिक स्थिति को द्वितीय स्थिति कहना कैसे उचित है?

समाधान - क्योकि ध्रुवस्थिति से एक समय अधिक स्थिति पृथक् पायी जाती है । पृष्ठ ३५०

(५१५) शंका - स्थितिबन्धाध्यवसानस्थानो मे अनन्तरोपनिधा और परम्परोपनिधा क्या कहलाती है ?

समाधान - जहाँ पर निरन्तर अल्प-वहुत्व की परीक्षा की जाती है, वह अनन्तरोपनिधा कही जाती है । जहाँ पर दुगुणत्व और चतुर्गुणत्व आदि की परीक्षा की जाती है, वह परम्परोपनिधा कहलाती है । - पृष्ठ ३५२

(५१६) शंका - त्रस जीवो के कितने विग्रह होते हैं ?

समाधान- त्रसो मे दो विग्रहो को छोड़कर तीन विग्रह नही होते । लेकिन पूर्व के वैरी देवो द्वारा महामत्स्य को लोक के अत मे वायव्य दिशा मे पटके तो उसे तीन मोड़े होते, क्योंकि मारणान्तिक समुद्घात मे शरीर की अवगाहना से तीन गुणे प्रदेश फैल जाते है । - पृष्ठ २०-२२

निश्चयनय से जीव का स्वरूप गुणस्थानादि विशेष रहित, अभेदवस्तु मात्र ही है और व्यवहारनय से गुणस्थानादि विशेष सहित अनेक प्रकार हैं। वहाँ जो जीव सर्वोत्कृष्ट अभेद एक स्वभाव को अनुभवता है, उसको तो वहाँ शुद्ध उपदेशरूप जो शुद्धनिश्चयनय, वही कार्यकारी है।

जो स्वानुभवदशा को प्राप्त नहीं हुआ है अथवा स्वानुभवदशा से छूटकर सविकल्पदशा को प्राप्त हुआ है - ऐसा अनुत्कृष्ट जो अशुद्धस्वभाव, उसमे स्थित जीव को व्यवहारनय (जानने में आया हुआ) प्रयोजनवान है । वही आत्मख्याति अध्यात्मशास्त्र मे कहा है-

''सुद्धो सुद्धादेसो, णादव्वो परमभावदरसीहिं ।
ववहारदेसिदा पुण, जे दु अपरमे ट्ठिदा भावे ।।'' (समयसार, गाथा-१२)

इस सूत्र के व्याख्यान के अर्थ कोविचारकर देखना । तथा सुनो ! तुम्हारे परिणाम स्वरूपानुभव दशा मे तो वर्तते नहीं और विकल्प जानकर गुणस्थानादि भेदो का विचार नहीं करोगे तो तुम इतो भ्रष्ट ततो भ्रष्टः, होकर अशुभोपयोग मे ही प्रवर्त्तन करोगे, वहाँ तेरा बुरा होगा । सुन ! सामान्यपने से तो वेदान्त आदि शास्त्राभासो मे भी जीव का स्वरूप शुद्ध कहते है, वहाँ विशेष को जाने बिना यथार्थ-अयथार्थ का निश्चय कैसे हो ?

गुणस्थानादि विशेष जानने से शुद्ध-अशुद्ध-मिश्र अवस्था का ज्ञान होता है, तब निर्णय करके यथार्थ को अंगीकार करो । और सुन ! जीव का गुण ज्ञान है, सो विशेष जानने से आत्मगुण प्रगट होता है, अपना श्रद्धान भी दृढ़ होता है । जैसे सम्यक्त्व है, वह केवलज्ञान प्राप्त होने पर परमावगाढ़ नाम को प्राप्त होता है, - इसलिये विशेष जानना ।

धवला पुस्तक - १२

वेदनाभावविधान मे द्वितीय चूलिका से

(५१७) शका - वेदनाभावविधान के कितने प्रकार है ?

समाधान - भाव के चार प्रकार है - नामभाव, स्थापनाभाव, द्रव्यभाव, भावभाव । - पृष्ठ १

(५१८) शका - वेदनाभावविधान किसे कहते है ?

समाधान - वेदना के भाव का कथन करना, वेदनाभावविधान है । - पृष्ठ २

(५१६) शका - ओज वा युग्म किसे कहते है ?

समाधान - जहॉ विवक्षित राशि मे चार का भाग देने पर १ या ३ शेप रहते है, उसकी ओज सज्ञा है, और जहॉ २ शेप रहते है या कुछ भी शेप नही रहता, उसकी युग्म सज्ञा है । उनके दो भेद है - कृतयुग्म और काण्डककृतयुग्म । - पृष्ठ ३

(५२०) शका - कृतयुग्म कौन है ?

समाधान - सव अनुभागस्थानो के अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्म है, क्योकि उन्हे चार से भाजित करने पर कुछ शेष नही रहता । सव स्थानो की अन्तिम वर्गणा के एक - एक परमाणु मे स्थित अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्म है । क्योंकि उसमे स्थित अनुभाग का नाम ही स्थान है । परन्तु द्विचरमादिक वर्गणाओं के अविभागप्रतिच्छेद कृतयुग्म ही हो, ऐसा नियम नही है, क्योकि उनमे कृतयुग्म, वादरयुग्म, कलिओज और तेजोज सख्याये भी पाई जाती है । 'स्थानकृत युग्म है' ऐसा कहने पर स्थान अपनी सख्यासे, स्पर्द्धक शालाकाओं से, एक स्पर्द्धक की वर्गणा शलाकाओं से तथा एक प्रक्षेपस्पर्द्धक की शलाकाओं से कृतयुग्म है। ऐसा अभिप्राय ग्रहण करना चाहिए । - पृष्ठ १३४

(५२१) शंका - काण्डककृतयुग्म कौन है ?

समाधान - काण्डककृतयुग्म है, ऐसा कहने पर एक काण्डक के प्रमाण से तथा छह वृद्धियो की पृथक् - पृथक् काण्डक शलाकाओं से काण्डककृतयुग्म है, ऐसा समझना चाहिये । - पृष्ठ १३४

(५२२) शंका - भावभाव के कितने प्रकार है और उनका स्वरूप क्या है ?

समाधान - दो प्रकार है - आगमभावभाव और नोआगमभावभाव । इनमे भावप्राभृत का जानकार, उपयोग युक्त जीव आगमभावभाव कहा जाता है। नोआगमभावभाव दो प्रकार है - तीव्र-मन्दभाव और निर्जराभाव । - पृष्ठ २

(५२३) शका - जबकि तीव्रतामन्दता भावस्वरूप है तब उन्हे भावभाव नाम से कहना कैसे उचित कहा जा सकता है ?

समाधान - नही, क्योकि तीव्र, तीव्रतर, तीव्रतम, मन्द, मन्दतर और मन्दतम आदि गुणो के द्वारा भाव का भी भाव पाया जाता है । - पृष्ठ २

निर्जरा को भी भावभावरूपता असिद्ध नही है, क्योकि सम्यक्त्वोत्पत्ति आदिक भावभावो से उत्पन्न होनेवाली निर्जरा के उपचार से भावभावस्वरूप होने मे कोई विरोध नही आता है । - पृष्ठ २

(५२४) शका - अपरिवर्तमान परिणाम किसे कहते है ?

समाधान - प्रति समय बढ़नेवाले या हीन होनेवाले जो सक्लेश या विशुद्धि रूप परिणाम होते है, वे अपरिवर्तमान परिणाम कहे जाते है । - पृष्ठ २७

(५२५) शंका - परिवर्तमान परिणाम किसे कहते हैं ?

समाधान - जिन परिणामो मे स्थित होकर तथा परिणामान्तर को प्राप्त हो पुन एक दो आदि समयो द्वारा उन्ही परिणामो मे आगमन सम्भव होता है, उन्हे परिवर्तमान परिणाम कहते है । - पृष्ठ २७

(५२६) शंका - कौन से परिणाम आयुबंध के कारण है और कौन से नही हैं ?

समाधान - परिणाम तीन प्रकार है - उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य । इनमे अति जघन्य और अति उत्कृष्ट परिणाम आयु बन्ध के अयोग्य है, क्योंकि ऐसा स्वभाव है, किन्तु उन दोनो के मध्य मे अवस्थित परिणाम परिवर्तमान मध्यम परिणाम कहलाते है । वे आयु बन्ध के कारण है । - पृष्ठ २७-२८

(५२७) शका - हतसमुत्पत्तिक कर्मवाले कहने से क्या अभिप्राय समझना चाहिये?

समाधान - हतसमुत्पत्तिककर्मवाले ऐसा कहने पर पूर्व के समस्त अनुभाग सत्त्व का घात करके और उसे अनन्त गुणा हीन करके स्थित हुए जीव के द्वारा, यह अभिप्राय समझना चाहिये । - पृष्ठ २९

(५२८) शंका - (नववे, दसवे गुणस्थान मे) प्रति समय अपवर्तना किस प्रकार की होती है ?

समाधान - अनिवृत्तिकरण के अन्तिम समय सम्वधी अनुभाग की अपेक्षा सूक्ष्मसाम्परायिक का प्रथम समय सम्वन्धी अनुभाग अनन्त गुणा हीनं होता है। उसके द्वितीय समय मे वही अनुभाग काण्डकघात के विना अनन्त गुणा हीन होता है। पुन घात करने के वाद शेप रहा, वही अनुभाग तीसरे समय मे अनन्त गुणा हीन होता है। इसप्रकार सूक्ष्मसाम्परायिक के अन्तिम समय तक जानना चाहिये। इसी का नाम अनुसमयापवर्तनाघात है। - पृष्ठ ३१

(५२९) शंका- अनुभाग काण्डकघात और अनुसमयापवर्तना इन दोनो मे क्या अन्तर है ?

समाधान - काण्डक पोर को कहते है।कुल अनुभाग के हिस्से करके एक - एक हिस्से का फालिक्रम से अन्तर्मुहूर्त काल द्वारा अभाव करना अनुभाग काण्डकघात कहलाता है और प्रति समय कुल अनुभाग के अनन्त वहुभाग का अभाव करना अनुसमयापवर्तना कहलाती है। मुख्यरूप से यही इन दोनो मे अन्तर है। वेदना भाव विधान में अल्प बहुत्व के प्रकरण मे। - पृष्ठ ३२

(५३०) शंका - वैक्रियिक शरीर अपग्रस्त है, यह किस प्रमाण से जाना जाता है ?

समाधान - क्योंकि जिसप्रकार आहारक शरीर का बन्ध संयत जीवों के ही होता है, उस प्रकार वौक्रियिक शरीर का बन्ध मात्र संयतो के नही उपलब्ध होता। इसी से उसकी अप्रशस्तता जानी जाती है। पृष्ठ ४८

(५३१) शंका - मनुष्यगति और औदारिक शरीर इन दोनो प्रकृतियो के उत्कृष्ट वन्ध का स्वामी (असयत सम्यक्दृष्टि देव है) एक ही जीव है। फिर इनके अनुभाग मे विसदृशता कैसे सम्भव है अर्थात् अनन्त गुणी हीनता रूप विसदृशता कैसे सम्भव है ?

समाधान - प्रकृति विशेष होने के कारण विसदृशता सम्भव है। मनुष्यगति जीवविपाकी है और औदारिक शरीर पुद्गलविपाकी है। ये ही प्रकृति विशेपता है, इस कारण मनुष्यगति की अपेक्षा औदारिक शरीर का अनुभाग अनन्त गुणा हीन है, यह सिद्ध होता है। - पृष्ठ ४८

(५३२) शंका - मिथ्यात्व की अपेक्षा औदारिक शरीर प्रशस्त है ये किस प्रमाण से जाना?

समाधान - जिसप्रकार मिथ्यात्व का वन्ध एक मात्र मिथ्यादृष्टि गुणस्थान मे होता है, इसी प्रकार औदारिक शरीर का वन्ध केवल यहाँ ही नही होता । इससे औदारिक शरीर की प्रशस्तता जानी जाती है । - पृष्ठ ४६

(५३३) शका - केवलज्ञानावरणीय, केवलदर्शनावरणीय, असातावेदनीय और वीर्यान्तराय से अनन्तानुवन्धी लोभ का अनुभाग अनन्तगुणा हीन कैसे है ?

समाधान - क्योंकि इसका कारण प्रकृतिगत विशेषता है । - पृष्ठ ५०

(५३४) शंका - वह प्रकृतिगत विशेषता क्या है ?

समाधान - उपर्युक्त चारो प्रकृतियो की अपेक्षा इस अनन्तानुवधी लोभ की दुर्वलता ही प्रकृतिगत विशेषता है । - पृष्ठ ५०

(५३५) शंका - इसकी दुर्वलता किस प्रमाण से जानी जाती है ?

समाधान - क्योंकि सम्यक्त्व परिणामो के द्वारा उनका विसयोजन नही उपलव्ध होता, परन्तु इन चारो का विसयोजन उपलव्ध होता है, अतएव ज्ञात होता है कि अनन्तानुवन्धी लोभ उन चारो की अपेक्षा दुर्वल है । - पृष्ठ ५०

(५३६) शका - सयमरूप परिणामो की अपेक्षा अनन्तानुबन्धी का विसयोजन करनेवाले असयतसम्यग्दृष्टि का परिणाम अनन्त गुणा हीन होता है, ऐसी अवस्था मे उससे असख्यातगुणी प्रदेश निर्जरा कैसे हो सकती है ?

समाधान - यह कोई दोष नही है, क्योकि सयमरूप परिणामो की अपेक्षा अनन्तानुवन्धी कषायो की विसयोजना मे कारणभूत सम्यक्त्व रूप परिणाम अनन्त गुणे उपलब्ध होते है । - पृष्ठ ८२

(५३७) शका - यदि सम्यक्त्व रूप परिणामो के द्वारा अनन्तानुवन्धी कषायो की विसंयोजना की जाती है, तो सभी सम्यग्दृष्टि जीवो मे उसकी विसंयोजना का प्रसग आता है ?

समाधान - सब सम्यग्दृष्टियो मे उसकी विसयोजना का प्रसग नही आ सकता क्योंकि विशिष्ट सम्यक्त्वरूप परिणामो के द्वारा ही अनन्तानुबन्धी कषायो की विसयोजना स्वीकार की गई है । - पृष्ठ ८२

(५३८) शका - अनुभाग किसे कहते है ?

समाधान - आठ कर्मों और जीव प्रदेशो के परस्पर मे अन्वय (एकरूपता) के कारणभूत परिणामो को अनुभाग कहते है । - पृष्ठ ६१

(५३६) शका - प्रकृति अनुभाग क्यो नही होती है ?

समाधान - नही, क्योकि प्रकृति योग के निमित्त से उत्पन्न होती है, अतएव उसकी कषाय से उत्पत्ति होने मे विरोध आता है । भिन्न कारणो से उत्पन्न होनेवाले कार्यो मे एकरूपता नही हो सकती, क्योकि इसका निषेध है । दूसरे, अनुभाग की वृद्धि प्रकृति की वृद्धि मे निमित्त होती है, क्योकि उसके महान होने पर प्रकृति के कार्य रूप अज्ञानादि की वृद्धि देखी जाती है। इस कारण प्रकृति अनुभाग नही हो सकती, ऐसा यहॉ जानना चाहिये । - पृष्ठ ६१

(५४०) शंका - अविभागप्रतिच्छेद किसे कहते है ?

समाधान एक परमाणु मे जो जघन्य रूप से अवस्थित अनुभाग हैं, उसकी अविभागप्रतिच्छेद सज्ञा है । स्थान मे जघन्यरूप से अवस्थित अनुभाग की अविभागप्रतिच्छेद सज्ञा नही है ।

खुलासा - नैगमनय का आश्रय करके जो जघन्य अनुभाग स्थान है उसके सव परमाणुओं के समूह को एकत्रित करके स्थापित करे । फिर उनमे से सर्वमन्द अनुभाग से सयुक्त परमाणु को ग्रहण करके वर्ण, गन्ध और रस को छोड़कर केवल स्पर्श का ही बुद्धि से ग्रहण कर उसका विभाग रहित छेद होने तक प्रज्ञा के द्वारा छेद करना चाहिये । उस नही छेदने योग्य अन्तिम खण्ड की अविभाग प्रतिच्छेद सज्ञा है । - पृष्ठ ६२

(५४१) शंका - स्थान किसे कहते है ?

समाधान - एक जीव मे एक समय मे जो कर्मानुभाग दिखता है, उसे स्थान कहते है। वह स्थान दो प्रकार का है - अनुभागवन्धस्थान और अनुभागसत्वस्थान । उनमे से जो वन्ध से उत्पन्न होता है, वह वन्धस्थान कहा जाता है । पूर्ववद्ध अनुभाग का घात किये जाने पर जो वन्ध अनुभाग के सदृश होकर पड़ता है, वह भी वन्धस्थान ही है, क्योकि उसके सदृश अनुभाग वन्ध पाया जाता है । घाता जानेवाला जो अनुभागस्थान बन्धानुभाग के सदृश नही होता है, किन्तु वन्ध सदृश अष्टाक और ऊर्वक के मध्य मे अधस्तन ऊर्वक से अनन्तगुणा और उपरिम अष्टाक से अनन्तगुणा हीन होकर स्थित रहता है, वह अनुभाग सत्कर्मस्थान है । पृष्ठ १११-११२

(५४२) शका - यदि एक परमाणु मे स्थान होता है, तो उनमे अनन्त वर्गणाओं और स्पर्धको का अभाव होता है ?

समाधान - नही, क्योकि स्पर्धक और वर्गणा सज्ञावाले सभी अनुभाग वहॉ ही पाये जाते है । - पृष्ठ ११२

(५४३) शका - अष्टाक किसे कहते है ?

समाधान - अधस्तन ऊर्वाक को सव जीवराशि से गुणित करने पर जो प्राप्त हो उतने मात्र से जो अधस्तन ऊर्वाक से अधिक स्थान है, उसे अष्टाक कहते है । - पृष्ठ १३१

(५४४) शंका - पिशुल नाम किसका है ?

समाधान - सकलप्रक्षेप के अनतवे भागप्रमाण इसकी पिशुल सज्ञा है।- पृष्ठ १५८

(५४५) शंका - यहॉ ऊर्वाक, चतुरंक, पंचांक, षडंक, सप्तांक और अष्टांक संज्ञा किसकी जानना चाहिये ?

समाधान - यहाँ अनन्तभागवृद्धि की ऊर्वाक सज्ञा, असख्यातभागवृद्धि की चतुरक संज्ञा, सख्यातभाग वृद्धि की पचांक संज्ञा, सख्यातगुणवृद्धि की षडंक संज्ञा, असख्यातगुणवृद्धि की सप्ताक संज्ञा और अनन्तगुणवृद्धि की अष्टांक संज्ञा जानना चाहिये । - पृष्ठ १७०

(५४६) शका - गणित मे अनुपात किसे कहते है ?

समाधान - त्रैराशिक को अनुपात कहते है । - पृष्ठ १६६

(५४७) शंका- अनुभाग बन्धस्थानो की अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान संज्ञा कैसे योग्य है?

समाधान - यह कोई दोष नही है, क्योंकि कार्य मे कारण का उपचार करने से उनकी उपर्युक्त सज्ञा करने मे कोई विरोघ नही है । अनुभागबन्धाध्यवसानस्थान का अर्थ अनुभागबन्धस्थान मे निमित्तभूत जीव का परिणाम है । इस कारण इस अनुभागबन्धस्थानकी सज्ञा अनुभागवन्धाध्यवसान स्थान उचित है । - पृष्ठ २०४

(५४८) शंका - हतसमुत्पत्तिक स्थान कब उत्पन्न होता है ?

समाघान - एक जीव के द्वारा सर्वोत्कृष्ट घातपरिणामस्थान से परिणत होकर अन्तिम अनुभागवन्धस्थान के घाते जाने पर अन्तिम अनन्तगुणवृद्धिस्थान से नीचे अनन्तगुण हीन होकर तदनन्तर अघस्तन ऊर्वाक से अनन्तगुण होकर दोनो के वीच मे अन्य हतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होता है । - पृष्ट २२०

(५४९) शंका - प्रथम हतहतसमुत्पत्तिकस्थान कहॉ उत्पन्न होता है ?

समाधान - उत्कृष्ट परिणामस्थान के द्वारा पर्यवसान अत के ऊर्वाक के घाते जाने पर अन्तिम अष्टाक के नीचे अनन्तगुणाहीन व उसके ही अधस्तन ऊर्वाक स्थान के ऊपर अनन्त गुणा होकर दोनो के ही मध्य मे प्रथम हतहतसमुत्पत्तिकस्थान उत्पन्न होता है । - पृष्ट २३३

(५५०) शंका - प्राणातिपाप किसे कहते है ?

समाधान - प्राणातिपाप का अर्थ प्राण से प्राणियो का वियोग करना है । वह जिन मन, वचन या काय के व्यापारादिको से होता है, उनको भी प्राणतिपाप ही कहते है । - पृष्ठ २७५-२७६

(५५१) शंका - असत् वचन किसे कहते है ?

समाधान - मिथ्यात्व, असयम, कषाय और प्रमाद से उत्पन्न वचनसमूह को असत् वचन कहते है । - पृष्ठ २७६

(५५२) शका - अदत्तादानप्रत्यय किसे कहते है ?

समाधान - अदत्तादान अर्थात् नही दिये गये पदार्थ का आदान अर्थात् ग्रहण करना "अदत्तादान" है । अदत्तादान ऐसा जो वह प्रत्यय (कारण) उसे अदत्तादानप्रत्यय कहते हैं । अदत्त पदार्थ और उसके ग्रहण करने का परिणाम दोनो ही अदत्तादान कहलाते है । - पृष्ठ २८१

(५५३) शंका - अभ्याख्यान, कलह, पैशून्य, उपधि, निकृति, मान और मेय किसको कहा गया है ?

समाधान - क्रोध, मान, माया और लोभ आदि के कारण दूसरो मे अविद्यमान दोषो को प्रगट करना, अभ्याख्यान कहा जाता है । क्रोधादि के वश होकर तलवार, लाठी और असभ्य वचनादि के द्वारा दूसरो को सन्ताप उत्पन्न करना, कलह कहलाता है । क्रोधादि के कारण दूसरो के दोषो को प्रगट करना, पैशून्य है । "उपेत्य क्रोधादयो धीयन्त अस्मिन् इति उपधि " अर्थात् आकर के क्रोधादिक जहॉ पर पुष्ट होते है, उनका नाम उपधि है, इस निरुक्ति के अनुसार क्रोधादि परिणामो की उत्पत्ति मे निमित्तभूत वाह्यपदार्थ को उपधि कहा गया है । निकृति का अर्थ धोखा देना है, अभिप्राय यह है कि नकली मणि, सुवर्ण चादी देकर द्रव्यान्तर को प्राप्त करना निकृति कही जाती है, हीनता व अधिकता को प्राप्त प्रस्थ (एक प्रकार का माप) आदि मान कहलाते है । मापने के योग्य जौ और गेहूँ आदि मेय कहे जाते है । - पृष्ठ २८५

(५५४) शंका - मोष किसे कहते है ?

समाधान - मोष का अर्थ है चोरी । - पृष्ठ २८६

(५५५) शंका - नोजीव क्या कहलाता है ?

समाधान - जीव से सम्बद्ध अनतानन्त विस्रसोपचयो से उपचय को प्राप्त कर्म पुद्गलस्कन्ध, प्राणधारण अथवा ज्ञान-दर्शन से रहित होने के कारण नोजीव कहलाता है । - पृष्ठ २९६

(५५६) शंका - उदीर्णफलविपाकवेदना क्या है ?

समाधान - उदीर्ण का फल उदीर्णफल, उसको प्राप्त है विपाक जिसमे वह उदीर्णफलविपाक वेदना है । इतर नही है अर्थात् जो कर्मस्कन्ध जिस समय मे अज्ञान को उत्पन्न कराता है, उसी समय मे ही वह ज्ञानावरणीय की उदय, उदीरणा रूप होती है न कि उत्तरक्षण मे, इसलिए उसे उदार्णफल विपाक कहते है । - पृष्ठ ३६२

(५५७) शका - जिस जीव के द्वारा जो कर्म बाधा गया है । वह उक्तकर्म वेदना का स्वामी है । यह बिना उपदेश के ही जाना जाता है । अतेव वेदनास्वामित्वविधान अनुगद्वार को प्रारम्भ नही करना चाहिये ?

समाधान - कर्मस्कन्ध जिससे उत्पन्न हुआ, वहाँ ही यदि वह स्थित रहे तो वही स्वामी हो सकता है । परन्तु ऐसा है नही, क्योकि कर्मों की उत्पत्ति किसी एक से नही है । इसी को स्पष्ट करते है । यदि केवल जीव से ही कर्मों की उत्पत्ति स्वीकार की जाय तो वह सम्भव नही है, क्योकि इसप्रकार से कर्म रहित सिद्धो से भी कर्मों की उत्पत्ति का प्रसग आ सकता है ।

एक मात्र अजीव से भी कर्मों की उत्पत्ति नही हो सकती है, क्योंकि ऐसा होने पर जीव से भिन्न काल, पुद्गल एव आकाश से भी कर्मों की उत्पत्ति का प्रसग अनिवार्य होगा । असमवेत (समवाय रहित) जीव व अजीव दोनो से भी कर्मों की उत्पत्ति सम्भव नही है, क्योकि ऐसा मानने पर (समवाय रहित) सिद्ध जीव और पुद्गल से भी कर्मों की उत्पत्ति का प्रसग आता है । इस प्रसग के निवारणार्थ यदि सयुक्त जीव व अजीव से ही कर्मों की उत्पत्ति स्वीकार की जाती है तो वह भी नही बन सकती, क्योंकि ऐसा स्वीकार करने पर सयुक्त जीव और पुद्गल से भी उनकी उत्पत्ति का प्रसग आता है। इस आपत्ति को टालने के लिये यदि समवेत (समवास प्राप्त) जीव व अजीव से उनकी उत्पत्ति स्वीकार करते हैं तो यह भी उचित नही है, क्योंकि वैसा मानने पर (कर्मसमवेत)

अयोगकेवली के भी कर्मबन्ध का प्रसग अवश्यम्भावी है। इस कारण मिथ्यात्व, असयम, कषाय और योग को उत्पन्न करने में समर्थ पुद्गल द्रव्य और जीव कर्म बन्ध के कारण है, यह सिद्ध होता है। - पृष्ठ २६४-६५

(५५८) शंका - अनन्तरबन्ध किसे कहते है ?

समाधान - कार्मण वर्गणा स्वरूप से स्थित पुद्गस्कन्धो का मिथ्यात्वादिक प्रत्ययो के द्वारा कर्म स्वरूप से परिणत होने के प्रथम समय मे जो बन्ध होता है, उसे अनन्तरबन्ध कहते है। - पृष्ठ ३७०

(५५९) शका - इन पुद्गलस्कन्धो की अनन्तरबन्ध संज्ञा कैसे है ?

समाधान - चूकि वे कार्मण वर्गणा रूप पर्याय को छोड़ने के अनन्तर समय मे ही कर्मरूप पर्याय से परिणत हुए है, अत उनकी अनन्तरवन्ध सज्ञा है। - पृष्ठ ३७०

(५६०) शंका - परम्पराबन्ध किसे कहते है ?

समाधान - वन्ध होने के द्वितीय समय से लेकर कर्मरूप पुद्गल स्कन्धो और जीवप्रदेशो का जो बध होता है, उसे परम्पराबन्ध कहते है। - पृष्ठ ३७०

(५६१) शंका - क्या तदुभयबन्ध भी पाया जाता है ?

समाधान - ज्ञानावरणीयवेदना का तदुभय बन्ध भी है, क्योंकि जीव के द्वारा दोनो ही (अनन्तरबन्ध और परम्पराबन्ध) ज्ञानावरणीय बन्धो के एकता पायी जाती है। - पृष्ठ ३७१

(५६२) शंका - संन्निकर्ष विधान किसे कहते है ?

समाधान - जघन्य व उत्कृष्ट भेदरूप द्रव्य, क्षेत्र, काल, एव भावो मे से किसी एक को विवक्षित करके उसमे शेष पद क्या उत्कृष्ट है, क्या अनुत्कृष्ट है, क्या जघन्य है और क्या अजघन्य है- इस प्रकार की जो परीक्षा की जाती है, उसे सन्निकर्ष विधान कहते है। वह सन्निकर्ष दो प्रकार का है। स्वस्थानसन्निकर्ष और परस्थानसन्निकर्ष। - पृष्ठ ३७५

(५६३) शंका- स्वस्थानसन्निकर्ष किसे कहते है ?

समाधान- किसी विवक्षित एक कर्म का जो द्रव्य, क्षेत्र काल एव भाव विषयक सन्निकर्ष होता है ,उसे स्वस्थानसन्निकर्ष कहते है। पृष्ट -३७५

(५६४) शंका- परस्थानसंनिकर्ष क्या कहलाता है ?

समाधान– आठो कर्मो विषयक सन्निकर्ष परस्थानसन्निकर्ष कहलाता है।-पृष्ठ३७५

(५६५) शंका- जो सप्तम पृथ्वीस्थ अन्तिम समयवर्ती नारकी उत्कृष्ट द्रव्य का स्वामी है और जो मारणान्तिक समुद्घात को कर चुका है, उसके उत्कृष्ट क्षेत्र को ग्रहण करने पर (क्षेत्र वेदना) संख्यातगुणी हीन क्यो नही पायी जाती है ?

समाधान - नही, क्योंकि मुक्त मारमान्तिक जीव के न तो उत्कृष्ट सक्लेश होता है और न उत्कृष्ट योग ही होती है, अतएव वह उत्कृष्ट द्रव्य का स्वामी नही हो सकता । - पृष्ठ ३७८

(५६६) शंका - एक संक्लेश से असंख्याततलोक प्रमाण अनुभाग सम्वन्धी छह स्थानो का बन्ध कैसे वन सकता है ?

समाधान - यह कोई दोष नही है, क्योंकि एक सक्लेश से असख्याततलोक प्रमाण छह स्थानो से सहित अनुभागवन्धाध्यवसानस्थानो के सहकारी कारणो के भेद से सहकारी कारणो के वरावर अनुभाग स्थानो के बन्ध मे कोई विरोध नही आता । वे छह स्थान-अनन्तभागहीन, असख्यातभागहीन, सख्यातभागहीन, सख्यातगुणहीन, असख्यातगुणहीन, अनन्त गुणहीन । - पृष्ठ ३८०

(५६७) - प्रकृत्यर्थता क्या है ?

समाधान - प्रकृति, शील और स्वभाव ये समानार्थक शब्द है । अर्थ शब्द का प्रयोजन वाच्यार्थ है और उसका 'ाव अर्थता है । प्रकृति की अर्थता प्रकृत्यर्थता है । - पृष्ठ ४७८

(५६८) शंका - समयप्रवद्धार्थता किसको कहा गया है ?

समाधान - एक समय मे जो वॉधा जाता है, वह समयप्रबद्ध अर्थात् जो 'अर्यते' निश्चय किया जाता है, वह अर्थ है । समयप्रबद्ध रूप अर्थ समयप्रबद्धार्थ, इसप्रकार यहॉ कर्मधारय समास है । समयप्रबद्धार्थ के भाव को समयप्रबद्धार्थता कहा जाता है । - पृष्ठ ४७८

(५६९) शका - क्षेत्रप्रत्यास क्या है ?

समाधान - क्षेत्र है प्रत्याश्रय जिसका वह क्षेत्रप्रत्यास है । - पृष्ठ ४७८

अथवा जहाँ समीप मे रहा जाता है वह प्रत्यास कहा जाता है, क्षेत्र रूप प्रत्यास क्षेत्रप्रत्यास है । जीव के द्वारा अवष्टब्ध (अबलम्बित) की क्षेत्रप्रत्यास सज्ञा है । पृष्ठ ४६७

(५७०) शंका - सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व की समयप्रवद्धार्थता सत्तर कोड़ा कोड़ी सागरोपम प्रमाण कैसे सम्भव है ?
समाधान - नही, क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यक्मिथ्यात्व के रूप मे संक्रमण को प्राप्त हुए मिथ्यात्व कर्म की स्थितिप्रमाण समयप्रबद्ध निषेक स्वरूप से वहा भी पाये जाते है । - पृष्ठ ४६०

(५७१) शंका - उन अवन्ध प्रकृतियो के समयप्रवद्धार्थता कैसे सम्भव है ?
समाधान - नही, क्योंकि मिथ्यात्व स्वरूप से वाधे गये व समयप्रबद्ध सज्ञा को प्राप्त हुए कर्मग्कन्धो के सम्यक्त्व एव सम्यग्मिथ्यात्व स्वरूप से सक्रान्त होने पर भी उनको द्रव्यार्थिकनय से समयप्रवद्ध कहने मे कोई विरोध नही है । यह क्रम अवन्ध प्रकृतियो के ही सम्भव है, वन्ध प्रकृतियो के नही । - पृष्ठ ४६१

(५७२) शंका - वेदनावेदनाविधान किसे कहते है ?
समाधान - "वेद्यते वेदिष्यत इति वेदन।" जिसका वर्तमान मे अनुभव किया जाता है और भविष्य मे किया जायेगा, उसका नाम वेदना है । वेदना की वेदना वेदनावेदना है अर्थात् आठ प्रकार के कर्म पुद्गल स्कन्धो के अनुभव करने का नाम वेदनावेदना है । "विधीयते क्रियते प्ररूप्यते इति विधानम्" अर्थात् जो किया जाय या जिसकी प्ररूपणा की जाय वह विधान है । वेदनावेदना का विधान उसे वेदनावेदनाविधान कहते है । - पृष्ठ ३०२

(५७३) शंका - प्रकृति किसे कहते है ?
समाधान - "प्रक्रियते अज्ञानादिक फलमनाय आत्मन· इति प्रकृति·" अर्थात् जिसके द्वारा आत्मा को अज्ञानादि रूप फल किया जाता है, वह प्रकृति है । जो कर्म स्कन्ध वर्तमान काल मे फल देता है और जो भविष्य मे फल देगा, इन दोनो ही कर्म स्कन्धो की प्रकृति सज्ञा है । - पृष्ठ ३०३

(५७४) शंका - वध्यमान और उपशान्त या उपशम किसे कहते है ?
समाधान - मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय ओर योग के द्वारा कर्म स्वरूप को प्राप्त कार्मण पुद्गलस्कन्ध वध्यमान कहा जाता है और वध्यमान और उदीर्ण इन दोनो से भिन्न कर्म - पुद्गलस्कन्ध को उपशान्त कहते है । - पृष्ठ ३०३

(५७५) शंका - एक, दो, तीन आदि उच्चारण शलाकायेंकैसे प्राप्त होती है ?
समाधान - जैसे वध्यमान वेदनाओं की उच्चारणशलाकाये - एक जीव की अनेक प्रकृतियाँ एक समय मे वाधी गई कथचित् वध्यमान वेदनाये है। यहा एक उच्चारणशलाका पायी जाती है। अनेक जीवो के द्वारा एक समय मे वॉधी गई एक प्रकृति कथचित् वध्यमान वेदनाये है। इसप्रकार दो उच्चारण शलाकाये हुई (इसी प्रकार उदीर्ण और उपशान्त मे एक को आदि करके जितनी - जितनी होती है, घटित कर लेना चाहिये)। - पृष्ठ ३०८

(५७६) शंका - स्थानान्तर किसे कहते है ?
समाधान - उपरिम स्थान मे से अस्तन स्थान को घटाकर एक कम करने पर जो प्राप्त हो, वह स्थान का अन्तर कहा जाता है। - पृष्ठ ११४

(५७७) शंका - आठ अनुयोगद्वारो मे एकस्थान जीव प्रमाणानुगम किसलिये आया है?
समाधान - एक - एक स्थान मे जीव जघन्य से इतने होते है और उत्कृष्ट से इतने होते है, इस वात के ज्ञापनार्थ अनुगम प्राप्त हुआ है। - पृष्ठ २४१

(५७८) शंका - निरन्तरस्थान जीव प्रमाणानुगम किसलिये आया है ?
समाधान - निरन्तर जीवो से सहित स्थान जघन्य से इतने और उत्कृष्ट से इतने ही होते है, इस वात के ज्ञापनार्थ। - पृष्ठ २४१

(५७९) शंका - सान्तरस्थानजीवप्रमाणानुगम किसलिये आया है ?
समाधान - निरन्तर जीवो से रहित स्थान जघन्य से इतने और उत्कृष्ट से इतने ही होते है, इस वात के ज्ञापनार्थ। - पृष्ठ २४१

(५८०) शका - नानाजीवकालप्रमाणानुगम किसलिये आया है ?
समाधान - एक - एक के स्थान मे जीव जघन्य से इतने काल तक और उत्कृष्ट से इतने काल तक रहते है, इसके ज्ञापनार्थ। - पृष्ठ २४२

(५८१) शंका - वृद्धिप्ररूपणा किसलिये आयी है ?
समाधान - वह अनन्तरोपनिधा और परम्परोनिधा स्वरूप से जीवो की वृद्धि प्ररूपणा करने के लिये आयी है। - पृष्ठ २४२

(५८२) शंका - यवममध्य प्ररूपणा किसलिये आयी है ?

समाधान - क्रम से वृद्धि को प्राप्त होनेवाले जीवो के स्थानो के असख्यातवे भाग मे यवमध्य होकर उससे आगे के सब स्थान जीवो से विशेषहीन होकर गये है, इस बात के ज्ञापनार्थ । - पृष्ठ २४२

(५८३) शंका - स्पर्शनप्ररूपणा किसलिये आयी है ?

समाधान - अतीतकाल मे एक जीव के द्वारा एक अनुभागस्थान का इतने काल स्पर्शन किया गया है, यह जतलाने के लिये आई है । - पृष्ठ २४२

(५८४) शंका - अल्पबहुत्व किसलिये आया है ?

समाधान - वह पूर्वोक्त तीन प्रकार के अनुभागस्थानो मे जीवो के अल्पबहुत्व की प्ररूपणा करने के लिये आया है । - पृष्ठ २४२

देखो ! शास्त्राभ्यास की महिमा, जिसके होने पर परम्परा आत्मानुभव दशा को प्राप्त होता है, मोक्षरूप फल को प्राप्त होता है । यह तो दूर ही रहो, तत्काल ही इतने गुण प्रगट होते हैं -

१. क्रोधादि कषायो की तो मंदता होती है ।
२. पंचेन्द्रियो के विषयो मे प्रवृत्ति रुकती है।
३. अति चंचल मन भी एकाग्र होता है ।
४. हिंसादि पॉच पाप नहीं होते ।
५. स्तोक (अल्प) ज्ञान होने पर भी त्रिलोक के तीन काल संबंधी चराचर पदार्थों का जानना होता है ।
६ हेय-उपादेय की पहचान होती है ।
७. आत्मज्ञान सन्मुख होता है । (ज्ञान आत्मसन्मुख होता है।)
८. अधिक-अधिक ज्ञान होने पर आनन्द उत्पन्न होता है ।
९. लोक मे महिमा-यश विशेष होता है ।
१०. सातिशय पुण्य का बंध होता है । सो इत्यादिक गुण शास्त्राभ्यास करने से तत्काल ही उत्पन्न होते है ।

- इसलिये शास्त्राभ्यास अवश्य करना ।

धवला पुस्तक - १३

(५८५) शंका - नामस्पर्शनिक्षेप क्या है ?

समाधान - जो वह नामस्पर्श है, वह एक जीव, एक अजीव, नाना जीव, नाना अजीव, एक जीव और एक अजीव, एक जीव और नाना अजीव, नाना जीव और एक अजीव, नाना जीव और नाना अजीव, इनमे से जिसका स्पर्श ऐसा नाम किया (रखा) जाता है, वह सब नामस्पर्श निक्षेप है । - पृष्ठ ८

(५८६) शंका - स्थापनास्पर्श क्या है ?

समाधान - जो वह स्थापनास्पर्श है, वह काष्ठकर्म, चित्रकर्म, पोतकर्म, लेप्यकर्म, लयनकर्म, शैलकर्म गृहकर्म, भित्तिकर्म, दन्तकर्म, और भेडकर्म, इनमे तथा अक्ष (कौडियॉ और पासे), वराटक (कौड़ियाँ) एव इन को लेकर इसी प्रकार और भी जो एकत्व के सकल्पद्वारा स्थापना अर्थात् बुद्धि मे स्पर्श रूप स्थापित किये जाते है, वह सब स्थापना स्पर्श है। (काष्ठकर्मादि की परिभाषाये ६ वी पुस्तक के प्रश्नोत्तरो मे आ गई है, वहाँ से देखिए) । - पृष्ठ ६

(५८७) शंका - द्रव्यस्पर्श क्या है ?

समाधान - जो एक द्रव्य दूसरे द्रव्य से स्पर्श को प्राप्त होता है । वह सव द्रव्यस्पर्श है । यथा - परमाणु पुद्‌गल शेष पुद्‌गल द्रव्य के साथ स्पर्श को प्राप्त होता है, क्योंकि पुद्‌गलद्रव्य रूप से परमाणु पुद्‌गल का शेष पुद्गलो के साथ एकत्व पाया जाता है । जो सयोग या समवाय सम्बन्ध होता है, वह द्रव्यस्पर्श कहलाता है। अथवा जीव द्रव्य और पुद्‌गल द्रव्य का जो एक क्षेत्रावगाहरूप सम्बन्ध होता है, वह द्रव्यस्पर्श कहलाता है ।

जीव और पुद्‌गलो का आकाशादि द्रव्यो के साथ भी उनका स्पर्श पाया जाता है, क्योंकि नैगमनय की अपेक्षा इनमे प्रत्यासत्ति (अति सन्निकटता देखकर स्पर्श का व्यवहार किया जाता है) देखी जाती है । - पृष्ठ १२

(५८८) शंका - द्रव्य की स्पर्श संज्ञा कैसे है ?

समाधान - क्योंकि जिसके द्वारा स्पर्श किया जाता है या जो स्पर्श करता है इस व्युत्पत्ति के अनुसार स्पर्श शब्द की सिद्धि होने से द्रव्य की स्पर्श सज्ञा वन जाती है । - पृष्ठ १२

(५८६) शंका - क्षेत्रस्पर्श क्या कहलाता है ?

समाधान - जो द्रव्य एक क्षेत्र के साथ स्पर्श करता है । वह द्रव्य एक क्षेत्रस्पर्श है । एक आकाश प्रदेश मे स्थित अनन्तानन्त पुद्‌गल स्कन्धो का समवाय सम्बध या सयोगसम्बन्ध द्वारा जो स्पर्श होता है, वह एक क्षेत्रस्पर्श कहलाता है । अथवा बहुत द्रव्यो का युगपत् एकक्षेत्र के स्पर्शनद्वारा एकक्षेत्र स्पर्श कहना चाहिये । - पृष्ठ १६

(५६०) शंका - अनन्तर क्षेत्रस्पर्श किसे कहते है ?

समाधान - एक आकाशप्रदेश रूप क्षेत्र को देखते हुए अनेक आकाशप्रदेशरूप क्षेत्र अनन्तर क्षेत्र है, क्योंकि एक और अनेक सख्या के मध्य मे अन्य सख्या नही उपलब्ध होती । जो द्रव्य अनन्तर क्षेत्र के साथ स्पर्श करता है, वह सब अनन्तर क्षेत्रस्पर्श है । यहाँ अनन्तर का अर्थ सापेक्ष लेना । - पृष्ठ १७

(५६१) शंका - देशस्पर्श किसे जानना चाहिये ?

समाधान - एक द्रव्य का देश अर्थात् अवयव यदि अन्य द्रव्य के देश अर्थात् उसके अवयव के साथ स्पर्श करता है तो वह देशस्पर्श जानना चाहिये । यह देशस्पर्श स्कन्धो के अवयवो का ही होता है, परमाणुरूप पुद्गलो का नही, क्योंकि वे निरवयव होते है । - पृष्ठ १८

(५६२) शंका - त्वक्स्पर्श क्या कहलाता है ?

समाधान - जो द्रव्य त्वचा या नोत्वचा को स्पर्श करता है, वह सब त्वक्स्पर्श है । वृक्ष, गच्छ या स्कन्धो की छाल को त्वचा कहते है और उसके ऊपर जो पपड़ी का समूह होता है उसे नोत्वचा कहते है, अथवा सूरण, अदरख, प्याज और हल्दी आदि की जो बाह्य पपडी का समूह है, उसे नोत्वचा कहते है । - पृष्ठ १६

(५६३) शंका - सर्वस्पर्श क्या कहलाता है ?

समाधान - जो कोई द्रव्य अन्य द्रव्य के साथ सबका सब सर्वात्मना स्पर्श करता है, वह सर्वस्पर्श है । यथा - परमाणु द्रव्य जिसप्रकार परमाणु द्रव्य अन्य परमाणु के साथ स्पर्श करता हुआ सबका सब सर्वात्मना स्पर्श करता है, उसीप्रकार अन्य भी जो इसप्रकार का स्पर्श है, वह सर्वस्पर्श कहलाता है । - पृष्ठ २१

(५६४) शंका - स्पर्शस्पर्श क्या कहलाता है और उसके कितने भेद हैं ?

समाधान - जो स्पर्श किया जाता है, वह स्पर्श है यथा - कर्कश आदि। जिसके द्वारा स्पर्श किया जाय, वह स्पर्श है, जैसे त्वचा इन्द्रिय। इन दोनों स्पर्शों का स्पर्श, स्पर्शस्पर्श कहलाता है। वह आठ प्रकार है - कर्कशस्पर्श, 'मृदुस्पर्श, गुरुस्पर्श, लघुस्पर्श, स्निग्धस्पर्श, रूक्षस्पर्श, शीतस्पर्श और ऊष्णस्पर्श। - पृष्ठ२४

(५६५) शंका - कर्मस्पर्श क्या है ?

समाधान - कर्मों का कर्मों के साथ जो स्पर्श होता है, वह कर्मस्पर्श है। - पृष्ठ २६

(५६६) शका - वन्धस्पर्श क्या है ?

समाधान - औदारिकशरीर बन्धस्पर्श, इसीप्रकार वैक्रियिक, आहारक, तैजस और कार्मण शरीरबन्धस्पर्श - ये सब बन्धस्पर्श हैं। जो बांधता है, वह बन्ध है, औदारिकशरीर ही बन्ध, औदारिकशरीरबन्ध है, उस बन्ध का स्पर्श औदारिकशरीर बन्ध स्पर्श है। इसी प्रकार सब शरीरबधस्पर्शों का कथन करना चाहिये। - पृष्ठ ३०-३१

(५६७) शंका - कर्मस्पर्श और नोकर्मस्पर्श, द्रव्यस्पर्श मे अन्तर्भाव को प्राप्त होते हैं। फिर इनका अलग से कथन क्यो किया है ?

समाधान - कर्मों का कर्मों के साथ, नोकर्मों का नोकर्मों के साथ और नोकर्मों का कर्मों के साथ स्पर्श होता है, इस बात का ज्ञान कराने के लिये इनका अलग से कथन किया गया है। - पृष्ठ ३१

(५६८) शंका - भव्यस्पर्श क्या है ?

समाधान - विष, कूट, यन्त्र, पिजरा, कन्दक और पशु को फँसाने का जाल आदि तथा इनके करनेवाले और इन्हे इच्छित स्थान मे रखनेवाले स्पर्शन के योग्य होगे, परन्तु अभी उन्हे स्पर्श नही करते, वह सब भव्यस्पर्श है। ये सब स्पर्शों का कथन व्यवहार से जान लेना। - पृष्ठ ३४

(५६९) शंका - भावस्पर्श क्या है

समाधान - जो स्पर्शप्राभृत का ज्ञाता उसमे उपयुक्त है, वह सव भावस्पर्श है। - पृष्ठ ३५

(६००) शंका - द्रव्यकर्म क्या है ?

समाधान - जो द्रव्य सद्भावक्रियानिष्पन्न है, वह सब द्रव्यकर्म है । जीव द्रव्य का ज्ञान दर्शन आदि रूप से होनेवाला परिणाम, पुद्गलद्रव्य का वर्ण, गंध, रस और स्पर्श रूप परिणमना, धर्म, अधर्म, आकाश, काल द्रव्यो का गमनागमन, अवस्थान मे निमित्त होना, परिणाम मे, अवगाहन मे निमित्त होना रूप परिणाम यह सब सद्भावक्रिया है । इन क्रियाओं द्वारा जो द्रव्य स्वभाव से ही निष्पन्न है, वह सब द्रव्यकर्म है । - पृष्ठ ४३

(६०१) शंका - प्रयोगकर्म किस प्रकार होता है ?

समाधान - जीव का मन के साथ प्रयोग, वचन के साथ प्रयोग और काय के साथ तथा इनके भेदो के साथ क्रमश प्रयोग, ये सव प्रयोगकर्म मे गर्भित है । - पृष्ठ ४५

(६०२) शंका - समवदानकर्म क्या कहलाता है ?

समाधान - जो यथाविधि विभाजित किया जाता है, वह समवदानकर्म कहलाता है । और समवदान ही समवदानता कहलाती है । कार्मण पुद्गलो का मिथ्यात्व, असयम, योग और कषाय के निमित्त से आठ कर्मरूप, सात कर्मरूप, या छह कर्मरूप भेद करना समवदानता है । - पृष्ठ ४५

(६०३) शंका - अधःकर्म क्या है ?

समाधान - जो उपद्रावण, विद्रावण, परितापन और आरम्भ रूप कार्य से निष्पन्न होता है, वह सब अध कर्म है । जीव का उपद्रव करना, ओद्दावण कहलाता है। अगछेदन आदि व्यापार करना, विद्दावण कहलाता है । सन्तांप उत्पन्न करना, परिदावण कहलाता है । और प्राणियो के प्राणो का वियोग करना, आरम्भ कहलाता है । उपद्रावण, विद्रावण परितापन और आरम्भ आदि कार्यरूप से जो उत्पन्न औदारिकशरीर है, वह सब अध कर्म है । जिस शरीर मे स्थित जीवो के उपद्रावण, विद्रावण, परितापन और आरम्भ अन्य के निमित्त से होते है, वह शरीर अध कर्म है । - पृष्ठ ४६-४७

(६०४) शंका - ईर्यापथकर्म क्या कहलाता है ?

समाधान - ईर्या का अर्थ योग है । वह जिस कार्मण शरीर का पथ, मार्ग, हेतु है वह ईर्यापथकर्म कहलाता है । योग मात्र के कारण जो कर्म बँधता है, वह ईर्यापथकर्म है । छद्मस्थवीतरागो के और सयोगकेवलियो के होता है। वह सब

ईर्यापथकर्म है, यहाँ छद्मस्थवीतरागो शब्द से उपशान्तकषाय और क्षीण्कषाय जीवो को लेना चाहिए ।

स्थितिवन्ध को लेकर समझाते हैं - जो कषाय का अभाव होने से स्थितिबन्ध के अयोग्य है, कर्मरूप से परिणत होने से दूसरे समय मे ही अकर्मभाव को प्राप्त हो जाता हैं, और स्थितिवन्ध न होने से मात्र एक समय तक विद्यमान रहता है ऐसे योग के निमित्त से आये हुए पुद्गल स्कन्ध मे काल निमित्तक अल्पत्व देखा जाता है । इसीलिये ईर्यापथकर्म अल्प है ऐसा कहा है । - पृष्ठ ४७-४८

(६०५) शंका - यहाँ सुख का लक्षण क्या है ?

समाधान - सब प्रकार की वाधाओं का दूर होना, यही प्रकृत में सुख का लक्षण है । - पृष्ठ ५१

(६०६) शंका - वहाँ (११ वे से १३ वे गुणस्थान तक) सातावेदनीय का बन्ध है?

समाधान - नही, क्योंकि स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध के बिना शुष्क भीत पर फेकी गई मुट्ठीभर बालुका के समान जीव सम्बन्ध होने से दूसरे समय मे पतित हुए सातावेदनीय कर्म को बन्ध संज्ञा देने मे विरोध आता है । - पृष्ठ ५४

(६०७) शंका - तपःकर्म क्या है ?

समाधान - तप आभ्यन्तर और वाह्य के भेद से वारह प्रकार का है । वह सब तप.कर्म है । - पृष्ठ ५४

(६०८) शंका - तप किसे कहते हैं ?

समाधान - तीन रत्नो को प्रगट करने के लिये इच्छानिरोध को तप कहते है। - पृष्ठ ५५

(६०९) शंका - एषण किसे कहते हैं ?

समाधान - अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य इनका नाम एषण है । एषण का अर्थ खोज करना है । साधु बुभुक्षा की बाधा होने पर चार प्रकार के निर्दोष आहार की यथाविधि खोज करता है । इसलिये इसका एषण यह नाम सार्थक है । एषणा सिमित से भी यही अभिप्राय लिया गया है । - अनशन यह नाम अशन नही करना, इस अर्थ मे चरितार्थ है । इससे अनेषण इस नाम मे मौलिक विशेषता

है। एषण की इच्छा न होने पर साधु अनशन की प्रतिज्ञा करता है, इसलिये अनेषण साधन है और अनशन उसका फल है। भोजन रूप क्रिया की व्यावृति अनशन है और भोजन की इच्छा न होना अनेषण है यहाँ 'अन्' का अर्थ 'ईपत' भी है। इससे यह अर्थ भी फलित होता है कि जो चार प्रकार के आहार में से एक, दो या तीन प्रकार के आहार का त्याग करते है, उनके भी अनेषण तप माना जाता है। - पृष्ठ ५५

(६१०) शंका - एक ग्रास का क्या प्रमाण है ?

समाधान - शाली धान्य के एक हजार चावलो का जो भात वनता है, वह सव एक ग्रास होता है। ऐसे वत्तीस ग्रासो द्वारा प्रकृतिस्थ पुरुष का आहार होता है और अट्ठाईस ग्रासो द्वारा महिला का आहार होता है। - पृष्ठ ५६

(६११) शका - अवमौदर्य तप किसे कहते है ?

समाधान - आधे आहार का नियम करना अवमौदर्य तप है। जो जिसका प्राकृतिक आहार है, उससे न्यून आहार विषयक अभिग्रह (प्रतिज्ञा) करना अवमौदर्य तप है। - पृष्ठ ५६

(६१२) शंका - वृत्तिपरिसंख्यान तप किसे कहते है ?

समाधान - भोजन, भाजन, घर, वाट (मुहल्ला) और दाता इनकी वृत्ति सज्ञा है। उस वृत्ति का परिसख्यान अर्थात् ग्रहण करना वृत्तिपरिसख्यान है। इस वृत्तिपरिसख्यान मे प्रतिवद्ध जो अवग्रह अर्थात् परिमाण-नियत्रण होता है वह वृत्तिपरिसख्यान नाम का तप है। पृष्ठ ५७

(६१३) शंका - यह (वृत्तिपरिसंख्यान तप) किनको करना चाहिये ?

समाधान - जो अपने तपविशेष के द्वारा भव्यजनों को शान्त करके अपने रस, रुधिर और मांस के शोषण द्वारा इन्द्रियसंयम की इच्छा करते है, उन साधुओं को करना चाहिये। अथवा जो भाजन और भोजनादि विषय का रागादि को दूर करना चाहते है, उन्हें करना चाहिये। - पृष्ठ ५७

(६१४) शंका - रसपरित्याग तप क्या है ?

समाधान - शरीर और इन्द्रियो मे रागादि वृद्धि के निमित्तभूत दूध, गुड, घी, नमक और दही आदि रस कहलाते है। इनका त्याग करना रसपरित्याग तप है। - पृष्ठ ५७

(६१५) **शंका - कायक्लेश तप क्या है ?**

समाधान - वृक्ष के मूल मे निवास, निरावरण प्रदेश मे आकाश के नीचे आतापन योग, पल्यकासन, कुक्कुटासन, गोदोहासन, अर्धपल्यकासन, वीरासन, मृतकवत शयन अर्थात् मृतकासन तथा मकरमुख और हस्तिशुडादि आसनो द्वारा जो जीव का दमन किया जाता है, वह कायक्लेश तप है। - पृष्ठ ५८

(६१६) **शंका - विविक्तशयनाशन तप क्या है ?**

समाधान - ध्यान और ध्येय मे विघ्न के कारणभूत स्त्री, पशु और नपुसक आदि से रहित गिरि की गुफा, कन्दरा, पब्भार (गिरि-गुफा) स्मशान, शून्यघर, आराम और उद्यान आदि प्रदेश विविक्त कहलाते है। वहाँ शयन और आसन का नियम करना विविक्तशयनासन नाम का तप है। - पृष्ठ ५८

(६१७) **शंका - यह विविक्तशयनासन तप किसलिये किया जाता है ?**

समाधान - असभ्य जनो के दिखने से और उनके सहवास मे उत्पन्न हुए त्रिकाल विषयक दोपो को दूर करने के लिये किया जाता है। - पृष्ठ ५६

(६१८) **शंका - प्रतिक्रमण प्रायश्चित कहाँ पर होता है ?**

समाधान - जव अपराध छोटासा हो और गुरु समीप न हो, तव यह प्रायश्चित होता है। - पृष्ठ ६०

(६१६) **शंका - उभयप्रायश्चित क्या है ?**

समाधान - अपने अपराध की गुरु के सामने आलोचना करके गुरु की साक्षिपूर्वक अपराध से निवृत होना, उभय नाम का प्रायश्चित है। - पृष्ठ ६०

(६२०) **शंका - यह उभयप्रायश्चित कहाँ पर होता है ?**

समाधान - यह दु स्वप्न देखने आदि अवसरो पर होता है। - पृष्ठ ६०

(६२१) **शंका - यह तप प्रायश्चित किसे दिया जाता है ?**

समाधान - जिसकी इन्द्रियाँ तीव्र है, जो जवान है, वलवान है और सशक्त है ऐसे अपराधी साधु को दिया जाता है ? - पृष्ठ ६१

(६२२) **यह मूल प्रायश्चित किसे दिया जाता है ?**

समाधान - अपरिमित अपराध करनेवाला जो साधु पार्श्वस्थ, अवसन्न, कुशील और स्वच्छन्द आदि होकर कुमार्ग मे स्थित है, उन्हे दिया जाता है। - पृष्ठ ६२

(६२३) शंका - इसे (शुक्लध्यान को) शुक्लपना किस कारण से प्राप्त है ?
समाधान - कषाय-मल का अभाव होने से। - पृष्ठ ७०

(६२४) शंका - दोनो ही शुक्लध्यानो का क्या आलम्बन है ?
समाधान - क्षमा और मादर्व आदि आलम्बन है। क्षमा मार्दव, आर्जव और मुक्ति ये जिनमत मे ध्यान के प्रधान आलम्बन कहे गये है, जिन आलम्बनो का सहारा लेकर साधु शुक्लध्यान पर आरोहण करते है। - पृष्ठ ८०

(६२५) शंका - शुक्लध्यान के लिग (चिन्ह) क्या है ?
समाधान - अभय, असमोह, विवेक और विसर्ग ये शुक्लध्यान के लिग है, जिनके द्वारा शुक्लध्यान को प्राप्त हुआ चित्तवाला मुनि पहचाना जाता है। - पृष्ठ ८२

(६२६) शंका - समुच्छिन्नक्रियाप्रतिपाति ध्यान का स्वरूप क्या है ?
समाधान - जिसमे क्रिया अर्थात् योग सम्यक् प्रकार से व्युच्छिन्न हो गया है, वह समुच्छिन्नक्रिय कहलाता है। और समुच्छिन्नक्रिय होकर जो अप्रतिपाति है, वह समुच्छिन्नक्रियाप्रतिपातिध्यान है। यह श्रुतज्ञान से रहित होने के कारण अवितर्क है। जीवप्रदेशो के परिस्पन्द का अभाव होने से अवीचार है, या अर्थ, व्युञ्जन और योग की सक्रान्ति के अभाव होने से अवीचार है। - पृष्ठ ८७

(६२७) शंका - क्रियाकर्म क्या है ?
समाधान - आत्माधीन होना, प्रदक्षिणा करना, तीन बार करना, तीन बार अवनति, चार बार सिर नवाना और बारह आवर्त, यह सब क्रियाकर्म है। - पृष्ठ ८८

(६२८) शंका - जिस प्रकार मोक्ष को जानेवाले जीवो का छह महीना उत्कृष्ट अन्तर होता है, उसीप्रकार केवलिसमुद्घात करनेवालो का भी छह महीना प्रमाण उत्कृष्ट अन्तर क्यो नही होता ?
समाधान - यह दोष नही है, क्योंकि मोक्ष जाने वाले सभी जीवो के केवलिसमुद्घात नही होता है। यदि मोक्ष जाने वाले सभी जीवो केवलिसमुद्घात होता है तो छह मास प्रमाण अन्तर काल भी प्राप्त होता। - पृष्ठ १५१

(६२९) शंका - साकारोपयोग और अनाकारोपयोग का स्वरूप क्या है ?
समाधान - कर्म कर्तृभाव का नाम आकार है। उस आकार के साथ जो उपयोग रहता है, उसका नाम साकार उपयोग है तथा अनाकारोपयोग मे कर्त्ता द्रव्य से

पृथग्भूत कर्म नही पाया जाता (इसलिये कर्म कर्तृभाव जहाँ नही है, वह अनाकार उपयोग है) (वीरसेनाचार्य का यह अभिप्राय) - पृष्ठ २०७-२०८

(६३०) शंका - शब्द कितने प्रकार के है ?

समाधान - वह छह प्रकार के है - तत, वितत, घन, सुषिर, घोष और भाषा। वीणा, त्रिसरिक, आलापिनी, वव्वीसक और खुक्खुण आदि से उत्पन्न हुआ शब्द तत। भेरी, मृदङ्ग और पटह आदि से उत्पन्न हुआ शब्द वितत है। जयघण्टा आदि ठोस द्रव्यो के अभिघात से उत्पन्न हुआ शब्द घन है। वश, शख और काहल (रमतूला) आदि से उत्पन्न हुआ शब्द सुषिर है। घर्षण को प्राप्त हुए द्रव्य से उत्पन्न हुआ शब्द घोष है।

भाषा दो प्रकार की है अक्षरात्मक और अनक्षरात्मक। द्वीन्द्रिय से लेकर असज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त जीवो के मुख से उत्पन्न हुई भाषा तथा वालक और मूक सज्ञीपञ्चेन्द्रिय जीवो की भाषा अनक्षरात्मक है। उपघात से रहित इन्द्रियोवाले सज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीवो की भाषा अक्षरात्मक है।

वह दो प्रकार की है - भाषा और कुभाषा। (देशभेद से वहुजन समाज के द्वारा जो वोली जाती है, उसे भाषा कहते है तथा प्रदेशभेद से जो बोली जाती है उसे कुभाषा या क्षुल्लक भाषा कहते है। - विशेष के लिये ग्रन्थ मे- पृष्ठ २२१-२२२ पर देखिए।

(६३१) शंका - क्या वे सव शब्द पुद्गल लोक के अन्त तक जाते है और कितने समय मे जाते है ?

समाधान - सव नही जाते है, थोड़े ही जाते है। कितने ही शब्द पुद्गल कम से कम दो समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त काल के द्वारा लोक के अन्त को प्राप्त होते है। - पृष्ठ २२२-२२३

(६३२) शंका - अवग्रहमतिज्ञान के पर्यायवाची नाम और उनका स्वरूप क्या है ?

समाधान - अवग्रह, अवधान, सान, अवलम्बना और मेधा ये अवग्रह के पर्यायवाची नाम है। जिसके द्वारा घटादि पदार्थ 'अवगृह्यते' अर्थात् जाने जाते है वह अवग्रह है। जिसके द्वारा 'अवधीयते खण्ड्यते' अर्थात् अन्य पदार्थों से अलग करके विवक्षित अर्थ जाना जाता है, वह अवग्रह का अन्य नाम अवधान है। जो अनध्यवासाय को "स्यति छिनत्ति हन्ति विनाशयति" अर्थात् छेदता है, नष्ट करता है वह अवग्रह का तीसरी नाम सान है। जो अपनी उत्पत्ति के लिये इन्द्रियादिक का अवलम्बन लेता

है, वह अवग्रह का चौथा नाम अवलम्वना है। जिसके द्वारा पदार्थ 'मेध्यति' अर्थात् जाना जाता है, वह अवग्रह का पाचवां नाम मेधा है।- पृष्ठ २४२

(६३३) शंका - ईहा के पर्यायवाची नाम और उसका स्वरूप क्या है ?

समाधान - ईहा, ऊहा, अपोहा, मार्गणा, गवेषणा और मीमासा ये ईहा के पर्यायवाची नाम है। जिस बुद्धि के द्वारा उत्पन्न हुए सशय का नाश करने के लिये "ईहते"अर्थात् चेष्टा करते है, वह ईहा है। जिसके अवग्रह के द्वारा ग्रहण किये गये अर्थ के नही जाने गये विशेष की "ऊह्यते" अर्थात् तर्कणा करते है, वह ऊहा है। जिमके द्वारा सशय के कारणभूत विकल्प का "अपोह्यते" अर्थात् निराकरण किया जाता है, वह अपोहा है। अवग्रह के द्वारा ग्रहण किये अर्थ के विशेप का जिसके द्वारा मार्गण अर्थात् अन्वेषण किया जाता है, वह मार्गणा है। जिसके द्वारा गवेषणा की जाती है, वह गवषेणा है। अवग्रह के द्वारा ग्रहण किया गया अर्थ विशेषरूप से जिसके द्वारा मीमासित किया जाता है, अर्थात् विचारा जाता है, वह मीमासा है। - पृष्ठ २४२-२४३

(६३४) शंका - अवायज्ञान के पर्यायवाची नाम और उनका स्वरूप क्या है ?

समाधान - अवाय, व्यवसाय, बुद्धि, विज्ञप्ति, आमुडा और प्रत्यामुडा ये पर्यायवाची नाम है। जिसके द्वारा मीमासित अर्थ "अवेयते"अर्थात् निश्चित किया जाता है वह अवाय है। जिसके द्वारा अन्वेषित अर्थ "व्यवसीयते" अर्थात् निश्चित किया जाता है, वह व्यवसाय है। जिसके द्वारा ऊहित अर्थ "बुद्धयते" अर्थात् जाना जाता है, वह बुद्धि है। जिसके द्वारा तर्कसंगत अर्थ विशेषरूप से जाना जाता है, वह विज्ञप्ति है। जिसके द्वारा वितर्कित अर्थ "आमुड्यते"अर्थात् सकोचित किया जता है, वह आमुडा है। जिसके द्वारा मीमासित अर्थ अलग-अलग "अमुड्यते"अर्थात् संकोचित किया जाता है, वह प्रत्यामुंडा है। - पृष्ठ २४३

(६३५) शंका - धारणा ज्ञान के पर्यायवाची नाम ओर उनका स्वरूप क्या है ?

समाधान - धरणी, धारणा, स्थापना, कोष्ठा और प्रतिष्ठा ये पर्यायवाची नाम है। धरणी के समान बुद्धि का नाम धरणी है। जिसप्रकार धरणी (पृथिवी) गिरि, नदी, सागर, वृक्ष, झाड़ी और पत्थर आदि को धारण करती है, उसीप्रकार जो बुद्धि निर्णीत अर्थ को धारण करती है, वह धरणी हे। जिसके द्वारा निर्णीत अर्थ धारण किया जाता है। वह धारणा है। जिसके द्वारा निर्णीतरूप से अर्थ स्थापित किया जाता है, वह स्थापना है। कोष्टा के समान बुद्धि का नाम कोष्टा

है, कोष्ठा कुस्थली को कहते हैं। उसके समान जो निर्णीत अर्थ को धारण करती है, वह बुद्धि कोष्ठा कही जाती है जिसमे विनाश के बिना पदार्थ प्रतिष्ठित रहते है वह बुद्धि प्रतिष्ठा है। - पृष्ठ २४३

(६३६) शंका - मतिज्ञान के एकार्थवाची नाम क्या है ?

समाधान - सज्ञा, स्मृति, मति और चिन्ता। जिसके द्वारा भले प्रकार जानते है वह सज्ञा है। स्मरण करना स्मृति है। मनन करना मति है। चिन्तन करना चिन्ता है। - पृष्ठ २४४

(६३७) शंका - संपातफल किसे कहते है ?

समाधान - एकसयोग का नाम सपात है और उसके फल को सपातफल कहते है। - पृष्ठ २५५

(६३८) शका - श्रुतज्ञान के बीस भेदो के नाम तथा स्वरूप क्या है ?

समाधान - पर्याय, पर्यायसमास, अक्षर, अक्षरसमास, पद, पदसमास, सघात, सघातसमास, प्रतिपत्ति, प्रतिपत्तिसमास, अनुयोगद्वार, अनुयोगद्वारसमास, प्राभृतप्राभृत, प्राभृतप्राभृतसमास,प्राभृत,प्राभृतसमास वस्तु, वस्तुसमास, पूर्व और पूर्वसमास ये बीस भेद श्रुतज्ञान के जानने चाहिये। - पृष्ठ २६०

(१) वह लब्ध्यक्षर ज्ञान अक्षरसज्ञक केवलज्ञान का अनतवा भाग है, इसलिये इस लब्ध्यक्षरज्ञान मे सब जीवराशि का भाग देने पर ज्ञानाविभागप्रतिच्छेदो की अपेक्षा सब जीवराशि से अनन्त गुणा लब्ध होता है। इस प्रक्षेप को प्रतिराशिभूतलब्ध्यक्षर ज्ञान मे मिलाने पर पर्यायज्ञान का प्रमाण उत्पन्न होता है। पुन पर्यायज्ञान मे सब जीवराशि का भाग देने पर जो भाग लब्ध आवे, उसे प्रतिराशिभूत उसी पर्यायज्ञान मे मिला देने पर पर्यायसमासज्ञान उत्पन्न होता है। - पृष्ठ २६३

(२) पुन इसके आगे भावविधानोक्त विधान के अनुसार अनन्तभागवृद्धि, असख्यातभागवृद्धि, सख्यातभागवृद्धि, सख्यातगुणवृद्धि, असख्यातगुणवृद्धि, और अनन्तगुणवृद्धि के क्रम से असख्यातलोकमात्र पर्यायसमासज्ञान स्थानो के द्विचरमस्थान के प्राप्त होने तक पर्यायसमासज्ञानस्थान निरन्तर प्राप्त होते रहते है। पुन इसके ऊपर एक प्रक्षेप की वृद्धि होने पर अन्तिम पर्यायसमासज्ञान स्थान होता है। - पृष्ठ २६४

(३) पुन अन्तिम पर्यायसमासज्ञान स्थान मे सब जीवराशि का भाग देने पर जो लब्ध आवे उसे उसी मे मिलाने पर अक्षरज्ञान उत्पन्न होता है। यह अक्षरज्ञान सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तक के अनन्तानन्त लब्ध्यक्षरो के बराबर होता है। पृष्ठ २६४

(४) इस अक्षर के ऊपर दूसरे अक्षर की वृद्धि होने पर अक्षरसमास नाम का श्रुतज्ञान होता है। इस प्रकार एक - एक अक्षर की वृद्धि होते हुए सख्यात अक्षरो की वृद्धि होने तक अक्षरसमास श्रुतज्ञान होता है।

(५) पुनः संख्यात अक्षरो को मिलाकर एक पद नाम का श्रुतज्ञान होता है। - पृष्ठ २६५

(६) श्रुतज्ञान के एक सौ बारह करोड़ तिरासी लाख अट्ठावन हजार और पॉच (११२८३५८००५) ही पद होते है। इतने पदों का आश्रय कर सकल श्रुतज्ञान होता है। इस मध्यमपद श्रुतज्ञान के ऊपर एक अक्षर के बढ़ने पर पदसमास नाम का श्रुतज्ञान होता है। - पृष्ठ २६६-२६७

(७) इसप्रकार एक - एक अक्षर की वृद्धि से बढ़ता हुआ पदसमास श्रुतज्ञान एक अक्षर से न्यून सघात श्रुतज्ञान के प्राप्त होने तक जाता है। पुन इसके ऊपर एक - एक अक्षर की वृद्धि होने पर सघात नाम का श्रुतज्ञान होता है। ऐसा होते हुए भी सख्यात पदो को मिलाकर एक सघात श्रुतज्ञान होता है। मार्गणा ज्ञान का अवयवभूत ज्ञान सघात श्रुतज्ञान है। - पृष्ठ २६७

(८) पुन सघात श्रुतज्ञान के ऊपर एक अक्षर की वृद्धि होने पर सघातसमास श्रुतज्ञान होता है। - पृष्ठ २६९

(९) पुन इस ज्ञान पर एक अक्षर की वृद्धि होने पर प्रतिपत्ति श्रुतज्ञान होता है। ऐसा होता हुआ भी संख्यात सघात श्रुतज्ञानो का आश्रय कर एक प्रतिपत्ति श्रुतज्ञान होता है। अनुयोग द्वार के जितने अधिकार होते है, उनमे से एक अधिकार की प्रतिपत्ति सज्ञा है। - पृष्ठ २६९

(१०) और एक अक्षर से न्यून सब अधिकारों की प्रतिपत्तिसमास सज्ञा है। इसप्रकार एक - एक अक्षर की वृद्धि क्रम से बढ़ता हुआ एक अक्षर से न्यून अनुयोगद्वार श्रुतज्ञान के प्राप्त होने तक प्रतिपत्तिसमास श्रुतज्ञान जाता है। - पृष्ठ २६९

(११) पुन इसमे एक अक्षर की वृद्धि होने पर अनुयोगद्वार श्रुतज्ञान होता है। - पृष्ठ २६९

(१२) पुन अनुयोगद्वार श्रुतज्ञान के ऊपर एक अक्षर की वृद्धि होने पर अनुयोगद्वारसमास श्रुतज्ञान होता है। इसकी वृद्धि प्राभृतप्राभृत श्रुतज्ञान से एक अक्षर न्यून तक ले जाना। - पृष्ठ २७०

(१३) पुन इसके ऊपर एक अक्षर की वृद्धि होने पर प्राभृतप्राभृत श्रुतज्ञान होता है। सख्यात अनुयोगद्वारो को ग्रहण कर एक प्राभृतप्राभृत श्रुतज्ञान होता है। - पृष्ठ २७०

(१४) पुन इसके ऊपर एक अक्षर की वृद्धि होने पर प्राभृतप्राभृतसमास श्रुतज्ञान होता है। प्राभृत ज्ञान के प्राप्त होने से पूर्व एक अक्षर न्यून तक वृद्धि को प्राप्त की प्राभृतप्राभृतसमास सज्ञा जाननी।

(१५) पुन इसके ऊपर एक अक्षर की वृद्धि होने पर प्राभृत श्रुतज्ञान होता है। सख्यात प्राभृतप्राभृतो को ग्रहण कर एक प्राभृतश्रुतज्ञान होता है।

(१६) इसके ऊपर एक अक्षर की वृद्धि होने पर प्राभृतसमास श्रुतज्ञान होता है। इसप्रकार उत्तरोत्तर एक - एक अक्षर की वृद्धि होते हुए एक अक्षर से न्यून वस्तुश्रुतज्ञान के प्राप्त होने तक प्राभृतसमास श्रुतज्ञान होता है।

(१७) पुन इसमे एक अक्षर की वृद्धि होने पर वस्तुश्रुतज्ञान होता है, पूर्वश्रुतज्ञान के जितने अधिकार है। उनकी अलग - अलग वस्तु सज्ञा है।

(१८) इसके ऊपर एक अक्षर की वृद्धि होने पर वस्तुसमास श्रुतज्ञान होता है, इसप्रकार एक - एक अक्षर की वृद्धि होते हुए एक अक्षर न्यून पूर्वश्रुतज्ञान के प्राप्त होने तक वस्तुसमास श्रुतज्ञान होता है। - पृष्ठ २७०

(१९) पुन इसके ऊपर एक अक्षर की वृद्धि होने पर पूर्व श्रुतज्ञान होता है।

(२०) पुन· इस उत्पादपूर्व श्रुतज्ञान के ऊपर एक अक्षर की वृद्धि होने पर पूर्वसमास श्रुतज्ञान होता है। - पृष्ठ २७१

(६३९) शंका - सकल श्रुतज्ञान के अक्षरो का प्रमाण कितना है ?

समाधान - एक लाख चौरासी हजार चार सौ सड़सठ कोड़ाकोड़ी चवालीस लाख सात हजार तीन सौ सत्तर करोड़, पचानवे लाख तीन सौ सत्तर करोड़, पचानवे लाख इक्कावन हजार छह सौ पन्द्रह सकल श्रुतज्ञान के अक्षर हैं। १८४४६७४४०७३७०९५५१६१५। - पृष्ठ २५४

(६४०) शका - पर्याय किसका नाम है ?

समाधान - ज्ञानाविभागप्रतिच्छेदो के प्रक्षेप का नाम पर्याय है। - पृष्ठ २६४

(६४१) शंका - अक्षर के तीन भेदो का नाम और स्वरूप क्या है ?

समाधान - लब्ध्यक्षर, निर्वृत्त्यक्षर और सस्थानाक्षर ।

(१) यह अक्षरज्ञान, सूक्ष्म निगोद लब्ध्यपर्याप्तक से लेकर श्रुतकेवली तक जीवो के जितने क्षयोपशम होते है, उन सबकी लब्ध्यक्षर सज्ञा है ।

(२) जीवो के मुख से निकले हुए शब्द की निर्वृत्त्यक्षर सज्ञा है । उस निर्वृत्त्यक्षर के व्यक्त और अव्यक्त ऐसे दो भेद है । उनमे से व्यक्तनिर्वृत्त्यक्षर सज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्तको के होता है और अव्यक्तनिर्वृत्यक्षर द्वीन्द्रिय से लेकर सज्ञी पचेन्द्रिय पर्याप्त तक जीवो के होता है ।

(३) आकार रूप मे बनाया कोई अक्षर, उसे सस्थानाक्षर कहते है, इसका दूसरा नाम स्थापना अक्षर है । - पृष्ठ २६४-२६५

(६४२) शंका - स्थापना क्या है ?

समाधान - "यह वह अक्षर है" इसप्रकार अभेदरूप से बुद्धि मे जो स्थापना होती है अथवा जो लिखा जाता है, वह स्थापना अक्षर है । - पृष्ठ २६५

(६४३) शंका - श्रुतज्ञान के ४१ पर्यायवाची नाम कौन - कौन है ?

समाधान - प्रावचन, प्रवचनीय, प्रवचनार्थ, गतियो मे मार्गणता, आत्मा, परम्परालब्धि, अनुत्तर, प्रवचन, प्रवचनी, प्रवचनाद्धा, प्रवचनिसनिकर्ष,नयाविधि, नयान्तरविधि, भगविधि, भंगविधिविशेष, पृच्छाविधि,पृच्छाविधिविशेष, तत्त्व, भूत, भव्य, भविष्यत्, अवितथ, अविहत, वेद, न्याय्य, शुद्ध, सम्यग्दृष्टि, हेतुवाद, नयावाद, प्रवरवाद, मार्गवाद, श्रुतवाद, परवाद, लौकिकवाद, लोकोत्तरीयवाद, अग्रय, मार्ग, यथानुमार्ग, पूर्व, यथानुपूर्व और पूर्वातिपूर्व ये श्रुतज्ञान के ४१ पर्यायवाची नाम है । - पृष्ठ २८०

उनमे से कुछ का सक्षेप मे अर्थ सहित उल्लेख करते है -

(६४४) शंका - प्रवचन किसे कहते है ?

समाधान - प्रकृष्ट वचन को प्रवचन कहते है । - पृष्ठ २८०

(६४५) शंका - प्रकृष्टता कैसे है ?

समाधान - पूर्वापर विरोधादि दोष से रहित होने के कारण निरवद्य अर्थ का कथन करने के कारण और विसवादरहित होने के कारण प्रकृष्टता है । प्रवचन अर्थात् प्रकृष्ट शब्दकलाप मे होनेवाला ज्ञान या द्रव्यश्रुत प्रावचन कहलाता है ।

प्रवन्धपूर्वक जो वचनीय अर्थात् व्याख्येय या प्रतिपादनीय होता है, **वह प्रवचनीय** कहलाता है ।

ज अण्णाणी कम्म खवेइ भवसयसहस्संकोडीहि ।
तं णाणी तिहि गुत्तो खवेइ अतोमुहुत्तेण ॥२३॥

अज्ञानी जीव जिस कर्म का लाखो करोडो भवो के द्वारा क्षय करता है उसका ज्ञानी जीव तीन गुप्तियो से गुप्त होकर अन्तर्मुहूर्त मे क्षय करता है।(इतनी ज्ञान की महिमा है)। द्वादशाग रूप वर्णों का समुदाय वचन है। जो "अर्यते गम्यते परिच्छद्यते"जाना जाता है, वह अर्थ है । यहाँ अर्थ पद से नौ पदार्थ लिये गये है । वचन और अर्थ ये दोनो मिलकर **वचनार्थ** कहलाते है । जिस आगम मे वचन और अर्थ ये दोनो प्रकृष्ट अर्थात् निर्दोष है, उस आगम की **प्रवचनार्थ** सज्ञा है । - पृष्ठ २८२

गतिओं मे अर्थात् मार्गणास्थानो मे चौदह गुणस्थानो से उपलक्षित जीव जिसके द्वारा खोजे जाते है, वह गतिओं मे **मार्गणता** नामक श्रुति हे । द्वादशाग का नाम आत्मा है,क्योंकि वह आत्मा का परिणाम है । और परिणाम परिणामी से भिन्न होता नही है। क्योकि मिट्टी द्रव्य से पृथग्भूत घटादि पर्याये पाई नही जाती ।

मुक्ति पर्यन्त इष्ट वस्तु को प्राप्त करानेवाली अणिमा आदि विक्रियाये **लब्धि** कही जाती है । इन लब्धियो की परम्परा जिस आगम से प्राप्त होती है या जिसमे उनकी प्राप्ति का उपाय कहा जाता है, वह **परम्परालब्धि** अर्थात् आगम है । - पृष्ठ २८३

(६४६) शंका - चारित्र की अपेक्षा श्रुत की प्रधानता किस कारण से है ?

समाधान - क्योंकि श्रुतज्ञान के बिना चारित्र की उत्पत्ति नही होती, इसलिये चारित्र की अपेक्षा श्रुत की प्रधानता है ।

(६४७) शका - मनःपर्ययज्ञान का अर्थ क्या है ?

समाधान - परकीय मनोगत अर्थ, मन कहलाता है । 'पर्यय' मे 'परि' शब्द का अर्थ सब ओर, और 'अय' शब्द का अर्थ विशेष है । मन, का पर्यय, मन पर्यय और मन पर्यय का ज्ञान मन पर्ययज्ञान है । - पृष्ठ ३२८

(६४८) **शंका - ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञान जघन्य से कितने क्षेत्र को जानता है ?**

समाधान - दो हजार धनुष की एक गव्यूति होती है। उसे आठ से गुणित करने पर गव्यूतिपृथक्त्व होता है। इसके घन प्रमाण क्षेत्र मे रहनेवाले पदार्थों को मन के अवलम्बन से ऋजुमतिमन पर्ययज्ञानी जघन्य से जानता है। - पृष्ठ ३२९

(६४९) **शंका - ऋजुमतिमनःपर्ययज्ञान उत्कृष्ट से कितने क्षेत्र को जानता है ?**

समाधान - आठ हजार धनुषो का एक योजन होता है। उसे आठ से गुणित करने पर योजनपृथक्त्व के भीतर धनुषो का प्रमाण होता है। इनका घन ऋजुमतिमन पर्ययज्ञान का उत्कृष्ट होता है। - पृष्ठ ३३९

(६५०) **शंका - ऋजुमतिमन·पर्ययज्ञान जघन्य और उत्कृष्ट से कितने काल को जानता है ?**

समाधान - जघन्य से दो, तीन भवो को और उत्कृष्ट से सात आठ भवो को जानता है। यहाँ वर्तमान भव के बिना जघन्य दो भवो को और उसके साथ तीन भवो को, वर्तमान भव के बिना उत्कृष्ट से सात भवो की और उसके साथ आठ भवो को जान्ता है। - पृष्ठ ३४०

(६५१) शंका - विपुलमतिमनःपर्ययज्ञान किसे कहते हैं ?

समाधान - जो ऋजु मन, वचन कायगत को तथा अनृजुमन, वचन कायगत को जानता है, उसे विपुलमतिमनःपर्ययज्ञान कहते हैं। - पृष्ठ ३४०

(६५२) **शंका - ऋजु,अनृजु मन, वचन, काय का क्या अर्थ है ?**

समाधान- यथार्थ, सरल, सीधे, मन, वचन और काय का व्यापार ऋजु कहलाता है। है। तथा संशय, विपर्यय और अनध्यवसाय रूप मन, वचन और काय का व्यापार अनृजु कहलाता है। - पृष्ठ ३२८

(६५३) **शंका - विपुलमतिमनःपर्ययज्ञान जघन्य और उत्कृष्ट से कितने काल को जानता है ?**

समाधान - काल की अपेक्षा जघन्य से सात, आठ भवो को और उत्कृष्ट से असख्यात भवों को जानता है। - पृष्ठ ३४२

(६५४) शंका - विपुलमतिमनःपर्ययज्ञान जघन्य और उत्कृष्ट से कितने क्षेत्र को जानता है ?

समाधान - जघन्य से योजनपृथक्त्व प्रमाण क्षेत्र को तथा उत्कृष्ट से मानुषोत्तर शैल के भीतर के क्षेत्र को जानता है। मानुषोत्तर शैल यहाँ उपलक्षणभूत है, वास्तविक नही है। इसलिये पैतालीस लाख योजन क्षेत्र के भीतर स्थित जीवो के चिन्ता के विषयभूत त्रिकालगोचर पदार्थ को वह जानता है, यह उक्त कथन का तात्पर्य है। इससे मानुषोत्तर शैल के बाहर भी अपने विषयभूत क्षेत्र के भीतर स्थित होकर विचार करनेवाले देवो और तिर्यचो की चिन्ता के विषयभूत अर्थ को भी विपुलमतिमन पर्यय ज्ञानी जानता है, यह सिद्ध होता है। - पृष्ठ ३४३

(६५५) शंका - युति और बन्ध मे क्या भेद है ?

समाधान - एकीभाव का नाम बन्ध है और समीपता या सयोग का नाम युति है। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के साथ जीवादि द्रव्यो के सम्मेलन का नाम युति है। - पृष्ठ ३४८

(६५६) शंका - नोकषायो मे अल्परूपता किस कारण से है ?

समाधान - स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध की अपेक्षा उनमे अल्परूपता है। तथा कषायो से नोकषाय अल्प है, क्योंकि क्षपकश्रेणी मे नोकषायो के उदय का अभाव हो जाने पर तत्पश्चात् कषायो के उदय का विनाश होता है। अथवा नोकषायो के उदय के अनुबन्धकाल को देखते हुए कषायो के उदय अनुवन्धकाल अनन्त गुणा उपलब्ध होता है। इस कारण भी नोकषायो की अल्पता जानी जाती है। - पृष्ठ ३५६

(६५७) शंका - प्रकृतियो मे पिण्डपना किस प्रकार बनता है ?

समाधान - प्रकृत मे बहुत प्रकृतियो के समुदाय मे पिण्डपने का व्यवहार किया जाता है। - पृष्ठ ३६६

(६५८) शंका - आनुपूर्वी कर्म किसे कहते हैं ?

समाधान - जिसने पूर्व शरीर को छोड़ दिया है, किन्तु उत्तर शरीर को ग्रहण नही किया है, जो आठ कर्मस्कन्धो के साथ एक रूप हो रहा है, और जो हस के समान धवल वर्णवाले विस्रसोपचयो से उपचित पाच वर्णवाले कर्मस्कन्धो से संयुक्त है, ऐसे जीव के विशिष्ट मुखाकाररूप से जीव प्रदेशो का जो परिपाटी क्रमानुसार परिणमन होता है, उसे आनुपूर्वी कर्म कहते हैं। - पृष्ठ ३७१

(६५९) शंका - मुख किसे कहते है ?

समाधान - जीवप्रदेशो के विशिष्ट सस्थान को मुख कहते है । - पृष्ठ ३७१

(६६०) शंका - यह लोक की संज्ञा कैसे कही जाती है ?

समाधान - ऊर्ध्व ऐसा जो कपाट, वह ऊर्ध्वकपाट है, ऊर्ध्वकपाट के समान होने से लोक ऊर्ध्वकपाट कहलाता है । अत लोक चौदह राजु ऊचा, सात राजु चौड़ा, मध्य मे और ऊपर अन्तिम भाग मे एक राजु बाहल्यवाला, ऊपर ब्रह्मलोक के पास पाच राजु बाहल्यवाला, मूल मे सात राजु बाहल्यवाला, तथा अन्यत्र वृद्धि के अनुरूप बाहल्यवाला है, अत वह ऊर्ध्वस्थितकपाट के समान कहा गया है । ऊर्ध्वकपाट का छेदन ऊर्ध्वकपाट का छेदन है, उस ऊर्ध्वकपाटछेदन से ये पैतालीस लाख योजन बाहल्यरूप तिर्यक्प्रतर निषपन्न हुए है । - पृष्ठ ३७६

(६६१) शंका - पद कितने प्रकार का है ?

समाधान - पद तीन प्रकार का कहा गया है - प्रमाणपद, अर्थपद और मध्यमपद । - पृष्ठ २६६

(६६२) शंका - इन पदो मे से प्रकृत मे किस पद से प्रयोजन है ?

समाधान - मध्यमपद से प्रयोजन है । क्योंकि मध्यमपद के द्वारा पूर्व और अगो का पदविभाग कहा गया है । - पृष्ठ २६६

(६६३) शंका - अनुयोगद्वार यह किसकी संज्ञा है ?

समाधान - प्राभृत के जितने अधिकार होते है । उनमे से एक - एक अधिकार की प्राभृतप्राभृत सज्ञा है । और प्राभृतप्राभृत के जितने अधिकार होते है, उनमे से एक - एक अधिकार की अनुयोगद्वार सज्ञा है । - पृष्ठ ३६६

(६६४) शंका - पूर्व यह किसकी संज्ञा है ?

समाधान - पूर्वगत के जो उत्पादपूर्व आदि चौदह अधिकार है, उनकी अलग - अलग पूर्व श्रुतज्ञान यह सज्ञा है । - सम्यक्ज्ञानचद्रिका गाथा ३३६। - पृष्ठ ७२६

(६६५) शंका - अर्थाक्षर ज्ञान कब हो है ?

समाधान - असख्यातलोक मात्र षटस्थानिन विषै जो अत का षट्स्थान ताका अत का ऊर्वक वृद्धि लिए जो सर्वोत्कृष्ट पर्यायसमास ज्ञान, ताकौ एकवार अष्टाक करि गुणै अर्थाक्षर ज्ञान हो है । - पृष्ठ ७२६

(६६६) शंका - अर्थाक्षर ज्ञान किसके कहिए ?

समाधान - अर्थ का ग्राहक अक्षर तै उत्पन्न भया जो ज्ञान, सो अर्थाक्षर ज्ञान कहिए । - पृष्ठ ७३० सम्यग्ज्ञान चद्रिका

(६६७) शंका - अर्थपद, प्रमाणपद तथा मध्यमपद किसे कहते है ?

समाधान - (१) जिन अक्षर समूहो के द्वारा विवक्षित अर्थ जाना जाता है, उसे अर्थपद कहते है । जेसे - "अग्निमानय" यहाँ दो पद हुए अग्नि और आनय **का अर्थ है - अग्नि को लाओ ।**

(२) श्लोकादि के मध्य जितने अक्षरो से एक पद बनता है, उसको प्रमाणपद कहते है । इसी प्रमाणपद के द्वारा ग्रन्थ की गणना की जाती है ।

(३) सोला सौ चौतीस करोड़ तियासी लाख सात हजार आठ सौ अठ्यासी । १६३४८३०७८८८ । अपुनरूक्त अक्षरो के समूह को मध्यमपद कहते है । अगपूर्व के पदो की गणना इस मध्यमपद से की गई है । - पृष्ठ सम्यग्ज्ञानचद्रिका। ७३३ त्रिलोकसार

(६६८) शंका - उपमामान किसे कहते हैं ?

समाधान - जो प्रमाण किसी पदार्थ की उपमा देकर कहा जाता है, उसे उपमामान कहते हैं ।

(६६९) शंका - उपमामान के कितने भेद है ?

समाधान - ८ भेद हैं - पल्य, सागर, सूच्यंगुल, प्रतरांगुल, घनांगुल, जगच्छ्रेणी, जगत्प्रतर और लोक । - पृष्ठ ८७

(६७०) शंका - पल्य किसे कहते हैं ?

समाधान - पल्य गड्ढे को कहते हैं । उस गड्ढे से पाये गये काल को भी पल्य या पल्योपम कहते है ।

(६७१) **शंका - पल्योपम के कितने भेद है ?**

समाधान - ३ भेद हैं - व्यवहारपल्य, उद्धारपल्य और अद्धापल्य इनका स्वरूप परिभाषा प्रश्न न० ६६३, ६८४, ६८५ पर देखिए। पृष्ठ ८७

(६७२) **शंका - उत्सेधांगुल किसे कहते है ?**

समाधान - पुद्गल के सबसे छोटे खड को (टुकड़े को) परमाणु कहते है, अनतानत परमाणुओं के स्कंध को (समूहरूप पिड को) "अवसन्नासन्न" कहते है, ८ अवसन्नासन्न का एक "सन्नासन्न", ८ सन्नासन्न का एक "त्रुटिरेणु", ८ त्रुटिरेणु का एक "त्रसरेणु", ८ त्रसरेणु का एक "रथरेणु", ८ रथरेणु का एक "उत्तम भोगभूमिवालो का बालाग्रभाग", ८ "उत्तमभोगभूमिवालो के बालाग्र का एक "मध्यमभोगभूमिवालो का बालाग्र", ८ मध्यमभोगभूमिवालो के बालाग्र का एक "जघन्यभोगभूमिवालो का बालाग्र", ८ जघन्य भोगभूमिवालो के बालाग्र का एक "कर्मभूमिवालों का बालाग्र", ८ कर्मभूमिवालो के बालाग्र की एक "लीख", ८ लीखो की एक "सरसो", ८ सरसो का एक "जौ", और ८ जौ का एक अगुल होता है। इस अगुल को उत्सोधांगुल कहते है। चारो गतियो के जीवो के शरीर, देवो के नगर तथा मंदिर आदि का परिणाम इसी अंगुल से किया जाता है। - पृष्ठ २३

(६७३) **शंका - प्रमाणांगुल किसे कहते है ?**

समाधान - इस उत्सेधांगुल से पांच सौ गुणा प्रमाणांगुल होता है। (भरत क्षेत्र के अवसर्पिणीकाल के प्रथम चक्रवर्ती का अगुल) इस प्रमाणांगुल से महापर्वत, नदी, द्वीप, समुद्र इत्यादिक का परिमाण किया जाता है। - पृष्ठ २३

(६७४) **शंका - आत्मांगुल किसे कहते है ?**

समाधान - भरत ऐरावत क्षेत्र के मनुष्यो का अपने - अपने काल मे जो अगुल है, उसे आत्मागुल कहते है। इससे झारी, कलश, धनुष, ढोल, हल, मूसल, छत्र, चमर, इत्यादिक का प्रमाण का वर्णन किया जाता है। - पृष्ठ २४

(६७५) **शंका - व्यवहारपल्योपम किसे कहते हैं ?**

समाधान - प्रमाणांगुल से निष्पन्न एक योजन प्रमाण गहरा और एक योजन प्रमाण व्यासवाला एक गोल गर्त - गड्ढा बनाना, उस गर्त को उत्तम भोग-भूमि वाले मेंढ़े के बालो के अग्रभागो से भरना। गणित करने से उस गर्त के रोमो की संख्या

४१३४५२६३०३०८२०३१७७७४६५१२१६२०००००००००००००००००००
हुई। इस गर्त के एक - एक रोम को सौ-सौ वर्ष पीछे निकालते-निकालते जितने काल मे वे सब रोम समाप्त हो जाय उतने काल को व्यवहारपल्य काल कहते है। उपर्युक्त रोम सख्या को १०० वर्ष के समयसमूह से गुणा करने पर व्यवहार पल्य के समयो का प्रमाण होता है। - पृष्ठ ६३

(६७६) शंका - उद्धारपल्योपम किसे कहते हैं ?

समाधान - व्यवहारपल्य के प्रत्येक रोम के बुद्धि के द्वारा इतने टुकड़े करो जितने असख्यात कोटि वर्ष के समय होते है। और उन्हे दो हजार कोस गहरे और दो हजार कोस चौडे गोल गड्ढे मे भर दो। उसे उद्धारपल्य कहते है। उसमे से प्रति समय एक-एक रोम निकालने पर जितने समय मे वह खाली हो उतने काल को उद्धारपल्योपम कहते है। - पृष्ठ ६४

(६७७) शंका - अद्धापल्योपम किसे कहते हैं ?

समाधान - उद्धारपल्य के प्रत्येक रोम के पुन इतने टुकड़े करो जितने सौ वर्ष मे समय होते है और उन्हे पूर्वोक्तप्रमाण गड्ढे मे भर दो। उसे अद्धापल्य कहते। उसमे से प्रति समय एक-एक रोम निकालने पर जितने समय मे वह गड्ढा खाली हो, उतने काल को अद्धापल्योपम कहते है। - पृष्ठ ६५

(६७८) शंका - सागरोपम किसे कहते हैं ÷

समाधान - दस कोड़ाकोड़ी व्यवहार पल्योपमो का एक व्यवहार सागरोपम, दस कोड़ीकोड़ी उद्धारपल्योपमो का एक उद्धारसागरोपम और दस कोड़ाकोड़ी अद्धापल्योपमो का एक अद्धा सागरोपम होता है। - पृष्ठ ६५

(६७९) शंका - कोड़ाकोड़ी किसे कहते है ?

समाधान - एक करोड़ को एक करोड़ से गुणा करने पर जो लब्ध आये, उसे कोड़ाकोड़ी कहते है।

(६८०) शंका - अर्द्धछेद किसे कहते हैं ?

समाधान - किसी राशि के आधा-आधा होने के बारो को अर्द्धछेद कहते हैं। अर्थात् जो राशि जितनी बार समरूप से आधी-आधी हो सकती है, उसके उतने ही अर्द्धछेद होते है। जैसे—सोलह के अर्द्धछेद चार होते है, क्योंकि सोलह राशि चार बार आधी-आधी हो सकती है ८,४,२,१। - पृष्ठ ७०

(६८१) शंका - सूच्यंगुल किसे कहते हैं ?

समाधान - अद्धापल्योपम की अर्ध्दच्छेद राशि का विरलन कर प्रत्येक एक - एक के ऊपर अद्धापल्योपम को रखकर अद्धापल्योपमो का परस्पर गुणकार करने से जो राशि उत्पन्न होवे, उसे सूच्यगुल कहते है ।

(६८२) शंका - प्रतरांगुल किसे कहते है ?

समाधान - सूच्यगुल के वर्ग को प्रतरांगुल कहते है । - पृष्ठ १०८

(६८३) शंका - घनांगुल किसे कहते है ?

समाधान - सूच्यंगुल के घन को घनागुल कहते है, सो एक सूच्यंगुल लम्बा, एक सूच्यगुल चौड़ा और एक सूच्यगुल ऊँचा प्रदेशो के घन को घनागुल कहते है । - पृष्ठ १०८

(६८४) शंका - जगच्छ्रेणी किसे कहते है ?

समाधान - पल्य की अर्द्धछेद राशि के असख्यातवे भाग का विरलन कर प्रत्येक एक - एक के ऊपर घनांगुल रख समस्त घनागुलों का परस्पर गुणकार करने से जो गुणनफल होगा, उसे जगच्छ्रेणी कहते है । सो सात राजु लम्बी आकाश के प्रदेशों की पंक्ति प्रमाण जाननी चाहिये । - पृष्ठ १०८

(६८५) शंका - राजु किसे कहते हैं ?

समाधान - जगच्छ्रेणी के सातवे भाग को राजु कहते है अर्थात् असंख्यात योजनो का एक राजु होता है । - पृष्ठ १०८

(६८६) शंका - जगत्प्रतर किसे कहते हैं ?

समाधान - जगच्छ्रेणी के वर्ग को अर्थात् जगतच्छ्रेणी को जगच्छ्रेणी से गुणा करने पर जो प्रमाण हो, उसे जगत्प्रतर या प्रतरलोक कहते है । सो जगच्छ्रेणी प्रमाण लम्बे और चौड़े क्षेत्र मे जितने प्रदेश आये उतना प्रमाण जानना । - पृष्ठ १०८

(६८७) शंका - घनलोक किसे कहते हैं ?

समाधान - जगच्छ्रेणी के घन को लोक अथवा घनलोक कहते है । सो जगच्छ्रेणी प्रमाण लम्बे, चौड़े और ऊंचे क्षेत्र में जितने प्रदेश आयें उसका नाम घनलोक जानना । - पृष्ठ १०८

(६८८) शंका - गणित मे परिकर्माष्टक किसे कहते है ?

समाधान - संकलन, व्यवकलन, गुणकार, भागहार, वर्ग, वर्गमूल, घन और घनमूल इन आठो को परिकर्माष्टक कहते है। (करणानुयोग प्रवेशिका)

(६८९) शंका - संकलन किसे कहते है ?

समाधान - लोक मे जिसे जोड़ना कहते है, उसे ही शास्त्रो मे सकलन कहते है। जैसे - दो और दो चार होते है। - पृष्ठ १

(६९०) शंका - व्यवकलन किसे कहते हैं ?

समाधान - लोक मे जिसे घटाना या बाकी निकालना कहते है, उसे ही शास्त्रों मे व्यवकलन कहते हैं। जैसे - चार मे से दो घटाने पर दो शेष रहते है। - पृष्ठ १

(६९१) शंका - गुणकार किसे कहते हैं ?

समाधान - गुणाकरने को गुणकार कहते है। जैसे - चार को दो से गुणा करने पर आठ होते है। - पृष्ठ १

(६९२) शंका - भागहार किसे कहते है ?

समाधान - भाग देने का नाम भागहार है। जैसे - चार मे दो का भाग देने से दो लब्ध आते है। शेष के अर्थ सुगम है। - पृष्ठ १

(६९३) शंका - घन किसे कहते हैं ?

समाधान - समान तीन राशियो को परस्पर मे गुणा करने का नाम घन है। जैसे - चार को तीन जगह रखकर परस्पर मे गुणा करने से चौसठ होता है। - पृष्ठ २

(६९४) शंका - वर्ग किसे कहते हैं ?

समाधान - समान दो राशियो का परस्पर मे गुणा करने का नाम वर्ग है। जैसे - दो को दो से गुणा करने पर चार होता है। सो दो का वर्ग चार है। - पृष्ठ ५२

(६९५) शंका - वर्गमूल किसे कहते है ?

समाधान - जिसका वर्ग किया जाता है, उसे वर्गमूल कहते हैं। जैसे - दो का वर्ग करने से चार राशि उत्पन्न होती है, सो दो चार का वर्गमूल है। - पृष्ठ २

(६६६) शंका - प्रथम, द्वितीय आदि वर्गमूल किसे कहते है ?

समाधान - जिस राशि का जो वर्गमूल होता है, उसे उस राशि का प्रथम वर्गमूल कहते है । और प्रथम वर्गमूल का जो वर्गमूल होता है, उसे उसी राशि का द्वितीय वर्गमूल कहते हैं । इसी तरह दूसरे वर्गमूल का जो वर्गमूल होता है, उसे उसी राशि का तृतीय वर्गमूल कहते है । जैसे - पैसठ हजार पॉच सौ छत्तीस का प्रथम वर्गमूल दो सौ छप्पन, द्वितीय वर्गमूल सोलह, तृतीय वर्गमूल चार और चतुर्थ वर्गमूल दो होता है । - पृष्ठ २

(६६७) शंका - घनमूल किसे कहते है ?

समाधान - जिस राशि का घन किया जाता है,उसे घनमूल कहते है। जैसे- चार का घन करने से चौसठ राशि होती है। अत चौसठ का घनमूल चार है। - पृष्ठ२

(६६८) शंका - त्रैराशिक किसे कहते है ?

समाधान - प्रमाण, फल और इच्छा ये तीन राशियाँ है । जिस प्रमाण से जो फल उत्पन्न हो वह तो प्रमाणराशि और फलराशि है । और जितनी अपनी इच्छा हो, उसका नाम इच्छाराशि है । ये तीन राशि स्थापित करके फल राशि को इच्छाराशि से गुणा करके उसमे प्रमाणराशि का भाग देने से जो प्रमाण आवे वही लब्ध होता है। जैसे – चार हाथ के छियानवे अंगुल होते है तो दस हाथ के कितने अगुल हुए, ऐसा त्रैराशिक किया । यहॉ प्रमाण राशि चार हाथ, फल राशि छियानवे अगुल और इच्छाराशि दस हाथ । सो दस को छियानवे से गुणा करके उसमे चार का भाग देने पर दो सौ चालीस अगुल लब्ध हुआ । - पृष्ठ २

(६६९) शंका - क्षेत्रफल किसे कहते हैं ?

समाधान - लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई मे से जहाँ दो की विवक्षा हो एक की न हो उसे प्रतरक्षेत्र या वर्गरूप कहते है । और लम्बाई को चौड़ाई से गुणा करने पर जो फल आता है उसे क्षेत्रफल कहते है । जैसे - चार हाथ लम्बे और पाँच हाथ चौड़े का क्षेत्रफल २० हाथ हुआ । - पृष्ठ २

(७००) शंका - घन क्षेत्रफल किसे कहते हैं ?

समाधान - जहॉ लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई तीनों की विवक्षा हो, उसे घन क्षेत्र कहते है और उसके क्षेत्रफल को खातफल या क्षेत्रफल कहते है । जैसे - चार हाथ लम्बे, चार हाथ चौड़े और पाच हाथ उँचे क्षेत्र का खातफल ४ X ४ X५ =८० हाथ हुआ । - पृष्ठ ३

(७०१) शंका - व्यास और परिधि किसे कहते हैं ?

समाधान - गोलाकार क्षेत्र के बीच मे जितना विस्तार होता है, उसे व्यास कहते है और गोलाकार क्षेत्र की गोलाई के प्रमाण को परिधि कहते है । - पृष्ठ ३

(७०२) शंका - परिधि और क्षेत्रफल का क्या नियम है ?

समाधान - मोटे तौर पर व्यास से तिगुनी परिधि होती है । और परिधि को व्यास की चौथाई से गुणा करने पर क्षेत्रफल होता है । तथा क्षेत्रफल को ऊँचाई या गहराई से गुणा करने पर खातफल होता है । - पृष्ठ १६

(७०३) शंका - द्रव्य निक्षेपण का क्या अर्थ है ?

समाधान - अन्य निषेको के परमाणुओं को अन्य निषेको मे मिलाने का नाम द्रव्य निक्षेपण है ।

त्रिलोकसार

सख्यात, असख्यात और अनन्त की सिद्धि के लिये निम्नलिखित चौदह धाराओं का वर्णन किया जा रहा है ।

(७०४) शंका - धाराये कितने प्रकार की है तथा उनके नाम क्या है ?

समाधान - वे धाराये चौदह प्रकार की है । (१) सर्वधारा, (२)समधारा, (३) कृतिधारा,(४)घनधारा,(५) कृतिमातृकाधारा, (६) घनमातृकाधारा,तथा इनकी प्रतिपक्षी (७) विषमधारा, (८) अकृतिधारा, (९) अघनधारा, (१०) अकृतिमातृकाधारा, (११)अघनमातृकाधारा, (१२) द्विरूप वर्ग धारा, (१३) द्विरूपघनधारा और (१४) द्विरूपघनाघनधारा - ये चौदह धाराएँ हैं । इनके आदिस्थान, अन्तस्थान और स्थान भेद धाराओं मे सर्वत्र हैं । - पृष्ठ ४६

(७०५) शंका - सर्वधारा का क्या स्वरूप है ?

समाधान - जिसके पूर्व मे एक को आदि लेकर सर्व अक होते है, उसे सर्वधारा कहते है अर्थात् एक अक को आदि लेकर उत्कृष्ट अनन्तानन्त प्रमाण केवलज्ञान पर्यन्त सख्याओं के जितने स्थान है वे सब सर्वधारामयी है । जैसे -१-२-३-४-५—६५५३५ और ६५५३६, इस धारा का प्रथम स्थान है और अन्तिम स्थान केवलज्ञान स्वरूप ६५५३६ है । यहॉ अकसंदृष्टि मे केवलज्ञान का मान ६५५३६ माना है । - पृष्ठ ५०

(७०६) शंका - समधारा का स्वरूप क्या है ?

समाधान - दो के अक से प्रारम्भ कर दो-दो की वृद्धि को प्राप्त होती हुई केवलज्ञान पर्यन्त समधारा होती है । सर्वत्र सख्यात आदि का जो

जघन्य स्थान है, वही समधारा का जघन्य स्थान है, तथा सख्यातादि का जो उत्कृष्ट स्थान है, उसमे से एक कम करने पर समधारा का उत्कृष्ट स्थान बन जाता है। जैसे - २,४,६,८,१० ---६५५३०, ६५५३२, ६५५३४, और ६५५३६ । - पृष्ठ ५०

(७०७) **शंका - विषमधारा का स्वरूप क्या है ?**

समाधान - एक के अंक से प्राप्त कर दो - दो की वृद्धि होती हुई केवलज्ञान से एक अंक पर्यन्त विषमधारा होती है। जैसे - १,३,५,७,६, ११,१३, १५.....६५५३१, ६५५३३, और ६५५३५ । - पृष्ठ५१

(७०८) **शंका - कृतिधारा का स्वरूप क्या है ?**

समाधान - एक, चार आदि केवलज्ञान पर्यन्त कृतिधारा होती है । कृति नाम वर्ग का है, अत जो सख्या वर्ग से उत्पन्न है अर्थात् किसी भी सख्या का परस्पर मे गुणा करने से उत्पन्न होती है, वह कृतिधारा की सख्या है । जैसे - १x१=१,२x२=४,३x३=६,४x४=१६,२५,२६, . .,(२५४)^२= ६४५ १ ६ , (२५५)^२ = ६५०२५ और अन्तिम स्थान (२५६)^२ =६५५३६ उत्कृष्ट अनन्तानन्त केवलज्ञान स्वरूप है । - पृष्ठ ५२

(७०६) **शंका - अकृतिधारा का स्वरूप क्या है ?**

समाधान - दो को आदि लेकर एक कम केवलज्ञान पर्यन्त अकृतिधारा है । इस धारा की शेष विधि विषमधारा सदृश है जो सख्याए स्वय किसी वर्ग से उत्पन्न नही होतीं वे संख्याए अकृतिधारा की है । जैसे - २, ३, ५, ६, ७, ८, १० , . २५४,२५५,२५७....६५५३३,६५५३४और ६५५३५ इस धारा मे वर्ग रूप अर्थात् कृतिधारा के स्थान नही मिलते । जैसे- १,४,६,१६,२५,३६,... ६५०२५ और ६५५३६ इस अकृतिधारा में नही मिलेगे। - पृष्ठ ५३

(७१०) **शंका - घनधारा का स्वरूप क्या है ?**

समाधान - एक और आठ को आदि करके केवलज्ञान के अर्धभाग के घनमूल से ऊपर - ऊपर जो घनमूलरूप स्थान प्राप्त हो, उनको केवलज्ञान के अर्धभाग के घनमूल में मिलाने से जो स्थान वनता है, उसे आसन्नघनमूल कहते है । इस आसन्नघनमूल का घन ही इस घनधारा का अन्तिम स्थान है । किसी भी सख्या को तीन वार परस्पर गुणा करने से जो सख्या आती है, वह घनधारा की सख्या कहलाती है । जैसे - १x१x१=१; २x२x२= ८, ३x३x३=२७, ४x४x४= ६४, ५x५x५= १२५ आदि । - पृष्ठ ५४

(७११) शंका - अघनधारा का स्वरूप क्या है ?

समाधान - सर्वधारा मे से घनधारा के स्थानो को कम कर देने पर केवलज्ञान पर्यन्त समस्त स्थान अघनधारा स्वरूप ही होते है। इन स्थानो का प्रमाण 'काकाक्षगोलक' न्यायानुसार है। अर्थात् जो स्थान घन स्वरूप है, वे घनरूप ही है, अघन रूप नही और जो स्थान अघन स्वरूप है, वे अघन रूप ही है, घन रूप नही। इसलिए घनधारा के स्थानो को छोड़कर इस धारा के समस्त स्थान केवलज्ञान पर्यन्त ही है। जैसे- २,३,४,५,६, २५,२६,२८,२६, . ६२,६३,६५ ६३६६६, ६४००१, ६४००२ ६५५३४ ६५५३५, और अन्तिम स्थान ६५५३६ है। - पृष्ठ ५६

(७१२) शंका - वर्गमातृकधारा का स्वरूप क्या है ?

समाधान - जो सख्या वर्ग को उत्पन्न करने मे समर्थ है, उन्हे वर्गमातृक कहते है। इस वर्गमातृकधारा के समस्त स्थान, सर्वधारा सदृश ही होते है, इस धारा की अन्तिम राशि केवलज्ञान का प्रथम वर्गमूल है। एक से प्रारम्भ कर केवलज्ञान के प्रथम वर्गमूल पर्यन्त जितने स्थान है उतने ही इस धारा के है। जैसे - मानलो अकसदृष्टि मे केवलज्ञान का प्रथम वर्गमूल २५६ है, अत इस धारा मे १,२,३,४,५,६,७,८ २५२,२५३,२५४, २५५ और अन्तिम स्थान २५६ है। यदि इसके आगे एक भी अक अधिक (२५७) ग्रहण किया जाएगा तो उसका वर्ग केवलज्ञान से आगे निकल जाएगा। - पृष्ठ ५७

(७१३) शंका - अवर्गमातृकधारा का स्वरूप क्या है ?

समाधान - जिन सख्याओं का वर्ग करने पर वर्गसख्या का प्रमाण केवलज्ञान से आगे निकल जाता है, वे सब सख्याएँ इस अवर्गमातृक धारा मे ग्रहण की गई है। इस धारा का प्रथम स्थान एक अधिक केवलज्ञान का प्रथम वर्गमूल है। अन्तिम स्थान केवलज्ञान है, तथा मध्यम स्थान अनेक प्रकार के है। जैसे - २५७, २५८,२५६,२६० . ६५५३४, ६५५३५ और अन्तिम स्थान ६५५३६ है। इस धारा मे केवलज्ञान के अर्धच्छेद, वर्गशलाका और वर्गमूल आदि नही पाये जाते है। - पृष्ठ ५८

(७१४) शंका - घनमातृकधारा का क्या स्वरूप है ?

समाधान - जो संख्याएँ घन उत्पन्न करने मे समर्थ है, उन्हे घनमातृक कहते है। केवलज्ञान् के आसन्नघनमूल पर्यन्त तो सभी सख्याओं का घन हो सकता है, किन्तु यदि इससे एक अक अधिक का भी घन किया जाएगा तो केवलज्ञान के प्रमाण से अधिक प्रमाण हो जाएगा। इसलिए एक को आदि लेकर केवलज्ञान के आसन्नघनमूल पर्यन्त इस धारा के स्थान होते है। जैसे- १,२,३,४,५, ६,७,८,६,१०. ३५, ३६,३७, ३८,३६, और ४० है जो घनमातृकधारा का अन्तिम स्थान है। - पृष्ठ ५८

(७१५) अघनमातृकधारा का क्या स्वरूप है ?

समाधान - जिन सख्याओं का घन करने पर घन रूप सख्या का प्रमाण केवलज्ञान से आगे निकल जाता है, वे सर्व संख्याएँ इस अघनमातृक धारा में ग्रहण की गई है। घनमातृक धारा के अंतिम स्थान (४०) में एक अक मिलाने पर (४१) इस धारा का प्रथम स्थान है। इस प्रथम स्थान से लेकर केवलज्ञान पर्यन्त सभी सख्याएँ इस धारा के स्थान है। जैसे - ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ६५५३४,६५५३५ और ६५५३६। - पृष्ट ५६

(७१६) शंका - द्विरूपवर्गधारा का स्वरूप क्या है ?

समाधान - द्विरूपवर्गधारा मे २ का वर्ग ४ यह प्रथम स्थान है। द्वितीय स्थान १६ है, ४,१६,२५६,६५५३६ बादाल, एकट्ठी इस प्रकार उत्तरोत्तर राशि पूर्व, पूर्व राशि के कृति (वर्ग) स्वरूप होती है। - पृष्ठ ६०

(७१७) शंका - द्विरूपघनधारा का स्वरूप क्या है ?

समाधान - द्विरूपवर्गधारा मे जो-जो वर्ग रूप राशि है, उन वर्गरूप राशियो की जो घनरूपराशि है, उनकी धारा को द्विरूपघनधारा कहते है। जैसे - द्विरूपवर्गधारा मे २,४,१६,२५६, द्विरूपघनधारा ८,६४,४०६६ अपनी धारा में तो पूर्व-पूर्व के वर्गस्वरूप है, पर घनधारा में घनस्वरूप है। द्विरूपवर्गधारा में जो राशि है, उसके घन स्वरूप द्विरूपघनधारा मे राशि मिलती है। - पृष्ठ ६०

(७१८) शका - द्विरूपघनाघनधारा का क्या स्वरूप है ?

समाधान - द्विरूपवर्गधारा मे जो-जो राशि वर्गरूप है, उस प्रत्येक राशि का घनाघन (घन का घन) इस धारा मे प्राप्त होता है। जैसे · - द्विरूपवर्गधारा का प्रथम स्थान २ है। ($\overline{२ \times २ \times २} \times \overline{२ \times २ \times २} \times \overline{२ \times २ \times २}$) = ५१२ द्विरूपघनाघनधारा का प्रथम स्थान ५१२ इसी प्रकार आगे-आगे का घन का घन करते- करते आगे के स्थान प्राप्त होते है। - पृष्ठ ६६

(७१९) शंका - द्विरूपवर्गधारा, द्विरूपघनधारा, द्वीरूपघनाघनधारा इन तीनों धाराओं में ऊपर की राशि मे अर्धच्छेदो का प्रमाण कितना - कितना हैं ?

समाधान - तीनो धाराओं के स्वस्थान में वर्ग से ऊपर के वर्ग मे अर्धच्छेद दुगने, दुगने और परस्थान मे तिगुने - तिगुने होते हैं। जैसे = द्विरूपवर्गधारा का प्रथम स्थान ४ है और इसके अर्धच्छेद २ हैं।

इसके ऊपर दूसरा वर्गस्थान १६ है जिसके अर्धच्छेद ४ हैं जो दो के दुगुणे है। इसके ऊपर तीसरा स्थान २५६ है जिसके अर्धच्छेद ८ हैं जो ४ के दुगुणे है। इसी प्रकार आगे- आगे भी जानना चाहिये। ये स्थान स्वस्थान की अपेक्षा हुए।

परस्थानापेक्षा - द्विरूपवर्गधारा के प्रथम स्थान ४ के अधच्छद २ हैं तथा द्विरूपघनधारा के दूसरे स्थान ६४ के अर्धच्छेद ६ हैं जो २ के तिगुने हैं। द्विरूपवर्गधारा के दूसरे स्थान १६ के अर्धच्छेद ४ हैं तथा द्विरूपघनधारा के तीसरे स्थान ४०९६ के अर्धच्छेद १२ हैं जो ४ के तिगुने हैं। - पृष्ठ ६७

(७२०) शंका- स्वस्थान तथा परस्थान किसे कहते हैं ?

समाधान - जहाँ निजधारा की अपेक्षा होती है, उसे स्वस्थान कहते हैं। तथा जहाँ परधारा की अपेक्षा होती है, उसे परस्थान कहते हैं। - पृष्ठ ६७

(७२१) शंका - वर्गशालाका कौन कहलाती हे ?

समाधान - राशि के वर्गितवार अर्थात् जितने बार वर्ग करने से राशि उत्पन्न होती है, उत्तने वार वर्गशालाकाये कहलाती हैं अथवा अर्धच्छेद के अर्धच्छेद वर्गशालाएँ कहलाती हैं। अर्थात् जैसे - दो के वर्ग से प्रारम्भ कर पूर्व-पूर्व का जितनी बार वर्ग करने पर विवक्षित राशि उत्पन्न हो उस राशि के वे वर्गितवार वर्गशालाका कहलाते है। जैसे :- दो का एक बार वर्ग करने से चार

(२ x २= ४) की उत्पति हुई अत ४ की एक वर्गशालाका कहलाई । १६ की उत्पति के लिये दो बार वर्ग [(२x२x= ४) ४ x ४= १६] अत १६ की दो वर्गशालाकाएँ हुई (आगे इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिये)। - पृष्ठ ६६

(७२२) शंका - लोक की ऊँचाई, चौड़ाई सम्बन्धी विवरण क्या है ?

समाधान - लोक की ऊँचाई चौदह राजु प्रमाण है । इसका आधा१४ $\frac{१}{७}$ राजु प्रमाण दक्षिणोत्तर आयाम अर्थात् चौड़ाई है । दक्षिणोत्तर दिशा मे लोक के अधोभाग से ऊपर चौदह राजु ऊँचाई पर्यन्त लोक सर्वत्र ७ राजू चौड़ा है, कही भी हीनाधिक नही है । पूर्व पश्चिम-दिशाओं का व्यास अध व मध्य लोक मे क्रम से भूमि ७ राजु, मुख १ राजु तथा उर्ध्व लोक के मध्य मे भूमि ५ राजु और मुख से अध एव शिखर पर १ राजु प्रमाण है । इन दोनो (मुख और भूमि) के बीच मे हानि और वृद्धि चय को साधना चाहिए । आदि प्रमाण का नाम भूमि, अन्त प्रमाण का नाम मुख तथा घटने का नाम हानि और क्रम से बढ़ने का नाम चय है । - पृष्ठ ११०

(७२३) शंका - ऊर्ध्वायत अधोलोक क्षेत्रफल कितना है ?

समाधान - ऊर्ध्वायत अर्थात् लम्बे और चौकोर क्षेत्र के क्षेत्रफल को ऊर्ध्वायत क्षेत्रफल कहते है । अधोलोक की चौड़ाई के मध्य में अ और ब नाम के दो खण्ड कर ब खण्ड के समीप अ खण्ड को उल्टा रखने से आयतचतुरस्त्र क्षेत्र प्राप्त होता है । पृष्ठ ११४

(७२४) शंका - तिर्यगायत क्षेत्र किसे कहते है ?

समाधान - जिस क्षेत्र की लम्बाई अधिक और ऊँचाई कम हो, उसे तिर्यगायत क्षेत्र कहते है । - पृष्ठ ११५

(७२५) शंका - तिर्यगायत अधोलोक का क्षेत्रफल कब प्राप्त है ?

समाधान - यह आयत क्षेत्र ८ राजु लम्बा और ३$\frac{१}{२}$ राजु ऊँचा है। इसकी ऊपर नीचे की कोटि समान है । तथा आमने सामने की भुजा भी समान है, अत ८ राजु कोटि को ३$\frac{१}{२}$ राजु भुजा से गुणा ($\frac{८}{१}$ x$\frac{७}{२}$) करने पर २८ वर्ग राजु तिर्यगायत अधोलोक का क्षेत्र फल प्राप्त हो जाता है । - पृष्ठ ११५

(७२६) **शंका** - यवमुरजाकार किसका नाम है ?

समाधान - अधोलोक को मुरज (मृदङ्ग) व यव (जौ अन्न) के आकार मे विभाजित करने का नाम यवमुरजाकार है । - पृष्ठ ११६

(७२७) **शंका** - यवमध्य अधोलोक किसे कहते है ?

समाधान - अधोलोक के सम्पूर्ण क्षेत्र मे यवो की रचना करने को यवमध्य कहते है । - पृष्ठ ११७

(७२८) **शंका** - मन्दराकार क्षेत्र कैसे वन जाता है ?

समाधान - अधोलोक मे नीचे से ऊपर आधे राजू मे चौथाई राजू मिला देने से $(\frac{१}{२}+\frac{१}{४})$ पौन राजू होता है । $(\frac{३}{४})$ राजू से $(\frac{७}{१२})$ राजू, इससे $(\frac{४३}{१२})$ राजू, इससे $(\frac{७}{१२})$ राजू और इससे $(\frac{३}{२})$ राजू ऊपर ऊपर जाकर जिस आकार का निर्माण होता है, वही मन्दराकार का क्षेत्र बन जाता है । - पृष्ठ ११९

(७२९) **शंका** - दूष्यक्षेत्रफल किसे कहते है ?

समाधान - दूष्य का अर्थ डेरा (TENT) होता है । अधोलोक के मध्य क्षेत्र मे डेरो की रचना करके क्षेत्रफल निकालने को दूष्यक्षेत्रफल कहते है । - पृष्ठ १२२

(७३०) **शंका** - गिरिकटक अधोलोक का स्वरूप क्या है ?

समाधान - गिरि पहाड़ी को कहते है । पहाड़ी नीचे से चौड़ी और ऊपर सकरी अर्थात् चोटी युक्त होती है । कटक इससे विपरीत अर्थात् नीचे सकरा और ऊपर चौड़ा होता है । अधोलोक मे गिरिकटक की रचना करने से २७ गिरि और २१ कटक प्राप्त होते हैं । पृष्ठ १२४

(७३१) **शंका** - सामान्य क्षेत्रफल किसे कहते हैं ?

समाधान - जिस क्षेत्र की हीनाधिक चौड़ाई को समान करके क्षेत्रफल निकाला जाता है, उसे सामान्य क्षेत्रफल कहते है । पृष्ठ १२६

(७३२) शंका - प्रत्येक क्षेत्रफल किसे कहते है ?

समाधान - भिन्न-भिन्न युगल का क्षेत्रफल निकालने को प्रत्येक क्षेत्रफल कहते है। - पृष्ठ १२६

(७३३) शंका - अर्धस्तम्भ ऊर्ध्वलोक किसे कहते है ?

समाधान - ऊर्ध्वलोक के आकार को मध्य से छेद कर निम्नप्रकार स्थापन करने से जो आकार विशेष वनता है, उसे अर्धस्तम्भ कहते है । पृष्ठ १२८, विशेष ग्रन्थ से देखिए

(७३४) शंका - पिनष्टि क्षेत्रफल किसे कहते है ?

समाधान - पिनष्टि का अर्थ खण्ड करना है । अत ऊर्ध्वलोक मे खण्डो की रचना द्वारा क्षेत्रफल ज्ञात करने को पिनष्टि क्षेत्रफल कहते है । पृष्ठ १३०

शव्दो का अर्थ - व्यास = चौड़ाई । वेध = मोटाई । उत्सेध = मोटाई। वाहुल्य = ऊँचाई । पिनष्टि = खण्ड करना ।

(७३५) शंका - सौधर्म आदि देवो के शरीरो की ऊँचाईयॉ कितनी - कितनी है ?

समाधान - देवो के शरीर की ऊचाई सौधर्मैशान मे ७ हस्त प्रमाण, सानत्कुमारादि दो मे ६ हस्त, व्रह्मादि चार मे ५ हस्त प्रमाण, शुक्रादि दो मे ४ हस्त, शतार आदि दो मे ३$\frac{१}{२}$ हस्त, आनतादि चार मे ३ हस्त, अधोग्रैवेयक मे २$\frac{१}{२}$ हस्त, मध्यग्रैवेयक मे २ हस्त, उपरिम ग्रैवेयक मे १$\frac{१}{२}$ हस्त, और अनुदिश एव अनुत्तरविमानो मे एक हस्त प्रमाण है । - पृष्ठ ४६६

(७३६) शंका - विजयार्थ पर्वत के दो कुण्डो से जो दो नदीयॉ निकली है, उनका क्या नाम है ?

समाधान - उन्मग्ना, निमग्ना, (१) क्योंकि यह नदी अपने जलप्रवाह मे गिरे हुए भारी से भारी द्रव्य को भी ऊपर तट पर ले आती है, इसलिए यह नदी उन्मग्ना कही जाती है ।

(२) क्योंकि यह नदी अपने जल प्रवाह के ऊपर आई हुई हल्की से हल्की वस्तु को भी नीचे ले जाती है, इसलिये यह नदी निमग्ना कही जाती है । - पृष्ठ ५००

धवला पुस्तक - १४

(७३७) शका - वन्धन के कितने भेद है तथा उनका स्वरूप क्या है ?

समाधान - वन्धन के चार भेद है, वन्ध - वन्धक, वन्धनीय और वन्धविधान - कोई किसी से वधता है, इससे वन्ध की सिद्धि हुई । जो वॉधता है, वह वन्धक है । इससे वन्धक की सिद्धि हुई। और जो वॅधता है, वह वन्धनीय है । इससे वन्धनीय की सिद्धि हुई । जव कोई वस्तु वँधती है तो वह कितने प्रकार मे वॅधती है, इसके द्वारा वन्धविधान की सिद्धि की गई है ।

खुलासा - द्रव्य का द्रव्य के साथ तथा द्रव्य और भाव का क्रम से जो सयोग और समवास होता है, वह वन्ध कहलाता है । द्रव्य और भाव के भेद से दो प्रकार के वन्ध के कर्ता है, वे वन्धक कहलाने है । वन्ध के योग्य पुद्गल द्रव्य वन्धनीय कहा जाता है । प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश के भेद से भेद को प्राप्त हुए वन्ध के भेदो को वन्धविधान कहते है । - पृष्ठ २

(७३८) शका - स्थापनावन्ध किसे कहते है ?

समाधान - अन्य वन्ध मे अन्य वन्धकी"वह यह है" इस प्रकार से वुद्धि से स्थापना करना स्थापना वन्ध है । आकृतिवाले पदार्थ मे सद्भाव स्थापना होती है और आकृतिरहित पदार्थ मे असद्भावस्थापना होती है । पृष्ठ ४-५

(७३९) शंका - जीवभाववन्ध के कितने प्रकार है तथा उनका स्वरूप क्या है ?

समाधान - तीन प्रकार है - विपाक, अविपाक और तदुभय (१) कर्मों के उदय और उदीरणा को विपाक कहते है और विपाक जिस भाव का प्रत्यय अर्थात् कारण है, उसे विपाकप्रत्ययिक जीवभाववन्ध कहते है । (२) कर्मो के उदय और उदीरणा के अभाव को अविपाक कहते है । अर्थात् कर्मो के उपशम और क्षय को अविपाक कहते है । अविपाक जिस भाव का प्रत्यय अर्थात् कारण है, उसे अविपाकप्रत्ययिक जीवभावबन्ध कहते है । (३) कर्मों के उदय और उदीरणा से तथा इनके उपशम से जो भाव उत्पन्न होता है, उसे तदुभयप्रत्ययिक जीवभाववन्ध कहते है । - पृष्ठ १०

(७४०) शंका - संयम और विरति मे क्या भेद है ?

समाधान - समितियो के साथ महाव्रत-अणुव्रत सयम कहलाते है और समितियो के बिना महाव्रत और अणुव्रत विरति कहलाते है । यही इन दोनो मे भेद है । - पृष्ठ १२

(७४१) शंका - यह मत्यज्ञानित्व तदुभयप्रत्ययिक कैसे है ?

समाधान - मिथ्यात्व के सर्वघाति स्पर्द्धको का उदय होने से तथा ज्ञानावरणीय के देशघाति स्पर्धको का उदय होने से और उसी के सर्वघाति स्पर्धको का उदयक्षय होने से मत्यज्ञानित्व की उत्पत्ति होती है, इसलिये वह तदुभयप्रत्ययिक है । - पृष्ठ २०

(७४२) शंका - अजीवभावभन्ध कितने प्रकार का है ?

समाधान - वह भी तीन प्रकार का है - विपाकप्रत्ययिक, अविपाकप्रत्ययिक, तदुभयप्रत्ययिक । (१) मिथ्यात्व, असयम, कषाय और योग से या पुरुष के प्रयत्न से जो अजीवभाव उत्पन्न होते है, उनकी विपाकप्रत्ययिक अजीव भावबन्ध यह सज्ञा है । (२) जो अजीवभाव मिथ्यात्वादि कारणो के विना उत्पन्न होते है, उनकी अविपाकप्रत्ययिक अजीवभाववन्ध यह सज्ञा है । (३) और जो दोनो ही कारणो से उत्पन्न होते है, उनकी तदुभयप्रत्ययिक अजीवभाववन्ध यह सज्ञा है। - पृष्ठ २२-२३

(७४३) शंका - देशप्रत्यासत्तिकृत संयोगसम्बन्ध और गुणप्रत्यासत्तिकृत संयोग सम्बन्ध क्या है ?

समाधान - देशप्रत्यासत्तिकृत का अर्थ है दो द्रव्यो के अवयवो का सम्वद्ध होकर रहना, यह देशप्रत्यासत्तिकृत सयोगसबध है । गुणो के द्वारा जो परस्पर एक दूसरे को ग्रहण करना, वह गुणप्रत्यासत्तिकृत सयोगसम्वन्ध है । - पृष्ठ २७

(७४४) शंका - विसदृश स्निग्धता और विसदृश रूक्षता क्या बन्ध का कारण है ?

समाधान - मादा का अर्थ सदृशता है । जिसमे सदृशता नही होती उसे विमादा कहते है । विसदृश स्निग्धता और विसदृश रूक्षता यह बन्ध है अर्थात् बन्ध का कारण है । - पृष्ठ ३०

(७४५) शंका - किन-किन का वन्ध नही होता और किन-किन का होता है ?

समाधान - समान स्निग्ध पुद्‌गल समान स्निग्ध पुद्‌गलो के साथ नही वॅधते, समान रूक्ष पुद्‌गल **समानरूक्ष** पुद्‌गलो के साथ नही वॅधते । किन्तु सदृश और विसदृश ऐसे स्निग्ध और रूक्ष पुद्‌गल परस्पर मे वँधते है । - पृष्ठ ३१

(७४६) शका - क्या गुणो के अविभागप्रतिच्छेदो की अपेक्षा समान स्निग्ध और रूक्ष पुद्‌गलो का बन्ध होता है या अविभागप्रतिच्छेदो की अपेक्षा विसदृश स्निग्ध और रूक्ष पुद्‌गलो का वन्ध होता है ?

समाधान - जो स्निग्ध और रूक्ष गुणो से युक्त पुद्‌गल गुणो के अविभागप्रतिच्छेदो की अपेक्षा समान होते है, वे रूपी कहलाते है । वे भी वॅधते है । और विसदृश पुद्‌गल अरूपी कहलाते है । वे भी वन्ध को प्राप्त होते है । स्निग्ध और रूक्ष पुद्‌गल गुणो के अविभाग प्रतिच्छेदो की सख्या की अपेक्षा चाहे समान हो, चाहे असमान हो, उनका परस्पर वन्ध होता है । पृष्ठ ३१-३२

(७४७) शका - मात्रा का अर्थ क्या है ?

समाधान - मात्रा का अर्थ अविभागप्रतिच्छेद है । - पृष्ठ ३२

(७४८) शंका - द्विमात्रा स्निग्धता और रूक्षता क्या कहलाती है ?

समाधान - जिस स्निग्धता मे या रूक्षता मे दो मात्रा अधिक या हीन होती है, वह द्विमात्रा स्निग्धता या रूक्षता कहलाती है । - पृष्ठ ३२

(७४९) शंका - स्निग्ध सब पुद्‌गल का रूक्ष सब पुद्‌गल के साथ जो बन्ध होता है वह किस अवस्था मे होता है ?

समाधान - गुण के अविभागप्रतिच्छेदो की अपेक्षा रूक्ष पुद्‌गल के साथ सदृश स्निग्ध पुद्‌गल सम कहलाता है। और सदृश स्निग्ध पुद्‌गल विषम कहलता है। यहाँ स्निग्ध और रूक्ष गुण के द्वारा पुद्‌गलो का बन्ध होता है, इस नियम के अनुसार सब पुद्‌गलो का बन्ध प्राप्त होने पर "जहण्णवज्जे" यह कहा है। जघन्य गुणवाले स्निग्ध और रूक्ष पुद्‌गलो का न तो स्वस्थान की अपेक्षा (गुण की अपेक्षा से) बन्ध होता है और न परस्थान की अपेक्षा (अविभागप्रतिच्छेद की अपेक्षा) ही बन्ध होता है । - पृष्ठ ३३

(७५०) शंका - नोआगमद्रव्यबंध के कितने भेद है ?

समाधान - इसके प्रयोगवन्ध और विस्रसावन्ध ये दो भेद है। जिसमे जीव के व्यापार की अपेक्षा होती है, वह प्रयोगवन्ध कहलाता है। और जो जीव के व्यापार के विना अपनी योग्यतानुसार होता है, वह विस्रसावन्ध कहलाता है।- पृष्ठ ३६

(७५१) शका - सादिविस्रसावन्ध का क्या स्वरूप है ?

समाधान - वे पुद्गल वन्धनपरिणाम को प्राप्त होकर विविध प्रकार के होते है । (१) वर्षाऋतु के सिवा अन्य समय मे जो **मेघ** होते है, उन्हे **अभ्र** कहते है । उन अभ्र रूप से वे परिणत होते है । (२) अथवा वर्षाऋतु मे जो कृष्णवर्ण के वादल होते है व **मेघ** कहलाते है । (३) सूर्योदय के समय और सूर्यास्त के समय पूर्वाम्प दिशाओं मे जो जपाकुसुम के सदृश दिखाई देती है वह **सन्ध्या** कहलाती है । (४) जो रक्त, धवल और श्यामवर्ण की होती है, जिसमे अत्याधिक तेज होता है, जो कुपित हुए भुजग के समान चञ्चल शरीरवाली होती है, और जो मेघो मे उपलव्ध होती है, वह **विद्युत** कहलाती है । (५) जो जलते हुए अग्निपिण्ड के समान अनेक आकारवाली होकर आकाश से गिरती है, वह **उल्का** कहलाती है ।(६) जिससे मनुष्य, पशु और पक्षी मर जाते है तथा जो वृक्ष और पर्वतो के शिखरो का विदारण करती है, ऐसी अशनि को **कनक** (व्रज) कहते है । उत्पात काल के समय अग्नि के विना दावानल के समान जो दशो दिशाओं मे उपलव्ध होता है, उसे **दिशादाह** कहते है । उत्पात काल मे ही धूमयष्टि के समान जो आकाश मे उपलब्ध होता है उसे **धूमकेतु** कहते है । जो पॉच वर्ण **का होकर** धनुषाकार रूप से या त्रुटित आकार रूप से पूर्वापर दिशाओं मे उपलब्ध होता है उसे **इन्द्रायुध** कहते है । इन मेघादि के आकार रूप से वे पुद्गल परिणत होते है वे मेघादि **किस कारण परिणित होते हैं, पहले** दिये हुए कारणो से परिणत होते है । विशिष्ट आकाश देश का नाम **क्षेत्र** है । शीत, उष्ण और वर्षा से उपलक्षित समय का नाम **काल** है। शिशिर, वसन्त, निदाघ (गर्मी), वर्षा, शरद, और हेमन्त का नाम **ऋतु** है । सूर्य का दक्षिण और उत्तर को गमन करना **अयन है** । जिनका **पूरण और गलन स्वभाव है वे पुद्गल कहलाते है । अपने अपने योग्य क्षेत्र, काल, ऋतु, अयन और पुद्गल को प्राप्त होकर वे पुद्गल उन मेघादि के आकार रूप से परिणित होते है अन्यथा सर्वत्र और सर्वदा**

उनकी उत्पत्ति का प्रसग आता है । जो ये और अन्य अमगल अर्थात् शरीरमल आदि पदार्थ है । यहॉ प्रभृति शव्द से सूर्य, चन्द्र, ग्रह और नक्षत्र इनका उपराग तथा परिवेश और गन्धर्वनगर आदि लेने चाहिए। यह मव सादिविस्रसावन्ध है । - पृष्ठ ३५-३६

(७५२) शका - नोकर्मबन्ध के पांच भेदो का स्वरूप क्या है ?

समाधान - (१) रस्सी वर्त्रा (रस्सी विशेष) और काष्ठद्रव्य आदिक से जो पृथग्भूत द्रव्य वाँधे जाते है, वह आलापनवन्ध है । (२) लेपविशेष से परस्पर सम्वन्ध को प्राप्त हुए द्रव्यो का जो वन्ध होता है, वह अल्लीवनबन्ध है । (३) रस्सी वर्त्रा और काष्ठ आदि के विना तथा अल्लीवनविशेष के विना जो चिक्कण और अचिक्कण द्रव्यो का अथवा चिक्कण द्रव्यो का परस्पर बन्ध होता है, वह सश्लेषवन्ध कहलाता है । (४)पॉच शरीरो का जो परस्पर वन्ध होता है, वह शरीरवन्ध कहलाता है । तथा जीवप्रदेशो का जीवप्रदेशो के साथ और पाँच शरीरो के साथ जो वन्ध होता है, वह शरीरवन्ध कहलाता है । - पृष्ठ ३७

(७५३) शका - अप्रमाद किसे कहते है ?

समाधान - पाँच महाव्रत, पॉच समिति, तीन गुप्ति और समस्त कषायो के अभाव का नाम अप्रमाद है अथवा सञ्जवलनकषाय के मद उदय को अप्रमाद कहते है। - पृष्ठ ८६

(७५४) शंका - प्राण और प्राणियो के वियोग का नाम हिसा है । उसे करनेवाले जीवो के अहिसा लक्षण पाँच महाव्रत कैसे हो सकते हैं ?

समाधान - क्योंकि बहिरग हिसा से आस्रव नही होता है । - पृष्ठ ८६

(७५५) शंका - यह किस प्रमाण से जाना जाता है ?

समाधान - क्योंकि बहिरग हिसा का अभाव होने पर केवल अन्तरङ्ग हिसा से सिक्थमत्स्य के बन्ध की उपलब्धि होती है । - पृष्ठ ६०

(७५६) शंका - नानाश्रेणि किसे कहते है ?

समाधान - सदृश घनवालो की मुक्ताफलो की पक्ति के समान पक्ति को नानाश्रेणि कहते है । - पृष्ठ १३६

(७५७) शंका - वर्गणादेश किसे कहते है ?

समाधान - वर्गणाओं के सम्भव सामान्य को वर्गणादेश कहते है । - पृष्ठ १३६

(७५८) शंका - पश्यमान काल किसे कहते है ?

समाधान - वर्तमान काल को पश्यमान काल कहते है । - पृष्ठ १४३

(७५९) शंका - इसमे (वर्तमान काल मे) वर्गणाये सान्तर कैसे कही जाती है ?

समाधान - सर्वदा अतीत काल सब जीव राशि के अनन्तवे भागप्रमाण रहता है, अन्यथा सब जीवो के अभाव होने का प्रसग आता है । - पृष्ठ १४३

(७६०) शंका - साधारण जीवो का आगम मे जो लक्षण मिलता है, वह किसलिए किया जाता है ?

समाधान - क्योंकि लक्षण के भेद के विना शरीरी और शरीरो का भेद नही हो सकता, इसलिए उनके भेदो के कथन करने के लिये लक्षण के भेद का कथन किया है । - पृष्ठ २२६

(७६१) शंका - सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवो मे तीन और चार शरीरवालो का जघन्य और उत्कृष्ट काल कितना है ?

समाधान - सम्यग्मिथ्यात्व के काल मे एक समय शेष रहने पर विक्रिया करने वालो के एक समय जघन्य काल प्राप्त होता है । और उत्कृष्ट काल पल्य के असख्यातवे भाग प्रमाण है । (नानाजीवो की अपेक्षा है)। - पृष्ठ २८३

(७६२) शंका - आहार द्रव्यो से बने शरीर की आहारक संज्ञा क्यो है ?

समाधान - एक तो यह शरीर औदारिक, वैक्रियक शरीरो की अपेक्षा अतिसूक्ष्म आहार द्रव्य मे से सुन्दर, सुगन्ध और स्निग्ध आदि गुणो से युक्त आहार वर्गणाओं से बनता है, इसलिए इसकी आहारक सज्ञा है । दूसरे यह अतिसूक्ष्म आदि गुणयुक्त अर्थ को आहरण करने मे अर्थात् जानने मे समर्थ है, इसलिए इसकी आहारक सज्ञा है । - पृष्ठ ३२६

(७६३) शंका - विस्रसोपचयो के साथ ग्रहण करने पर औदारिक शरीर के परमाणु सब जीवो से अनन्त गुणे होते है क्या?

समाधान - नही, क्योंकि औदारिक शरीर नामकर्म के उदय से जीव मे सम्बन्ध को प्राप्त हुए पुद्गलो को ही औदारिकशरीर रूप से स्वीकर किया गया है। किन्तु वहॉ रहनेवाला विस्रसोपचयऔदारिकशरीर नामकर्म के उदय से नही उत्पन्न हुआ है, क्योंकि औदारिक नोकर्म के स्निग्ध और रूक्षगुण के कारण वहॉ विस्रसोपचय परमाणुओं का सम्बन्ध हुआ है। इसलिए सिद्धो के अनन्तवे भाग प्रमाण ही औदारिक शरीर के परमाणु होते है। - पृष ३३०

(७६४) शंका - प्रदेशविरच क्या कहलाता है ?

समाधान - कर्मपुद्गल प्रदेश जिसमे विरचा जाता है अर्थात् स्थापित किया जाता है, वह प्रदेशविरच कहलाता है। - पृष्ठ ३५२

(७६५) शंका - एक, दो आदि जीवनीय स्थान कब उत्पन्न होते है ?

समाधान - पहले कहे गये सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त की सवसे जघन्य आयु के निवृत्तिस्थान का कदलीघात नही होता। इसीप्रकार एक समय अधिक और दो समय अधिक आदि निवृत्तियो का भी घात नही होता। पुन इस जघन्य निवृत्तिस्थान से सख्यातगुणी आयु का बन्ध करके सूक्ष्म पर्याप्तको मे उत्पन्न हुए जीव का कदलीघात होता है। पुन उसका घात करने वाले जीव ने आयु के सवसे जघन्य निवृत्तिस्थान का घात करके उसे एक समय कम किया, तव वह एक जीवनीयस्थान होता है। पुन उसी विधि से दूसरे जीव के द्वारा घात करके जघन्य निवृत्तिस्थान रूप आयु के दो समय कम स्थापित करने से दूसरा जीवनीयस्थान होता है, इसी प्रकार आगे-आगे भी जानता। - पृष्ठ ३५४

(७६६) शका - अग्रस्थिति रूपाधिक विशेष अधिक है, तो रूपाधिक विशेष का क्या अर्थ है ?

समाधान - अग्रस्थिति विशेप से अग्रस्थिति स्थान विशेप अधिक है। विशेष का प्रमाण कितना है, ऐसा पूछने पर एक अक प्रमाण है, इस वात का ज्ञान कराने के लिए "रूपाधिक" ऐसा कहा है। - पृष्ठ ३६७

(७६७) शंका - छविछेद अल्प है, उसका क्या अर्थ होता है ?

समाधान - छवि शरीर को कहते है। उसके नख आदि का क्रियाविशेष के द्वारा खण्डन करना छेद है। वे छेद वहॉ अल्प अर्थात् स्तोक है, क्योकि वहुत क्रियाओं के विना उनके होने मे कोई विरोध नही आता। जिनसे शरीर पीड़ा होती है, 'वे वहॉ अल्प है' यह इसका भावार्थ है। - पृष्ठ ४०१

(७६८) शंका - विस्रसोपचय किसकी संज्ञा है ?

समाधान - पॉच शरीरो के परमाणु पुद्गलो के मध्य जो पुद्गल स्निग्ध आदि गुणो के कारण उन पॉच शरीरो के पुद्गलो मे लगे हुए है, उनकी विस्रसोचय सज्ञा है। उन विस्रसोपचयो के सम्बन्ध का पॉच शरीरो के परमाणु पुद्गलगत स्निग्ध आदि गुणरूप जो कारण है, उसकी भी विस्रसोपचय सज्ञा है। क्योकि कार्य मे कारण का उपचार किया है। - पृ्ठ ४३०

(७६९) शंका - एक गुण से क्या ग्रहण किया जाता है ?

समाधान - जघन्य गुण ग्रहण किया जाता है। वह जघन्य गुण अनन्त अविभागप्रतिच्छेदो से निष्पन्न होता है। - पृष्ठ ४५०

(७७०) शंका - एक ही अविभागप्रतिच्छेद की द्वितीय गुण संज्ञा कैसे है ?

समाधान - क्योंकि मात्र उतने ही गुणान्तर की द्रव्यान्तर मे वृद्धि देखी जाती है। गुण के द्वितीय अवस्था विशेष की द्वितीय गुणसज्ञा है और तृतीय अवस्था विशेष की तृतीय गुण सज्ञा है, इसलिए जघन्य गुण के साथ द्विगुणपना और त्रिगुणपना यहॉ वन जाता है। - पृष्ठ ४५१

(७७१) शंका - एक-एक जीवप्रेदश पर एक परमाणु के बिना अनन्त परमाणु कैसे समाते है ?

समाधान - क्योंकि ऐसा मानने पर कर्मपरमाणुओं की अनतता नष्ट होकर उनके असख्यात प्रमाण प्राप्त होने का प्रसग आता है। परन्तु ऐसा नही, क्योकि ऐसा मानने पर सव सूत्रो के साथ विरोध होने का प्रसग प्राप्त होता है। इसलिए युक्ति के विना सूत्र के वल से ही एक-एक जीवप्रदेश पर अनन्तानन्त परमाणुओं के अस्तित्व का कथन करने के लिए प्रदेश प्रमाणानुगम आया है। - पृष्ठ ४६४

(७७२) शंका - सान्तर समय मे उपक्रमणकाल किसे कहते है ?

समाधान - प्रथम उपक्रमण काण्डक के काल को छोड़कर द्वितीय आदि उपक्रमणकाण्डको के समस्त कालकलाप को सान्तर समय मे उपक्रमण काल कहते है । - पृष्ठ ४७४

(७७३) शंका - निरन्तर समय मे उपक्रमणकाल किसे कहते है ?

समाधान - प्रथम उपक्रमणकाण्डक के काल को निरन्तर समय मे उपक्रमणकाल कहते है । - पृष्ठ ४७४

(७७४) शंका - सान्तर उपक्रमण जघन्य और उत्कृष्ट काल संज्ञा किसकी है ?

समाधान - आवली के असख्यातवे भागप्रमाण द्वितीय आदि उपक्रमण काण्डको के सवसे जघन्य कालकलाप की सान्तर उपक्रमण जघन्य काल सज्ञा है । और इन्ही के उत्कृष्ट, कालकलाप की उत्कृष्ट सान्तर उपक्रमण काल सज्ञा है। - पृष्ठ४७६

(७७५) शंका - निरन्तर उपक्रमण काल विशेष क्या कहलाता है ?

समाधान - प्रथम उपक्रमणकाण्डक के जघन्य काल को उसी के उत्कृष्ट काल मे से घटा देने पर जो शेष रहे, वह निरन्तर उपक्रमण काल विशेष कहलाता है । - पृष्ठ ४७८

(७७६) शंका - अप्रक्रमणकाल किसे कहते है ?-

समाधान - अन्तर को अप्रक्रमणकाल कहते हैं । - पृष्ठ ४७१

(७७७) शंका - प्रबन्धनकाल किसे कहते हैं ?

समाधान - (१) प्रक्रमण और अप्रक्रमणकालो का समुदाय प्रबन्धनकाल है। पृष्ठ ४८०

(२) बधते है अर्थात् एकत्व को प्राप्त होते है जिसमे उसे प्रबन्धन कहते है । तथा प्रबन्धन रूप जो काल, वह प्रबन्धनकाल कहलाता है । - पृष्ठ ४८५

(७७८) शंका - महास्कन्धस्थान कौन-कौन है ?

समाधान - आठ पृथिवियाँ, टङ्क, कूट, भवन, विमान, विमानेन्द्रक, विमानप्रस्तर, नरक, नरकेन्द्रक, नरकप्रस्तर, गच्छ, गुल्म, वल्ली, लता और तृणवनस्पति आदि महास्कन्ध के स्थान है। ईषत्प्राग्भार पृथिवी के साथ धर्मा आदि सात नरक पृथिवियाँ मिलकर आठ पृथिवियाँ महास्कन्ध के स्थान है। (१) शिलामय पर्वतो मे उकीरे गए वापी, कुँआ, तालाव और जिनघर आदि टङ्क कहलाते है। (२) मेरुपर्वत, कुलपर्वत, विन्ध्यपर्वत और सह्यपर्वत आदि कूट कहलाते है। (३) वलभि और कूट से रहित देवो और मनुष्यो के आवास भवन कहलाते है। (४) वलभि और कूट से युक्त प्रासाद विमान कहलाते है। (५) उडु आदिक विमानेन्द्रक कहलाते है। (६) स्वर्गलोक के श्रेणिवद्ध और प्रकीर्णक विमान विमानप्रस्तर कहलाते है। (७) नरक के श्रेणिवद्ध नरक कहलाते है। (८) श्रेणिवद्धो के मध्य मे जो नरकावास है वे नरकेन्द्रक कहलाते है। (९) तथा वहाँ की प्रकीर्णक नरकप्रस्तर कहलाते है। गच्छ, गुल्म, तृणवनस्पति, लता और वल्ली का अर्थ जानकर कहना चाहिए। ये महास्कन्ध स्थान है। इस सूत्र द्वारा महास्कन्ध के इन्द्रियग्राह्य अवयवो का कथन किया है। परन्तु जो इन्द्रिय अग्राह्य सूक्ष्म महास्कन्ध के अवयव है जो कि निगोदो से समवेत है, वे भी आगमचक्षुओं से जानने चाहिए। ये सव महास्कन्ध वर्गणाये है। - पृष्ठ ४६५

(७७९) शंका - शमिलामध्य किसे कहते है ?

समाधान - यहाँ पर यवमध्य पद से यव का मध्यम प्रदेश नही ग्रहण करना चाहिये, किन्तु यव मध्य अर्थात् भीतरी भाग ऐसा ग्रहण करना चाहिये अथवा शमिलामध्य ऐसा कहते है। युगकीली का नाम शमिला है और दो शमिलाओं के मध्य का नाम शमिलामध्य है। उसके समान होने से उसे शमिलामध्य कहते है। इस प्रकार सब यवमध्यो के यवमध्य और शमिलामध्य ये दो नाम है। - पृष्ठ ५०२-५०३

(७८०) शंका - आसंक्षेपाद्धा किसे कहा जाता है ?

समाधान - जघन्य विश्रमणकाल पूर्वक जघन्य आयुवन्धकाल आसक्षेपाद्धा कहा जाता है। - पृष्ठ ५०३

(७८१) शंका - निर्लेपन किसे कहते है ?

समाधान - आहार, शरीर, इन्द्रीय और श्वासोछ्वास अपर्याप्तियो की निवृत्तिको निर्लेपन कहते है। - पृष्ठ ५०७

(७८२) **शंका - शरीरनिर्वृत्तिस्थान इसका क्या तात्पर्य है ?**

समाधान - शरीरपर्याप्ति की पर्याप्ति की निर्वृत्ति का नाम शरीरनिर्वृत्तिस्थान है । - पृष्ठ ५१६

(७८३) **शंका - निर्लेपनस्थान किसे कहते है ?**

समाधान - इसप्रकार (मूल के अनुसार) पुद्गल पिण्ड के आने पर जहाँ पर पाच पर्याप्तियो के द्रव्य उपकरणो की युगपत् निष्पत्ति होती है, उसे निर्लेपन स्थान कहते है । विशेष ग्रन्थ से देखिए । - पृष्ठ ५२७

(७८४) **शंका - यहॉ निर्वृत्ति किसे कहते हैं ?**

समाधान - चार पर्याप्तियो के निर्लेपन को निर्वृत्ति कहते है । - पृष्ठ ५३०

(७८५) **शका - तेईस प्रकार की वर्गणाओं का स्वरूप क्या है ?**

समाधान - एक प्रदेशी परमाणु पुद्गल द्रव्यवर्गणा--एक प्रदेशी पुद्गल द्रव्य वर्गणा परमाणु स्वरूप होती है ।

द्विप्रदेशीपरमाणुपुद्गलद्रव्यवर्गणा - जघन्य स्निग्ध और रूक्ष गुणवाले दो परमाणुओं के समुदायसमागम से द्विप्रदेशी परमाणु पुद्गलद्रव्य वर्गणा होती है । इसी प्रकार त्रिप्रदेशी से लेकर दस प्रेदशी तक, सख्यातप्रदेशी तक ले लेना ।

संख्यातप्रदेशीद्रव्यवर्गणा - द्विप्रदेशी परमाणु पुद्गल द्रव्यवर्गणा से लेकर उत्कृष्ट सख्यातप्रदेशी द्रव्यवर्गणा तक यह सब सख्यातप्रदेशी द्रव्य वर्गणा है ।

असंख्यातप्रदेशीद्रव्यवर्गणा - उत्कृष्ट सख्यातप्रदेशी परमाणु पुद्गल वर्गणा मे एक अक मिलाने पर जघन्य असख्यातप्रदेशीद्रव्यवर्गणा होती है। पुन उत्तरोत्तर एक-एक के मिलाने पर असख्यातप्रदेशीद्रव्यवर्गणा होती है और ये सब उत्कृष्ट असख्यातासख्यातप्रदेशीद्रव्यवर्गणा के प्राप्त होने तक होती है ।

जघन्य और उत्कृष्ट अनन्तप्रदेशीपरमाणुपुद्गलद्रव्यवर्गणा - उत्कृष्ट असख्यातासख्यात प्रदेशी द्रव्यवर्गणा मे एक अक के मिलाने पर जघन्यअनन्तप्रदेशीद्रव्यवर्गणा होती है । पुन क्रम से एक-एक की वृद्धि होते हुए अभव्यो से अनन्तगुणे और सिद्धो के अनन्तवे भाग प्रमाण स्थान आगे जाते है । अपने जघन्य से अनन्तप्रदेशी उत्कृष्ट वर्गणा अनन्तगुणी होती है । ये चारो वर्गणाये अग्राह्य है । - पृष्ठ ५८

आहारद्रव्यवर्गणा - उत्कृष्ट अनन्तप्रदेशी द्रव्यवर्गणा मे एक अक के मिलाने पर जघन्य आहारद्रव्यवर्गणा होती है। फिर एक अधिक के क्रम से अभव्यो से अनन्तगुणे और सिद्धो के अनन्तवे भाग प्रमाण भेदो के जाने पर अन्तिम आहारद्रव्यवर्गणा होती है। - पृष्ठ ५६

इसके आगे पूर्वोक्त विधि से वृद्धि करते-करते ध्रुवस्कन्ध द्रव्यवर्गणा तक जानना अर्थात् अग्राह्यवर्गणा, तैजसवर्गणा, अग्राह्यवर्गणा, भाषावर्गणा, अग्राह्यवर्गणा, मनोवर्गणा, अग्राह्यवर्गणा कार्मणवर्गणा और ध्रुववर्गणा तक जानना।

सान्तरनिरन्तरवर्गणा - जो वर्गणा अन्तर के साथ निरन्तर जाती है उसकी सान्तर - निरन्तर द्रव्यवर्गणा सज्ञा है। उत्कृष्ट ध्रुवस्कन्ध द्रव्यवर्गणा मे एक अक के मिलाने पर जघन्य सान्तर - निरन्तर द्रव्यवर्गणा होती है। आगे एक - एक अक के अधिक क्रम सब जीवो से अनन्तगुणे स्थान जाकर सान्तर-निरन्तर द्रव्यवर्गणा सम्बन्धी उत्कृष्ट वर्गणा होती है। - पृष्ठ ६४

ध्रुवशून्यवर्गणा - अतीत, अनागत और वर्तमान काल मे इस रूप से परमाणु पुद्गलो का सचय नही होता, इसलिये इसकी ध्रुवशून्यद्रव्यवर्गणा यह सार्थक सज्ञा है। उत्कृष्ट सान्तर -निरन्तर द्रव्यवर्गणा के ऊपर एक परमाणु अधिक परमाणुपुद्गलस्कन्ध तीनो ही कालो मे नही होता, दो प्रदेश अधिक भी नही होता, इसप्रकार तीन प्रदेश अधिक आदि के क्रम से सब जीवो से अनन्तगुणे स्थान जाकर प्रथम ध्रुवशून्यवर्गणा सम्बन्धी उत्कृष्ट वर्गणा होती है (जो सर्वदा शून्य रूप से अवस्थित है)।

प्रत्येकशरीरद्रव्यवर्गणा - एक-एक जीव के एक-एक शरीर मे उपचित हुए कर्म और नोकर्मस्कन्धो की प्रत्येकशरीरद्रव्यवर्गणा सज्ञा है। अब उत्कृष्ट धुवशून्य द्रव्यवर्गणा मे एक अक के मिलाने पर जघन्यप्रत्येकशरीरद्रव्यवर्गणा होती है। - पृष्ठ ६५

(उत्कृष्ट प्रत्येक शरीर वर्गणा का स्वरूप पृष्ठ ६६ से ८४ तक ग्रन्थ मे देखिये)

ध्रुवशून्यवर्गणा - उत्कृष्टप्रत्येकशरीरवर्गणा मे एक अक के मिलाने पर दूसरी ध्रुवशून्यवर्गणा सम्बन्धी सवसे जघन्य ध्रुवशून्यद्रव्यवर्गणा होती है। अनन्तर एक एक अधिक के क्रम से आनुपूर्वी से जब जीवो से अनन्तगुणी ध्रुवशून्यवर्गणाओं के जाने पर उत्कृष्टध्रुवशून्यवर्गणा उत्पन्न होती है। - पृष्ठ ८३

बादरनिगोदवर्गणा - उत्कृष्ट ध्रुवशून्य द्रव्यवर्गणा मे एक अक के मिलाने पर सबसे जघन्य बादरनिगोदद्रव्यवर्गणा होती है। - पृष्ठ ८४

ध्रुवशून्यद्रव्यवर्गणा - उत्कृष्टवादरनिगोदवर्गणा मे एक अक के मिलाने पर तीसरी ध्रुवशून्यवर्गणा की सवसे जघन्य ध्रुवशून्यवर्गणा होती है। पुन इसके ऊपर एक प्रदेश अधिक के क्रम से जव जीवो से अनन्तगुणे स्थान जाकर तीसरी ध्रुवशून्यवर्गणा की सवसे उत्कृष्ट वर्गणा होती है। - पृष्ठ ११२

सूक्ष्मनिगोदद्रव्यवर्गणा -उत्कृष्ट ध्रुवशून्यवर्गणा मे एक अक के मिलाने पर सूक्ष्मनिगोदद्रव्यवर्गणा होती है। - पृष्ठ ११३

(उत्कृष्ट सूक्ष्मनिगोद द्रव्य वर्गणा का स्वरूप ११४-११६ पृष्ठ तक ग्रन्थ से देखिये)

ध्रुवशून्यद्रव्यवर्गणा - उत्कृष्ट सूक्ष्मनिगोदद्रव्यवर्गणा मे एक अक के मिलाने पर चौथी ध्रुवशून्यवर्गणा की सवसे जघन्य वर्गणा होती है । अनन्तर एक अधिक के क्रम से सव जीवो से अनन्तगुणे स्थान जाकर उत्कृष्ट ध्रुवशून्यद्रव्यवर्गणा होती है। - पृष्ठ ११६

महास्कन्ध द्रव्यवर्गणा - उत्कृष्ट ध्रुवशून्यद्रव्यवर्गणा मे एक अक मिलाने पर सवसे जघन्य महास्कन्धद्रव्यवर्गणा होती है। अनन्तर एक अधिक के क्रम से सब जीवो से अनन्ते गुणे स्थान जाकर उत्कृष्ट महास्कन्ध द्रव्यवर्गणा होती है। - पृष्ठ ११७

तेईसवर्गणाओं के नाम - अणुवर्गणा, सख्याताणुवर्गणा, असख्याताणुवर्गणा, अनन्ताणुवर्गणा, आहारवर्गणा, अग्राह्यवर्गणा तेजसवर्गणा, अग्राह्यवर्गणा, भाषावर्गणा, अग्राह्यवर्गणा, मनोवर्गणा, अग्राह्यवर्गणा, कार्मणवर्गणा ध्रुवस्कन्धवर्गणा, सान्तरनिरन्तरवर्गणा, शून्यवर्गणा, प्रत्येकशरीरवर्गणा, ध्रुवशून्यवर्गणा, वादरनिगोदवर्गणा, शून्यवर्गणा,सूक्ष्मनिगोदवर्गणा, शून्यवर्गणा और महास्कन्धवर्गणा परिभाषाओं मे सव शून्यवर्गणाओं को ध्रुवशून्यवर्गणा कहा है। तथा अन्तिम जो शून्यवर्गणा है, उसके स्थान पर (कर्मकाण्ड) मे नभोवर्गणा कहा है।

(७८६) शंका - निवृत्ति किसे कहते हैं ?

समाधान - कदलीघात के विना आयुकर्म के वन्धकाल के भीतर जो जीवनकाल है, उसे निर्वृत्ति कहते है। - पृष्ठ ३६३

जिसका - आदि, मध्य और अंत से रहित निर्मल-शरीर, अंग और अंगबाह्य से निर्मित है और जो सदा चक्षुष्मती अर्थात् जाग्रत चक्षु है ऐसी श्रुतदेवी माता को नमस्कार हो। - ज. ध. पु.१ पृ.३

धवला पुस्तक - १५

(७८७) शंका - निबन्धनानुयोग द्वार किसलिये आया है ?

समाधान - आत्मलाभ को प्राप्त हुए उन कर्मों के व्यापार का कथन करने के लिये निबन्धनानुयोग द्वार आया है । - पृष्ठ ३

(७८८) शंका - द्रव्य किसे कहते है ?

समाधान - अपने असाधारण स्वरूप को न छोड़कर दूसरे द्रव्यो के असाधारण स्वरूप का परिहार करते हुए जो उन-उन पर्यायो को वर्तमान मे प्राप्त है, भविष्य मे प्राप्त होगा व भूतकाल मे प्राप्त हो चुका है, वह द्रव्य कहलाता है । - पृष्ठ ३३

(७८९) शंका - यदि मिथ्यात्वादिक प्रत्ययो के द्वारा कार्मण वर्गणा के स्कंध आठ कर्मरूप से परिणमन करते है, तो समस्त कार्मण वर्गणा के स्कन्ध एक समय मे आठ कर्मरूप से क्यो नही परिणत हो जाते, क्योंकि उनके परिणमन का कोई नियामक नही है ?

समाधान - नही, क्योंकि द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव इन चार नियामको द्वारा नियम को प्राप्त हुए उक्त स्कन्धो का परिणमन पाया जाता है ।

द्रव्य की अपेक्षा - अभव्यसिद्धिक जीवो से अनन्तगुणी और सिद्ध जीवो के अनन्तवे भाग मात्र ही वर्गणाये एक समय मे एक जीव के साथ कर्मस्वरूप से परिणत होती है ।

क्षेत्र की अपेक्षा - जीव द्वारा अवगाह को प्राप्त क्षेत्र मे स्थित अगुल के असख्यातवे भाग मात्र अवगाहना वाली वर्गणाये ही कर्म स्वरूप से परिणत होती है । शेष वर्गणाये कर्मस्वरूप से परिणत नही होती ।

काल की अपेक्षा - एक समय से लेकर असख्यात लोक मात्र काल के भीतर की कार्मणवर्गणा स्वरूप से स्थित ही वे वर्गणाये कर्म स्वरूप से परिणत होती है । शेष नही होती ।

भाव की अपेक्षा - भाव की अपेक्षा कार्मणवर्गणा पर्यायरूप से परिणत ही वे कर्मस्वरूप से परिणत होती है, शेष नही । कहा भी है - जीव एक क्षेत्र मे अवगाह को प्राप्त हुए तथा कर्म के योग्य सादि, अनादि अथवा

उभय स्वरूप पुद्गलप्रदेश समूह को यथोक्त हेतुओं (मिथ्यात्व आदि) द्वारा अपने सव प्रदेशो से बाधता है । - पृष्ठ ३४

(७६०) शंका - भुजाकार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य बंधादि किसे कहते है?

समाधान - अल्पतर प्रकृतियो का बध करने के अनन्तर समय मे अधिक प्रकृतियो का वध करने लगा, यह भुजाकार वंध है । तथा वहुत प्रकृतियो का वध कर रहा था अनन्तर समय मे उससे हीन प्रकृतियो का वध करने लगा यह अल्पतर वध है, तथा इस समय जितनी प्रकृतियो का वध कर रहा है उतनी ही प्रकृतियो का वध अनन्तर समय मे भी करता है, यह अवस्थित वध है । अनन्तर अतिक्रान्त समय मे अबधक होकर इस समय मे किया जानेवाला वध का नाम अवक्तव्य वध है ।

(७६१) शका - निबन्धन किसे कहते है ?

समाधान - "निवध्यते तदस्मिन्निति निवन्धम्" जो द्रव्य सम्वद्ध है, उसे निवन्धन कहते है । - पृष्ठ १

(७६२) शंका - उदीरणा किसे कहते है ?

समाधान - नही पके हुए कर्मो के पकाने का नाम उदीरणा है । आवली से वाहर की स्थिति को लेकर आगे की स्थितियो के बन्धावली अतिक्रान्त प्रदेशाग्र को असख्यात लोक प्रतिभाग से अथवा पल्योपम के असख्यातवे भाग रूप प्रतिभाग से अपकर्षण करके उदयावली मे देना, यह उदीरणा कहलाती है । तात्पर्य - उदयविशेष से असमय मे ही उनका जो फलोदय होता है, उसे उदीरणा कहते है । - पृष्ठ ४३

(७६३) शका - प्रक्रम और उपक्रम मे क्या भेद है ?

समाधान - प्रक्रम अनुयोग द्वार प्रकृति, स्थिति और अनुभाग मे आनेवाले प्रदेशाग्र की प्ररूपणा करता है, परन्तु उपक्रम अनुयोग द्वार बन्ध के द्वितीय समय से लेकर सत्त्वस्वरूप से स्थित कर्म-पुद्गलो के व्यापार की प्ररूपणा करता है । इसलिये उन दोनो मे विशेषता है । - पृष्ठ ४२

(७६४) शंका - संयोग किसे कहते है ?

समाधान - पृथक् प्रसिद्ध पदार्थों के मेल को सयोग कहते है । - पृष्ठ २४

(७६५) शंका - समवाय किसे कहते है ?

समाधान - अयुतसिद्ध पदार्थों का एक रूप से मिलने का नाम समवाय है। - पृष्ठ २४

(७६६) शका - अनेकान्त किसे कहते है ?

समाधान - जात्यन्तर भाव को अनेकान्त कहते है । - पृष्ठ २५

(७६७) शंका - क्षेत्रउपक्रम और काल - उपक्रम क्या है ?

समाधान - क्षेत्र-उपक्रम - जैसे ऊर्ध्वलोक उपक्रान्त हुआ, ग्राम उपक्रान्त हुआ व नगर उपक्रान्त हुआ इत्यादि क्षेत्र-उपक्रम है । काल-उपक्रम - जैसे वसन्त उपक्रान्त हुआ व हेमन्त उपक्रान्त हुआ इत्यादि काल-उपक्रम है । - पृष्ठ ४१

(७६८) शका - सुभग, आदेय, यशस्कीर्ति और उच्च गोत्र की उदीरणा किस के होती है ?

समाधान - सुभग, आदेय, यशस्कीर्ति और उच्च गोत्र की उदीरणा गुणप्रतिपन्न जीवो मे परिणामप्रत्ययिक और अगुणप्रतिपन्न जीवो मे भवप्रत्ययिक होती है । - पृष्ठ १७३-१७४

(७६९) शंका - गुण से क्या अभिप्राय है ?

समाधान - गुण से अभिप्राय सयम और सयमासयम का है । - पृष्ठ १७४

(८००) शका - **स्थिति उदय के भेद तथा उनका स्वरूप क्या है ?**

समाधान - स्थिति उदय के दो भेद है - मूलप्रकृति स्थितिउदय और उत्तरप्रकृति स्थिति उदय । मूलप्रकृति स्थिति उदय के दो प्रकार है - प्रयोगजनित और स्थितिक्षयजनित । उनमे स्थितिक्षयजनित उदय सुगम है । प्रयोगजनित उदय के दो प्रकार है - सप्राप्तिजनित और निषेकजनित ।

संप्राप्तिजनित - सप्राप्ति की अपेक्षा एक स्थिति उदीर्ण होती है, क्योंकि इस समय उदय प्राप्त परमाणुओं के एक समय रूप अवस्थान को छोड़कर दो समय आदि रूप अवस्थानान्तर पाया नही जाता ।

निषेकजनित - निषेक की अपेक्षा अनेक स्थितियाँ उदीर्ण होती है, क्योंकि इस समय जो प्रदेशाग्र उदीर्ण हुआ है, उसके द्रव्यार्थिकनय की अपेक्षा पूर्वीयभाव के उपचार की सम्भावना है । - पृष्ठ २८६

(८०१) शका - मतिज्ञानावरण का जघन्य प्रदेश-उदय किसके होता है ?

समाधान - जो सूक्ष्म निगोद जीवो मे कर्मस्थिति मात्र सूक्ष्म निगोद की आयु के साथ रहकर सव आवासो द्वारा अभव्यसिद्धिक प्रायोग्य जघन्य करके, तत्पश्चात् सयमासयम और सयम को वहुत वार प्राप्त करके, चार वार कपायो को उपशमा कर सूक्ष्म एकेन्द्रियो मे गया है और वहाँ असख्यात हजार वर्प रहकर मनुष्यो मे आया है, यहाँ पूर्वकोटि काल तक सयम को पालकर अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर मिथ्यात्व को प्राप्त होकर दस हजार वर्ष मात्र आयुवाले देवो मे उत्पन्न हुआ है, पुन वहाँ सम्यक्त्व को ग्रहण कर आयु को पालकर उसके अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर मिथ्यात्व को प्राप्त होकर स्थितियो का विकर्षण करता हुआ उत्कृष्ट सक्लेश को प्राप्त हो एकेन्द्रियो मे पहुँचा है, उसके प्रथम समय मे मतिज्ञानावरण का जघन्य प्रदेश उदय होता है । श्रुतज्ञानावरण, मन पर्ययज्ञानावरण, केवलज्ञानावरण, चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण और केवलदर्शनावरण के जघन्य प्रदेश उदय की प्ररूपणा मतिज्ञानावरण के समान है । - पृष्ठ ३०२-३०३

(८०२) शका - नरकगति, देवगति, मनुष्यगति, देवायु, नरकायु, मनुष्यायु, और उच्चगोत्र का उदय असंज्ञी जीवो मे कैसे सम्भव है ?

समाधान - क्योंकि असज्ञी जीवो मे से पीछे आये हुए नारकी आदिको को उपचार से असज्ञी स्वीकार किया गया है । - पृष्ठ ३१६

(८०३) शका - मनुष्यगति के प्रदेशोदय की अपेक्षा देवायु आदिको का प्रदेशोदय असंख्यात गुणा कैसे हो सकता है ?

समाधान - क्योंकि विकलेन्द्रियो को छोड़कर प्रकृत असज्ञी पचेन्द्रियो मे ही सचित द्रव्य का ग्रहण करने पर उसमे कोई विरोध नही है । - पृष्ठ ३१६

(८०४) **शंका - मनुष्यायु के उत्कृष्ट प्रदेशोदय से उच्च गोत्र और तिर्यच आयु का उत्कृष्ट प्रदेशोदय असंख्यात गुणा कैसे है ?**

समाधान - वन्धककाल के असख्यातगुणे होने से भी आवली के असख्यातवे भाग के अन्तर्मुहूर्तता असिद्ध है, इसी सूत्र से उसके असख्यातगुणत्व सिद्ध है।- पृष्ठ ३१६

(८०५) **शंका - दर्शनमोहनीय की तीनो प्रकृतियॉ कितने द्रव्य पर्याय मे निबद्ध है?**

समाधान - मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व दर्शनमोहनीय सब द्रव्यो मे निवद्ध है, क्योकि वे समस्त द्रव्यो सम्बन्धी श्रद्धान गुण का विघात करनेवाली प्रकृतियॉ है। सम्यक्त्वदर्शनमोहनीय प्रकृति कुछ पर्यायो मे निवद्ध है, क्योंकि उसके द्वारा सम्यक्त्व के एक देश का घात पाया जाता है । - पृष्ठ ११

(८०६) **शंका - जो प्रदेशपिण्ड अप्रशस्तोपशामना के द्वारा उपशान्त किया गया है, उसका क्या- क्या नही होता ?**

समाधान - जो प्रदेशपिण्ड अप्रशस्तोपशामना के द्वारा उपशान्त किया गया है, उसका न तो अपकर्षण किया जा सकता है, न उत्कर्षण किया जा सकता है, न अन्य प्रकृति मे सक्रमण कराया जा सकता है और न उदयावली मे प्रवेश भी कराया जा सकता है । - विषयपरिचय पृष्ठ १६

(८०७) **शंका - देशप्रकृतिविपरिणामना किसे कहते है ?**

समाधान - जिन प्रकृतियो का अध स्थितिगलन के द्वारा एक देश निर्जरा को प्राप्त होता है । वह देशप्रकृति विपरिणामना कही जाती है । - पृष्ठ २८३

(८०८) **शंका - सर्वविपरिणामना किसे कहते है ?**

समाधान - जो प्रकृति सर्वनिर्जरा के द्वारा निर्जरा को प्राप्त होती है, वह सर्वविपरिणामना कही जाती है - पृष्ठ २८३

(८०९) **शंका - उत्तरप्रकृतिविपरिणामना किसे कहते है ?**

समाधान - देशनिर्जरा अथवा सर्वनिर्जरा के द्वारा निर्जीर्ण प्रकृति अथवा जो प्रकृति देशसक्रमण या सर्वसक्रमण के द्वारा अन्य प्रकृति मे सक्रमण को प्राप्त करायी जाती है । यह उत्तर प्रकृतिविपरिणामना कहलाती है । - पृष्ठ २८३

(८१०) शंका - स्थितिविपरिणामना किसे कहते हैं ?

समादान - अपवर्तमान, उद्वर्तमान अथवा अन्य प्रकृतियो मे सक्रमण करायी जानेवाली स्थिति विपरिणमिता (स्थिति विपरिणामना) कहलाती है। - पृष्ठ २८३

(८११) शका - अनुभाग विपरिणामना किसे कहते है ?

समाधान - अपकर्षित, उत्कर्षित अथवा अन्य प्रकृति को प्राप्त कराया गया अनुभाग विपरिणामना अनुभाग कहलाता है । - पृष्ठ २८४

(८१२) शंका - प्रदेशविपरिणामना किसे कहते है ?

समाधान - जो प्रदेशपिण्ड निर्जरा को प्राप्त हुआ है अथवा अन्य प्रकृति को प्राप्त कराया गया है । वह प्रदेशविपरिणामना कहलाती है । - पृष्ठ २८५

अनादि से सब जीव संसार को प्राप्त है, वहाँ कर्मो को अपना मानते है उनमे से कोई जीव किसी निमित्त से जीव और कर्म का यथार्थ ज्ञान करके कर्मों से उदासीन होकर उनको पर जानने लगा, उनसे सम्बन्ध छुड़ाना चाहता है । बाहर मे जैसा निमित्त है, वैसी प्रवृत्ति करता है । इस प्रकार जो ज्ञानाभ्यास के द्वारा उदासीन होता है, वही कार्यकारी है। कोई जीव उन कर्मों को अपना जानता है और किसी कारण से कोई शुभ कर्मों से अनुरागरूप प्रवृत्ति करता है, कोई अशुभ कर्म को दुःख का कारण जानकर उदासीन होकर विषयादिक का त्यागी होता है, इस प्रकार ज्ञान के बिना जो उदासीनता होती है, वह पुण्यफल की दाता है, मोक्षकार्य को नहीं साधती है। इसलिये उदासीनता मे भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है । उसी प्रकार अन्य भी शुभ कार्यों मे ज्ञानाभ्यास ही प्रधान जानना । देखो महामुनियो के भी ध्यान-अध्ययन दो ही कार्य मुख्य है - इसलिये शास्त्र अध्ययन द्वारा जीव-कर्म का स्वरूप जानकर स्वरूप-ध्यान करना ।

धवला पुस्तक - १६

(८१३) शंका- मोक्ष के कितने प्रकार हैं ?

समाधान - कर्ममोक्ष और नोकर्ममोक्ष। नोकर्ममोक्ष सुगम है। कर्मद्रव्य मोक्ष चार प्रकार का है - प्रकृतिमोक्ष, स्थितिमोक्ष, अनुभागमोक्ष और प्रदेशमोक्ष। प्रकृतिमोक्ष दो प्रकार का है मूलप्रकृतिमोक्ष और उत्तरप्रकृतिमोक्ष। (१) प्रकृतिमोक्ष - जो प्रकृति निर्जरा को प्राप्त होती है अथवा अन्य प्रकृति मे सक्रान्त होती है, यह प्रकृतिमोक्ष कहलाता है। (२) किसी भी प्रकृति की विवक्षित स्थिति का अभाव चार प्रकार से होता है - (१) अपकर्षण द्वारा (२) उत्कर्षण द्वारा, (३) सक्रमण द्वारा, (४) अध स्थितिगलन द्वारा, इसलिये इन चारो मे से किसी एक के आश्रय से विवक्षित स्थिति का अभाव होना स्थितिमोक्ष कहलाता है। स्थिति के जघन्यादि सब भेदो मे स्थिति मोक्ष का विचार कर लेना चाहिए। अनुभागमोक्ष भी स्थितिमोक्ष के समान चार प्रकार से होता है, इसका भी जघन्यादि सब भेदो मे स्थितिमोक्ष के समान चार प्रकार से होता है, उसको भी जघन्यादि सब भेदो मे घटित कर लेना चाहिए। प्रदेश मोक्ष-अध स्थितिगलन के द्वारा जो प्रदेशो की निर्जरा और प्रदेशो का अन्य प्रकृतियो मे संक्रमण होता है उसे प्रदेशमोक्ष कहा जाता हैं। इसको भी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य के भेद से ले जाना चाहिए। - पृष्ठ १-२

(८१४) शका-मोक्ष किसे कहते हैं ?

समाधान - जीव और कर्मों का पृथक् होन. मोक्ष कहलाता है। समस्त कर्मों से रहित, अनतज्ञान, अनन्तदर्शन, अनन्तवीर्य, चारित्र , सुख और सम्यक्त्वादि गुणगणो से परिपूर्ण, निरामय, निरंजन, नित्य और कृतकृत्य जिन को मुक्त कहते है। - पृष्ठ ३३८

संक्रम अधिकार से

(८१५) शका - सक्रमण किसे कहते हैं ?

समाधान - एक प्रकृति के परमाणुओ का सजातिय अन्य प्रकृति रूप होने का नाम सक्रमण है। जैसे - विशुद्ध परिणामो के निमित्त से पहले बधी हुई असातावेदनीय प्रकृति के परमाणुओ का सातावेदनीय रूप परिणमन हो जाना। - पृष्ठ ३४०

(८१६) शका - संक्रमण के लिए उपयोगी पाँच भागहार कौन - कौन हैं ?

समाधान - अध प्रवृत्तसक्रम, विध्यातसंक्रम, उद्वेलनसक्रम, गुणसक्रम और सर्वसक्रम ये पॉच भागहार हैं। इनके अबान्तर भेद अनेक हैं। जैसे-

क्षेत्रसंक्रम, कालसंक्रम, प्रकृतिसंक्रम, स्थितिसंक्रम, अनुभागसंक्रम, प्रदेशसंक्रम इत्यादि। - पृष्ठ ३३९-३४०,४०८

(८१७) शका - अध:प्रवृत्तसक्रमण किसे कहते हैं ?

समाधान - बंध काल मे बंधने योग्य प्रकृतियो में अध प्रवृत्त भागहार का भाग देने पर एक भाग मात्र परमाणु जहाँ बंध को प्राप्त कर्म, अन्य प्रकृति रूप परिणमन करते हैं, उसे अध प्रवत्तसंक्रमण कहते हैं। - पृष्ठ ४०८

(८१८) शंका - विध्यातसंक्रमण किसे कहते हैं ?

समाधान - मन्द विशुद्धिवाले जीव के जिनका बन्ध नहीं पाया जाता है, उन विवक्षित प्रकृतियों के परमाणुओं मे विध्यातभागहार का भाग देने पर एक भाग मात्र परमाणु जहाँ बंध को प्राप्त कर्म, अन्य प्रकृति रूप परिणमन करते हैं, उसे विध्यातसंक्रमण कहते हैं। -क प्र पृष्ठ ९०

(८१९) शका - उद्वेलनसक्रमण किसे कहते हैं ?

समाधान - अध प्रवृत आदि तीन करणो के बिना ही उद्वेलन प्रकृति के परमाणुओं में उद्वेलनभागहार का भाग देने पर एक भाग मात्रा परमाणु जहाँ अन्य प्रकृति रूप परिणमन करते हैं, उसे उद्वेलनसंक्रण कहते हैं। - क प्र पृष्ठ ९०

(८२०) शंका - गुणसक्रमण किसे कहते हैं ?

समाधान - विवक्षित अशुभ प्रकृतियो के परमाणुओं मे गुण संक्रमण भागहार का भाग देने पर जहाँ प्रति समय असंख्यातगुणे असंख्यातगुणे परमाणु अन्य प्रकृति रूप परिणमन करते हैं, उसे गुण संक्रमण कहते हैं। - क प्र पृष्ठ ९१

(८२१) शका - सर्वसक्रमण किसे कहते हैं ?

समाधान - प्रति समय विवक्षित प्रकृति के परमाणु अन्य प्रकृति रूप परिणमन करते हैं। जहाँ अन्त समय मे अन्त के काण्डक की अन्तिम फाली रूप सभी परमाणु अन्य प्रकृति रूप परिणमन करते हैं, उसे सर्वसंक्रमण कहते हैं। - क प्र पृष्ठ ९१

(८२२) शका - क्षेत्रसंक्रम किसे कहते हैं ?

समाधान - एक क्षेत्र के क्षेत्रान्तर को प्राप्त होना क्षेत्रसंक्रम है। -पृष्ठ ३३९

(८२३) **शंका - क्षेत्र तो निष्क्रिय होता है, उसका अन्य क्षेत्र मे गमनकैसेसंभव है ?**

समाधान - जीव और पुद्गल सक्रिय पदार्थ है, इसलिए आधेय मे आधार का उपचार करने से क्षेत्र सक्रम वन जाता है। यहॉ विवक्षित क्षेत्र मे स्थित द्रव्य की क्षेत्र सज्ञा रखकर भी क्षेत्र सक्रम घटित कर लेना चाहिए। जैसे - अमेरिका से यहॉ आये हुए व्यक्ति को अमेरिका कहना। - पृष्ठ ३३९

(८२४) **शंका - कालसंक्रम किसे कहते है ?**

समाधान - एक कालगत होकर नवीन काल का प्रादुर्भाव होना, कालसंक्रम कहलाता है। जैसे - लोक मे हेमन्त ऋतु या ग्रीष्म-ऋतु सक्रान्त हुई, ऐसा व्यवहार भी देखा जाता है। - पृष्ठ ३४०

(८२५) **शंका - भावसंक्रम किसे कहते है ?**

समाधान - क्रोधादिक एक किसी भाव मे स्थित द्रव्य के भावान्तर गमन को भावसंक्रम कहते है। - पृष्ठ ३४०

(८२६) **शंका - प्रकृतिसंक्रम किसे कहते है ?**

समाधान - जो एक प्रकृति अन्य प्रकृतिस्वरूपता को प्राप्त करायी जाती है, उसे प्रकृति सक्रम कहते है। मूलप्रकृतिसक्रम सभव नही है, क्योंकि ऐसा स्वभाव है। उत्तर प्रकृतियो मे सक्रम हो सकता है। - पृष्ठ ३४०

(८२७) **शंका - स्थितिसंक्रम किसे कहते है ?**

समाधान - स्थिति का अपकर्षण तथा उत्कर्षण होना स्थिति सक्रम कहलाता है। - पृष्ठ ३४७

(८२८) **शंका - किन स्थितियो का अपकर्षण होता है ?**

समाधान - उदयावलि के वाहर जो एक समय अधिक उदयावलि प्रमाणस्थित है। उसका उदयावलि के भीतर अपकर्षण होता है। अपकर्षण होकर उसका एक समय कम आवलि के दो बटे तीन भाग $\frac{2}{3}$ प्रमाण स्थिति को अतिथापना रूप से रखकर एक अधिक तृतीय भाग में निक्षेप होता है। इससे आगे की स्थितियो का अपकर्षण होने पर एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना प्राप्त होने तक उसकी वृद्धि होती है, और निक्षेप उतना ही रहता है। इससे आगे अतिथापना अवस्थित रूप से एक आवलिप्रमाण रहती है। - पृष्ठ ३४७

अनुभागसंक्रम अधिकार

(८२९) शका - पदनिक्षेप किसे कहते है ?

समाधान - प्रकृति, प्रदेश, स्थिति, अनुभागादि मे वृद्धि, हानि और अवस्थान को वतलानेवाले को पदनिक्षेप कहते है। जैसे - कोई एक जीव यदि प्रथम समय मे अपने योग्य जघन्य स्थितिवन्ध करता है और दूसरे समय मे वह स्थिति को वढ़ाकर वन्ध करता है। तो उसके वन्ध मे अधिक से अधिक कितनी वृद्धि हो सकती है। और कमसे कम कितनी वृद्धि हो सकती है। इसीप्रकार यदि कोई एक जीव उत्कृष्ट स्थितिवध कर रहा है और अनन्तर समय मे वह स्थिति को घटाकर वन्ध करता है। तो उस जीव के वन्ध मे अधिक से अधिक कितनी हानि हो सकती है और कम से कम कितनी हानि हो सकती। वृद्धि और हानि के वाद जो अवस्थित वन्ध होता है, उसे यहॉ अवस्थितवन्ध कहा है। यह जिसप्रकार की वृद्धि और हानि के बाद होता है। उसका वही नाम पड़ता है। महावध पुस्तक २, - पृष्ठ १७५

(८३०) शका - भुजगार सक्रम किसे कहते हैं ?

समाधान - अनुभाग के जो स्पर्धक इस समय सक्रमण को प्राप्त कराये जाते हैं, वे यदि अनन्तर बीते हुए समय मे सक्रामित अनुभाग स्पर्धको की अपेक्षा वहुत है, तो यह भुजाकार सक्रम कहलाता है। - पृष्ठ ३९८

(८३१) शंका - अल्पतर संक्रम किसे कहते है ?

समाधान - यदि इस समय मे सक्रमण को प्राप्त कराये जानेवाले वे ही अनुभाग स्पर्धक अनन्तर बीते हुए समय मे सक्रामित स्पर्धको की अपेक्षा स्तोक है, तो यह अल्पतर सक्रम कहलाता है। - पृष्ठ ३९८

(८३२) शंका - अवस्थित सक्रम किसे कहते हैं ?

समाधान - यदि दोनो ही समयो मे उतना-उतना मात्र ही अनुभाग स्पर्धको का सक्रम होता है, तो यह अवस्थित सक्रम कहलाता है। - पृष्ठ ३९८

(८३३) शंका - अवक्तव्य संक्रम किसे कहते है ?

समाधान - असक्रामक होकर सक्रम करना अवक्तव्य सक्रम कहा जाता है। - पृष्ठ ३६८

लेश्या परिणाम अधिकार

(८३४) शका - लेश्याकर्म किसे कहते है ?

समाधान - कृष्णादिक लेश्याये है, उनका कर्म जो मारण, विदारण और चोरी आदि क्रियाविशेषरूप है, वह लेश्याकर्म कहलाता है । - पृष्ठ ४६०

(८३५) शका - कृष्णलेश्या से परिणत जीव कैसा होता है ?

समाधान - कृष्णलेश्या से परिणत जीव निर्दय, झगडालु, रौद्र, वैर की परम्परा से सयुक्त, चोर असत्यभाषी, परदारा का अभिलाषी, मधु, मास, व मद्य मे आसक्त, जिनशासन के श्रवण म कान को न देनेवाला और असयम मे मेरु के समान स्थिर स्वभाववाला होता है, और दूसरो के वश मे न आने वाला होता है । - पृष्ठ ४६०

(८३६) शका - नील लेश्या से परिणत जीव कैसा होता है ?

समाधान - जीव नीललेश्या के वश मे होकर मन्द, बुद्धिविहीन, विवेक से रहित, विषयलोलुप, अभिमानी, मायाचारी, आलसी, अभेद्य, निद्रा, (या निन्दा) व धोखेबाजी मे अधिक, धन-धान्य मे तीव्र अभिलाषा रखनेवाला तथा अधिक आरम्भ को करनेवाला होता है । - पृष्ठ ४६१

(८३७) शंका - कपोतलेश्या से परिणत जीव का स्वभाव कैसा होता है ?

समाधान - यह जीन कपोतलेश्या से प्रेरित होकर रुष्ट होता है, पर की निन्दा करता है, उन्हे बहुत प्रकार से दोष लगाता है, पचुर शोक व भय से सयुक्त होता है, दूसरो से ईर्ष्या करता है, पर का तिरस्कार करता है, अपनी अनेक प्रकार प्रशंसा करता है, वह अपने ही समान दूसरो को भी समझता हुआ अन्य का कभी विश्वास नही करता है, अपनी प्रशंसा करने वालो से सतुष्ट होता है, हानि-लाभ को नही जानता है । युद्ध मे मरण की प्रार्थना करता है, दूसरो के द्वारा प्रशंसित होकर उन्हे बहुत सा पारितोषिक देता है, तथा कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य के विवेक से रहित होता है । - पृष्ठ ४६१

(८३८) शका - तेजोलेश्या (पीतलेश्या) से परिणत जीव की प्रवृति कैसी होती है?
समाधान - तेजोलेश्या जीव को कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य और सेव्य-असेव्य का जानकार, समस्त जीवो को समान समझने वाला, दया, दान मे लवलीन और सरल करती है। - पृष्ठ ४६१

(८३६) शका - पद्मलेश्या से परिणत जीव की प्रवृत्ति कैसी होती है ?
समाधान - पद्मलेश्या मे परिणत जीव त्यागी, भद्र, पवित्र, ऋजुकर्मा (निष्कपट) भारी अपराध को भी क्षमा करनेवाला तथा साधु पूजा व गुरुपूजा मे तत्पर रहता है। - पृष्ठ ४६२

(८४०) शका - शुक्ललेश्या से परिणत जीव की चर्या कैसी होती है ?
समाधान - शुक्ललेश्यावाला जीव अहिसादि कार्यों मे तीव्र उद्यमशील होता है, पक्षपात रहित होता है, निदान नही करता है, सब जीवो मे समान रहकर राग, द्वेष व स्नेह से रहित होता है। - पृष्ठ ४६२

सातासात अधिकार

(८४१) शंका - एकान्तसात और अनेकान्तसात किसे कहते है ?
समाधान - साता स्वरूप से वाधा गया जो कर्म सक्षेप व प्रतिक्षेप से रहित होकर सातास्वरूप से वेदा जाता है, उसका नाम एकान्तसात है। इससे विपरीत अनेकान्तसात कहलाता है। - पृष्ठ ४६८

(८४२) शका - एकान्त-असात और अनेकान्त-असात किसे कहते हैं ?
समाधान - जो कर्म असातास्वरूप से वाधा जाकर सक्षेप व प्रतिक्षेप से रहित होकर असातास्वरूप से वेदा जाता है, उसका नाम एकान्त-असात है। इससे विपरीत अनेकान्त-असात है, इसी प्रकार अनेकान्त सात मे भी समझ लेना चाहिए। - पृष्ठ २६८

(८४३) शका - उत्कृष्ट एकान्तसात किसके होता है ?
समाधान - (यहाँ अभव्यसिद्धक प्रायोग्य प्रकृत है) जो सतवी पृथिवी का नारकी गुणितकर्मांशिक, वहाँ से निकलकर (तिर्यच एव मनुष्य भव धारण कर) सर्व

लघुकाल मे इकतीस सागरोपम आयुस्थितिवाले देवलोक को प्राप्त होगा उसके होता है। - पृष्ठ ४६६

(८४४) **शंका - इसका कारण क्या है ?**

समाधान - इसका कारण यह है कि उसके सातावेदक काल सबसे महान और बहुत होगे। - पृष्ठ ४६६

(८४५) **शंका - उत्कृष्ट अनेकान्तसात तथा उत्कृष्ट एकान्त-असात किसके होता है?**

समाधान - जो सातवी पृथिवी का नारकी वादर पृथिवीकायिको और त्रसकायिको मे कर्म को गुणित करके (गुणितकर्मांशिक होकर) आया है, उसका जो अध प्रवृत्तसक्रम से असक्रम का अवहार काल है, उतना मात्र जीवन शेष है, वह उस शेष सब जीवन पर्यन्त साता से रहित होगा, उस पल्योपम के असख्यातवे भाग मात्र शेष आयुवाले नारकी के उत्कृष्ट अनेकान्तसात होता है। जिस प्रकार के नारकी के उत्कृष्ट अनेकान्तसात किया गया है उसी प्रकार के ही नारको के उत्कृष्ट एकान्त-असात होता है। (उत्कृष्ट एकान्त-असातवाले को ऊपर की पूर्ण स्थिति तो होती ही है) उपरात इतना विशेष है कि वह वादरकायिको मे रह भी सकता और नही भी। - पृष्ठ ४६६

(८४६) **शंका - उत्कृष्ट अनेकान्त-असात किसके होता है ?**

समाधान - जिसके उत्कृष्ट एकान्त-असात होता है उसीके उत्कृष्ट अनेकान्त-असात होता है। विशेष इतना है कि वादरकायिको मे और त्रसकायिको मे कर्म को गुणित करके उसे नरकगति मे प्रविष्ट कराना चाहिए। देवलोक मे उत्पन्न होने वाले उसी अन्तिम समयवर्ती नारकी के उत्कृष्ट अनेकान्तअसात होता है।

जघन्य एकान्तसात, असात तथा जघन्य अनेकान्तसात, असात के लिए ग्रन्थ मे पृष्ठ न० ५०० पर देखिए। - पृष्ठ ४६६

जिस प्रकार - कोई पुरुष नसैनी आदि द्रव्य के आलम्बन से विषम भूमि पर भी आरोहण करता है, उसी प्रकार- ध्याता भी सूत्र आदि के आलम्बन से उत्तम ध्यान को प्राप्त होता है। - ध. पु. १३, पृ.६७

दीर्घ - ह्रस्व अधिकार

(८४७) शका - प्रकृतिदीर्घ ओर नोप्रकृतिदीर्घ किसे कहते है ?
समाधान - आठ प्रकृतियो का वन्ध होने पर प्रकृतिदीर्घ ओर उनसे कम का वन्ध होने पर नोप्रकृतिदीर्घ कहलाता है। इसीप्रकार सत्त्व और उदय मे भी घटित कर लेना चाहिए। एक-एक प्रकृति की अपेक्षा प्रकृतिदीर्घ सम्भव नही है। - पृष्ठ ५०७

(८४८) शका - उत्तर प्रकृतियो मे किन प्रकृतियो का प्रकृतिदीर्घ सम्भव नही है ?
समाधान - पॉच ज्ञानावरण और पॉच अन्तराय प्रकृतियो मे प्रकृतिदीर्घ सम्भव नही है। - पृष्ठ ५०७

(८४९) शका - दर्शनावरण की प्रकृतियो मे प्रकृतिदीर्घ सम्भव है क्या ?
समाधान - दर्शनावरण की नौ प्रकृतियो को वाधनेवाले के प्रकृतिदीर्घ है। उनसे कम वाधनेवाले के प्रकृतिदीर्घ नही है। इसी प्रकार सत्त्व और उदय मे समझ लेना चाहिए। - पृष्ठ ५०७

(८५०) शका - वेदनीय की प्रकृतियो मे प्रकृतिदीर्घसम्भव है या नही ?
समाधान - वेदनीय कर्म के वन्ध और उदय का आश्रय करके प्रकृतिदीर्घ नही है। सत्त्व की अपेक्षा उसकी सम्भावना है, क्योंकि अयोगकेवली के अन्तिम समय मे एक प्रकृति के सत्त्व की अपेक्षा उसी के द्विचरम - त्रिचरम आदि समयो मे वेदनीय की दो प्रकृतियो के सत्त्व की दीर्घता पायी जाती है। - पृष्ठ ५०७,५०८

(८५१) शका - मोहनीय की प्रकृतियो मे प्रकृतिदीर्घसम्भव है या नही ?
समाधान - मोहनीय के सत्त्व की अपेक्षा अट्ठाईस प्रकृतियो की सत्तावाले के प्रकृतिदीर्घता है, उनसे कम की सत्तावाले के नोप्रकृतिदीर्घ है। वन्ध की अपेक्षा वाईस प्रकृतियो को वाधनेवाले के प्रकृतिदीर्घता है, उनसे कम को वाधनेवाले के नोप्रकृतिदीर्घ है। उदय की अपेक्षा दस प्रकृतियो के उदयवाले के प्रकृतिदीर्घता है, उनसे कम उदयवाले के नोप्रकृतिदीर्घ है। - पृष्ठ ५०८

(८५२) **शंका - आयुकर्म की प्रकृतियो मे प्रकृतिदीर्घ सम्भव है या नही ?**
समादान - आयुकर्म के वन्ध और उदय की अपेक्षा प्रकृतिदीर्घ नही है। किन्तु सन्व की अपेक्षा है, क्योकि परभविक आयु का वन्ध होने पर दो आयु प्रकृतियो का सत्त्व देखा जाता है। - पृष्ठ ५०८

(८५३) **शंका - नामकर्म की प्रकृतियो मे प्रकृतिदीर्घ सम्भव है या नही ?**
समाधान - नामकर्म की इकतीस प्रकृतियो के वन्ध और उदय की अपेक्षा प्रकृतिदीर्घ है, उनसे कम का वन्ध व उदय होने पर नोप्रकृतिदीर्घ है। सत्त्व की अपेक्षा तिरानवे प्रकृतियो की सत्तावाले के प्रकृतिदीर्घ है, उनसे कम की सत्तावाले के नोप्रकृतिदीर्घ है। - पृष्ठ ५०८

(८५४) **शका - गोत्रकर्म की प्रकृतियो मे प्रकृतिदीर्घ है या नही ?**
समाधान - गोत्रकर्म के वन्ध और उदय की अपेक्षा प्रकृतिदीर्घ नही है, किन्तु सत्त्व की अपेक्षा उसके प्रकृतिदीर्घ है, क्योंकि अयोगी केवली के अन्तिम समय सम्वन्धी प्रकृति मत्त्व की अपेक्षा करके द्विचरम आदि समय सम्वन्धी सत्त्व के दीर्घता पायी जाती है। (इसी प्रकार प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश मे घटित कर लेना चाहिए)। - पृष्ठ ५०८

(८५५) **शंका - प्रकृतिह्रस्व नोप्रकृतिह्रस्व किसे कहते है ?**
समाधान— एक - एक प्रकृति को वाधने को प्रकृतिह्रस्व कहते है। उससे अधिक वाधनेवाले को नोप्रकृतिह्रस्व कहते है। सत्त्व की अपेक्षा चार कर्मों की सत्तावाले के प्रकृतिह्रस्व है। उनसे अधिक प्रकृतियो की सत्तावाले के नोप्रकृतिह्रस्व है। एक-एक प्रकृतिह्रस्व नही है। (प्रकृतिदीर्घ के समान इसमे भी सभी घटित कर लेना चाहिए)। - पृष्ठ ५०९

भव धारणा अधिकार

(८५६) **शंका - भव किसे कहते है ?**
समाधान - उत्पन्न होने के प्रथम समय से लेकर अन्तिम समय तक जीवन की जो विशेष अवस्था रहती है, उसे भव कहते है। ध. पु १५के पृष्ठ ६ से लिया है।

(८५७) शका - भव कितने प्रकार का है ?

समाधान - भव तीन प्रकार का है, ओघभव, आदेशभव और भवग्रहणभव।-पृष्ठ ५१२

(८५८) शका - ओघभव किसे कहते है ?

समाधान - आठ कर्मों अथवा आठ कर्मजनित जीव के परिणाम का नाम ओघभव है । - पृष्ट ५१२

(८५९) शका - आदेशभव किसे कहते है ?

समाधान - चार गतिनाम कर्मों और उनसे उत्पन्न जीवपरिणाम को आदेशभव कहते है । यह देव, मनुष्य, नरक और तिर्यच भव से चार प्रकार का है । - पृष्ठ ५१२

(८६०) शंका - भवग्रहणभव किसे कहते है ?

समाधान - भुज्यमान आयु को निर्जीर्ण करके जिसके अपूर्व आयुकर्म उदय को प्राप्त हुआ है, उसके प्रथम समय मे उत्पन्न "व्यजन" सज्ञावाले जीवपरिणाम को अथवा पूर्व शरीर के परित्याग पूर्वक उत्तर शरीर के ग्रहण करने को भवग्रहणभव कहते है । - पृष्ठ ५१२

(८६१) शंका - अमूर्त जीव का मूर्त शरीर के साथ कैसे वन्ध होता है ?

समादान - यह कोई दोष नही है, क्योंकि मूर्त आठ कर्मजनित अनादि शरीर से सवद्ध जीव ससार अवस्था मे सदा काल उससे अपृथक् एक क्षेत्रावगाह है । अतएव उसके सम्बन्ध से मूर्तभाव को प्राप्त हुए जीव के शरीर के साथ सम्वन्ध होने मे कोई विरोध नही है । - पृष्ठ ५१२

पुद्गलात्त अधिकार

(८६२) शका - पुद्गलात्त क्या कहलाता है ?

समाधान - "आत्ता पुद्गला पुद्गलात्ता ", आत्मसात किये गये पुद्गलो का ग्रहण पुद्गलात्त कहलाता है । आत्त माने ग्रहण किया हुआ । - पृष्ठ ५१४

(८६३) शंका - वे पुद्गल कितने प्रकार से आत्मसात किये जाते है ?

समाधान - छह प्रकार से - (१) ग्रहण से,(२)परिणाम से, (३) उपभोग से, (४) आहार से, (५) ममत्व से, (६) परिग्रह से । - पृष्ठ ५१४

(८६४) शंका - ग्रहण से योग्य आत्त पुद्गल कौन कहलाते है ?

समाधान - मुख्य रूप से मनुष्यो की अपेक्षा है, जो दण्ड आदि पुद्गल हाथ अथवा पैर से ग्रहण किये गये है, वे ग्रहण से आत्त पुद्गल कहलाते है । - पृष्ठ ५१५

(८६५) शंका - परिणाम से आत्त पुद्गल किसे कहते है ?

समाधान - मिथ्यात्वादि परिणामो के द्वारा जो पुद्गल अपने किये गये है, वे परिणाम से आत्त पुद्गल कहे जाते है । - पृष्ठ ५१५

(८६६) शंका - उपभोग से आत्त पुद्गल किसे कहते है ?

समाधान - जो गन्ध और ताम्बूल आदि पुद्गल उपभोग स्वरूप से अपने किये गये है, उन्हे उपभोग से आत्त पुद्गल कहते है । - पृष्ठ ५१५

(८६७) शंका - आहार से आत्त पुद्गल किसे कहते हैं ?

समाधान - भोजन-पान आदि के विधान से जो पुद्गल अपने किये है उन्हे आहार से आत्त पुद्गल कहते है । - पृष्ठ ५१५

(८६८) शंका - ममत्व से आत्त पुद्गल किसे कहते है ?

समाधान - जो पुद्गल अनुराग से गृहीत होते है, वे ममत्व से आत्त पुद्गल है । - पृष्ठ ५१५

(८६९) शका - परिग्रह से आत्तपुद्गल किसे कहते है ?

समाधान - जो आत्माधीन पुद्गल है, उनका नाम परिग्रह से आत्तपुद्गल है । - पृष्ठ ५१५

(८७०) शंका - अविपच्चित और विपच्चित का अर्थ क्या है ?

समाधान - अविपच्चित का अर्थ - विपाक रहित और विपच्चित का अर्थ है, विपाक सहित होना अर्थात् विपाक को प्राप्त । - पृष्ठ ५०३

(८७१) शंका - विपच्चित मे अल्प-बहुत्व किस प्रकार है ?

समाधान - नरकगति मे उत्पन्न हुआ जो नरकगति मे ही विपाक को प्राप्त होता है, उसका नाम विपच्चित है। इस अर्थपद के अनुसार विपच्चित का अल्पवहुत्व कहते है। (१) नरकगति मे जो सात स्वरूप से वाधा जाकर असक्षिप्त व अप्रतिसक्षिप्त होता हुआ सात स्वरूप से वेदा जाता है, वह सवसे स्तोक है। (२) जो असातस्वरूप से बाधा जाकर असक्षिप्त व अप्रतिसक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूप से वेदा जाता है, वह सख्यातगुणा है। (३) जो सातस्वरूप से वाधा जाकर असक्षिप्त व अप्रतिसक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूप से वेदा जाता है, वह असख्यातगुणा है। (४) जो असातस्वरूप से वाधा जाकर असक्षिप्त व अप्रतिसक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूप से वेदा जाता है, वह सख्यातगुणा है, (५) जो सातस्वरूप से वाधा जाकर सक्षिप्त व प्रतिसक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूप से वेदा जाता है, वह सख्यात गुणा है। (६) जो असातस्वरूप से वाधा जाकर सक्षिप्त व प्रतिसक्षिप्त होता हुआ सातस्वरूप से वेदा जाता है, वह असख्यातगुणा है। (७) जो असातस्वरूप से वाधा जाकर सक्षिप्त व प्रतिसक्षिप्त होता हुआ जो असातस्वरूप से वेदा जाता है, वह सख्यात गुणा है। (८) जो सातस्वरूप से बाधा जाकर सक्षिप्त व प्रतिसक्षिप्त होता हुआ असातस्वरूप से वेदा जाता है, वह असख्यात गुणा है। इस प्रकार नरकगति मे प्रकृतप्ररूपणा समाप्त हुई (सात = साता, असात = असाता है)। - पृष्ठ ५०३-५०४

(८७२) शका - जो मतिज्ञानावरण के जघन्य अनुभाग का संक्रामक है, वह कौन-कौन प्रकृतियो का सक्रामक है ?

समाधान - जो मतिज्ञानावरण के जघन्य का सक्रामक है, वह नियम से शेष चार ज्ञानावरण प्रकृतियो के जघन्य अनुभाग का सक्रामक है। वह चार प्रकार दर्शनावरण के नियम से जघन्य अनुभाग का सक्रामक होता है। निद्रा और प्रचला का नियम से असक्रामक होता है, पॉच अन्तराय प्रकृतियो के नियम से जघन्य अनुभाग का सक्रामक होता है। शेष प्रकृतियो मे जिनका सत्त्व है, उनके नियम से अजघन्य अनुभाग का सक्रामक होता है। - पृष्ठ ३९२

(८७३) शका - उत्कृष्ट से सातावेदनीय के अनुभागघात को कौन करता है ?

समाधान - उत्कृष्ट से सातावेदनीय के अनुभागघात को मध्यम परिणामवाला मिथ्यादृष्टि ही करता है, उसका घात न अतिशय विशुद्ध जीव ही करता है और

न अतिशय सक्लिष्ट जीव भी। इसका कारण स्वभाव है, इसप्रकार सव प्रशस्त कर्मो के सम्वन्ध मे कहना चाहिए। - पष्ठ ४०२(ये अर्थपद का नमूना)

(८७४) शंका - बारह प्रकृतिक स्थान का जघन्य काल एक समय किस प्रकार घटित होता है ?

समाधान - वारह प्रकृतिक स्थान के जघन्य, काल का स्पष्टीकरण इस प्रकार है - नपुसकवेद के उदय के साथ क्षपकश्रेणीपर चढ़कर आठ कषायो का क्षयकर देने पर तेरह प्रकृतिक स्थान प्राप्त होता है। इसके पश्चात् नपुसकवेद की क्षपणा के प्रारम्भ स्थान से नपुसकवेद का क्षय करता हुआ क्षपणाकाल के भीतर नपुसकवेद का क्षय न करके स्त्रीवेद की क्षपणा का प्रारम्भ करता है। अनन्तर स्त्रीवेद के सत्ता मे स्थित प्राचीन निषको के क्षपण काल का त्रिचरम समय प्राप्त होता है। अनन्तर सवेद भाग के द्विचरम सयम मे नपुसकवेद की प्रथम के दो समय मात्र शेष रहने पर स्त्रीवेद और नपुसकवेद सम्वन्धी सत्ता मे स्थित समस्त निषेको के पुरुष वेद मे सक्रान्त हो जाने पर तदनन्तर नपुसकवेदी वारह प्रकृतिक स्थान का स्वामी होता है, क्योंकि यहा पर नपुसकवेद की उदयस्थिति का विनाश नही हुआ है तथा यही जीव दूसरे समय मे ग्यारह प्रकृतिक स्थान का अधिकारी होता है। क्योकि पूर्वोक्त स्थिति अपना फल देकर अकर्मरूप से परिणत हो जाती है। अत वारह प्रकृतिक स्थान का जघन्यकाल एक समय कहा है। - पृष्ठ २४६

वे उपाध्याय परमेष्ठी सदा प्रसन्न होवें जिन्होंने आर-पार रहित अज्ञान रूप अन्धकार में भटकने वाले भव्यजीवो को प्रकाश दिया है तथा जिन्होने दुखरूपी तीव्र तृषा से व्याकुल हुए तीन लोक के भव्यजीवो को श्रुतरूपी जलपान प्रदान करने के हेतु से अतिशय राग अर्थात् अनुकम्पा से धर्मरूपी प्याऊ को स्थापित किया है। - ध.पु.९, पृ.२

महाबध पुस्तक - १

(८७५) शंका - मतिज्ञान के द्वारा जाने गये पदार्थ से पदार्थान्तर का ग्रहण करना श्रुतज्ञान है, वह नित्य शब्दनिमित्तक है अथवा अन्य निमित्तक है ?

समाधान - श्रुतज्ञान को मतिपूर्वक कहा है। यद्यपि श्रुतज्ञान पूर्वक भी श्रुतज्ञान होता है, फिर भी श्रुतज्ञान के मतिपूर्वकत्व मे वाधा नही जाती है। श्रुतज्ञान मतिपूर्वक होता है, इसका तात्पर्य इतना है कि प्रत्येक श्रुतज्ञान के प्रारम्भ मे मतिज्ञान निमित्त हुआ करता है। पश्चात् मतिपूर्वकत्व का कोई नियम नही है। - पृठ २२

(८७६) शका - सर्ववन्ध किसे कहा जाता है ?

समाधान - सर्व भेदो का वन्ध होने के कारण इसको सर्व वन्ध कहा गया है। - पृठ ३५

(८७७) शका - नोसर्ववन्ध क्या है ?

समाधान - सर्व प्रकृतियो मे से न्यून प्रकृतियो के वन्ध करनेवाले को नोसर्वबन्ध कहा है। - पृठ ३५

(८७८) शंका - अपवर्तनघात किसे कहते है ?

समाधान - आयु के बन्ध को करते हुए जीव के परिणामो के कारण आयु का अपवर्तन अर्थात् घटना भी होता है। उसे अपवर्तनघात कहते है। - पृठ ३६

(८७९) शंका - कदलीघात किसे कहते हैं ?

समाधान - उदय प्राप्त आयु के अपर्वतन को कदलीघात कहते है। - पृष्ठ ३६

(८८०) शंका - नामकर्म के भेद तीर्थंकर प्रकृति की गोत्रसंज्ञा क्यो की गई है ?

समाधान - उच्च गोत्र के वन्ध के अविनाभावी होने से तीर्थकर प्रकृति को भी गोत्र कहा है। - पृठ ४२

(८८१) शका - तीर्थकर प्रकृति के बन्ध का प्रारम्भ अन्य गतियो मे क्यो नही होता है ?

समाधान - तीर्थकर प्रकृति मे सहकारी कारण केवलज्ञान से उपलक्षित जीव द्रव्य है। उसके विना वन्ध का प्रारम्भ नही होता। मनुष्य गति मे केवलज्ञान से

उपलक्षित जीव पाया जाता है । इससे मनुष्यगति मे ही तीर्थकर प्रकृति के बन्ध का प्रारम्भ कहा है । (मनुष्य मे ही केवलज्ञान प्राप्त करने की साक्षात् योग्यता होने से) - पृष्ठ ४२

(८८२) शंका - केवली भगवान के निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था पाई जाती है क्या ?

समाधान - केवली भगवान के समुद्घातकाल मे औदारिक मिश्रकाय के समय निर्वृत्यपर्याप्तक अवस्था पायी जाती है । - पृष्ठ ५२

(८८३) शंका - क्षेत्रानुगम किसे कहते है ?

समाधान - जीवादि द्रव्यो का वर्तमान आवासस्थल क्षेत्र है । जिसप्रकार से द्रव्य अवस्थित है, उसप्रकार से उनको जानना अनुगम कहलाता है । क्षेत्र के अनुगम को क्षेत्रानुगम कहते है । - पृष्ठ २०७

(८८४) शंका - अनिवृत्तिकरण मे कर्मों का उपशम न होने से औपशमिकभाव कैसे कहा जायेगा ?

समाधान - उपशम शक्ति से समन्वित अनिवृत्तिकरण के औपशमिक भाव मानने मे आपत्ति नही है । इस प्रकार उपशम होने पर उत्पन्न होनेवाला तथा उपशम होने योग्य कर्मों के उपशमनार्थ उत्पन्न हुआ भाव औपशमिक कहलाता है। अथवा भविष्य मे उत्पन्न होनेवाले उपशमभाव मे भूतकाल का उपचार करने से अनिवृत्तिकरण गुणस्थान मे औपशमिकभाव बन जाता है । जैसे - सब प्रकार के असयम मे प्रवृत हुए चक्रवर्ती तीर्थकर के "तीर्थकर"यह सज्ञाकरण बन जाता है । (इसीप्रकार क्षायिकभाव का भी कथन करना उचित है) - पृष्ठ ३१४

(८८५) शंका - अद्धा अल्पबहुत्व का क्या अर्थ है ?

समाधान - अद्धा अल्पबहुत्व का अर्थ काल सम्बन्धी हीनाधिकपना है।-पृष्ठ ३७६

(८८६) शंका - भागाभाग पद किसप्रकार निष्पन्न हुआ है ?

समाधान - अनन्तवॉ भाग, असख्यातवॉ भाग और सख्यातवॉ भाग इनकी भाग सज्ञा है । अनन्त बहुभाग, असख्यात बहुभाग, सख्यात बहुभाग इनकी अभाग सज्ञा है । भाग और अभाग इसप्रकार द्वन्द समास होकर भागाभाग पद निष्पन्न हुआ है । - पृष्ट १५८

महावध पुस्तक - २

(८८७) शंका - स्थितिवन्ध किसका नाम हे ?

समाधान - राग, द्वेष मोह के निमित्त से आत्मा के साथ जो कर्म सम्वन्ध को प्राप्त होते है। उनके अवस्थान काल को स्थिति कहते है। कर्मवन्ध के समय जिस कर्म की जो स्थिति प्राप्त होती है, उसका नाम स्थितिवन्ध है। - पृष्ठ १

(८८८) शंका - स्थितिवन्धस्थान - प्ररूपणा किसकी प्ररूपणा करता है ?

समाधान - जिसमे स्थितिवन्ध के स्थानो का विचार किया जाता है, वह स्थितिवन्धस्थान-प्ररूपणा है। यहाँ स्थितिवन्धस्थान पद से प्रत्येक कर्म के जघन्य स्थितिवधस्थान से लेकर उत्कृष्ट स्थितिवध स्थान तक के कुल विकल्प परिगृहीत किये गये है। - पृष्ठ १

(८८९) शंका - निषेक रचना सज्ञा किसकी है ?

समाधान - एक समय मे वद्ध कर्मो का उस समय प्राप्त प्रत्येक स्थिति मे जिस क्रम से निक्षेप होता है, उसकी निपेकरचना सज्ञा है। - पृष्ट२

(८९०) शंका - आवाधाकांडक-प्ररूपणा किसे कहते है ?

समाधान - वँधनेवाले कर्म स्वभावत या अपकर्षण आदि के निमित्त से जितने काल वाद फल देने मे समर्थ होते है, उस काल का नाम आवाधाकाल है और जितने स्थितिविकल्पो के प्रति एक-एक आवाधाकाल प्राप्त होता है, उतने स्थितिविकल्पो की एक आवाधा होने से उसकी आबाधाकांडक सज्ञा है। इसका विचार जिस प्ररूपणा द्वारा किया जाता है, उसे आबाधाकाडक प्ररूपणा कहते हैं। - पृष्ठ २

स्पष्टीकरण - एक आवाधाकाण्डक यहाँ पल्य के असख्यातवे भाग प्रमाण बतलाया है। इसका अभिप्राय यह है कि पल्य के असख्यातवे भाग प्रमाण स्थितिविकल्पो के प्रति एक आबाधा विकल्प होता है।

उदाहरणार्थ - सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण दर्शनमोहनीय की उत्कृष्ट स्थिति को ६४ मान लिया जाय, सात हजार वर्ष प्रमाण उत्कृष्ट आबाधा को १६ मान लिया जाय और पल्य के असख्यातवे भाग को ४ मान लिया जाय तो ६४,६३,६२और ६१इन चार की १६समय आबाधा होगी। यह एक आबाधाकाण्डक हुआ तथा ६०,५९,५८,और५७,की१५समय आवाधा

होगी । यह दूसरा आबाधाकाण्डक हुआ इसी तरह जघन्य स्थिति के प्राप्त होने तक एक-एक आबाधा का एक-एक समय कम होते हुए जघन्य स्थिति की जघन्य आबाधा रह जाती है । - पृष्ठ १३

(८६१) शंका - संक्लेशविशुद्धिस्थान संज्ञा किसकी है ?

समाधान - ज्ञानावरण आदि कर्मों के वन्ध योग्य परिणामो की सक्लेशविशुद्धि स्थान सज्ञा है । - पृष्ठ ४

(८६२) शंका - आबाधास्थान किसे कहते है तथा आबाधाकाण्डक कितने है ?

समाधान - आबाधा के कुल विकल्प आबाधास्थान कहलाते है और इतने ही आबाधाकाण्डक होते हैं । - पृष्ठ १४

(८६३) शंका - संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक मिथ्यादृष्टि के जघन्य स्थितिबन्ध कितना होता है ?

समाधान - सज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक मिथ्यादृष्टि के जघन्य स्थितिबन्ध अन्त कोड़ाकोड़ी से कम नही होता । - पृष्ठ २६

(८६४) शंका - भङ्गविचय शब्द का क्या अर्थ है ?

समाधान - भेदो का वर्गीकरण करना । - पृष्ठ ८४

(८६५) शंका - तिर्यञ्च सामान्य की उत्कृष्ट कायस्थिति कितनी है ?

समाधान - तिर्यञ्च सामान्य की उत्कृष्ट कायस्थिति अनन्त काल प्रमाण है । - पृष्ठ ७२

(८६६) शंका - पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रियपर्याप्त, त्रस और त्रसपर्याप्त की उत्कृष्ट कायस्थिति कितनी - कितनी है ?

समाधान - पंचेन्द्रियो की उत्कृष्ट कायस्थिति पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक एक हजार सागर है, पचेन्द्रियपर्याप्तको की उत्कृष्ट कायस्थिति सौ सागर पृथक्त्व है, त्रसकायिको की उत्कृष्ट कायस्थिति पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक दो हजार सागर है और त्रसकायिक पर्याप्तको की उत्कृष्ट कायस्थिति दो हजार सागर है । - पृष्ठ ७३

(८९७) शंका - वृद्धिबन्ध नाम किसका है ?

समाधान - जिसमे छह गुणी हानि-वृद्धि का विचार किया जाता है, उसे वृद्धि अनुयोद्वार कहते है। यहाँ वृद्धि पद उपलक्षण है, इसलिए इस पद से हानि का भी ग्रहण हो जाता है। यहॉ स्थितिवन्ध का प्रकरण होने से इसका नाम वृद्धिवन्ध पडा है। - पृष्ठ १८२

(८९८) शंका - अध्यवसानसमुदाहार संज्ञा किसकी है ?

समाधान - यहॉ स्थितिवन्ध के कारणभूत परिणामो की अध्यवसान सज्ञा है और जिस अनुयोगद्वार मे इनकी अपेक्षा वर्णन किया गया है, उसकी अध्यवसानस-मुदाहार सज्ञा है। - पृष्ठ २०८

(८९९) शंका - अनुकृष्टि रचना कहॉ होती है?

समाधान - जहॉ आगे के परिणामो की पिछले परिणामो के साथ समानता होती है, वहॉ अनुकृष्टि रचना होती है। - पृष्ठ २११

(९००) शका - पृथिवीकायिक जीव की अपेक्षा तिर्यञ्चायु के उत्कृष्ट स्थिति वन्ध का जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर कितना है ?

समाधान - पृथिवीकायिक की भवस्थिति वाईस हजार वर्ष प्रमाण और कायस्थिति असख्यात लोक प्रमाण होने से यहॉ तिर्यञ्चायु के उत्कृष्ट स्थितिवन्ध का जघन्य अन्तर एक समय कम वाईस हजार वर्ष और उत्कृष्ट अन्तर असख्यात लोक प्रमाण कहा है। - पृष्ठ ३७९

(९०१) शंका - आयुकर्म की उत्कृष्ट कर्मस्थिति और आबाधा कितनी है ?

समाधान - स्थिति दो प्रकार की है - कर्मस्थिति और निषेकस्थिति। आयु कर्म की उत्कृष्ट निषेक स्थिति तैतीस सागर प्रमाण है। उदय स्थिति की अपेक्षा और कर्मस्थिति पूर्वकोटि का त्रिभाग अधिक तैतीस सागर प्रमाण है, आयुकर्म के वध की अपेक्षा (पूर्वकोटि का त्रिभाग ये आयुकर्म की उत्कृष्ट आवाधा हुई)। - पृष्ठ २५ विषय परिचय

महाबंध पुस्तक -६

(६०२) शंका - (बंध के समय आठो कर्मों का बंध होने पर) आयुकर्म को, और कर्मों की अपेक्षा सबसे थोड़ा भाग क्यो मिलता है ?

समाधान - क्योकि आठ कर्मों मे आयुकर्म का स्थितिवन्ध थोड़ा है, इससे आयुकर्म को थोडा भाग मिलता है। - पृष्ठ १

(६०३) शंका - शेष कर्मों को भाग किस क्रम से मिलता है ?

समाधान - नाम और गोत्रकर्म को समान भाग मिलकर भी आयुकर्म के भाग से बहुत मिलता है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय इन तीनो कर्मों को परस्पर मे समान भाग मिलकर भी नाम और गोत्रकर्म के भाग से वहुत मिलता है। इससे मोहनीय कर्म को द्रव्य विशेष अधिक मिलता है, तथा इससे वेदनीय कर्म को भाग विशेष अधिक मिलता है। - पृष्ठ १२

(६०४) शंका - वेदनीय कर्म को सबसे अधिक द्रव्य मिलने का क्या कारण है ?

समाधान - वेदनीय के सिवा शेष कर्मों मे जिसकी स्थिति अधिक है, उसको बहुत भाग मिलता है। परन्तु वेदनीय को अधिक भाग मिलने का अन्य कारण है। यदि वेदनीय कर्म न हो तो सब कर्म जीव को सुख या दुख उत्पन्न करने मे समर्थ नही है। इस कारण वेदनीय को सबसे बहुत भाग मिलता है। तथा इसी कारण से सब कर्मों के ऊपर वेदनीय का भागाभाग प्राप्त होता है। - पृष्ठ १-२

(६०५) शंका - (अध्यवसान समुदाहार मे जो अल्प-बहुत्व प्रसंग से जो) परिपाटी क्रम आया है, वह परिपाटी क्रम क्या है ?

समाधान - मिथ्यादृष्टि के जो प्रदेशवन्धस्थान होते है, उतने की परिपाटी सज्ञा है। - पृष्ठ ३०३ महाबध पुस्तक ७

जयधवला पुस्तक - 1

(६०६) शंका - अभिव्याहरणनिष्पन्न नाम किसे कहते हैं ?

समाधान - अभिमुख अर्थात् अपने मे प्रतिबद्ध हुए अर्थ का व्याहरण अर्थात् कहना, अभिव्याहरण कहलाता है। उससे उत्पन्न हुए नाम को अभिव्याहरणनिष्पन्न नाम कहते है। जैसे - पेज्जदोष = रागद्वेष, अर्थानुसारी नाम अभिव्याहरण से उत्पन्न हुआ नाम कहलाता है। - पृष्ठ १६८

(६०७) शंका - प्रमाणव्यपाश्रय किसे कहते है ?

समाधान - नय के द्वारा जो वस्तु का अध्यवसाय होता है, वह प्रमाणव्यपाश्रय है। - पृष्ठ २००

(६०८) शंका - सातो सुनय रूप वाक्यो को सकलादेशपना कैसे प्राप्त है ?

समाधान - एक धर्म को प्रधान करके साकल्यरूप से वस्तु का प्रतिपादन करते है, इसलिए ये सकलादेश रूप है, क्योंकि साकल्यरूप से जो पदार्थ का कथन करता है, वह सकलादेश कहा जाता है। - पृष्ठ २०२

(६०९) शंका - समभिरूढनय किसे कहते है ?

समाधान - एक शब्द के अनेक अर्थ पाये जाते है, परन्तु नाना अर्थों को छोड़कर एक अर्थ को ग्रहण करनेवाला नय समभिरूढ नय कहलाता है। - पृष्ठ १९९

(६१०) शंका - झीणाझीण किसे कहते है ?

समाधान - किसी स्थिति मे स्थित प्रदेशाग्र उत्कर्षण, अपकर्षण, सक्रमण और उदय के योग्य और अयोग्य है, उसे झीणाझीण कहते है। - पृष्ठ १५८

(६११) शंका - अझीण किसे कहते है ?

समाधान - जो प्रदेश उत्कर्पण, अपकर्षण, सक्रमण और उदय के अयोग्य है, उन्हे अझीण कहते है। - प्र.पृष्ठ ८२

(६१२) शंका - कषाय किस साधन से होती है ?

समाधान - नैगमादि चार नयो की अपेक्षा कषाय कर्तृसाधन है - क्योंकि इन नयो मे कार्यकारण भाव सभव है अथवा कषाय औदयिक भाव से होती है। शब्द आदि तीन नयो की अपेक्षा तो कषाय पारिणामिक भाव से होती है। क्योंकि इन की दृष्टि मे कारण के बिना कार्य की उत्पत्ति होती है। - पृष्ठ ३१९

(६१३) शंका - विभक्ति किसे कहते है ?

समाधान - विभक्ति शब्द का अर्थ है विभाग, भेद और पृथग्भाव ये एकार्थवाची है। - पृष्ठ ५

(६१४) शंका - अविभक्ति किसे कहते है ?

समाधान - अविभक्ति का अर्थ अविभाग, अभेद, अपृथग्भाव ये एकार्थवाची है।

(६१५) शंका - एकैक उत्तरप्रकृतिविभक्ति किसे कहते है ?

समाधान - जहॉ मोहनीय की अट्ठाईस प्रकृतियो का पृथक-पृथक कथन किया है, उसे एकैक उत्तरप्रकृतिविभक्ति कहते है। (यह तो उपलक्षण रूप है, वाकी तो जिन-जिन कर्मो के उत्तर भेद है, उन सभी मे समझना) - प्र पृष्ठ ८१

(६१६) शंका - प्रकृतिस्थान उत्तरप्रकृतिविभक्ति किसे कहते है ?

समाधान - जहॉ मोहनीय के अट्ठाईस, सत्ताईस आदि प्रकृति रूप सत्वस्थानो का कथन किया है, उसे प्रकृतिस्थान उत्तरप्रकृतिविभक्ति कहते है। - प्र. पृष्ठ ८१

(६१७) शंका - स्थिति विभक्ति किसे कहते है ?

समाधान - जिसमे चौदह मार्गणाओं का आश्रय लेकर मोहनीय के अट्ठाईस भेदो की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति वतलाई है, उसे स्थितिविभक्ति कहते है। (यह भी उपलक्षण रूप है) - पृष्ठ ८२

(६१८) शंका - अनुभागविभक्ति किसे कहते है ?

समाधान - कर्मो मे जो अपने कार्य करने की शक्ति पाई जाती है, उसे अनुभाग कहते है। इसका विस्तार से जिस अधिकार मे कथन किया है, उसे अनुभागविभक्ति कहते है। - पृष्ठ ८२

(६१९) शंका - मूलप्रकृति अनुभागविभक्ति किसे कहते है ?

समाधान - जिसमे सामान्य मोहनीय कर्म के अनुभाग का विस्तार से कथन किया है, उसे मूलप्रकृति अनुभागविभक्ति कहते है। - पृष्ठ ८२

(६२०) शंका - उत्तरप्रकृति अनुभागविभक्ति किसे कहते हैं ?

समाधान - जिसमे मोहनीय कर्म के उत्तर भेदो के अनुभाग का विस्तार से कथन किया है, उसे उत्तरप्रकृति अनुभागविभक्ति कहते है। - पृष्ठ ८२

(६२१) शंका - शव्द का अर्थ के साथ कोई सम्वन्ध नही है, तो वह अर्थ का वाचक कैसे हो सकता है ?

समाधान - प्रमाण का अर्थ के साथ कोई सम्वन्ध नही पाया जाता है फिर भी वह अर्थ को कैसे ग्रहण करता है ? यह भी समान है। अर्थात् जैसे प्रमाण और अर्थ का कोई सम्वन्ध न होने पर भी वह अर्थ को ग्रहण कर लेता है। वैसे ही शव्द का अर्थ के साथ कोई सम्वन्ध न रहने पर भी शव्द अर्थ का वाचक हो जाय, इसमे क्या आपत्ति है ? पृष्ठ २३८

(६२२) शंका - प्रमाण और अर्थ मे जन्य-जनक लक्षण सम्वन्ध पाया जाता है?

समाधान - नही, क्योकि वस्तु की शक्ति की अन्य से उत्पत्ति मानने मे विरोध आता है,, अर्थात् जो वस्तु जैसी है, उसको उसी रूप से जानने की शक्ति को प्रमाण कहते है। वह शक्ति अर्थ से उत्पन्न नही हो सकती है। सव प्रमाणो मे स्वत प्रमाणता स्वीकार करना चाहिए, क्योंकि जो शक्ति पदार्थ मे स्वत विद्यमान नही है वह अन्य के द्वारा नही की जा सकती है। - पृष्ठ २३८

(६२३) शका - शव्द और अर्थ मे यदि स्वाभाव से ही वाच्य- वाचकभाव सवध है, तो फिर वह पुरुषव्यापार की अपेक्षा क्यो करता है ?

समादान - प्रमाण यदि स्वभाव से ही अर्थ से सम्वद्ध है तो फिर वह इन्द्रियव्यापार या आलोक की अपेक्षा क्यो करता है ? इस प्रकार शव्द और प्रमाण दोनो मे शका और समाधान समान है। फिर भी यदि प्रमाण को स्वभाव से ही पदार्थों का ग्रहण करने वाला माना जाता है। तो शव्द को भी स्वभाव से ही अर्थ का वाचक मानना चाहिये। - पृष्ठ २३६

(६२४) शका - स्थित्यन्तिक किसे कहते है ?

समाधान - स्थिति को प्राप्त होनेवाले प्रदेश स्थितिक या स्थित्यन्तिक कहलाते है। - प्र पृष्ट ८२

(६२५) शका - पूर्वसचित कर्म का क्षय किस कारण से होता है ?

समाधान - कर्म की स्थिति का क्षय हो जाने से उस कर्म का क्षय हो जाता है। - पृष्ठ ६२

(६२६) शका - स्थिति का विच्छेद अर्थात् स्थितिवंध का अभाव किस कारण से होता हे ?

समाधान - कषाय के क्षय होने मे स्थिति का विच्छेद होता है अर्थात् नवीन, कर्मों मे स्थिति नही पड़ती है। - पृष्ठ ६३

(६२७) शंका - चार अघातिया कर्म देवत्य के विरोधी नही है, यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान - चार अघातिया कर्म यदि देवत्य के विरोधी होते तो उनकी अघातिया सज्ञा नही वन सकती थी, इससे प्रतीत होता है कि चार अघातिया कर्म देवत्व (अरहंतत्व) के विरोधी नही है। (स्पष्टीकरण ग्रन्थ मे देखिए) । पृष्ठ ६८

(६२८) शंका - दु.ख को उत्पन्न करनेवाले वेदनीय कर्म के दुःख के उत्पन्न कराने मे घातिचतुष्क सहायक है, यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान - यदि चार घातिया कर्मों की सहायता के विना भी वेदनीय कर्म दु ख देने मे समर्थ हो तो केवलीजिनके रत्नत्रय की निर्वाध प्रवृत्ति नही वन सकती है, इससे प्रतीत होता है कि घातिचतुष्क की सहायता से ही वेदनीय अपना कार्य करने मे समर्थ होता है। - पृष्ठ ६६

(६२६) शंका - वेदक किसे कहते है ?

समाधान - उदय और उदीरणा दोनो ही अवस्थाओं मे कर्मफल का वेदन-अनुभवन करनेवाला वेदक कहलाता है, इसलिए उदय और उदीरणा के निमित्त से कर्म का वेदन होता है, इसलिए दोनो को ही वेदक कहा जाता है उपचार से । - प्र पृष्ठ ७६

(६३०) शंका - उपशम सम्यक्त्व और संयमासयम को युगपत् प्राप्त करनेवाले जीव को कितने करण होते है ?

समाधान - तीनो ही करण होते है। - प्र पृष्ठ ८४

(६३१) शंका - वेदकसम्यग्दृष्टि या वेदकप्रायोग्यमिथ्यादृष्टि संयमासंयम को प्राप्त हो तो उसके कितने करण होते है ?

समाधान - उसके प्रारम्भ के दो ही करण होते है, तीसरी अनिवृत्तिकरण नही होता (क्योंकि वह उपशम या क्षय के लिए ही होता है) । - प्र पृष्ठ ८५

(६३२) शंका - संयमलब्धि को प्राप्त जीव को कितने करण होते है ?

समाधान - सयमासयमलब्धिवालो के समान सयमलब्धि को प्राप्त करनेवाले के भी दो ही करण होते है । - प्र पृष्ठ ८५

(६३३) शंका - दर्शनमोह की क्षपणा कौन प्रारम्भ करता है, कम से कम उसे कौन लेश्या होती है और क्षपणा का काल कितना है ?

समाधान - दर्शनमोह की क्षपणा कर्मभूमिया मनुष्य ही प्रारंभ करता है, उसके कम से कम तेजो लेश्या अवश्य होती है तथा क्षपणा का काल अन्तर्मुहूर्त होता है। - प्र पृष्ठ ८४

(६३४) शका - ये करण कहॉ- कहाँ होते है ?

समाधान - प्रथमोपशम सम्यकृत्व की उत्पत्ति मे, अनन्तानुवधी चतुष्क की विसयोजना मे, द्वितीयोपशम सम्यकृत्व की उत्पत्ति मे, क्षायिक सम्यकृत्व की उत्पत्ति मे, चारित्रमोह की उपशामना और क्षपणा मे होते है। - पृष्ठ २१४

(६३५) शंका - अकर्मवन्ध किसे कहते है ?

समाधान - जो कार्मण वर्गणाए मिथ्यात्वादि के निमित्त से आकृष्ट होकर कर्म रूप परिणमित होती है अर्थात् आत्मा के साथ एकक्षेत्रावगाह रूप सम्वन्ध को प्राप्त होती है, वह वन्ध है। इस नूतन कर्मवन्ध को अकर्मवध कहते है। - प्र पृष्ठ ८३

(६३६) शंका - कर्मवन्ध किसे कहते है ?

समाधान - वधे हुए कर्मों के परस्पर सक्रान्त होकर वधने को कर्मवन्ध कहते है अर्थात् सक्रमण के द्वारा जो पुन स्थिति आदि मे परिवर्तन होकर उनका आत्मा से एकक्षेत्रावगाह सम्वन्ध होता है, उसे कर्मवन्ध कहते है। - प्र पृष्ठ ८३

(६३७) शंका - प्रकृतिस्थानसंक्रम किसे कहते है ?

समाधान - एक प्रकृतिस्थान के अन्य प्रकृतिस्थान रूप हो जाने को प्रकृतिस्थानसक्रम कहते है। जैसे - मोहनीयकर्म के सत्ताईस प्रकृतिक सत्त्वस्थान का सक्रम अट्ठाईस प्रकृतियो के सत्तावाले मिथ्यादृष्टि मे हो जाना। - प्र पृष्ठ ८३

(६३८) शका - नोकर्म तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यपेज्ज कितने प्रकार का है ?

समाधान - हितपेज्ज, सुखपेज्ज और प्रियपेज्ज (पेज्ज का अर्थ राग) इस प्रकार से तीन भेद है। हित - व्याधि के उपशमन का कारणभूत द्रव्य हित कहलाता है। जैसे - पित्तज्वर से पीड़ित पुरुष के पित्तज्वर की शान्ति का कारण कड़वी कुटकी, तूवड़ी आदिक द्रव्य हितरूप है।

सुख - जीव के आनन्द का कारणभूत द्रव्य सुख कहलाता है। जैसे - भूख और प्यास से पीडित पुरुष को सुधे विने चावलो से वनाया गया भात और ठडा पीनी सुखरूप है।

प्रिय - जो वस्तु अपने को रुचे उसे प्रिय कहते है। जैसे-पुत्र आदि। - पृष्ठ २७१

(६३६) शंका - सर्जकषाय और शिरीषकषाय किसे कहते है ?

समाधान - सर्ज, साल नाम के वृक्षिविशेष को कहते है। उसके कसैले रस को सर्जकषाय कहते है। सिरस नाम के वृक्ष के कसैले रस को शिरीपकपाय कहते है। - पृष्ठ २८५

(६४०) शंका - जब द्रव्यकर्मों का जीव के साथ सम्बन्ध पाया जाता है तो वे कषाय रूप अपने कार्य को सर्वदा क्यो नही उत्पन्न करते है ?

समाधान - सभी अवस्थाओं मे फल देने रूप विशिष्ट अवस्था को प्राप्त न होने के कारण द्रव्यकर्म सर्वदा अपने कषायरूप कार्य को नही करते हैं। - पृष्ठ २८६

(६४१) शंका - द्रव्यकर्म फल देने रूप विशिष्ट अवस्था को सर्वदा प्राप्त नही होते इसमे क्या कारण है ?

समाधान - जिस कारण से द्रव्यकर्म फल देने रूप विशिष्ट अवस्था को सर्वदा प्राप्त नही होते है। वह कारण प्राग्भाव है। प्राग्भाव का विनाश हुए विना कार्य की उत्पत्ति नही हो सकती है। और प्राग्भाव का विनाश द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा लेकर होता है, इसलिये द्रव्यकर्म सर्वदा अपने कार्य को उत्पन्न नही करते है, यह सिध्द होता है। - पृष्ठ २८६

(६४२) शंका - यह प्रत्ययकषाय, समुत्पत्तिककषाय से अभिन्न है अर्थात् ये दोनो कषाय एक है। इसलिये इसका पृथक कथन नही करना चाहिए ?

समाधान - नही, क्योकि जो जीव से अभिन्न होकर कपाय को उत्पन्न करता है, वह प्रत्ययकषाय है और जो जीव से भिन्न होकर कपाय को उत्पन्न करता है, वह समुत्पत्तिककषाय है अर्थात् क्रोधकर्म प्रत्ययकषाय और उसके सहकारी कारण समुत्पत्तिककपाय है। इस प्रकार इन दोनो मे भेद पाया जाता है, इसलिये प्रत्ययकषाय का समुत्पत्तिककपाय से भिन्न कथन किया है। - पृष्ठ २८६

(६४३) शंका - दोग्रन्थरूप पाहुड क्या कहलाता है ?

समाधान - परमानन्द और आनन्द मात्र की "दो ग्रन्थ" यह सज्ञा है। किन्तु यहाँ परमानन्द और आनन्द के कारणभूत द्रव्यो को भी उपचार से "दो ग्रन्थ" सज्ञा दी है। - पृष्ठ ३२४

परमानन्दपाहुड और आनन्दपाहुड - केवलज्ञान और केवलदर्शन रूप नेत्रो से जिसने समस्त लोक को देख लिया है, और जो राग और द्वेष से रहित है, ऐसे जिन भगवान के द्वारा निर्दोष श्रेष्ठ विद्वान आचार्यों की परम्परा से भव्य जनो के लिये भेजे गये बारह अगो के वचनो का समुदाय अथवा उनका एकदेश परमानन्द दोग्रन्थिकपाहुड कहलाता है । इससे अतिरिक्त शेष जिनागम आनन्दपाहुड है । - पृष्ठ ३२५

(६४४) शका - पाहुड शब्द की निरुक्ति क्या है ?

समाधान - जो प्रकृष्ट अर्थात् तीर्थकर के द्वारा आभृत अर्थात् प्रस्थापित किया गया है वह प्राभृत है । अथवा जिनके विद्या ही धन है, ऐसे प्रकृष्ट आचार्यों के द्वारा जो धारण किया गया है अथवा व्याख्यान किया गया है अथवा परम्परारूप से लाया गया है, वह प्राभृत है । - पृष्ठ ३२५

(६४५) शंका - प्राभृत किसे कहते है ?

समाधान - उपहार (भेट) को तथा जिनागम को भी प्राभृत कहते है, यहाँ जिनागम की मुख्यता है, आचार्य परम्परा से या हुआ जिनवचन हमारे लिए भेट मे मिला है, इसलिए जिनवचन को भी उपहार कह सकते है ।

इस काल मे आयु, बुद्धि आदि अल्प हैं, इसलिए प्रयोजन-मात्र अभ्यास करना; शास्त्रों का तो पार है नहीं । और सुन ! कुछ जीव व्याकरणादिक के बिना भी तत्त्वोपदेशरूप भाषा शास्त्रों के द्वारा व उपदेश सुनकर तथा सीखने से भी तत्त्वज्ञानी होते देखे जाते हैं और कई जीव केवल व्याकरणादिक के ही अभ्यास में जन्म गवाते हैं और तत्त्वज्ञानी नहीं होते हैं - ऐसा भी देखा जाता है ।

सुन ! व्याकरणादिक का अभ्यास करने से पुण्य नहीं होता, किन्तु धर्मार्थी होकर उनका अभ्यास करे तो किंचित् पुण्य होता है । तथा तत्त्वोपदेशक शास्त्रो के अभ्यास से सातिशय महान पुण्य उत्पन्न होता है, इसलिये भला तो यह है कि ऐसे तत्त्वोपदेशक शास्त्रो का अभ्यास करना। इस प्रकार शब्द-शास्त्रादिक के पक्षपाती को सन्मुख किया ।

जयधवाला पुस्तक - २

(६४६) शंका - अनंतानुबंधी की विसंयोजना कौन करता है ?

समाधान - सम्यग्दृष्टि (विशेष) जीव अनतानुबन्धी की विसयोजना करता है । पृष्ठ २१८

(६४७) शंका - मिथ्यादृष्टि जीव विसंयोजना नही करता यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान - सम्यग्दृष्टि या सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव चौबीस प्रकृतिक स्थान का स्वामी है, इस सूत्र से जाना जाता है कि मिथ्यादृष्टि जीव अनतानुवन्धी की विसयोजना नही करता है । - पृष्ठ २१८

(६४८) शंका - तो फिर क्या अट्ठाईस प्रकृति की सत्तावाला मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि विसंयोजना कर सकता है ?

समाधान - नही, विसयोजना सम्यग्दृष्टि जीव ही कर सकता है । - पृष्ठ २१८

(६४९) शंका - अनन्तानुवन्धी की विसंयोजना करनेवाले सम्यग्दृष्टि जीव के मिथ्यात्व को प्राप्त हो जाने पर मिथ्यादृष्टि जीव चौबीस प्रकृतिक स्थान का स्वामी क्यो नही होता है ?

समाधान - नही, क्योंकि ऐसे जीव के मिथ्यात्व को प्राप्त होने के प्रथम समय मे ही चारित्रमोहनीय के कर्मस्कन्ध अनन्तानुबन्धी रूप से परिणत हो जाते है, अत उसके चौबीस प्रकृतियो की सत्ता न रहकर अट्ठाईस प्रकृतियो की ही सत्ता पाई जाती है । - पृष्ठ २१८

(६५०) शंका - सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तानुबन्धी चतुष्क की विसंयोजना नही करता है, यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान - आगे कहे जानेवाले चूर्णिसूत्र से जाना जाता है कि सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तानुवन्धी चतुष्क की विसयोजना नही करता है । (क्योंकि रपेर प्रथम ही विसयोजना करता है) । - पृष्ठ २१९

है । - पृष्ठ १५

(६५१) शका - जवकि सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तानुवन्धी चतुष्क की विसयोजना नही करता है तो चौवीस प्रकृतिक स्थान का स्वामी कैसे हो सकता है ?

समाधान - नही, क्योंकि चौवीस प्रकृतियो की सत्तावाले सम्यग्दृष्टि जीवो के सम्यग्मिथ्यात्व को प्राप्त होने पर उनके भी चौवीस प्रकृतियो की सत्ता वन जाती है। - पृष्ठ २१६

(६५२) शका - सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थान मे जीव चारित्रमोहनीय को अनंन्तानुवन्धी रूप से क्यो नही परिणमा लेता है ?

समाधान - नही, क्योंकि वहॉ पर चारित्रमोहनीय को अनन्तानुवन्धी रूप से परिणमाने का कारणभूत मिथ्यात्व का उदय नही पाया जाता है अथवा सासादन गुणस्थान मे जिसप्रकार के तीव्र सक्लेश रूप परिणाम पाये जाते हैं, सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान मे उस प्रकार के तीव्र सक्लेश रूप परिणाम नही पाये जाते हैं, इसलिये सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव चारित्रमोहनीय को अनन्तानुवन्धी रूप से नही परिणमाता है। - पृष्ठ २१६

शास्त्राभ्यास करने से जो सम्यग्ज्ञान हुआ, उससे उत्पन्न आनन्द, वह सच्चा सुख है। वह सुख स्वाधीन है, आकुलता रहित है, किसी के द्वारा नष्ट नहीं होता, मोक्ष का कारण है, इसलिए विषम नहीं है।

जिस प्रकार खाज की पीड़ा नहीं होती, तो सहज ही सुखी होता है, उसी प्रकार वहॉ इन्द्रिय, पीडने के लिए समर्थ नहीं होती, तब सहज ही सुख को प्राप्त होता है। इसलिये विषय सुख को छोड़कर शास्त्राभ्यास करना। यदि सर्वथा न छूटे तो जितना हो सके, उतना छोड़कर शास्त्राभ्यास में तत्पर रहना।

शास्त्राभ्यास से तो ऐसी बढ़ाई होती है कि जिसकी सर्वजन महिमा करते है, इन्द्रादिक भी प्रशसा करते हैं और परंपरा से भी स्वर्ग-मुक्ति का कारण है। इसलिये विवाहादिक कार्यो का विकल्प छोड़कर शास्त्राभ्यास का उद्यम रखना। सर्वथा न छूटे तो बहुत विकल्प

इसलि

इस प्रकार

जयधवला - पुस्तक ३

(६५३) शंका - मूलप्रकृति स्थिति किसे कहते है ?

समाधान - प्रकृति सामान्य की अपेक्षा एकत्व को प्राप्त हुई अट्ठाईस प्रकृतियो की स्थिति विशेष है, उसे मूलप्रकृतिस्थिति कहते है । - पृष्ठ ३

शंका - उत्तरप्रकृतिस्थिति किसे कहते है ?

समाधान - मोहनीय की पृथक पृथक अट्ठाईस प्रकृतियो की स्थितियो को उत्तरप्रकृतिस्थिति कहते है । - पृष्ठ ४

६५४) शंका - सर्वस्थिति और अद्धाच्छेद मे कही गई उत्कृष्ट स्थिति मे क्या भेद है ?

समाधान - अन्तिम निषेक का जो काल है, वह उत्कृष्ट अद्धाच्छेद मे कही गई उत्कृष्ट स्थिति है । तथा वहॉ पर रहनेवाले सम्पूर्ण निषेको का जो समूह है, वह सर्वस्थिति है, इसलिए इन दोनो मे यही भेद है । - पृष्ठ १४

(६५५) शंका - उत्कृष्ट विभक्ति और उत्कृष्ट अद्धाच्छेद मे क्या भेद है ?

समाधान - अन्तिम निषेक के काल को उत्कृष्ट अद्धाच्छेद कहते है और समस्त निषेको के या समस्त निषेको के प्रदेशो के काल को उत्कृष्ट स्थितिविभक्ति कहते है, इसलिये इन दोनो मे भी भेद है ।

(१) उत्कृष्ट अद्धाच्छेद (२) सर्वस्थितिविभक्तिऔर (३) उत्कृष्टस्थिति विभक्ति- इन तीनो का खुलासा । - पृष्ठ १५, विशेषार्थ मे से ।

(१) मान लो किसीजीव ने मिथ्यात्व का सत्तर कोड़ाकोडी सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति वन्ध किया । ऐसी अवस्था मे सत्तर कोडाकोड़ी सागर के अन्तिम समय मे स्थित जो निषेक है उसका उत्कृष्ट अद्धाच्छेद सत्तर कोडाकोडी सागर प्रमाण हुआ, क्योंकि इतने काल तक इसके सत्ता मे रहने की योग्यता है।

(२) तथा इस उत्कृष्ट स्थिति वन्ध के होने पर जो प्रथम निषेक से लेकर अन्तिम निषेक तक निषेक रचना होती है, वह सर्वस्थितिविभक्ति है, क्योंकि यहा सर्व पद द्वारा सव निषेक लिए गये है ।

(३) उत्कृष्टस्थितिविभक्ति से इसमे उत्कृष्टस्थितिवन्ध होने पर प्रथम निषेक से लेकर अन्तिम तक की सव स्थितियो का ग्रहण किया है । - पृष्ट १५

(६५६) शंका - उत्तर प्रकृति और स्थिति किसे कहते है ?

समाधान - मूल प्रकृति की अवान्तर प्रकृतियो को उत्तर प्रकृति कहते है और उत्तर प्रकृतियो की स्थिति को उत्तर प्रकृतिस्थिति कहते है । - पृष्ठ १६२

(६५७) शंका - सोलह कषायो की उत्कृष्ट स्थिति पूरी चालीस कोडाकोड़ी सागर क्यो है ?

समाधान - जव कोई एक मिथ्यादृष्टि जीव उत्कृष्ट सक्लेश रूप परिणामो के द्वारा कार्मण वर्गणास्कन्धो को बाधकर सोलह कषाय रूप से परिणत करके उनको समस्त जीवप्रदेशो मे प्राप्त कर लेता है, तब एक समय अधिक चार हजार वर्ष से लेकर चालीस कोड़ाकोड़ी सागर तक उन सोलह कषायो का कर्म रूप से अवस्थान पाया जाता है । इससे सिद्ध होता है कि सोलह कषायो की उत्कृष्ट स्थिति चालीस कोड़ाकोड़ी सागर की है । - पृष्ठ १६७

(६५८) शंका - नौ नोकषायो की उत्कृष्ट स्थिति एक आवली कम चालीस कोड़ाकोडी सागर प्रमाण क्यो है ?

समाधान - सोलह कषायो की उत्कृष्ट स्थिति को बाधकर और बधावली प्रमाण काल को बिताकर एक आवली कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण लोभ कषाय की स्थिति के नौ नोकषायो मे सक्रान्त हो जाने पर नौ नोकषायो की उत्कृष्ट स्थिति एक आवली कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागर देखी जाती है,अत नौ नोकषायो की उत्कृष्ट स्थिति उक्त प्रमाण बन जाती है । - पृष्ठ १६७

(६५९) शंका - स्त्रीवेद, पुरुषवेद, हास्य, रति ये चारो कर्म उत्कृष्ट संक्लेश से क्यो नही बंधते हैं ?

समाधान - क्योंकि उत्कृष्ट सक्लेश से नही बधने का इनका स्वभाव है। पृष्ठ १६८

(६६०) शंका - बन्धप्रकृति अबन्धप्रकृतियो मे संक्रमण को कैसे प्राप्त होती है ?

समाधान - क्योंकि वन्धप्रकृतियो के ही वन्ध के रूक जाने पर उनमे प्रतिग्रह शक्ति नष्ट हो जाती है, अबन्ध प्रकृतियो की नही, अन्यथा सम्यक्त्वादिक अवन्धप्रकृतियो का अभाव हो जाएगा । परन्तु ऐसा है नही, क्योंकि ऐसा मानने पर उक्त कथन का मोहनीय की अट्ठाईस प्रकृतियों के सत्त्व के प्रतिपादक उपदेश के साथ विरोध आता है । अत जिन प्रकृतियो का बन्ध नही होता, किन्तु जो सक्रमण द्वारा ही अपने सत्त्व को प्राप्त होती है, उनमे वन्ध प्रकृति का सक्रमण हो सकता है, इसमे कोई दोष नही है । - पृष्ठ २३२

(६६१) शंका - विवक्षित समय मे बंधे हुए कर्मपुंज का अचलावली काल के अनन्तर ही पर प्रकृति रूप से संक्रमण होता है, ऐसा नियम क्यो है ?

समाधान - स्वभाव से ही यह नियम है । - पृष्ठ २३४

(६६२) शंका - कषायो का नोकषायो मे और नोकषायो का कषायो मे संक्रमण किस कारण से होता है ?

समाधान - क्योंकि वे दोनो चारित्रमोहनीय है, अतः उनकी परस्पर मे प्रत्यासत्ति पाई जाती है इसलिये उनका परस्पर मे संक्रमण हो सकता है । - पृष्ठ २३४

(६६३) शंका - दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय ये दोनो मोहनीय है । इस रूप से इनकी भी प्रत्यासत्ति पाई जाती है, अतः इनका परस्पर मे संक्रमण क्यो नही स्वीकार किया जाता है ?

समाधान - नही, क्योंकि परस्पर मे प्रतिषेध्यमान दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय के भिन्न जाति होने से उनकी परस्पर मे प्रत्यासत्ति नही पाई जाती है, इसलिये उनका परस्पर मे सक्रमण नही होता है । - पृष्ठ २३४

(६६४) शंका - मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व मे पहले किसका क्षय होता है ?

समाधान - पहले मिथ्यात्व का क्षय होता है - पृष्ठ २४३

(६६५) शंका - पहले मिथ्यात्व का क्षय किस कारण से होता है ?

समाधान - क्योंकि मिथ्यात्व अत्यन्त अशुभ प्रकृति है । - पृष्ठ २४३

(६६६) अशुभ कर्म का पहले ही क्षय होता है, यह किस प्रमाण से जाना जाता है?

समाधान - अन्यथा सम्यक्त्व और लोभ सज्यवलन का पश्चात् क्षय बन नही सकता है, इस प्रमाण से जाना जाता है कि अशुभ कर्म का क्षय पहले होता है । - पृष्ठ २४३

(६६७) शंका - एक-स्थिति किसे कहते है ?

समाधान - कर्म की एक स्थिति को एक-स्थिति कहते है । अथवा सूक्ष्मसापरायिक गुणस्थान के अन्तिम समय मे पुद्गल परमाणुओं के स्कन्ध का जो काल है वह एक स्थिति कहलाता है । - पृष्ठ १६२

(६६८) शंका - प्रदेशो के भेद से भेद को प्राप्त हुई अनेक-स्थितियो में एकत्व कैसे वन सकता है ?

समाधान - क्योंकि प्रकृति सामान्य की अपेक्षा सभी प्रदेशो मे एकत्व पाया जाता है । अथवा अन्तिम निपेक की स्थिति को प्राप्त हुए सव परमाणुओं मे काल की अपेक्षा समानता देखी जाती है, अत उनमे एकत्व वन जाता है । - पृष्ठ १६१

(६६६) शंका - प्रतिभग्नकाल का क्या अर्थ है ?

समाधान - प्रतिभग्न काल अर्थात् सक्लेश से निवृत्त होकर सम्यक्त्व के योग्य विशुद्धि को प्राप्त होने के काल को प्रकृत मे प्रतिभग्नकाल कहा है । - पृष्ठ १६१

(६७०) शका - एकस्थितिकाण्डक मे फालियॉ कितनी होती है ?

समाधान - स्थितिकाण्डक का जितना उत्कीरण काल होता है, उतनी फालियॉ होती है । इसका तात्पर्य यह है कि उत्कीरणकाल के एक, एक समय मे एक, एक फालि का पतन होता है । यहॉ फालि शव्द फॉक इस अर्थ मे आया है । जैसे लड़की के चीरने पर उसमे अनेक फलक या स्तर निकलते हे, उसीप्रकार स्थितिकाण्डक का पतन होते समय विवक्षित स्थितिकाण्डक के अनेक फलक या स्तर हो जाते है । - पृष्ठ ४६४

(६७१) शका - उत्कीरण काल किसे कहते है ?

समाधान - ऊपर कही गई फालि मे से एक, एक फलक का एक, एक समय मे पतन होता है । इसप्रकार इन फालियो के पतन मे कितना समय लगता है? उस सव काल को उत्कीरण काल कहते है । उत्कीरण का अर्थ उकीरना है और इसमे जो काल लगता है, उसे उत्कीरणकाल कहते है । - पृष्ठ ४६४

तथा तूने कहा कि अध्यात्म शास्त्र का ही अभ्यास करना, सो योग्य ही है, किन्तु वहॉ भेदविज्ञान करने के लिए स्व-पर का सामान्यपने स्वरूप निरूपण है, और विशेष ज्ञान बिना सामान्य का जानना स्पष्ट नहीं होता, इसलिए जीव और कर्म के विशेष अच्छी तरह जानने से ही स्व-पर का जानना स्पष्ट होता है । उस विशेष जानने के लिये इस शास्त्र का अभ्यास करना । कारण, सामान्यशास्त्र से विशेषशास्त्र बलवान् है । वही कहा है -

"सामान्य शास्त्रतो नून विशेषो बलवान भवेत् ।"

जयधवला पुस्तक - ४

(६७२) शंका - अवक्तव्य विभक्तिवाला कौन जीव है ?

समाधान - जो नि सत्त्वकर्मवाला होकर यदि पुन सत्कर्मवाला होता है, तो वह अवक्तव्यविभक्ति वाला जीव है। - पृष्ठ ३

(६७३) शंका - असद्रूप अनन्तानुबन्धी चतुष्क की मिथ्यात्व मे उत्पत्ति कैसे हो जाती है ?

समाधान - क्योकि मिथ्यात्व के उदय से कर्मवर्गणास्कन्धो के अनन्तानुबन्धी चतुष्क रूप से परिणमन करने मे कोई विरोध नही आता है। - पृष्ठ २४

(६७४) शंका - सासादन मे उनकी सत्तारूप से उत्पत्ति कैसे हो जाती है ?

समाधान - सासादन रूप परिणामो से। - पृष्ठ २४

(६७५) शंका - सासादन रूप परिणाम किसे कहते है ?

समाधान - तत्त्वार्थो मे अश्रद्धान लक्षण, सम्यक्त्व के अभाव को सासादन रूप परिणाम कहते है। - पृष्ठ २४

(६७६) शंका - वह सासादनरूप परिणाम किस कारण उत्पन्न होता है ?

समाधान - अनन्तानुबन्धी चतुष्क मे से किसी एक प्रकृति के उदय से होता है। - पृष्ठ २४

(६७७) शंका - अनन्तानुबन्धी चतुष्क का उदय किस कारण से होता है ?

समाधान - परिणामविशेष के कारण अनन्तानुबन्धी चतुष्क का उदय होता है। - पृष्ठ २४

(६७८) शंका - यदि अवस्थितस्थितिविभक्तिवाले जीव एक स्थिति के योग्य स्थितिबन्धाध्यवसान स्थान मे ही रहते है, तो नीचे की असंख्यात स्थितियो के योग्य स्थितिबन्धाध्यवसान स्थानो मे परिणमन करनेवाले अल्पतर स्थितिविभक्ति वाले जीव अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवो से असंख्यात गुणे क्यो नही होते है ?

समाधान - नही, क्योंकि जीव सख्यात बार अल्पतर बन्ध को करके एक बार अवस्थितस्थितिवन्ध को करता है, अत अवस्थित स्थितिविभक्तिवाले जीवो से अल्पतर स्थितिविभक्तिवाले जीव असख्यात गुणे नही होते है। - पृष्ठ ६६

(६७६) शंका - संभव होते हुए जीव असंख्यात बार अल्पतर स्थितिसत्कर्म को क्यों नही करता है ?

समाधान - ऐसा स्वभाव है। और स्वभाव दूसरे के द्वारा प्रतिवोध करने के योग्य नही होता, अन्यथा अव्यवस्था प्राप्त होती है। - पृष्ठ ६६

(६८०) शंका - वृद्धि किसे कहते है ?

समाधान - पदनिक्षेपविशेष को वृद्धि कहते है। खुलासा इसप्रकार है - पद निक्षेप मे उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान का कथन किया। किन्तु वे वृद्धि, हानि और अवस्थान एकरूप न होकर अनेक रूप है, यह बात चूँकि इससे जानी जाती है, अत पदनिक्षेप विशेष को वृद्धि कहते है, ऐसा ग्रहण करना चाहिए। - पृष्ठ ११७

(६८१) शंका - पदनिक्षेप अनुयोग क्या है ?

समाधान - भुजगार के विशेष को पदनिक्षेप कहते है। - पृष्ठ १०५

(६८२) शंका - वृद्धि के कितने भेद है ?

समाधान - दो भेद है - (१) स्वस्थानवृद्धि (२) परस्थानवृद्धि। - पृष्ठ ११८

(६८३) शंका - स्वस्थानवृद्धि किसे कहते हैं ?

समाधान - एक जीवसमास के आश्रय से स्थितियो की जो वृद्धि होती है, वह स्वस्थानवृद्धि है। यह परिभाषा उपलक्षण रूप है। - पृष्ठ ११८

(६८४) शंका - परस्थानवृद्धि किसे कहते है ?

समाधान - एकेन्द्रियादिक नीचे के जीवसमासो को ऊपर के जीवसमासो मे उत्पन्न कराने पर जो स्थितियो की वृद्धि होती है, उसे परस्थानवृद्धि कहते है। - पृष्ठ १२१

(६८५) शंका - अवस्थान किसे कहते है ?

समाधान - पहले का जो स्थितिसत्त्व है, उसके समान स्थितियो का बन्ध होना अवस्थान कहा जाना है। - पृष्ठ १४१

(६८६) शंका - जो अवक्तव्यशब्द के द्वारा कहा जा रहा है, वह अवक्तव्य कैसे हो सकता है ?

समाधान - क्योकि वृद्धि हानि और अवस्थान न पाये जाने के कारण से भुजगार, अल्पतर और अवस्थित शब्दो के द्वारा नही कह सकते, अत इसमे अवक्तव्यभाव स्वीकार किया गया है । - पृष्ठ १५०

(६८७) शंका - अद्धा किसे कहते है ?

समाधान - स्थिति बन्ध के काल को अद्धा कहते है । - पृष्ठ १५

(६८८) शंका - चूँकि मिथ्यात्व का उत्कृष्ट स्थितिबन्ध सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर स्थिति प्रमाण होता है, अतः बन्ध के प्रथम समय मे उसे स्थितिसत्त्व यह संज्ञा कैसे प्राप्त होती है ?

समाधान - क्योंकि अस्तित्वयुक्तस्थिति का स्थितिसत्त्व रूप से ग्रहण किया है । - पृष्ठ ३२०

(६८६) शंका - ध्रुवस्थिति के छेदभागहार और समभागहार कितनी दूर जाकर होते है ?

समाधान - उपरिम विरलन मे एक रूप के प्रति जो सख्या प्राप्त है, उसे उत्कृष्ट सख्यात से खण्डित करके जो एक खण्ड लब्ध आवे, एक कम उसकी जब तक वृद्धि हो तब तक छेदभागहार होता है और पूरे की वृद्धि होने पर समभागहार होता है । इसका खुलासा ग्रन्थ से देखिए । - पृष्ठ १३१

हे सूक्ष्माभास बुद्धि ! तूने कहा वह सत्य है, किन्तु अपनी अवस्था देखना । जो स्वरूपानुभव मे अथवा भेदविज्ञान मे उपयोग निरन्तर रहता है, तो अन्य विकल्प क्यो करने ? वहां ही स्वरूपानन्द सुधारस का स्वादी होकर सन्तुष्ट होना, किन्तु निचली अवस्था मे वहाँ निरन्तर उपयोग रहता ही नहीं, उपयोग अनेक अवलम्बन को चाहता है । अतः जिस काल वहाँ उपयोग न लगे, -तब गुणस्थानादि विशेष जानने का अभ्यास करना ।

जयधवला पुस्तक - ५

(६६०) शका - घाति सज्ञा किसकी है ?

समाधान - मोहनीय कर्म घाति है, क्योकि वह आत्मा के गुणो को घातता है। इसलिये उसके अनुभाग की घाति सज्ञा है। (ये उपलक्षणरूप है, अन्य तीन घाति कर्मो मे भी घाति सज्ञा वन जाती है ।) - पृष्ठ ४

(६६१) शका - यहाँ स्थान संज्ञा किसकी है ?

समाधान - मोहनीय कर्म के अनुभाग स्थानो को चार हिस्सो मे वाटा जाता है - एकस्थानिक, द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक और चतु स्थानिक इनकी स्थान सज्ञा है । - पृष्ठ ४

(६६२) शका - एकस्थानिक, द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक ओर चतु स्थानिक के अनुभागस्पर्धक केसे होते है ?

समाधान - एकस्थानिक स्पर्धक देशघाती ही होते है । द्विस्थानिक स्पर्धक देशघाती और सर्वघाती दोनो प्रकार के होते है तथा शेष अनुभाग स्पर्धक सर्वघाती ही होते है । - पृष्ठ ८

(६६३) शका - आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी मे मोहनीय कर्म का जघन्य अनुभाग किसके होते है ?

समाधान - जिसने दो वार उपशम श्रेणी पर चढ़कर नीचे उतरकर दर्शन मोहनीय का क्षपण करके पीछे आहारकशरीर उत्पन्न किया है,उसके जघन्य अनुभाग होता है । इसीप्रकार परिहारविशुद्धि सयत और सयतासयत मे जानना चाहिये ।

(६६४) शका - अकषाय जीवो मे मोहनीयकर्म का जघन्य अनुभाग किसके होता है ?

समाधान - एक वार उपशम श्रेणी पर चढ़कर, उतरकर पुन उपशम श्रेणी पर चढ़कर जो जीव उपशान्तकषाय गुणस्थान को प्राप्त हुआ है, उसके होता है । - पृष्ठ १८

(६६५) शंका - नारकियो मे भुजगार और अल्पतर विभक्ति का जघन्य, उत्कृष्ट काल कितना है ?

समाधान - भुजगार विभक्ति का जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अल्पतर विभक्ति का जघन्य-उत्कृष्ट काल एक समय है। - पृष्ठ ६३

(६६६) शंका - वन्ध की अपेक्षा अल्पतरविभक्ति का निरंतर काल अन्तर्मुहूर्त क्यो नही पाया जाता है ?

समाधान - क्योंकि अनुभाग की सत्ता का प्रति समय घात हुए विना अल्पतर नही वन सकता है। और नरक मे प्रति समय घात होता नही है, क्योंकि चारित्र मोहनीय की क्षपणा मे ही प्रति समय घात सभव है। - पृष्ठ ६४

(६६७) शंका - स्थितिकाण्डकघात, अनुभागकाण्डकघात्, प्रथमफाली, द्वितीयफाली और चरमफाली किसे कहते है तथा उसे किसप्रकार निकालना ?

समाधान - कल्पना कीजिये कि उदयस्वरूप किसी कर्म की स्थिति ४८ समय की है और चूकि एक समय मे एक निषेक का उदय होता है, अत उसके ४८ ही निषेक है। अव उसमे से ८ समय की स्थिति घटानी है, तो ऊपर के ८ निषेको के परमाणुओं को लेकर शेप ४० निषेको मे से आठ निषेको के पास के दो निषेको को छोडकर वॉकी के ३८ निषेको मे मिलाना चाहिये। कुछ परमाणु पहले समय मे मिलाये, कुछ दूसरे समय मे मिलाये। इस तरह अन्तर्मुहूर्त काल तक ऊपर के आठ निषेको के परमाणुओं को नीचे के निषेको मे मिलाते - मिलाते उनका उनका अभाव कर देने से प्रकृत कर्म की स्थिति ४८ समय से घटकर ४० समय की रह जाती है। यह एक स्थितिकाण्डकघात हुआ। इसीप्रकार आगे भी जानना चाहिये।

जैसे - स्थितिकाण्डक के द्वारा स्थिति का घात किया जाता है, वैसे ही ऊपर के अधिक अनुभागवाले स्पर्धको का नीचे के कम अनुभागवाले स्पर्धको मे क्षेपण करके अनुभागकाण्डक के द्वारा अनुभाग का घात किया जाता है।

तथा प्रथम समय मे जितने द्रव्य को अन्य निषेको मे मिलाया जाता है उसे प्रथम फाली कहते है। और दूसरे समय मे जितने द्रव्य को अन्य निषेको मे मिलाया जाता है, उसे द्वितीय फाली कहते है। इसीप्रकार अन्तिम समय मे जितने द्रव्य को अन्य निपेको मे मिलाया जाता है, उसे चरम फाली कहते है।- पृष्ठ१६६

(९९८) शंका - बन्धसमुत्पत्तिक किसे कहते है ?

समाधान - जिन सत्कर्मस्थानो की उत्पत्ति वध से होती है, उन्हे वन्धसमुत्पत्तिक कहते है । - पृष्ठ ३३१

(९९९) शंका - मिथ्यात्व का उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म कैसा है ?

समाधान - मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म सर्वघाती चतु स्थानीय है।-पृष्ठ १३६

(१०००) शका- यह सर्वघाती क्यो है ?

समाधान- क्योंकि, यह सम्यकृत्व के सब अवयवो का विनास करता है, अत सर्वघाती है । - पृष्ठ १३६

(१००१) शका - सम्यकृत्व पर्याय तो अमूर्त है, अत. उसके अवयव कैसे हो सकते है ?

समाधान - ऐसी शका करना ठीक नही है, क्योंकि जो सम्यक्त्व साकार और सावयव जीव द्रव्य को सर्वात्मना पकड़ करके बैठा हुआ है, उसके निरवयव और निराकार होने मे विरोध है । अर्थात् जीव द्रव्य साकार और सावयव है, अत उससे अभिन्न या तत्स्वरूप सम्यकृत्व सर्वथा निरवयव और निराकार नही हो सकता । - पृष्ठ १३६

(१००२) शंका - क्या भोगभूमियां जीव भी सख्यात वर्ष की आयुवाले होते हैं ?

समाधान - हॉ, भरत और ऐरावत मे अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी काल का परिणमन सदा होता रहता है तथा अवसर्पिणी काल के प्रारम्भ के तीन कालो मे और उत्सर्पिणी काल के अन्त के तीन कालो मे भोगभूमि रहती है, अत जब अवसर्पिणी काल का तीसरा काल समाप्त होने लगता है, तो उस समय के तिर्यंच और मनुष्यो की आयु असख्यात वर्ष की न होकर सख्यात वर्ष की होने लगती है । इसीप्रकार उत्सर्पिणी काल के चौथे काल के प्रारम्भ मे भी जब कि भोगभूमि प्रारम्भ होती है, तब भरत और ऐरावत के तिर्यचो और मनुष्यो की आयु सख्यात वर्ष की होती है । - पृष्ठ १५६

(१००३) शंका - भोगभूमि मनुष्य, तिर्यचो मे मिथ्यात्व के उत्कृष्ट अनुभाग की सत्तावाले जीव जन्म लेते है क्या ?

समाधान - नही लेते । - पृष्ठ १५६

(१००४) शंका - सम्यक्त्व का अनुभागसत्कर्म देशघाती है और एकस्थानिक तथा द्विस्थानिक कैसे होता है ?

समाधान - कृतकृत्य जीव के सम्यक्त्व का जो जघन्य अनुभागसत्कर्म उदय प्राप्त अन्तिम निषेक मे स्थित है जो कि प्रतिसमय अपवर्तना के द्वारा होते-होते अवशिष्ट रहा है, वह देशघाती और एकस्थानिक है। किन्तु जो अजघन्य अनुभाग सत्कर्म है, वह भी देशघाती और एकस्थानिक है, क्योंकि सम्यक्त्व मे आठ वर्ष प्रमाण स्थिति सत्कर्म के शेष रह जाने पर उसका अनुभागसत्कर्म लता समान स्पर्धको मे ही स्थित पाया जाता है, किन्तु उससे ऊपर के स्थिति (आठ वर्ष से अधिक) सत्कर्मों मे सम्यक्त्व का अनुभागसत्कर्म है तो देशघाती ही, किन्तु द्विस्थानिक है । पृष्ठ १४३

(१००५) शंका - जैसे अनन्तानुवन्धी का क्षपण हो जाने पर उसकी पुन : उत्पत्ति हो जाती है, वैसे इन प्रकृतियो के (संज्वलन आदि के) अनुभाग की पुनः उत्पत्ति क्यो नही होती ?

समाधान - नही, क्योंकि अनन्तानुबन्धी कषायो की तरह सज्वलन आदि के विसयोजना का अभाव उनकी पुन. उत्पत्ति होने मे विरोध है ।

यदि कहा जाय कि नष्ट होने पर भी उनकी पुन उत्पत्ति हो जाय तो क्या हानि है ? किन्तु ऐसा कहना योग्य नही है, क्योंकि क्षय को प्राप्त हुई प्रकृतियो की पुन. उत्पत्ति नही होती, यदि होने लगे तो मुक्त जीवो का पुन, ससारी होने का प्रसग उपस्थित होगा । किन्तु मुक्त जीव पुन. ससारी नही होते, क्योंकि जिनके कर्मों का आस्त्रव नही होता, उनके संसार की उत्पत्ति मानने मे विरोध आता है । - पृष्ठ २०७

(१००६) शंका - अनन्तानुबन्धी की तरह मिथ्यात्वादि आदि प्रकृतियो को भी आचार्यों ने विसंयोजना प्रकृति क्यो नही मानी ?

समाधान - नही, क्योंकि मिथ्यात्वादि प्रकृतियॉ विसंयोजनपने को प्राप्त होकर अनन्तर नियम से क्षय अवस्था को प्राप्त होती है, इसलिये उनमे विसयोजनपना नही माना गया । किन्तु अनन्तानुबन्धी कषायो का विसयोजन होने पर अन्तर्मुहूर्त काल के भीतर उनके अकर्मपने को प्राप्त होने का नियम नही है । जिससे उनकी विसयोजना की क्षपणसज्ञा हो जाय । अत अनन्तानुबन्धी कि तरह शेष विसयोजित प्रकृतियो की पुन उत्पत्ति नहीं होती, यह सिद्ध हुआ । - पृष्ठ २०८

(१००७) शंका - मिथ्यात्व के उत्कृष्ट अनुभाग का जघन्य अन्तर काल कितना है?

समाधान - एक समय है । क्योंकि तीनो लोको के समस्त जीवो के एक समय तक उत्कृष्ट अनुभाग के विना रहने पर ओर दूसरे समय मे उनमे से कितने ही जीवो के उत्कृष्ट अनुभाग का वन्ध करने पर एक समय अन्तर पाया जाता है। - पृष्ठ २४१

(१००८) शका - अनन्तानुवन्धी कषायो का जघन्य अनुभागसत्कर्म वालो का जघन्य, उत्कृष्ट अन्तर काल कितना है ?

समाधान - जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर असख्यात लोक प्रमाण है । क्योकि अनतानुवन्धी के सयोजन के कारणभूत परिणाम असख्यात लोक प्रमाण है । और सभी परिणामो से सयुक्त होनेवालो के अनन्तानुवन्धी का जघन्य अनुभाग नही होता, क्योंकि सर्वविशुद्धि परिणाम को छोड़कर अन्यत्र वह नही पाया जाता है । - पृष्ठ २४५

(१००९) शका - नपुसकवेद इष्ट पाक की अग्नि के समान क्यो होता है ?

समाधान - क्योंकि वह एक विशेष प्रकृति है । - पृष्ठ २६३

(१०१०) शका - मोहनीय की २८ प्रकृतियो मे भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य विभक्ति ओध किनके होती है ?

समाधान - सम्यकृत्व और सम्यग्मिथ्यात्व की अल्पतर विभक्ति दर्शनमोह के क्षपक के होती है और अवक्तव्यविभक्ति प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि के होती है । अनन्तानुवन्धी चतुष्क की अवक्तव्यविभक्ति अनन्तानुवन्धी का विसयोजन करके मिथ्यात्व मे आकर पुन सयोजन करनेवाले के होती है । शेष वाईस प्रकृतियो की भुजगारविभक्ति तो मिथ्यादृष्टि के ही होती है, क्योंकि इनका अनुभाग मिथ्यादृष्टि ही वढ़ा सकता है । और अल्पतर तथा अवस्थितविभक्ति सम्यग्दृष्टि तथा मिथ्यादृष्टि दोनो के होती है । - पृष्ठ २७६

(१०११) शका - विशुद्धिस्थान किन्हे कहते है ?

समाधान - जीव के जो परिणाम वाधे गये अनुभाग सत्कर्म के घात के कारण है, उन्हे विशुद्धि स्थान कहते है । - पृष्ठ ३८१

(१०१२) शका - स्वभाव किसे कहते है ?

समाधान - अतरग कारण को स्वभाव कहते है । - पृष्ठ ३८७

जयधवला पुस्तक - ६

(१०१३) शंका - कर्मो मे कितने प्रकार की स्थिति होती है ?

समाधान - कर्मों मे दो प्रकार की स्थिति होती है - एक शक्तिस्थिति और दूसरी व्यक्तिस्थिति । व्यक्तिस्थिति प्रकट स्थिति का नाम है, शक्तिस्थिति सभव की अपेक्षा मानी गई है । - पृष्ठ ७८

(१०१४) शंका - गोपुच्छा किसे कहते है ?

समाधान - गोपुच्छा का अर्थ गाय की पूँछ । जैसे गाय की पूँछ उत्तरोत्तर पतली होती जाती है, वैसे ही कर्म निषेक एक-एक गुणहानि के प्रति उत्तरोत्तर एक - एक चय कम होने से उनकी रचना का आकार भी गाय की पूँछ के समान हो जाता है । - पृष्ठ १३७

(१०१५) शंका - गोपुच्छा कितने प्रकार की है ?

समाधान - दो प्रकार की है - (१) प्रकृतिगोपुच्छा (२) विकृतिगोपुच्छा । जो निषेक रचना स्वाभाविक होती है, उसे प्रकृतिगोपुच्छा कहते है । स्वाभाविक का अर्थ है वन्ध के समय जो निषेक रचना हुई है प्राय' वह । - पृष्ठ १३७

(१०१६) शंका - इसे प्रकृतिगोपुच्छा क्यो कहते हैं ?

समाधान - क्योंकि इसमे स्थितिकाण्डक के द्रव्य के बिना उत्कर्षण के द्वारा यथा निक्षिप्त प्रदेशो का ही ग्रहण होता है, अत इसे प्रकृतिगोपुच्छा कहते है । - पृष्ठ १३८

(१०१७) शंका - विकृतिगोपुच्छा किसे कहते है ?

समाधान - विकृति का अर्थ विकार युक्त और गोपुच्छा का अर्थ गाय की पूँछ अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण के करने पर जिन स्थितिकाण्डको का पतन हुआ उनकी अन्तिम फालियो का पतन होने पर स्वामित्व के समय मे जो द्रव्य पतित हुआ उसे विकृतिगोपुच्छा कहते है । - पृष्ठ ११४

(१०१८) शंका - ग्रन्थस्थान और अर्थस्थान मे क्या विशेष है ?

समाधान - ग्रन्थ सूत्र को कहते है । उसके आश्रय से साक्षात् कहे गये स्थान ग्रन्थस्थान कहलाते है । तथा अर्थ से अर्थात् सामर्थ्य से उत्पन्न हुए स्थान अर्थस्थान कहलाते है । सूत्र से सूचित हुए स्थान **अर्थस्थान हैं । - पृष्ठ ३६२**

(१०१६) शंका - उदयावली मे जो द्रव्य गल रहा है, उसे 'गलाकार' ऐसा क्यों कहा ?

समाधान - उदयावली के अन्दर प्रविष्ट हुए कर्मप्रदेशो को गलाने के लिए ऐसा कहा। - पृष्ठ १३०

(१०२०) शंका मोहनीय कर्म का उत्कृष्ट प्रदेशसंचय के लिए आवश्यक वस्तुएं कौन - कौन है ?

समाधान - छह वस्तुए आवश्यक है - (१) लम्वी भवस्थिति, (२) लम्बी आयु, (३) योग की उत्कृष्टता, (४) उत्कृष्ट सक्लेश, (५) उत्कर्षण, (६) अपकर्षण। - पृष्ठ १०

(१०२१) शंका - पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिनियो मे कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि उत्पन्न होते हैं या नही ?

समाधान - नही होते। - पृष्ठ ३७

(१०२२) शका - स्वामित्वाधिकार मे उत्कृष्ट वृद्धि हानि का क्या अर्थ हैं ?

समाधान - कर्मप्रदेशो की सत्तावाला जीव जव अधिक से अधिक प्रदेशो की वृद्धि करता है, तव उत्कृष्ट वृद्धि होती है और जव कोई जीव अधिक से अधिक कर्मप्रदेशो की निर्जरा करता है, तव उत्कृष्ट हानि होती है - यह अर्थ है। - पृष्ट ३८

(१०२३) शंका - अपकृष्ट द्रव्य का निक्षेप किस प्रकार होता है ?

समाधान - जिस प्रकृति का उदय होता है, उसके अपकृष्ट द्रव्य का निक्षेप उदयावली से किया जाता है और जिस प्रकृति का उदय नही होता है, उसके अपकृष्ट द्रव्य का निक्षेप उदयावली मे न होकर उससे वाहर ही होता है। - पृष्ठ ८७

(१०२४) शंका - निरन्तर बंधनेवाली कषायो के द्रव्य का नपुंसकवेद मे निरन्तर संक्रमण होने पर नपुंसकवेद का संचय कर्मस्थिति काल प्रमाण क्यो नही पाया जाता?

समाधान - नही, क्योंकि नपुसकवेद का वन्ध रुक जाने पर अन्तर्मुहूर्तकाल तक कषायो मे से नपुसकवेद में कर्मप्रदेशो का आगमन नही होता। - पृष्ठ ६५

(१०२५) शंका - बन्ध के न होने पर यदि उत्कर्षण नही होता तो न होवे, संक्रमण तो होना चाहिए, क्योंकि उसका निषेध नही है ?

समाधान - बन्ध के अ' ाव मे सक्रमण भी नहीं होता, क्योंकि वन्ध का अभाव होने से अपतद्ग्रह प्रकृति में सक्रमण नही होता, इसप्रकार सूत्र के अविरुद्ध आचार्य वचन है। - पृष्ठ ६५

जयधवला पुस्तक - ७

(१०२६) शंका - मिथ्यात्व की उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति का जघन्य और उत्कृष्ट काल कितना है ?

समाधान - जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है, क्योकि गुणितकर्माशविधि से आकर जो अन्त मे उत्कृष्ट आयु के साथ दूसरी बार सातवें नरक मे उत्पन्न होता है, उसके अन्तिम समय मे ही मिथ्यात्व की उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति देखी जाती है। - पृष्ठ ३

(१०२७) शंका - सम्यकृत्व और सम्यग्मिथ्यात्व के अनुत्कृष्ट द्रव्य का जघन्य काल कितना है ?

समाधान - अन्तर्मुहूर्त काल है, क्योंकि इन दो प्राकृतियो की सत्ता से रहित जो जीव सम्यकृत्व को प्राप्त करके और अन्तर्मुहूर्त काल तक सम्यकृत्व की सत्तावाला होकर दर्शनमोहनीय की क्षपणा करता है। उसके इन दो प्रकृतियो के अनुत्कृष्ट द्रव्य का जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त पाया जाता है। या इनके उत्कृष्ट द्रव्य का स्वामी जो क्षपक जीव इन्हे अनुत्कृष्ट करके निसत्त्व कर देता है, उसके इनके अनुत्कृष्ट द्रव्य का सवसे जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहना चाहिए, क्योंकि पूर्वोक्त काल से भी यह काल जघन्य देखा जाता है। - पृष्ठ ६

(१०२८) शंका - अनन्तानुबन्धी चतुष्क की अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति का जघन्य काल एक समय क्यो नही है ?

समाधान - क्योंकि सातवी पृथिवी से सासादन गुणस्थान के साथ निर्गमन नही होता है। - पृष्ठ १०

(१०२९) शंका - तिर्यञ्चो मे मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायो की अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति का जघन्य काल कितना है ?

समाधान - क्षुल्लक भवग्रहण प्रमाण है। - पृष्ठ ११

(१०३०) शंका - इसे एक समय कम क्यो नही कहते ?

समाधान - नही, क्योंकि नारकियो मे से निकले हुए जीव का अनन्तर समय मे अपर्याप्तक जीवो मे उत्पाद नही होता। - पृष्ठ ११

(१०३१) शंका - तिर्यञ्चो मे अनन्तानुबन्धी चतुष्क और स्त्रीवेद की अनुत्कृष्ट प्रदेश विभक्ति का जघन्यकाल कितना है ?

समाधान - एक समय है, जो स्त्रीवेद की उत्कृष्ट प्रदेशविभक्तिकरने के बाद एक समय तिर्यञ्चो मे रहकर देव हो जाता है, उसके स्त्रीवेद की अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति का जघन्य काल एक समय वन जाता है और जिस तिर्यञ्च

ने अनतानुवन्धी चतुष्क की विसयोजना करके तिर्यञ्च पर्याय मे रहने का काल एक समय शेष रहने पर सासादन गुणस्थान प्राप्त करके उससे सयुक्त हुआ है, उसके अनतानुवन्धी चतुष्क की अनुत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति का जघन्य काल एक समय वन जाता है । - पृष्ठ १२

(१०३२) शंका - ओघ की अपेक्षा मिथ्यात्व आदि सत्तर प्रकृतियो की उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति का जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल कितना है ?

समाधान - अनन्त काल है, क्योकि गुणितकर्माशविधि एक वार समाप्त होकर पुन उसके प्रारभ होने मे अनन्त काल लगता है, इसलिए यहाँ मिथ्यात्वादि सत्तर प्रकृतियो की उत्कृष्ट प्रदेशविभक्ति का जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्त काल है । - पृष्ठ २८

(१०३३) शंका - नरक आदि चारो गतियो मे सव प्रकृतियो (२८) की जघन्य प्रदेशविभक्ति का अन्तरकाल कितना है ?

समाधान - चारो गतियो मे सव प्रकृतियो की जघन्य प्रदेशविभक्ति क्षपितकर्माशिक जीव के होने के कारण प्रत्येक मे दो वार सम्भव नही है, इसलिए सर्वत्र इसके अन्तरकाल का निपेध किया है । - पृष्ठ ३३

(१०३४) शंका - कर्मप्रदेशो का भुजगार और अल्पतर पद किस निमित्त से होता है ?

समाधान - जिसप्रकार शुक्ल और कृष्णपक्ष मे चन्द्रमडल स्वभावत वढ़ता और घटता है, उसीप्रकार यहाँ पर कर्प्रदेशो का भुजगार और अल्पतर पद स्वभाव से होता है । - पृष्ठ ६३

(१०३५) शंका - जो कर्मपरमाणु उदयावली के भीतर स्थित है, वे स्वभाव से ही उत्कर्षण के लिए अयोग्य है, तो स्वभाव से क्या अभिप्रेत है ?

समाधान - अत्यन्ताभाव अर्थात् उदयावली के भीतर स्थित कर्मपरमाणुओं मे उत्कर्षण होने की योग्यता का अत्यन्त अभाव है । - पृष्ठ २४२

(१०३६) शका - क्या और भी कोई कर्मपरमाणु हैं, जिनका उत्कर्षण नही होता हो ?

समाधान - उदयावली के वाहर भी सत्ता मे स्थित जिन कर्मपरमाणुओं की कर्मस्थिति उत्कर्षण के समय वधनेवाले कर्मो की आवाधा के वरावर या इससे कम शेष रही है, उनका भी उत्कर्पण नही होता । - पृष्ठ २४४

जयधवला पुस्तक - ८

(१०३७) शंका - प्रतिग्रह किसे कहते हैं ?

समाधान - सक्रमरूप आधार के सद्भाव मे प्रतिग्रह शब्द की व्युत्पत्ति के अनुसार सक्रम को प्राप्त हुआ द्रव्य जिसमे ग्रहण किया जाता है या जो ग्रहण करता है, उसे प्रतिग्रह कहते है। - पृष्ठ २१

(१०३८) शंका - प्रकृति-असंक्रमण किसे कहते है ?

समाधान - (स्वजाति प्रकृतियो मे गुणस्थान आदि की भिन्नता के कारण सक्रमण नही होना) जैसे-मिथ्यात्व का मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि या सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान के रहते हुए सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व मे सक्रमित नही होना, यह प्रकृति - असक्रमण का उदाहण है। - पृष्ठ २०-२१

(१०३९) शंका - प्रकृतिस्थानप्रतिग्रह और प्रकृतिस्थान-अप्रतिग्रह का क्या उदाहरण है ?

समाधान - प्रकृतिस्थानप्रतिग्रह - जैसे मिथ्यादृष्टि गुणस्थान मे बाईस प्रकृतियो का समुदाय रूप एक प्रतिग्रहस्थान है।

प्रकृतिस्थान-अप्रतिग्रह - जैसे सोलह आदि स्थानो मे से कोई एक स्थान प्रकृतिस्थान-अप्रतिग्रह है। - पृष्ठ २१

(१०४०) शंका - यहॉ सासादनसम्यग्दृष्टि को सम्यग्दृष्टि संज्ञा कैसे दी है ?

समाधान - क्योंकि सासादन गुणस्थान मे दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृतियो का उदय नही होता, यह देखकर उपचार से उसे सम्यग्दृष्टि सज्ञा दी है और सम्यक्त्व का काल होने से भी। - पृष्ठ १३०

(१०४१) शंका - अव्याघातविषयक स्थिति-अपकर्षण और व्याघातविषयक स्थिति-अपकर्षण क्या है ?

समाधान - स्थितिकाण्डक घात के बिना जो स्थिति घटती है वह अव्याघातविषयक स्थिति-अपकर्षण है और स्थितिकाण्डक घात के द्वारा इसके अन्तिम समय मे जो स्थित्ति घटती है, वह व्याघातविषयक स्थिति-अपकर्षण है। - पृष्ठ २५०

जयधवला पुस्तक - १२

(१०४२) शंका - उपयोगवर्गणा संज्ञा किसकी है ?

समाधान - क्रोधादि कषायो के साथ जीव के सप्रयोग करने को उपयोग कहते है । उसकी वर्गणाए अर्थात् विकल्प, भेद इन सवका एक अर्थ है । जघन्य उपयोगस्थान से लेकर उत्कृष्ट उपयोगस्थान तक निरन्तर अवस्थित हुए उपयोग के विकल्पो की उपयोगवर्गणा सज्ञा है । - पृष्ठ ६१

(१०४३) शंका - कालोपयोगवर्गणा संज्ञा किसकी है ?

समाधान - काल की अपेक्षा जघन्य उपयोगकाल से लेकर उत्कृष्ट उपयोगकाल तक निरंतर अवस्थित हुए विकल्पो की कालोपयोगवर्गणा सज्ञा है । क्योंकि यहॉ काल विषयक उपयोगवर्गणाए कालोपयोगवर्गणाऍ है ।.- पृष्ठ ६२

(१०४४) शंका - भावोपयोग वर्गणाएं कौन कहलाती है ?

समाधान - भाव की अपेक्षा तीव्र और मन्द आदि भावो से परिणत हुए तथा जघन्य विकल्प से लेकर उत्कृष्ट विकल्प तक छह वृद्धिक्रम से अवस्थित हुए कषाय - उदयस्थानो की भावोपयोगवर्गणा सज्ञा है । क्योंकि भाव विशिष्ट उपयोगवर्गणा भावोपयोगवर्गणाऐ कहलाती है । - पृष्ठ ६२

(१०४५) शंका - कषायोपयोगाद्धा क्या है ?

समाधान - जो कषायो का उपयोग है, उसकी अद्धा अर्थात् कालमर्यादा वह कषायोपयोगाद्धा है । - पृष्ठ ६२

(१०४६) शंका - कषायसंबंधी उपयोग अध्दास्थान निकालने की विधि क्या है ?

समाधान - क्रोधादि कषायो के उपयोग सबधी जघन्य काल को उत्कृष्ट काल मे से घटाने पर जो शेष रहे, उसमे एक अक मिलाने पर कषायसबधी अध्दास्थान होते हैं । उनकी कालोपयोगवर्गणा सज्ञा है । - पृष्ठ ६२

(१०४७) शंका - विभाषा किसे कहते हैं ?

समाधान - गाथासूत्रो के द्वारा सूचित हुए अर्थ का विशेष रूप से भाषण करने को विभाषा कहते है । विभाषा का अर्थ विवरण है । -

(१०४८) शंका - क्रोधकाल, मानकालादि तथा नोक्रोधकाल, नोमानकाल और मिश्रकाल संज्ञाये किसकी हैं ?

समाधान - वर्तमान मे जितने जीव जिस कषाय मे उपयुक्त होते है और उसके पूर्व भी यदि वे ही जीव उसी कषाय मे उपयुक्त रहे है, तो उन जीवो के विवक्षित कषाय विषयक उपयोग काल की वही सज्ञा हो जाती है। जैसे - पूर्व मे तथा वर्तमान में मान मे उपर्युक्त हुए जीवो के काल की मानकाल संज्ञा तथा क्रोध मे उपर्युक्तजीवो के काल की क्रोधकाल सज्ञा है। तथा पूर्व मे क्रोध, माया और लोभ कषाय मे उपयुक्त रहे है और वर्तमान मे मानकषाय मे उपयुक्त है, तो उनके उस काल की नोमानकाल सज्ञा है। तथा पूर्व मे मानकषाय के साथ अन्य कषाय मे उपयुक्त रहे है तथा वर्तमान मे मानकषाय मे उपयुक्त है, तो उनके उस काल की मिश्रकाल सज्ञा है। - पृष्ठ १०१

कुछ शब्दो के अर्थ - नागराजिसदृश=पर्वतशिला मे खीची गई रेखा समान,पृथ्वीराजिसदृश =पृथ्वी मे खीची गई रेखा समान, बालुकाराजिसदृश = रेत मे खीची गई रेखा समान,उदकराजिसदृश =पानी में खीची गई रेखा समान, अवलेरूनी = दातुन या जीभी। अतिस्तब्धभाव = सदा चुप रहना। हरिद्रावस्त्रसदृश = हल्दी से रगा गया वस्त्र हरिद्र, उसके समान।

(१०४९) शंका - तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यस्थान किसे कहते है ?

समाधान - भूमि आदि मे रखे जानेवाले चॉदी-सोना आदि के अवस्थान को तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यस्थान कहते है। - पृष्ठ १७४

(१०५०) शंका - क्षेत्रस्थान किसे कहते हैं ?

समाधान - ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और तिर्यग्लोक का अपने अपने अकृत्रिम स्वरूप सस्थान विशेषरूप से अवस्थान का नाम क्षेत्रस्थान है। - पृष्ठ १७४

(१०५१) शंका - अद्धास्थान तथा पलिवीचिस्थान किसे कहते है ?

समाधान - समय, आवलि, क्षण, लव, और मुहूर्त आदि काल के भेदो का नाम अद्धास्थान है।

स्थितिबन्ध सम्बन्धी वीचारस्थानो को अथवा सोपान स्थानो को पलिवीचिस्थान कहते है। -पृष्ठ १७४

(१०५२) शंका - उच्चस्थान क्या है ?

समाधान - पर्वत आदि उच्चप्रदेश का नाम उच्चस्थान है अथवा मान्यस्थान का नाम उच्चस्थान है। यही पर नीचस्थान का भी अन्तर्भाव कहना चाहिए। - पृष्ट १७४

(१०५३) शंका - संयमस्थानो मे किसका ग्रहण करना चाहिए ?

समाधान - सयमस्थान ऐसा कहने पर प्रतिपातादि भेद से अनेक प्रकार के सामायिक और छेदोपस्थापना आदि सयमलब्धि स्थानो को ग्रहण करना चाहिए। अथवा सयम की अपेक्षा विशेषता को प्राप्त हुए प्रमत्त आदि गुणस्थानो का ग्रहण करना चाहिए। - पृष्ठ १७४

(१०५४) शंका - प्रयोगस्थान तथा भावस्थान क्या है ?

समाधान - मन, वचन और काय का प्रयोगलक्षण योगस्थान का नाम प्रयोगस्थान है।

असख्यात लोकप्रमाण कषाय - उदयस्थानो अथवा औदयिक आदि भावो के भेदो का नाम भावस्थान है। - पृष्ठ १७५

(१०५५) शंका - नामस्थान किसे कहते है ?

समाधान - दूसरे निमित्त की अपेक्षा किये बिना सज्ञाकर्म को नामस्थान कहते है। - पृष्ठ १७४

(१०५६) शंका - स्थापनास्थान किसे कहते है ?

समाधान - "यह स्थान है" इसप्रकार सद्भाव और असद्भावरूप से स्थापना करने को स्थापनास्थान कहते है। - पृष्ठ १७४

(१०५७) शंका - निदर्शनोपनय किसे कहते हैं ?

समाधान - निदर्शन, दृष्टान्त और उदाहरण ये एकार्थवाची शब्द है। निदर्शन के उपनय को निदर्शनोपनय कहते है। अर्थात् दृष्टान्तो द्वारा अर्थ का साधन करना यह उक्त कथन का तात्पर्य है। - पृष्ठ १७६

(१०५८) शंका - क्रोध के एकार्थवाची नाम कितने है ?

समाधान - क्रोध, कोप, रोष, अक्षमा, सज्वलन, कलह, वृद्धि, झझा, द्वेष और विवाद क्रोध के ये दश एकार्थवाची नाम है । विस्तार ग्रन्थ से जाना । - पृष्ठ १८६

(१०५९) शंका - मान कितने लक्षणवाला है ?

समाधान - मान, मद, दर्प, स्तम्भ, उत्कर्ष, प्रकर्ष, समुत्कर्ष, आत्मोत्कर्ष, परिभव और उत्सिक्त इन दश लक्षणवाला मान है । परिभव = नीचा दिखाना । उत्सिक्त = उत्सिचति अर्थात् गर्वित होना । - पृष्ठ १८७

(१०६०) शंका - मायाकषाय के पर्यायवाची नाम क्या है ?

समाधान - माया, सातिप्रयोग, निकृति, वञ्चना, अनृजुता, ग्रहण, मनोज्ञमार्गण, कल्क, कुहक, निगूहन और छन्न-ये ग्यारह माया कषाय के पर्यावाची नाम है। उनके अर्थ - सातिप्रयोग = कुटिल व्यवहार। निकृति = वञ्चना-ठगने के अभिप्राय। वञ्चना = विप्रलन्भन । अनृजुता = कुटिलता । ग्रहण = मनोज्ञ अर्थ का अपलाप । कल्क = दम्भ । कुहक = झूठे मन्त्र, तन्त्र और उपदेश आदि के द्वारा लोक का उपजीवन करना । निगूहन = भीतरी दुराशय का बाह्य मे संवरण करना (छिपाना) । छन्न = छद्मप्रयोग,अर्थात् अतिसन्धान और विश्रम्भघात आदि । - पृष्ठ १८८-१८९

(१०६१) शंका - लोभ के एकार्थक नाम कितने कहे गये है ?

समाधान - काम, राग, निदान, छन्द, सुत या स्वत, प्रेय, दोष स्नेह, अनुराग, आशा, इच्छा, मूर्च्छा, गृद्धि, साशता या शास्वत, प्रार्थना, लालसा, अविरति, तृष्णा, विद्या और जिह्वा - ये बीस लोभ के एकार्थक नाम कहे गये है । - पृष्ठ १८९

(१०६२) शंका - (लोभका) शास्वतिकपना कैसे बन सकता है ?

समाधान - परिग्रह के ग्रहण करने के पहले और बाद मे सदा बना रहने के कारण लोभ शाश्वत कहलाता है । - पृष्ठ १९१

(१०६३) शंका - प्रकृत मे उपमा रूप अर्थ क्या है ?

समाधान - दुराराधपना प्रकृत मे उपमार्थ है । अर्थात् जिसप्रकार विद्या की आराधना कष्टसाध्य होती है, उसीप्रकार लोभ का आलम्वनभूत भोगोपभोग कष्टसाध्य होने से प्रकृत मे लोभ को कष्टसाध्य कहा गया है । - पृष्ठ १६२

(१०६४) शका - अनुगम किसे कहते है ?

समाधान - प्रकृत अधिकार का विस्तारपूर्वक कथन करने के लिये उसके अवलम्वन स्वरूप गाथासूत्रो के अनुपसरण करने को अनुगम कहते है । - पृष्ठ १६४

(१०६५) शका - स्थितिउदय अविच्छिन्नता और विच्छिन्नता क्या है ?

समाधान - जो प्रकृतियॉ जहॉ पर उदय से अविच्छिन्न है, वहॉ उनकी अन्त कोडाकोडी प्रमाण स्थिति उदय से अविच्छिन्न है । शेष प्रकृतियो की सव स्थितियॉ उदय से विच्छिन्न है । यह स्थिति उदयविच्छिन्नता है । - पृष्ठ २२६

(१०६६) शंका - अनुभाग उदय अविच्छिन्नता और विच्छिन्नता क्या है ?

समाधान - जो अप्रशस्त प्रकृतियॉ उदय से अविच्छिन्न है, उनका द्विस्थानीय अनुभाग सत्त्व से अनन्तगुणा हीन होकर उदय से अविच्छिन्न है । जो प्रशस्त प्रकृतियॉ उदय से अविच्छिन्न है । उन प्रकृतियो का चतु स्थानीय अनुभाग बन्ध से अनन्त गुणा हीन स्वरूप होकर उदय से अविच्छिन्न है, शेष प्रकृतियो का अनुभाग उदय से विच्छिन्न है । यह अनुभागविच्छिन्नता है । - पृष्ठ २२६

(१०६७) शंका - प्रदेश अविच्छिन्नता तथा विच्छिन्नता क्या है ?

समाधान - जो प्रकृतियाँ उदय से अविच्छिन्न है, उन प्रकृतियो का अनुत्कृष्ट प्रदेशपिण्ड उदय से अविच्छिन्न है, शेष प्रकृतियॉ प्रदेशपिण्ड की अपेक्षा उदय से विच्छिन्न है । यह प्रदेशविच्छिन्नता है । प्रकृतिसबधी भी इसप्रकार से जान लेना चाहिए । - पृष्ठ २२६

(१०६८) शंका - अभव्यो के प्रायोग्यलब्धि मे ३४ वन्धपसरण होते है या नही ?

समाधान - नही, क्योंकि जो अभव्यो के योग्य विशुद्धि से विशुद्धि हो रहा है, उसके तत्प्रायोग्य अन्त कोड़ाकोड़ी प्रमाण स्थितिबध की अवस्था मे एक भी कर्म के प्रकृतिवन्ध की व्युच्छिति नही होती । खुलासा ग्रन्थ से देखिए - पृष्ठ २२१

(१०६९) शंका - अपूर्वकरण मे कितने समय का निर्वर्गणाकाण्डक होता है तथा कितने निर्वर्गणाकाण्डक होते हैं ?

समाधान - जितने स्थान ऊपर जाकर विवक्षित समय के परिणामों की अनुकृष्टि का विच्छेद होता है। उसीका नाम निर्वर्गणाकाण्डक है। परन्तु यहॉ अपूर्वकरण के प्रत्येक समय मे निर्वर्गणाकाण्डक को ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि विवक्षित समय के परिणाम ऊपर के एक भी समय मे संभव नही है। तथा अपूर्वकरण का काल अन्तर्मुहूर्त है, जो अध प्रवृत्तकरण के काल के सख्यातवे भाग प्रमाण है। इस काल मे कुल परिणामो का प्रमाण असख्याततलोक प्रमाण होकर भी प्रत्येक समय के परिणाम भी असख्याततलोक प्रमाण है। जो प्रथम समय से लेकर अन्तिम समय तक प्रत्येक समय मे समान वृद्धि को लिये हुए है। इसलिए इसमे निर्वर्गणाकाण्डक का प्रमाण, परिणाम प्रमाण के बराबर है। - पृष्ठ २५४,२५५

(१०७०) शंका - अपूर्वकरण के प्रथम समय मे आयुकर्म का गुणश्रेणिनिक्षेप किसलिये नही करता है ?

समाधान - इसका गुणश्रेणिनिक्षेप स्वभाव से ही नही करता है, क्योंकि आयुकर्म मे गुणश्रेणिनिक्षेप की प्रवृत्ति असम्भव है। - पृष्ठ २६४

(१०७१) शंका - यहॉ पर दर्शनमोह को उपशमाते समय दर्शनमोहनीय का उपशम किसे कहते है ?

समाधान - करणपरिणामो के द्वारा नि शक्त किये गये दर्शनमोहनीय के उदयरूप पर्याय के बिना अवस्थित रहने को उपशम कहते है। - पृष्ठ २८०

(१०७२) शंका - दर्शनमोहनीय की उपशामना का प्रस्थापक कब तक कहलाता है ?

समाधान - दर्शनमोहनीय की उपशमविधि का आरम्भ करनेवाला जीव अध प्रवृत्तकरण के प्रथम समय से लेकर अन्तर्मुहूर्त काल तक प्रस्थापक कहलाता है। - पृष्ठ ३०४

(१०७३) शंका - प्रस्थापक अवस्था मे कौन से उपयोग युक्त होता है ?

समाधान - उस अवस्था मे ज्ञानोपयोग मे ही उपयुक्त होता है, क्योंकि उस अवस्था मे अविचार स्वरूप दर्शनोपयोग की प्रवृत्ति का विरोध है। इसलिए मति,श्रुत,विभगज्ञान मे से कोई एक साकार उपयोग ही इसके होता है। अनाकार उपयोग नही होता। - पृष्ठ ३०४

(१०७४) शंका- निष्ठापक से किसे लेना तथा उसके कौन-सा उपयोग होता है ?

समाधान - निष्ठापक से दर्शनमोह के उपशामनाकरण को समाप्त करनेवाला जीव लेना चाहिए। परन्तु वह किस अवस्था मे होता है ? ऐसा पूछने पर समस्त प्रथम स्थिति को क्रम से गलाकर अन्तर प्रवेश की अभिमुख अवस्था के होने पर होता है। और वह साकारोपयोग या अनाकार उपयोग मे से कोई भी एक उपयोगयुक्त होता है। - पृष्ठ ३०५

(१०७५) शंका - मध्यम जीव कौन कहलाता है ?

समाधान - प्रस्थापक और निष्ठापक रूप पर्यायो के अन्तराल काल मे (बीच के काल मे) प्रवर्तमान जीव मध्यम कहलाता है। उसके भी दोनो उपयोगो का क्रम से परिणाम होने मे विरोध का अभाव है। - पृष्ठ ३०५

(१०७६) शंका - मिथ्यात्व को वेदनीय क्यो कहा है ?

समाधान - जो वेदा जाय वह वेदनीय है। इसलिए मिथ्यात्व ही वेदनीय मिथ्यात्व वेदनीय है। - पृष्ठ ३०८

(१०७७) शंका - पच्छिम भाव क्या सूचित करता है ?

समाधान - पच्छिम शब्द विवक्षित भाव से पिछले भाव को ही सूचित करता है। - पृष्ठ ३१८

(१०७८) शंका - भजितव्य का क्या अर्थ है ?

समाधान - भजितव्य का अर्थ भजनीय है। जैसे - कदाचित् दर्शनमोहनीय का सक्रामक होता है और कदाचित् नही होता। - पृष्ट ३१६

जीवादिक के विशेषरूप गुणस्थानादिक का स्वरूप जानने से ही अरहंत आदि का स्वरूप भले-प्रकार पहिचाना जाता है तथा अपनी अवस्था पहचानी जाती है, ऐसी पहचान होने पर जो अन्तरंग में तीव्र भक्ति प्रकट होती है, वही बहुत कार्यकारी है। और जो कुलक्रमादिक से भक्ति होती है, वह किंचितमात्र ही फल देती है।

- इसलिये भक्ति मे भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है।

जयधवला पुस्तक - १३

(१०७९) शंका - संयमासंयमलब्धि और संयमलब्धि को अनुदय उपशामनारूप क्यो कहा गया है ?

समाधान - सयमासयमलब्धि और सयमलब्धि ये दोनो क्षायोपशमिक भाव रूप है। यहाँ प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशो के भेद से चार भागो मे विभक्ति किया है। इन दोनो लब्धियो को अपने प्रतिपक्ष कर्मों के अनुदय होने से अनुदय-उपशामनास्वरूप कहा गया है।

खुलासा - सयमासयमलब्धि अनन्तानुबन्धी चतुष्क और अप्रत्याख्यानावरण चतुष्क के उदयाभावरूप उपशामना से होती है तथा प्रत्याख्यानावरण चतुष्क के उदयाभाव रूप उपशामना से सयमलब्धि होती है। - पृष्ठ ११०

(१०८०) शंका - संयमासंयमलब्धिस्थान कितने प्रकार के है ?

समाधान - तीन प्रकार के है - प्रतिपातस्थान, प्रतिपद्यमानस्थान और अप्रतिपात - अप्रतिपद्यमानस्थान। इसीप्रकार सयमलब्धि के भी ये तीन स्थान समझना चाहिए। - पृष्ठ १११

(१०८१) शंका - प्रतिपातस्थान कौन कहलाता है ?

समाधान - जिस स्थान के होने पर यह जीव मिथ्यात्व को या असयम को प्राप्त होता है, वह प्रतिपात स्थान कहलाता है। - पृष्ठ १४२

(१०८२) शंका - प्रतिपद्यमान स्थान कौन कहलाता है ?

समाधान - जिस स्थान के होने पर यह जीव सयमासयम को प्राप्त होता है, वह प्रतिपद्यमानस्थान कहलाता है। - पृष्ठ १४२ (प्रतिपद्यमान का दुसरा नाम उत्पादकस्थान है) - पृष्ठ १७८

(१०८३) शंका - शंका अप्रतिपात- अप्रतिपद्यमानस्थान किसे जानना चाहिये ?

समाधान - स्वस्थान मे अवस्थान के योग्य और उपरिम गुणस्थान के अभिमुख हुए शेष सयमासयमलब्धिस्थान अप्रतिपात-अप्रतिपद्यमान स्थान जानने चाहिये। (इसी प्रकार ये तीनो स्थान सयमलब्धि मे भी जान लेना चाहिए)। - पृष्ठ १४२

(१०८४) शंका - अकर्मभूमिज कौन कहलाता है ?

समाधान - भरत, ऐरावत और विदेह मे विनीत सञ्ज्ञावाले (अयोध्या नाम वाले) मध्यम खण्ड को छोड़कर शेप पॉच खण्ड का निवासी मनुष्य यहाँ पर अकर्मभूमिज इस रूप से विवक्षित है, क्योंकि उनमे धर्म, कर्म की प्रकृति असम्भव होने से अकर्मभूमिजपने की उत्पत्ति वन जाती है । - पृष्ठ १८४

(१०८५) शंका - यदि ऐसा है तो उनमे संयम ग्रहण कैसे सम्भव है ?

समाधान - क्योंकि दिशाविजय मे प्रवृत्त हुए चक्रवर्ती के स्कन्धावार (सेना) के साथ जो मध्यम खण्ड मे आये है तथा चक्रवर्ती आदि के साथ जिन्होंने वैवाहिक सम्वन्ध किया है, ऐसे म्लेच्छ राजाओं के सयम की प्राप्ति मे विरोध का अभाव है । अथवा उनकी जो कन्याए चक्रवर्ती आदि के साथ विवाही गई उनके गर्भ से उत्पन्न हुई सन्तान मातृपक्ष की अपेक्षा स्वय अकर्भभूमिज है, यह यहॉ विवक्षित है । इसलिए कुछ निषिद्ध नही है । क्योंकि इसप्रकार की जातिवाले के दीक्षा के योग्य होने मे प्रतिषेध नही है । - पृष्ठ १८४

(१०८६) शका - किस स्थिति को गुणश्रेणिशीर्ष रूप कही गई है ?

समाधान - जिस स्थिति मे जो गुणश्रेणि का शीर्ष होता है, वह स्थिति गुणश्रेणिशीर्ष कहलाती है । उसकी विधि इसप्रकार है - तत्काल अपकर्षित किये गये समस्त द्रव्य के असख्यात बहुभाग को ग्रहणकर तत्काल विवक्षित स्थिति को अन्तिम करके गुणश्रेणि मे निक्षेप करता है, इसलिये यही स्थिति गुणश्रेणिशीर्ष से निर्दिष्ट की गई है । - पृष्ठ ७५

(१०८७) शका - अववृद्धि किसे कहते है ?

समाधान - सयमासयम और सयमलब्धि से नीचे गिरनेवाले जीव के सक्लेशवश प्रति समय होनेवाले अनन्तगुणहानि रूप परिणाम को अववृद्धि कहते है।- पृष्ठ११२

(१०८८) शंका - परिभाषा किसका नाम है ?

समाधान - सूत्र के द्वारा सूचित हुए अर्थ की तथा सूत्र मे निवद्ध हुए या निवद्ध नही हुए अर्थ की प्ररूपणा करना परिभाषा है । - पृष्ठ ११३

(१०८९) शंका - उपशमश्रेणि से गिरने का क्या कारण है ?

समाधान - उपशामनाकाल क्षय (अद्धाक्षय) और भवक्षय (मरण) भवक्षय से गिरनेवाले जीव के देवो मे उत्पन्न होने के प्रथम समय से युगपत् सभी कारण प्रगट हो जाते है, परन्तु जो उपशामना काल के क्षय से गिरता

है, वह जिस आनुपूर्वी से पहले चढ़ने की अवस्था मे बन्धव्युच्छित्ति करके आया है, उसी आनुपूर्वी से यथाक्रम लोभसज्वलन आदि प्रकृतियो का बन्ध करता है । तथा उसीप्रकार पश्चात् आनुपूर्वी से उदयव्युच्छित्ति के अनुसार वेदन करता है । - पृष्ठ १६५-१६६

(१०६०) शंका - कषायो का उपशम करनेवाले (उपशमश्रेणिवाले) जीव के कौन-सा उपयोग होता है ?

समाधान - एक उपदेश है कि नियम से श्रुतज्ञान मे उपर्युक्त होता है । अन्य उपदेश है कि श्रुतज्ञान, मतिज्ञान, अचक्षुदर्शन या चक्षुदर्शन रूप से उपर्युक्त होता है । - पृष्ठ २१६

(१०६१) शंका - आयुक्तकरण किसे कहते है ?

समाधान - (नपुसकवेदादि की उपशामना विधि मे) आयुक्तकरण, उद्यतकरण और प्रारम्भकरण ये तीनो एकार्थक है । (अन्तर किये जाने के प्रथम समय से लेकर) नपुसकवेद का आयुक्त क्रिया द्वारा उपशामक होता है, शेषकर्मों को तो किञ्चिन्मात्र भी नही उपशमाता है, क्योंकि उनकी उपशमनक्रिया का अभी भी प्रारम्भ नही हुआ । - पृष्ठ २७२

जो जीव अन्तरंग अनुराग से आत्महित के अर्थ शास्त्राभ्यास करता है, वह धर्मार्थी है । प्रथम तो जैन शास्त्र ही ऐसे हैं कि जो उनका धर्मार्थी होकर अभ्यास करता है, वह विषयादिक का त्याग करता ही है; उसका तो ज्ञानाभ्यास कार्यकारी है ही ।)

कदाचित् पूर्वकर्मोदय की प्रबलता से (अर्थात् स्वयं कषायवश होने से) न्यायरूप विषयादिक का त्याग न हो, तो भी उसके सम्यग्दर्शन-ज्ञान होने से ज्ञानाभ्यास कार्यकारी होता है । जिस प्रकार असंयत गुणस्थान मे विषयादिक के त्याग बिना भी -मोक्षमार्गपना सम्भव है ।

जयधवला पुस्तक - १४

कषायो की उपशामना करनेवाले प्रकरण से

(१०६२) शंका - करण के आठ प्रकार कौन - कौन है ?

समाधान - अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण, निकाचनाकरण, वन्धनकरण, उदीरणाकरण, अपकर्षणकरण, उत्कर्षणकरण और सक्रामणकरण । - पृष्ठ ३२

(१०६३) शंका - उपशमक के अनिवृत्तिकरण के प्रथम समय मे सभी कर्मो के कौन करण व्युच्छिन्न होते है ?

समाधान - अप्रशस्त उपशामनाकरण, निधत्तीकरण और निकाचनाकरण व्यच्छिन्न हो जाते है । - पृष्ठ ३३

(१०६४) शंका - उपशमश्रेणी मे अनिवृत्तिकरण गुणस्थान के प्रथम समय मे ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, नाम, गोत्र और अंतराय कर्मों के कौन - कौन करण होते हैं ?

समाधान - वन्धन, उदीरणा, अपकर्षण, उत्कर्षण और सक्रमण करण - ये पाचो ही होते है क्यो कि उनका अभी भी विच्छेद नही हुआ है । - पृष्ठ ३३

(१०६५) शंका - उपशमश्रेणी मे अनिवृत्तिकरण गुणस्थान के प्रथम समय मे आयु कर्म का कौन - सा करण होता है ?

समाधान - एक अपवर्तनाकरण होता है शेष सात करण नही होते । - पृष्ठ ३४

(१०६६) शंका - उपशमश्रेणी मे अनिवृत्तिकरण गुणस्थान के प्रथम समय मे वेदनीय कर्म के कौन -कौन करण होते है ?

समाधान - बन्धन, अपकर्षण, उत्कर्षण और सक्रमण करण ये चार करण होते है ।

खुलासा - सातावेदनीय के बन्धनकरण और अपकर्षण सयोगिकेवली के अन्तिम समय तक होते है । उत्कर्षणकरण सूक्ष्मसाम्पराय के अन्तिम समय तक होता है। उदीरणाकरण और सक्रमणक्रण प्रमत्तसयत गुणस्थान तक होते है । उपशामनाकरण, निकाचनाकरण और निधत्तीकरण अपूर्वकरण

के अन्तिम समय तक होते है । उदय और सत्त्व अयोगिकेवली के अन्तिम समय तक होते है । - पृष्ठ ३५

असातावेदनीय के – वन्धन, उत्कर्षण और उदीरणाकरण प्रमत्तसंयत गुणस्थान तक होते है । सक्रमणकरण सूक्ष्मसाम्पराय के अन्तिम समय तक होता है । अपकर्षण करण सयोगिकेवली तक होता है । उपशामनाकरण, निकाचना और निधत्तीकरण अपूर्वकरण के अन्तिम समय तक होते हैं । उदय और सत्त्व अयोगिकेवली के अन्तिम समय तक होते है । - पृष्ठ ३६

(१०६७) शका - कियत्प्रमाण द्रव्य का क्या अर्थ है ?

समाधान - जहॉ जितना कर्म-द्रव्य विवक्षित हो, उसे कियत्प्रमाण द्रव्य कहते है । - पृष्ठ ३५२

स्थितिवन्ध की परिगणना की अपेक्षा मे

(१०६८) शंका - किन कर्मो की देशघाति रूप से अपवर्तना सम्भव है ?

समाधान - ज्ञानावरणचतुष्क, दर्शनावरण तीन और पॉच अन्तराय लब्धिकर्माश सज्ञा वाले इन कर्मो की देशघाति रूप से अपवर्तना सम्भव है । इसलिए इन कर्मो के अनुभागवन्ध को यहाँ से, अन्तर्मुहूर्त पूर्व से लेकर देशघाति द्विस्थानीय रूप से वाँधता हुआ यहॉ भी उसी रूप से वांधता है, सर्वघाति स्वरूप से नही वाँधता । - पृष्ठ २३८

(१०६९) शंका - वन्धानुलोभ प्ररूपणा का स्वरूप क्या है ?

समाधान - गाथासूत्र के प्रवन्ध अर्थात् रचना को लक्ष्य कर श्रुत के अनुसार प्ररूपणा का नाम वन्धानुलोभ प्ररूपणा है । - पृष्ठ ३१०

गुणस्थानानुसार करण

गुणस्थान	करणबन्ध	उत्क	सक्र	अपक	उदी	सत्त्व	उदय	उपशम	निधत्ति	निका
मिथ्यात्व	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ
सासादन	"	"	"	"	"	"	"	"	"	"
मिश्र	"	"	"	"	"	"	'	"	"	"
असंयत			"	"	"	"	"	"	'	"
देशव्रत	"	'	"	"	'	"	"	"	"	'

प्रमत्त	"	"	"	"	"	"	"	"	"	"
अप्रमत्त	"	"	"	"	"	"	"	"	"	"
अपूर्व	"	"	"	"	"	"	"	"	"	"
अनिवृत्ति	"	"	"	"	"	"	"	+	+	+
सूक्ष्म सा	"	"	"	"	"	"	"	+	+	+
उपशात	"	"	"	"	"	"	"	+	+	+
क्षीण	"	"	+	"	"	"	"	+	+	+
मयोग	"	"	+	"	"	"	"	+	+	+
अयोग	+	+	+	+	+	"	"	+	+	+

प्रमाण - गो क ४४१,४४२,४४३

प्रमाण - ४४१, ४४२, ४४३ गाथाये गोम्मटसार कर्मकाण्ड

१- उपशान्तकषाय गुणस्थान मे सक्रमकरण मात्र मिथ्यात्व एव मिश्रमोहनीय प्रकृति के ही होते है, अर्थात् इन दोनो के कर्मपरमाणु सम्यक्त्वमोहनीय रूप परिणम जाते है। अन्य कर्मों का सक्रमकरण दसवे गुणस्थान मे चला गया।

(१) इतना विशेष है कि जयधवला के अनुसार उपशान्तकषाय आदि गुणस्थानो मे बन्ध एव उत्कर्षणकरण भी नही माना है। जयधवल १४, पृष्ठ ३७-३८

(२) "दसकरणीसग्रह"ग्रन्थ मे भी ग्यारहवे आदि गुणस्थानो मे प्रकृतिबध की सभावना की अपेक्षा करके बन्धकरण भी कहा है, पर उत्कर्षणकरण तो वहॉ भी नही कहा। - जयधवल १४, पृष्ठ ३८

मूलप्रकृति में करण

कर्म	करणबन्ध	उत्कर्षण	सक्रमण	अपकर्षण	उदीरणा	सत्त्व	उदय	निधत्ति	निकाचित
ज्ञानवरण	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ	हाँ
दर्शनावरण	"	"	"	"	"	"	"	"	"
वेदनीय	"	"	"	"	"	"	"	"	"
मोहनीय	"	"	"	"	"	"	"	"	"
आयु	"	"	नही	"	"	"	"	"	"
नाम	"	"	हाँ	"	"	"	"	"	"
गोत्र	"	"	"	"	"	"	"	"	"
अन्तरॉय	"	"	"	"	"	"	"	"	"

आधार - गो क ४४१

(११००) शंका - मूल प्रकृतियों का संक्रमणकरण कैसे सम्भव है, क्योंकि उनमे परस्थान संक्रमण स्वीकार नही किया गया है ?

समाधान - क्योंकि उत्तर प्रकृतियो की अपेक्षा उनका भी संक्रम बन जाने मे विरोध का अभाव है। करणदसक समाप्त। जयधवला पु.१४ पृष्ठ ३४

(११०१) शंका - उपशामना के दूसरे प्रकार से भी भेद होते है क्या ?

समाधान - (हॉ) सव्याघात उपशामना और निर्व्याघात उपशामना।

जैसे - नपुसकवेद आदि का उपशम करते समय बीच मे ही मरण हो जाता है, तो वह सव्याघात उपशामना है और मरण नही होता है तो निर्व्याघात उपशामना कहलाती है। - प्र पृष्ठ ६

(११०२) शंका - उपशामना का क्या स्वरूप है ?

समाधान - उदयादि परिणामो के बिना कर्मों का उपशान्त भाव से अवस्थित रहना, इसका नाम उपशामना है। यहॉ उदयादि परिणामो के बिना, इसका आशय है कि किसी कर्म का बन्ध होने पर विवक्षित काल तक उदयादि के बिना तद्वस्थ रहना इसका नाम उपशामना है। यह उपशामना का सामान्य लक्षण है जो यथासभव करणोपशामना और अकरणोपशामना दोनो मे घटित है। - पृष्ठ२

(११०३) शंका - करणोपशामना का क्या स्वरूप है ?

समाधान - प्रशस्त और अप्रशस्त परिणामों के द्वारा कर्मप्रदेशो का उपशमभाव से सम्पादित करणोपशामना है अथवा करणो की उपशामना का नाम करणोपशामना है। उपशामना, निधत्ती और निकाचना आदि आठ करणो का प्रशस्त उपशामना द्वारा उपशम होना करणोपशामना है अथवा अपकर्षण आदि करणो का अप्रशस्त उपशामना, द्वारा उपशम होना, करणोपशामना है। - पृष्ठ २

(११०४) शंका - अकरणोपशामना द्वितीय नाम अनुदीर्णोपशामना का स्वरूप क्या है ?

समाधान - द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव को निमित्त कर कर्मों के विपाकरूप परिणाम का नाम उदय है। उस उदय से परिणत कर्म को उदीर्ण कहते है। उससे भिन्न जिसने विपाक परिणाम को प्राप्त नही किया है, उसे अनुदीर्ण कहते हे। अनुदीर्ण कर्म की उपशामना अनुदीर्णोपशामना कहलाती है। करणपरिणामो

से निर्पेक्ष होकर जो अनुदीर्ण अवस्था होती है, वही अनुदीर्णोपशामना है। इसको अकरणोपशामना भी कहते है। - पृष्ठ ३

(११०५) शंका - देशकरणोपशामना किसे कहते है ?

समाधान - दर्शनमोहनीय का उपशम होने पर उदयादि करणो मे से कुछ तो उपशान्त और कुछ अनुपशान्त रहते है, इसलिए इसे देशकरणोपशामना कहते है। - पृष्ठ ४

(११०६) शंका - सर्वकरणोपशामना किसे कहते है ?

समाधान - सव करणो की उपशामना का नाम सर्वकरणोपशामना है। - पृष्ठ ७

(११०७) शंका - अप्रशस्तोपशामना किसे कहते है ?

समाधान - ससार परिभ्रमण के योग्य अप्रशस्त परिणामो के निमित्त से होने के कारण यह अप्रशस्तोपशामना कही जाती है। अथवा धवला पुस्तक ६ पृ २५४ कितने ही कर्मपरमाणुओं का वाह्य और अन्तरग करण के वश से और कितने ही कर्म परमाणुओं की उदीरणा के वश से उदय मे नही आने को अप्रशस्तोपशामना कहते है।

(२) देशकरणोपशामना का दूसरा नाम अप्रशस्तोपशामना है।

(२) सर्वकरणोपशामना का दूसरा नाम प्रशस्तकरणोपशामना है।

प्रश्न :- करणानुयोग द्वारा विशेष जानने से भी द्रव्यलिंगी मुनि अध्यात्म श्रद्धान बिना संसारी ही रहते हैं, और अध्यात्म का अनुसरण करने वाले तिर्यंचादिक को अल्प श्रद्धान से भी सम्यक्त्व प्राप्त हो जाता है, तथा 'तुषमाष भिन्नः' इतना ही श्रद्धान करने से शिवभूति नामक मुनि मुक्त हुए। अतः हमारी बुद्धि से तो विशेष विकल्पो का साधन नहीं होता। प्रयोजनमात्र अध्यात्म का अभ्यास करेंगे।

उत्तर :- जो द्रव्यलिंगी जिस प्रकार करणानुयोग द्वारा विशेष को जानता है, उसी प्रकार अध्यात्मशास्त्रो का ज्ञान भी उसको होता है, किन्तु मिथ्यात्व के उदय से (मिथ्यात्व वश) अयथार्थ साधन करता है, तो शास्त्र क्या करें ?

उपशामना के भेदों का चार्ट पृष्ठ २७५
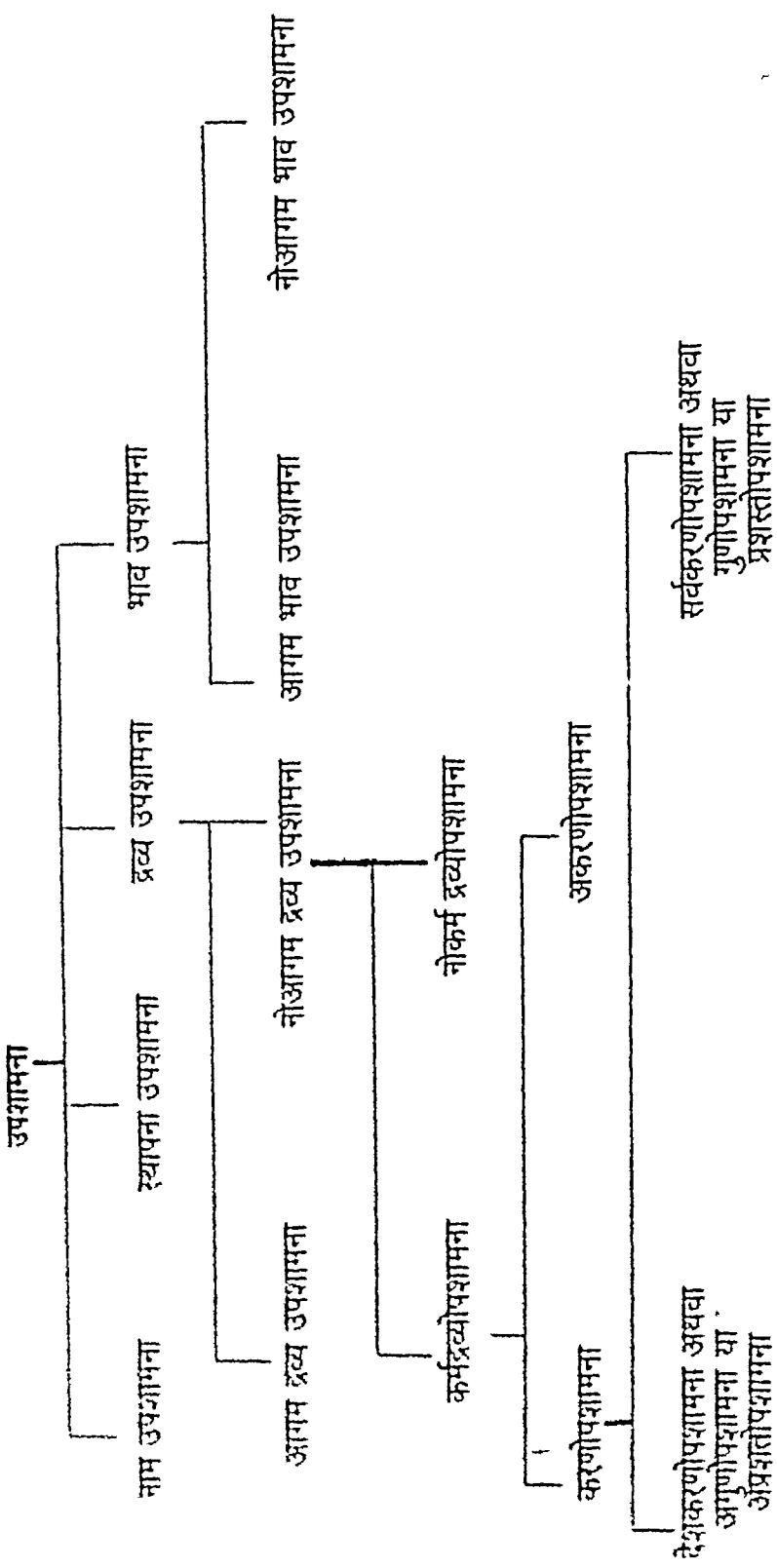
जयधवला पुस्तक - १५

(११०८) शंका - छह नोकषायो के संक्रमण होने पर जो क्रोध वेदककाल है, उसके कितने भाग हैं ?

समाधान - क्रोध वेदककाल के तीन भाग है - अश्वकर्णकरणकाल, कृष्टिकरणकाल और कृष्टिवेदककाल । - पृष्ठ १

(११०९) शंका - पूर्वस्पर्धक, अपूर्वस्पर्धक और कृष्टिकरण किसे कहते है ?

समाधान - (१) अनादि ससार अवस्था से लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थान मे अश्वकर्णकरण क्रिया के प्रारम्भ करने के पूर्व तक यह जीव जो अनुभागस्पर्धको की रचना करता है, उन्हे पूर्वस्पर्धक कहते है ।

(२) संसार अवस्था मे जो स्पर्धक कभी भी प्राप्त नही हुए, यहाँ तक कि जो स्पर्धक उपशमश्रेणि मे भी प्राप्त नही हुए, मात्र क्षपकश्रेणि में ही अश्वकर्णकरण के काल मे पूर्वस्पर्धको मे से उनके नीचे अनन्त गुणहानि रूप से अपवर्तित होकर जिन स्पर्धको की रचना यह जीव करता है, उन्हे अपूर्वस्पर्धक कहते है।

(३) जिस प्रकार स्पर्धको मे अनुभाग की अपेक्षा क्रमवृद्धि और क्रमहानि होती है, उसीप्रकार जहाँ अनुभाग रचना मे क्रमवृद्धि और क्रमहानि नही पाई जाकर यथासम्भव क्रोधादि चारो सज्वलन कषायो के पूर्वस्पर्धको और अपूर्वस्पर्धको मे से उनके नीचे प्रदेशपुज का अपकर्षण कर उत्तरोत्तर अनन्तगुणित हानिरूप से अनुभाग की रचना करना उसकी कृष्टिकरण सज्ञा है । यह कृष्टिकरण विधि अश्वकर्णकरण विधि के सम्पन्न होने के अनन्तर समय से प्रारम्भ होकर पूर्वोक्त कथन के अनुसार द्वितीय त्रिभाग मे सम्पन्न होती है । - पृष्ठ २

(१११०) शंका - परस्थान गुणकार किसे कहते है ?

समादान - जिस गुणकार से लोभ सज्वलन की प्रथम सग्रहकृष्टिकी सम्बन्धी अन्तिमकृष्टि के गुणित करने पर लोभ की दूसरी सग्रहकृष्टि की जघन्यकृष्टि उत्पन्न होती है उसे परस्थान गुणकार कहते है । - पृष्ठ ७

(११११) शका - स्वस्थान गुणकार किसे कहते है ?

समाधान - एक अन्तरकृष्टि जिसगुणकार से गुणित होकर दूसरी कृष्टि को प्राप्त होती है उसको स्वस्थान गुणकार कहते है । इसका दूसरा नाम कृष्टि अन्तर भी है । पृष्ठ १२

(१११२) शंका - स्वस्थान अल्प-बहुत्व और परस्थान अल्प-बहुत्व का स्वरूप क्या है ?

समाधान - प्रत्येक कषाय की अपनी सग्रहकृष्टियो मे प्रदेशपुज की अपेक्षा अल्पवहुत्व का विचार करना स्वस्थान अल्पबहुत्व है और विवक्षित कषाय की तीसरी सग्रहकृष्टि की अपेक्षा दूसरी कषाय की प्रथम सग्रहकृष्टि के मध्य अल्पवहुत्व का विचार करना परस्थान अल्पवहुत्व है । - पृष्ठ ८०

(१११३) शंका - समयप्रबद्ध और भवबद्ध संज्ञा किसकी है ?

समाधान - एक समय मे एक जीव के द्वारा जितने कर्मप्रदेश बन्ध को प्राप्त होते है, उनकी एक समयप्रबद्ध सज्ञा है । तथा भव के भीतर जितने समयप्रबद्ध बन्ध को प्राप्त होते है, उनकी भवबद्ध सज्ञा है । - पृष्ठ १४८

(१११४) शंका - "उदये असंछुद्धा तथा उदयेसंछुद्धा" अर्थात् असक्षुब्ध तथा संक्षुब्ध का अर्थ क्या है ?

समाधान - असक्षुब्ध का अर्थ उदीरणास्वरूप नही होना (अनुदीरित) तथा सक्षुब्ध का अर्थ उदीरणारूप होना (उदीरित) । - पृष्ठ १५२

(१११५) शंका - अन्तरकरण क्रिया सम्पन्न करने के बाद जो भी नवकबन्ध (नयाबंध) समयप्रबद्ध होता है, उसकी उदीरणा कितने काल तक नही होती ?

समधान - उसका छह आवलिकाल तक उदीरणारूप परिणमन नही होता है । - पृष्ठ१५२

(१११६) शंका - समयप्रबद्धशेष किसे कहते है ?

समाधान - समयप्रवद्ध का वेदन करने के बाद जो प्रदेशपुंज दिखलाई देता है रे उसके एक समय द्वारा उदय मे आने पर उस समयप्रवद्ध का फिर कोई अन्य कर्मप्रदेश (उदय मे आने के लिए) शेष नही रहता है, उसे समयप्रवद्ध शेष कहते है । जैसे - कर्मस्थिति के भीतर क्रम से वेदन किये जानेवाले समयप्रवद्ध का वेदन करने के वाद जो प्रदेशपुजशेष रहकर तदनन्तर समय मे निर्लेपन के अभिमुख होकर दिखाई देता है, वह समयप्रवद्धशेष कहलाता है । (स्पष्टीकरण ग्रन्थ से देखिए) - पृष्ट १६४

(१११७) शंका - भववद्धशेष का स्वरूप क्या है ?

समाधान - समयप्रवद्धशेप के समान ही भवबद्ध का स्वरूप है। इतनी विशेषता है कि एक समयप्रवद्ध के परमाणुओं को ग्रहण करके समयप्रवद्धशेष होता है परन्तु भववद्धशेष एक भवसम्वन्धी जघन्य से अन्तर्मुहूर्त प्रमाण समयप्रवद्धो के यथासम्भव उपलभ्यमान कर्म परमाणुओं के ग्रहण करके प्राप्त होता है ऐसा यहाँ कहना चाहिए। - पृष्ठ १६६

(१११८) शंका - यहाँ (विवक्षित सयमप्रबद्धशेषो और भवबद्धशेषो की विभाषा मे) निर्लेपनस्थान किसे कहते है ?

समाधान - एक समय द्वारा बन्ध को प्राप्त हुए कर्मपरमाणु वन्धावलिकाल के वीत जाने पर पश्चात् उदय प्रवेश करते हुए कितने ही काल तक समान्तर और निरन्तररूप से उदय मे आकर जिस समय सभी उदय मे आकर निकल जाते है उन विवक्षित भववद्धशेपो और समयप्रवद्धशेपो का निर्लेपनस्थान कहलाता है, क्योंकि वहाँ पर उन कर्मपरमाणुओं का पूरी तरह से निर्लेपन देखा जाता है। - पृष्ठ १६०

(१११६) शंका - असामान्यस्थिति किसे कहते है ?

समाधान - जिस किसी एक स्थितिविशेष मे जो भववद्धशेष और समयप्रवद्धशेष समान्य नही होते है, वे असामान्य कहलाते है, उनकी स्थिति को असामान्यस्थिति कहते है। - पृष्ठ १७३

(११२०) शंका - सामान्यस्थिति किसे कहते हैं ?

समाधान - जिस स्थिति मे भववद्धशेष (सामान्य) पाये जाते है, उस स्थिति को सामान्यस्थिति कहते है। - पृष्ठ १७४

(११२१) शंका - सामान्यस्थितियॉ और असामान्यस्थितियाँ कौन कहलाती है ?

समाधान - यहाँ इन दोनो के परस्पर सापेक्ष होने के कारण भववद्धशेष और समयप्रबद्धशेष के आधार रूप से समन्वित जितनी भी स्थितियॉ होती है, वे सामान्य स्थितियॉ कहलाती है और जो स्थितियॉ उन दोनो की आधार नही होती, वे असामान्यस्थितियाँ कहलाती हे। - पृष्ठ १७४

(११२२) शंका - इस स्थितिविशेष की सामान्य संज्ञा किस कारण से हो गई है ?

समाधान - क्योंकि समयप्रबद्धशेष के परमाणु तथा दूसरे परमाणु साधारणरूप से उस स्थिति मे अवस्थिति रहते है , इसलिए उसकी सामान्य सज्ञा है । - पृष्ठ १७५

(११२३) शंका - अभवसिद्धिक जीवो के योग्य विषय क्या है ?

समाधान - जहॉ भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक जीवो के योग्य स्थितिवन्ध ओर अनुभागवन्ध आदि के योग्य परिणाम सदृश होकर प्रवृत्त होते है, वह अभवसिद्धिक जीवो के योग्य विषय है, यह कहा जाता है । - पृष्ठ १८६

(११२४) शंका - वेदककाल किसे कहते हैं ?

समाधान - मिथ्यादृष्टि के वेदकसम्यक्त्व को उत्पन्न करने योग्य काल को वेदककाल कहते है ।

(११२५) शंका - चार लब्धियो तक के परिणाम क्या भव्य-अभव्य को समान होते है ?

समाधान - उपशमसम्यक्त्व के सन्मुख मिथ्यादृष्टि जीव के तथा उपशमसम्यक्त्व नही प्राप्त होनेवाले अभव्य जीव के चारो लब्धियो के परिणाम समान होते है ।

(११२६) शंका - उपसंदर्शिना किसका नाम है ?

समाधान - इयत् प्रमाण (इतने प्रमाण) अवयव कृष्टियो के अन्तरालो का उल्लघन कर पुन इयत्प्रमाण अवयव कृष्टि अन्तरालो मे उन अपूर्व कृष्टियो की निष्पत्ति होती है, इसप्रकार इस अर्थविशेष का स्पष्टीकरण करने का नाम उपसदर्शिना है । - पृष्ठ २४६

(११२७) शंका - सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियो का क्या लक्षण है ?

समाधान - वादरसाम्परायिक कृष्टियो से अनन्तगुणहानि रूप से परिणमन कर लोभ सज्वलन के अनुभाग के अवस्थान को सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टियो का लक्षण जानना चाहिए, क्योकि सवसे जघन्य वादर कृष्टि से भी नीचे अच्छी तरह अनन्तगुणहानिरूप से घटाकर सर्वोत्कृष्ट सूक्ष्मसाम्परायिक कृष्टि के अवस्थान का नियम देखा जाता है । - पृष्ट २६५

जय धवला पुस्तक - १६

(११२८) शका - सूत्र स्पर्श किसे कहते है ?

समाधान - सूत्र का स्पर्श, सूत्रस्पर्श है। पहले अर्थ-मुख से विशेषरूप से व्याख्यात गाथा सूत्रो के इस समय उच्चारणपूर्वक गाथा सूत्र के प्रत्येक पद का परामर्श (स्पष्टीकरण) करना, सूत्रस्पर्श कहलाता है। - पृष्ठ १३

(११२९) शंका - अपवर्तना संज्ञा किसकी है ?

समाधान - जिन कर्मों के देशघातिस्पर्धक होते है, उन कर्मों की अपवर्तना सज्ञा है। - पृष्ठ १८

(११३०) शका - वन्धपरिहानि का क्या अर्थ है ?

समाधान - स्थितिवन्ध की परिहानि और अनुभाग वन्ध की परिहानि के प्रमाण का निश्चय करना वन्धपरिहानि है। - पृष्ठ ४०

अर्थात् क्षपक के स्थितिबन्ध और अनुभागवन्ध की किस स्थान मे कितनी हानि होती है, उनके प्रमाण का निश्चय करना। - पृष्ठ ४२

(११३१) शका - उभयपद का क्या अर्थ है ?

समाधान - वेदकभाव से और सक्रमण करने के भाव से क्षय करता है, यह उभय पद का अर्थ है। - पृष्ठ ४६

(११३२) शंका - यह क्षपक जिन कर्मप्रदेशो का अपकर्षण करता है, वह क्या उन कर्म प्रदेशो को तदनन्तर समय मे उदीरणा द्वारा प्रवेशक होता है ?

समाधान - जिन कर्मप्रदेशो का पहले समय मे अपकर्षण किया है, उनका सदृश अथवा असदृशरूप से उदीरणा द्वारा प्रवेशक होता है। - पृष्ठ ६३

(११३३) शंका - सदृश और असदृश इस नाम की संज्ञा का क्या अर्थ है ?

समाधान - उदय मे प्राप्त होने वाली अनन्त कृष्टियाँ यदि सभी कृष्टियाँ एक कृष्टिरूप से परिणमन करके उदय को प्राप्त होती है, तो उनकी सदृश सज्ञा होती है। तथा यदि अनन्त कृष्टियो को अपकर्षित करके उदय को प्राप्त हुए परमाणु यदि अनन्त कृष्टिरूप होकर स्थित रहते है, तव वे असदृश सज्ञावाले कहे जाते है। - पृष्ठ ६६

(११३४) शंका - एक वेद्यमान कृष्टि मे अवेद्यमान अनन्त कृष्टियो का संक्रमण होना संभव है या नही ?

समाधान - जो नियम से उदयावलि मे पहले प्रविष्ट हुई विवक्षित संग्रहकृष्टि सबंधी अधस्तन और उपरिम असख्यातवे भाग को विषय करनेवाली अनन्त अवेद्यमान कृष्टियॉ वेद्यमान मध्यम कृष्टि रूप से परिणमती है । - पृष्ठ ८४

(११३५) शंका - उदीर्यमान अनन्त भेद से भेद को प्राप्त हुई कृष्टियो मे अनुदीर्यमान अधस्तन और उपरिम एक - एक कृष्टि संक्रमित हो सकती है या नही ?

समाधान - अनन्त भेद से भेद को प्राप्त हुई उन उदीर्यमान कृष्टियो के रूप से अवेद्यमान अधस्तन और उपरिम कृष्टि परिणमती है, क्योंकि ये अधस्तन और उपरिम कृष्टि अपने स्वरूप का त्याग करके मध्यम कृष्टि रूप से परिणम जाती है, अर्थात् पररूप से फल देती हैं । यही यहॉ सक्रम का अर्थ विवक्षित है। - पृष्ठ ८३

(११३६) शंका - एक कृष्टि का अनन्त कृष्टि रूप से परिणमना विरुद्ध है ?

समाधान - नही, क्योंकि वह एक कृष्टि है, सदृश धनवाले अनन्त परमाणुओं से वनी है, इसलिये उस एक का भी अनन्त कृष्टियो मे समय के अविरोधपूर्वक परिणमन की सिद्धि मे कोई बाधा नही पाई जाती है । - पृष्ठ ८३

(११३७) शंका - सूक्ष्मक्रिया अप्रतिपातीध्यान का क्या फल है ?

समाधान - योग के आस्रव का अत्यन्त निरोध करना, इसका फल है, क्योंकि सूक्ष्मतर कायपरिस्पन्द का भी यहॉ पर अन्वय के बिना निरोध देखा जाता है । - पृष्ठ १७६

(११३८) शंका - समस्त पदार्थों को विषय करनेवाले ध्रुव उपयोग से परिणत केवली जिन मे एकाग्रचिन्तानिरोध का होना असम्भव है, इसलिये इष्ट होने से ध्यान की उत्पत्ति नही हो सकती ?

समधान - यह कहना सत्य है, क्योंकि जिन्होंने समस्त पदार्थों का साक्षात्कार किया है और जो क्रमरहित उपयोग से परिणत है, ऐसे सर्वज्ञदेव के एकाग्रचिन्तानिरोधलक्षण ध्यान नही वन सकता, क्योंकि यह अभीष्ट है । किन्तु योग के निरोधमात्र से होनेवाले कर्मास्रव के निरोधलक्षण ध्यान फल की प्रवृत्ति को देखकर उसप्रकार के उपचार की कल्पना की है, इसलिये कुछ भी हानि

नही है । अथवा चिन्ता का हेतु होने से भूतपूर्वपने की अपेक्षा चिन्ता का नाम योग है, उसके एकाग्रपने से निरोध करना एकाग्रचिन्तानिरोध है । इसप्रकार के व्याख्यान का आश्रय करने से यहाँ ध्यान स्वीकार किया है, इसलिये कोई दोष नही है । कहा भी है -

छद्मस्थो का एक वस्तु मे अन्तर्मुहूर्त कालतक चिन्ता का अवस्थान होना ध्यान है, परन्तु केवली जिनो का योग का निरोध करना ही ध्यान है । - पृष्ठ १७६-१८०

(११३९) शंका - अयोगीकेवली भगवान शैलेशपद को प्राप्त करते हैं, तो शैलेश का क्या अर्थ है ?

समाधान - शीलो के ईश को शीलेश कहते है । उसका भाव शैलेश्य है । 'समस्त गुण और शीलो के एकाधिपतिपने की प्राप्ति' यह इसका भाव है । - पृष्ठ १८३

(११४०) शंका - अयोगकेवली गुणस्थान का काल किसका काल है और कितना है ?

समाधान - शैलेशपद का काल है और वह अ, इ, उ, ऋ, लृ - इन पॉच ह्रस्व अक्षरो के उच्चारण मे जितना काल लगता है, उतना काल है । - पृष्ठ १८५

(११४१) शका - समस्त कर्मों के क्षय होते ही जीव सिद्धालय मे कैसे जाता है ?

समाधान - वह जीव पूर्वप्रयोग, असगपना, बन्धच्छेद तथा ऊर्ध्वगौरवरूप धर्म के कारण लोक के अन्त तक जाता है ।

(१) जिसप्रकार कुम्हार के चक्र मे, हिडोला मे और वाण मे, पूर्वप्रयोग आदि कारणवश क्रिया होती है, उसीप्रकार सिद्धगति जाननी चाहिये ।

(२) जिसप्रकार पानी मे मिट्टी के लेप का सम्बन्ध छूट जाने से तूबडी की ऊर्ध्वगति देखी जाती है, उसीप्रकार कर्मो के वन्धन के पूरी तरह से विच्छिन्न हो जाने के कारण सिद्धो की ऊर्ध्वगति ज़ाननी चाहिये ।

(३) एरण्ड की बोडी के फूटने पर बन्धन के छिन्न होने से जिसप्रकार एरण्ड के बीज की ऊर्ध्वगति होती है, उसीप्रकार कर्मवन्धन का विच्छेद होने से सिद्धो को भी ऊर्ध्वगति स्वीकार की गई है ।

(४) जिनेन्द्रदेव ने जीवो को ऊर्ध्वगौरवधर्म वाला और पुद्गलो को अधोगौरवधर्म वाला कहा है । - पृष्ठ १९१-१९२ विस्तार के लिए ग्रन्थ देखिए ।

(११४२) शंका - संसारी जीव निज पुरुषार्थ द्वारा दुःखो से मुक्त होकर पूर्ण सुख को प्राप्त होता है, तब क्या-क्या प्रगट होता है ?

समाधान - अगणित विशेषातायें प्रगट होती है, उनमे से कुछ दर्शाता हूँ ।

(१) अनादि काल से एकक्षेत्रावगाह रूप से चले आ रहे कर्मों के सम्बन्ध से परतन्त्र हुआ यह अज्ञानी जीव सारथि बनकर संसार रूपी चक्रपर आरूढ़ हुआ घूमता रहता है ।

(२) किन्तु जो भव्यात्मा है और जिसने आत्मा के अस्तित्व को प्राप्त कर लिया है, वह अन्तरग और बहिरग हेतुओं के द्वारा मुक्ति के कारण रूप सम्यग्दर्शन रूपी सच्चे रत्न को प्राप्त करता है ।

(३) मै ज्ञान दर्शनरूप चेतनमूर्ति आत्मा हूँ । आस्रवादि सात तत्वो को जिसने भले प्रकार जान लिया है। ऐसे मुमुक्षु ने हेय और उपादेय तत्वो को जान लिया है, शुभभावनावाला है, ससारिक भोगो से बार - बार विरक्त होता है ।

(४) मिथ्यात्वरूपी कीचड के दूर होने से जिसका मानस अत्यन्त प्रसन्न हुआ है, वह इस कारण जीवादि पदार्थो के यथार्थपने को जानने मे समर्थ होता है ।

(५) गर्भसूची के विनष्ट हो जाने पर जैसे बालक मर जाता है, वैसे ही मोहनीय कर्म के क्षय हो जाने पर समस्त कर्म क्षय को प्राप्त हो जाते है ।

(६) जिसप्रकार बीज के दग्ध हो जाने पर उससे अकुर सर्वथा उत्पन्न नही होता, उसीप्रकार कर्म रूपी बीज के जल जाने पर भवरूपी अकुर की उत्पत्ति नही होती ।

(७) लोक के अग्रभाग मे जो पृथिवी अवस्थित है, वह छोटी है, मनोज्ञ है, सुगन्धित है, पवित्र है और अत्यन्त दैदीप्यमान है । उसका नाम प्राग्भार है ।

(८) मनुष्यलोक के समान विस्तार वाली है, सफेद छत्र के समान है और शुभ है । उस पृथिवी के ऊपर लोक के अग्रभाग मे सिद्ध भगवान विराजमान है ।

(९) सिद्धो का सुख ससार सम्बन्धी विषयो से रहित, अविनाशीक, अव्याबाध और सर्वोत्कृष्ट होता है - ऐसा परम ऋषियो ने कहा है । - पृष्ठ १९०-१९३ विशेष के लिए ग्रन्थ देखिए ।

(११४३) शंका - शरीररहित और आठ कर्मों का नाश करनेवाले मुक्त जीव के सुख कैसे हो सकता है ?

समाधान - इस लोक मे चार अर्थो मे सुख शब्द प्रयुक्त होता है । (१) इष्ट विषय की प्राप्ति मे (२) वेदना के अभाव मे, (३) साता वेदनीय आदि कर्मो के विपाक मे, (४) मोक्ष की प्राप्ति मे ।

अग्नि - सुखरूप है,वायु सुख रूप है । यहाँ इष्टविषयो की प्राप्ति का सुख कहा जाता है । दु ख के अभाव मे पुरुष कहता है कि मै सुखी हूँ । ये वेदना के अभाव मे सुख कहा है।

पुण्य कर्म के उदय से इन्द्रियॉ और इष्ट पदार्थों की अनुकूलता से सुख उत्पन्न होता है । यहॉ विपाक अर्थ मे सुख शव्द का प्रयोग हुआ है । तथा कर्मक्लेश के अभाव से मोक्ष मे सर्वोत्कृष्ट सुख होता है । यहॉ मोक्ष मे सुख शव्द का प्रयोग हुआ है ।

समस्त लोक मे मोक्षसुख के समान अन्य कोई भी पदार्थ नही पाया जाता जिसके साथ उस मोक्षसुख की उपमा दी जाय, इसलिये वह निरुपम (उपमारहित) सुख है । - पृष्ठ १६४

लब्धिसार

प० प्रवर टोडरमल जी कृत टीका मे से

(११४४) शंका - अविभाग प्रतिच्छेद किसे कहते है ?

समाधान - शक्ति के अविभागी अश को अविभाग प्रतिचछेद कहते है । पृष्ठ ६

(११४५) शंका - वर्ग किसे कहते है ?

समाधान - अविभ्भागीप्रतिच्छेदो के समूह से युक्त प्रत्येक परमाणु है, उसका नाम वर्ग है । - पृष्ठ ६

(११४६) शंका - वर्गणा किसे कहते हैं ?

समाधान - वर्गों के समूह को वर्गणा कहते है । - पृष्ठ ६

(११४७) शंका - एक वर्गणा मे कितने वर्ग होते है ?

समाधान - अनन्त वर्ग होते हैं । - धवला पु १२ पृष्ठ ६४

(११४८) शंका - कर्म की विवक्षा मे जघन्य वर्ग और जघन्य वर्गणा किसे कहते हैं?

समाधान - स्तोक (कम) अनुभागयुक्त परमाणु का नाम जघन्यवर्ग है और उनके समृह का नाम जघन्यवर्गणा है । - पृष्ठ ६

(११४९) शंका - द्वितीयवर्गणा किसे कहते है ?

समाधान - जघन्यवर्ग से एक अधिक अविभागप्रतिच्छेद युक्त जो वर्ग उसके समूह को द्वितीयवर्गणा कहते है। - पृष्ठ ६

(११५०) शंका - स्पर्धक किसे कहते है ?

समाधान - क्रम से जो स्पर्धा करता है अर्थात् बढ़ता है, उसे स्पर्धक कहते है अथवा वर्गणाओं के समूह को स्पर्धक कहते है। धवला पु.१२ पृष्ठ ९५

(११५१) शंका - स्पर्धक कब होता है ?

समाधान - पुन इसको ऊठाकर प्रथम वर्गणा के आगे रखने पर द्वितीय वर्गणा होती है। इस पकार उत्तरोत्तर एक, एक अविभागप्रतिच्छेद की अधिकता के क्रम से आगे, आगे अभव्यसिद्धो से अनन्तगुणी और सिद्धो के अनन्तवे भाग मात्र वर्गणाओं के उत्पन्न होने तक तृतीय, चतुर्थ व पंचम आदि उत्पन्न कराना चाहिए। इतनी मात्र वर्गणाओं को ग्रहण कर जघन्य स्थान का एक स्पर्धक होता है। धवला पु.९२ पृष्ठ ९५

(११५२) शंका - जघन्य स्पर्धक किसे कहते है ?

समाधान - इसी क्रम से (द्वितीय वर्गणा के बाद) एक - एक अविभागप्रतिच्छेद अधिक वर्गो के समूह रूप वर्गणा जहॉ प्राप्त हो, वहॉ उन वर्गणाओं को जघन्यस्पर्धक कहते है। - पृष्ठ ६

(११५३) शंका - द्वितीय स्पर्धक की प्रथम वर्गणा कब होती है ?

समाधान - जघन्य वर्ग से दूना अविभागप्रतिच्छेदयुक्त वर्गो के समूह रूप द्वितीय स्पर्धक की प्रथम वर्गणा होती है। - पृष्ठ ६.७

(११५४) शंका - द्वितीय स्पर्धक कब होता है ?

समाधान - उसके ऊपर (प्रथम वर्गणा के ऊपर) एक-एक अविभागप्रतिच्छेद अधिक क्रम से जो वर्ग उनके समूह रूप वर्गणा जहॉ तक हो, वहॉ उन वर्गणाओं के समूह रूप द्वितीय स्पर्धक होता है। - पृष्ठ ७

(११५५) शंका - गुणहानि किसे कहते है ?

समाधान - स्पर्धको के समूह को गुणहानि कहते है या जिसमे गुणकार रूप से हीन-हीन द्रव्य पाया जाय, उसे गुणहानि कहते है। - पृष्ठ ७

(११५६) **शंका - नानागुणहानि किसे कहते हैं ?**

समाधान - गुणहानियो के प्रमाण को नानागुणहानि कहते है । - पृष्ठ ७

(११५७) **शका - गुणहानि आयाम किसे कहते हैं ?**

समाधान - एक गुणहानि के समयो के समूह को गुणहानि आयाम कहते है । धवला पु १३

(११५८) **शंका - अन्योन्याभ्यस्तराशि किसे कहते हैं ?**

समाधान - नाना गुणहानि प्रमाण दुए रखकर उन्हे परस्पर मे गुणने से जो प्रमाण होता है उसे अन्योन्याभ्यस्तराशि कहते है । - धवला पु १३

(११५९) **शंका - समयोग परिणाम क्या है ?**

समाधान-लोकपूरणसमुद्घातगत के समय मे योगो की एक वर्गणा है । पूर्व मे आत्मा के प्रदेशो मे हीनाधिक योगो के अविभाग प्रतिच्छेद थे। इहाँ आत्मा के सर्व प्रदेशो मे समान प्रमाण लीए योगो के अविभाग प्रतिच्छेद हुए, इसी का नाम समयोग परिणाम है । लब्धिसार पृष्ठ ७३८, गाथा ६२६ विशेष के लिए ग्रन्थ देखिए।

(११६०) **शंका - अधःस्थितिगलना किसे कहते हैं ?**

समाधान - नीचे की स्थितियो का एक-एक समय मे एक-एक निषेक क्रम से उदय रूप होकर निर्जरता है, उसे अध स्थितिगलना कहते है । - लब्धिसार पृष्ठ ७५६ गा ६४५

(११६१) **शंका - प्रदेशबंधापसरण किसे कहते है ?**

समाधान - प्रदेशवधयोगो के अनुसार होता है, इसलिए योगो की चचलता हीन होने से प्रदेशवध कम होता है, उसे ही प्रदेशवधापसरण कहते है । - पृष्ठ १६

(११६२) **स्थितिबंधापसरण किसे कहते हैं ?**

समाधान - स्थितिबध कषायो के अनुसार होता है, इसलिए मिथ्यात्व, कषायादिक की हीनता से स्थितिबध घटता है । स्थितिबध का क्रम से घटना स्थितिबधापसरण है, अर्थात् पूर्व मे जितना स्थिति बध होता था, उससे वर्तमान् काल मे हीन स्थितिबध होता है । - पृष्ठ १६

(११६३) शंका - स्थिति बंध किसप्रकार होता है ?

समाधान - नरक बिना तीन आयु का स्थितिबध विशुद्धता से अधिक होता है और अन्य सर्व शुभाशुभ प्रकृतियो का स्थितिबध सक्लेशता से तो अधिक होता है और विशुद्धता से स्तोक होता है। - पृष्ठ १७

(११६४) शंका - अनुभागबंध किसप्रकार होता है ?

समाधान - पाप प्रकृतियो का अनुभागबध सक्लेश से अधिक और विशुद्धि से हीन होता है, पुण्य प्रकृतियो का अनुभागबध सक्लेश से हीन और विशुद्धि से अधिक होता है। - पृष्ठ १७

(११६५) शंका - स्वमुख उदय से सत्त्वनाश किसे कहते है ?

समाधान - जो प्रकृति अपने ही रूप रहकर अपनी स्थितिसत्त्व का अतिम निषेक के उदय होने पर अभाव को प्राप्त होती है, उसे स्वमुख उदय सत्त्वनाश कहते है। जैसे - सज्वलन लोभ क्षपक के सूक्ष्मसापराय गुणस्थान के अत मे अपने रूप से उदय होकर नष्ट हो जाती है। - पृष्ठ १७

(११६६) शंका - परमुख उदय से सत्त्वनाश किसे कहते है ?

समाधान - जो प्रकृति अन्य प्रकृति रूप संक्रमित होकर अभाव को प्राप्त होती है, उसे परमुख उदय सत्त्वनाश कहते है। जैसे - अनतानुवन्धी कषाय का विसयोजन होने से अनतानुवन्धी कषाय स्वजाति अन्य इक्कीस कषायरूप परिणमन कर नष्ट हो जाती है। - पृष्ठ १८

(११६७) शंका - स्थितिकांडक या स्थितिखण्ड किसे कहते है ?

समाधान - ऊपर के निषेको को क्रम से नीचे के निषेको रूप परिणमा कर स्थिति को घटाना, उसे स्थितिकाडक या स्थितिखड कहते है। - पृष्ठ १९

(११६८) शंका - स्थितिकांडक आयाम किसे कहते है ?

समाधान - (इस) एक काडक मे निषेको का नाशकर जितनी स्थिति घटाई, उसके प्रमाण का नाम स्थितिकाडक आयाम है। - पृष्ठ १९

(११६९) कांडक द्रव्य किसे कहते है ?

समाधान - (उपरोक्त) उनके नाश करने योग्य निषेको का जो सम्पूर्ण द्रव्य उसका नाम काडक द्रव्य है। स्थितिकाडकायाम मे जिन निषेको की स्थिति घटाई थी उन निषेको के सम्पूर्ण द्रव्य का नाश करना। - पृष्ठ १९

(११७०) शंका - कांडकोत्करण या कांडकघात किसे कहते हैं ?

समाधान - (अतिस्थापनावली के निषेको के विना) अन्य अवशेष स्थिति के निषेको मे उस काडक द्रव्य को मिलाना, उसका नाम काडकोत्करण या काडकघात है। - पृष्ठ २०

(११७१) शंका - काडकोत्करणकाल किसे कहते है ?

समाधान - एक काडक का उत्कर्षण अन्तर्मुहूर्त काल मे पूर्ण होता है, उसका नाम काडकोत्करण काल है। - पृष्ठ २०

(११७२) शका - अपकृष्ट द्रव्य किसे कहते है ?

समाधान - विवक्षित कर्म प्रकृति के सर्व निपेक सवधी सर्व परमाणु उनमे अपकर्षण भागहार का भाग देने पर एक भाग मात्र परमाणु को ग्रहण करना, उसका नाम अपकृष्ट द्रव्य है। - पृष्ठ२०

(११७३) शंका - अतिस्थापना किसे कहते है ?

समाधान - कर्म परमाणुओं मे उत्कर्षण-अपकर्षण होते समय उनका अपने से ऊपर की या नीचे की जितनी स्थिति मे निक्षेप नही होता, वह अतिस्थापनारूप स्थिति कहलाती है। अर्थात् कर्म परमाणुओं का उत्कर्षण होते समय तो उनका अपने से ऊपर की जितनी स्थिति मे निक्षेप नही होता, वह अतिस्थापना रूप स्थिति है। - जयधवला पुस्तक ७, पृष्ठ २५०

इसी तरह जिन स्थितियो मे अपकर्षित द्रव्य दिया जाता है, उनकी निक्षेप सज्ञा है तथा निक्षेपरूप स्थितियो के ऊपर तथा जिस स्थिति के द्रव्य का अपकर्षण होता है, उससे नीचे जिन मध्य की स्थितियो मे अपकर्षित द्रव्य नही दिया जाता, उनकी अतिस्थापना सज्ञा है।

(११७४) शंका - गलितावशेष गुणश्रेणि आयाम किसे कहते है ?

समाधान - जितने निषेको मे असख्यात गुणश्रेणिरूप से प्रदेशो का निक्षेपण होता है, वह गुणश्रेणि आयाम कहलाता है। यह गुणश्रेणि आयाम भी दो प्रकार का होता है। (१) गलितावशेप, (२) अवस्थित (देखो चित्र पृष्ठ २८३लब्धिसार) गलितावशेप गुणश्रेणि -- गुणश्रेणिप्रारम्भ करने के प्रथम समय मे जो गुणश्रेणि आयाम का प्रमाण था उसमें से एक-एक समय व्यतीत होते -होते उसके द्वितीयादि ममयो मे गुणश्रेणि आयाम क्रम से एक-एक निषेक घटता हुआ शेष रहता है, उसका नाम गलितावशेष है। - पृष्ठ २२

इसे गलितावशेष गुणश्रेणियाम भी कहते है। ध पु पृष्ठ २३०

(११७५) शंका - गुणश्रेणि शीर्ष किसे कहते है ?

समाधान - गुणश्रेणि आयाम के अन्त के बहुत निषेको का नाम कही गुणश्रेणि शीर्ष कहा है। तो कही अत के एक निषेक का ही नाम गुणश्रेणि शीर्ष है। उपरिवर्ती अग का नाम शीर्ष है। - पृष्ठ २२

(११७६) शंका - अन्तरकरण द्रव्य और उपशमकरणद्रव्य किसे कहते है ?

समाधान - ऊपर के और नीचे के निषेको को छोड़कर बीच के कितने ही निषेको का अभाव करना उसका नाम अतरकरण है। इसलिए अभाव किये निषेको के परमाणुओं का नाम अन्तकरण द्रव्य है। तथा उदय मे आने के अयोग्य किये परमाणुओं का नाम उपशमद्रव्य है। - पृष्ठ २५-२६

(११७७) शंका - आयाम किसे कहते है ?

समाधान - आयाम अर्थात् लम्बाई काल के समय भी एक साथ नही होते है, इसलिए काल के प्रमाण को आयाम नाम दिया है। अथवा कही ऊपर-ऊपर रचना होती है, वहाँ उसके प्रमाण को आयाम कहा है। जैसे - स्थिति के प्रमाण का नाम स्थिति आयाम है। स्थितिकाडक के निषेको के प्रमाण का नाम स्थितिकाडकायाम है। अन्तरकरण मे जितने निषेको का अभाव किया है, उसका नाम अतरायाम है। गुणश्रेणि के निषेको का अभाव किया है, उसका नाम अतरायाम है। गुणश्रेणि के निषेको के प्रमाण का नाम गुणश्रेणि आयाम है। इसीप्रकार अन्य का भी जानना। - पृष्ठ २६

(११७८) शंका - गुणसंक्रमण किसे कहते है ?

समाधान - समय - समय मे गुणकार रूपसे विवक्षित प्रकृति के परमाणुओं का अन्य प्रकृति रूप सक्रमण (बदलना) उसे गुणसक्रमण कहते है। - पृष्ठ २६

(११७९) शंका - आगाल तथा प्रत्यागाल किसे कहते है ?

समाधान - विवक्षित कर्म की द्वितीय स्थिति के निषेको के द्रव्य का अपकर्षण करके प्रथम स्थिति के निषेको मे मिलाने को आगाल कहते है तथा प्रथम स्थिति के निपेको के द्रव्य का उत्कर्षण करके द्वितीय स्थिति के निषेको मे मिलाने को प्रत्यागाल कहते है। - पृष्ठ २८

(११८०) शंका - विवक्षित कर्म की आगाल, प्रत्यागाल क्रिया कब होती है ?

समाधान - उपशमक तथा क्षपक के अनिवृत्तिकरण के काल के अन्त मे आगालप्रत्यागाल क्रिया होती है।

(११८१) शंका - आवली या उदयावली किसे कहते है ?

समाधान - वर्तमान समय से लेकर एक आवली मात्र काल को आवली कहते है तथा उतने काल सवन्धी निषेको को भी आवली या उदयावली कहते हैं। असख्यात समय की एक आवली होती है। - पृष्ठ २८

(११८२) शंका - द्वितीयावली या प्रत्यावली किसे कहते है ?

समाधान - (ऊपर कही जो आवली) उसके उपरिवर्ती जो आवली है, उसे द्वितीयावली या प्रत्यावली कहते है। - पृष्ठ २८

(११८३) शंका - वंधावली या अचलावली किसे कहते है ?

समाधान - वन्ध समय से लेकर आवली पर्यत उदीरणादि क्रिया नही हो सकती उसी को वधावली या अचलावली कहते हैं। - पृष्ठ २८

(११८४) शंका - आवाधावली किसे कहते हैं ?

समाधान - आवली से अधिक आवाधा होवे तो उसका अपकर्षण होकर के एक आवली काल शेष रहता है, उसको आवाधावली कहते है। - पृष्ठ २८

(११८५) शंका - उच्छिष्टावली किसे कहते हैं ?

समाधान - स्थितिसत्त्व घटने पर जो आवली मात्र स्थिति अवशेष रह जाती है उसी को उच्छिष्टावली कहते है। - पृष्ठ २८

(११८६) शंका - संक्रमणावली और उपशमावली किसे कहते हैं ?

समाधान - जिस आवली काल मे सक्रमण पाया जाता है, उसे सक्रमणावली कहते है और उपशमन पाया जाता है, उसे उपशमनावली कहते है। - पृष्ठ २६

(११८७) शंका - अन्त· कोटाकोटी किसे कहते हैं ?

समाधान - विविक्षित प्रमाण से कुछ कम को यहॉ अत· कहा है। कोड़ाकोड़ी सागरोपम को संख्यात कोटियों से खडित करने पर जो एक खण्ड होता है, वह अन्त कोड़ाकोड़ी सागर का अर्थ है। ध पु ६ पृष्ठ १७४

अथवा कोड़ीकोडी के नीचे और कोडि से ऊपर की सख्या को अन्त कोटाकोटी कहते है। - पृष्ठ २६,क्षपणासार पृष्ठ २१

(११८८) शंका - अंतर्दिवस किसे कहते है ?

समाधान - (एक) दिन से कुछ कम को अन्तर्दिवस कहते है। - पृष्ठ २६

(११८६) शंका - उष्ट्रकूट रचना किसे कहते है ?

समाधान - जिसप्रकार ऊँट की पीठ पिछले भाग में पहले ऊँची होती है, पुनः मध्य मे नीची होती है, फिर आगे नीचीऊँची होती है। उसीप्रकार दिया जाने वाला द्रव्य कही हीन, कही अधिक दिया जाता है, उसे उष्ट्रकूट रचना कहते है।-पृष्ठ २१। जैसे - प्रदेशो के निषेक आदि मे बहुत होकर फिर थोड़े रह जाते है। पुन· सन्धि विशेषो मे अधिक और (फिर) हीन होता है, इस कारण से यहाँ पर होने वाली प्रदेशश्रेणी की रचना को उष्ट्रकूटश्रेणी कहा है। क.पा.सु.पृष्ठ ८०३, ज.ध.२०५६-६४

(११६०) शंका - गुणश्रेणि आयाम किसे कहते हैं ?

समाधान - जिन निषेको मे गुणकार क्रम से अपकर्षित द्रव्य किया जाता है, अर्थात् दिया जाता है, उन निषेको का नाम गुणश्रेणि निक्षेप है। उन निषेको की सख्या का प्रमाण ही गुणश्रेणि आयाम है। - पृष्ठ ४६ गा ५५

(११६१) शंका - क्षुद्रभव ग्रहण किसे कहते है ?

समाधान - सवसे छोटे भव ग्रहण को क्षुद्रभव कहते है और यह एक उच्छ्वास के (सख्यात आवली समूह से निष्पन्न) साधिक अठारहवे भाग प्रमाण होता हुआ सख्यात आवलि सहस्र प्रमाण होता है। - पृष्ठ ३०३

सख्यात हजार कोडाकोड़ी प्रमाण आवलियो के द्वारा एक उच्छ्वास निष्पन्न होता है और उसके कुछ कम १८ वे भाग प्रमाम (१$\frac{१७}{६}$ **वाँ भाग) यह क्षुल्लक** भव ग्रहण होता है। ज ध मूल पृष्ठ १६३०

क्षपणासार

(११६२) शंका - अधस्तन कृष्टि किसे कहते है ?

समाधान - प्रथम, द्वितीय आदि कृष्टियो को अधस्तन कृष्टि कहते है। - पृष्ठ ११५

(११६३) शंका - उपरितन कृष्टि किसे कहते हैं ?

समाधान - चरम, द्विचरम आदि कृष्टियो को उपरितन कृष्टि कहते है।- पृष्ठ ११५

(११६४) शंका - अनुसमयापवर्तन किसे कहते है ?

समाधान - जहा प्रति समय अनन्त गुणे क्रम से अनुभाग घटाया जाय, वह अनुसमयापवर्तन कहलाता है। पूर्व समय मे जो अनुभाग था, उसको अनन्त का भाग देने पर बहुभाग का नाश करके एक भाग मात्र अनुभाग अवशेष रखता है। ऐसे समय-समय अनुभाग का घटाना हुआ, अत इसका नाम अनुसमयापवर्तन है। कहा भी है-कि उत्कीरणकाल के बिना एक समय द्वारा ही जो घात होता है, वह अनुसमयापवर्तना है। (धवला १२पृष्ठ३२) अर्थात् 'प्रति समय कुल अनुभाग के अनन्त बहुभाग का अभाव करना, अनुसमयापवर्तना है। - पृष्ठ १६७-१३४

(११६५) शका - आयद्रव्य और व्ययद्रव्य किसे कहते है ?

समाधान - जिस प्रकार लोक-व्यवहार मे जमा-खर्च कहा जाता है। उसी प्रकार यहॉ आयद्रव्य और व्ययद्रव्य रूप कथन करते है। अन्य सग्रह कृष्टियो का जो द्रव्य सक्रमण करके विवक्षित सग्रहकृष्टि मे आया (प्राप्त हुआ), उसे आय द्रव्य कहते है। और विवक्षित सग्रहकृष्टि का द्रव्य सक्रमण करके अन्य सग्रह कृष्टियो मे गया, उसे व्ययद्रव्य कहते है। - पृष्ठ १२१

(११६६) शंका - आवर्जितकरण किसे कहते हैं ?

समाधान - केवलि समुद्घात के अभिमुख होने को आवर्जितकरण कहते है। अर्थात् केवलि समुद्घात करने के लिए जो आवश्यक तैयारी की जाती है, उसे शास्त्रकारो ने आवर्जितकरण सज्ञा दी है। इसके बिना केवलि समुद्घात का होना सभव नही है। अत पहले अन्तर्मुहूर्त तक केवली आवर्जितकरण करते है। - पृष्ठ १६८

(११६७) शंका - काण्डक किसे कहते हैं ?

समाधान - अन्तर्मुहूर्त मात्र फालियो का समूह रूप 'काण्डक' है। - पृष्ठ ४८

(११६८) शंका - परस्थान संक्रमण किसे कहते है ?

समाधान - निकटतम अन्य कषाय की प्रथम सग्रह कृष्टि मे विवक्षितकषाय के द्रव्य का सक्रमण करना परस्थान सक्रमण कहलाता है। - पृष्ठ १२०-१३६

(११६९) शंका - शैलेश अवस्था कहॉ संभवती है ?

समाधान - गया है योग जिनका ऐसे अयोग केवली जिन समस्त शीलगुणो के स्वामी होने से शैलेश अवस्था को प्राप्त हो गये है। यद्यपि सयोगी जिन के

समस्त शीलगुणो का स्वामीपना पाया जाता है, परन्तु योगो का आस्रव पाया जानेसे सकल सवर नही होता है, इसलिए शैलेश अवस्था नही होती और अयोगी जिन के योगास्रव न होने से सकल सवर होता है, इसलिए शैलेश अवस्था होती है। - लब्धिसार सा पृष्ठ ७६०, गाथा ६४७

(१२००) शंका - दीयमान द्रव्य किसे कहते है ?

समाधान - विवक्षित सत्तारूप निषेक था, उसमे नवीन परमाणु और मिलाना उसका नाम दीयमान द्रव्य है। - पृष्ठ २६

(१२०१) शंका - दृश्यमान द्रव्य किसे कहते है ?

समाधान - पहले सत्ता थी और नवीन परमाणु मिलाये, इन सब परमाणुओं के समूह का नाम दृश्यमान द्रव्य है। - पृष्ठ २६

(१२०२) शंका - कृष्टियो के नीचे ऊपर के स्पर्धक किसे कहते है ?

समाधान - सर्वत्र थोड़े अनुभाग युक्त स्पर्धको की तो नीचे रचना जानना और बढ़ते अनुभाग युक्त स्पर्धको की ऊपर रचना जानना। उसकी अपेक्षा स्पर्धको को कृष्टिओं के नीचे-ऊपर वाले कहते है। - पृष्ठ २५

हे स्थूलबुद्धि ! तूने व्रतादि शुभ कार्य कहे, वे करने योग्य ही है; किन्तु वे सर्व सम्यक्त्व बिना ऐसे हैं जैसे - अंक बिना बिंदी, और जीवादिक का स्वरूप जाने बिना सम्यक्त्व का होना ऐसा जैसे - बाँझ का पुत्र; अत: जीवादिक जानने के अर्थ इस शास्त्र का अभ्यास अवश्य करना।

तथा तूने जिस प्रकार व्रतादिक शुभ कार्य कहे और उनसे पुण्यबन्ध होता है; उसी प्रकार जीवादिक जाननेरूप ज्ञानाभ्यास है, वह प्रधान शुभ कार्य है। इससे सातिशय पुण्य का बन्ध होता है और उन व्रतादिक मे भी ज्ञानाभ्यास की ही मुख्यता है।

गुणहानि सख्या	चय प्रमाण	सख्या (४८) निषेक	प्रत्येक गुणहानि के द्रव्य का जोड़
६ गुणहानि	१	९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६	१००
५ गुणहानि	२	१८ २० २२ २४ २६ २८ ३० ३२	२००
४ गुणहानि	३	३६ ४० ४४ ४८ ५२ ५६ ६० ६४	४००
३ गुणहानि	४	७२ ८० ८८ ९६ १०४ ११२ १२० १२८	८००
२ गुणहानि	५	१४४ १६० १७६ १९२ २०८ २२४ २४० २५६	१६००
१ गुणहानि	६	२८८ ३२० ३५२ ३९८ ४१६ ४४८ ४८० ५१२	३२००

(१२०३) शंका - कुछ कम डेढ़ गुणहानि गुणित समयप्रवद्ध प्रमाण परमाणु सत्ता मे रहते है इसका स्पष्टीकरण कीजिए ?

समाधान - इस रचना मे सवसे नीचे का खाना प्रथम गुणहानि का है । उसके ५१२ से लेकर २८८ परमाणुओं का एक निषेक उदय मे आकर खिर जाता है। फिर दूसरे समय मे ४८० परमाणुओं का दूसरा निषेक उदय मे आकर खिर जाता है । फिर तीसरे समय मे ४४८ का तीसरा निपेक, चौथे समय मे ४१६ का चौथा निषेक, पाचवे समय मे ३६८ का पाचवा निपेक, छट्टे समय मे ३५२ का छट्ठा निपेक, सातवे समय मे ३२० का सातवा निषेक, आठवे समय मे २८८ का आठवा निपेक उदय होकर खिर जाता है । प्रत्येक निपेक मे वत्तीस २ परमाणु कम होते गये है । यह प्रथम गुणहानि के चय का प्रमाण है, वह वाई तरफ लिखा है । इस तरह खिरते खिरते प्रथम गुणहानि के ३२०० परमाणु आठ समय मे खिर जाते है अत सवका जोड ३२०० की सख्या दाई तरफ लिख दी है । इसके वाद द्वितीय गुणहानि के निषेक खिरना प्रारभ होता है ।

चूकि २५६ प्रथम गुणहानि के प्रथम निपेक से ठीक आधे है, अत यह द्वितीय गुणहानि का प्रथम निषेक है, जो नावे समय मे खिरने वाले परमाणुओं की सख्या है । दसवे समय मे द्वितीय गुणहानि के द्वितीय निपेक के २४०परमाणु खिरते है । ११वे समय मे द्वितीय गुणहानि के तृतीय निपेक के २२४ परमाणु खिरते है । इस तरह १६ समय तक द्वितीय गुणहानि के १६०० परमाणु खिर जाते है और प्रत्येक निपेक मे सोलह सोलह परमाणु कम होते जाते हे । यह द्वितीय गुणहानि के चय का प्रमाण है, वहा वाईं तरफ लिखा है और जो १६०० परमाणु ९ से १६ समय मे खिरते है वह दाई तरफ लिखे है । इस तरह १६ समयो मे प्रथम और द्वितीय दोनो गुणहानियो मे खिरने वाले परमाणुओं की सख्या का जोड़ ३२००+१६००=४८०० होता है । इस तरह ४८ समयो मे छहो गुणहानियो के ६३०० परमाणु उदय मे आकर समाप्त हो लेते है । ऊपर जो दो गुणहानियो का क्रम समझाया है वही क्रम अन्य चार गुणहानियो का भी उक्त अकसदृष्टि से समझ लेना चाहिए ।

एक एक निषेको मे जो परमामुओं की सख्या वताई है वह कम अधिक होते हुए भी प्रत्येक समयप्रवद्ध प्रमाण है ओर इन सवका जोड ६३०० जो कभी एक समय मे वधे थे और ४८ समयो मे जिनकी निर्जरा हुई हे वे भी समयप्रवद्ध प्रमाण ही हे । इस तरह वध ओर निर्जरा का प्रमाण सामान्यतया वरावर होने पर भी दोनो मे वड़ा अन्तर रहता है । एक समयप्रवद्ध ४८ समयप्रवद्धो मे विभाजित होकर जो ४८ समयो मे खिरा हे उतने मे ही नये ४८

समयप्रवद्धो का और वध हो गया है । क्योकि प्रति समय समयप्रवद्ध प्रमाण द्रव्य का वध होता रहता है अत जिस समय एक समयप्रवद्ध खिरता है उसी समय नया समयप्रवद्ध वधता है और वाद मे अपने आवाधाकाल को छोड़कर खिरने लगता है । इस प्रकार समयप्रवद्ध प्रमाण वध और निर्जरा होने पर भी करीव (कुछ कम) डेढ़ गुणहानि गुणित समयप्रवद्ध प्रमाण सदा कर्मपरमाणुओं की सत्ता रहती है ।

अधिक स्पष्टता के लिये - यो समझिये कि किसी जीव ने वर्तमान समय मे समयप्रवद्ध द्रव्य का वध किया और उसमे ५० समय की स्थिति पडी इन ५० समयो मे २ समय तो आवाधाकाल के मान लीजिए । वाकी के ४८ समयो मे वह उदय आयेगा । ये २ समय आवाधाकाल के जव तक वीतेगे तव तक उसके दूसरे समयप्रवद्धो का वध हो जाएगा, तीसरे समय मे पहले समयप्रवद्ध का जव प्रथम निपेक खिरेगा। तव दूसरे समयप्रवद्ध के आवाधाकाल का दूसरा समय समाप्त होगा और तीसरे समयप्रवद्ध का वध होगा । चौथे समय मे पहले समयप्रवद्ध का दूसरा निषेक खिरेगा (४६ की सत्ता रहेगी) दूसरे समयप्रवद्ध का पहला निपेक खिरेगा (४७ की सत्ता रहेगी) तीसरे समयप्रवद्ध के आवाधाकाल का दुसरा समय समाप्त होगा (४८ की सत्ता रहेगी) चौथे समयप्रवद्ध का वध होगा । पाचवे समय मे पहले समयप्रवद्ध का तीसरा निपेक खिरेगा (४५ की सत्ता रहेगी) दूसरे समयप्रवद्ध का दूसरा निषेक खिरेगा (४६ की सत्ता रहेगी) तीसरे समयप्रवद्ध का पहला निषेक खिरेगा (४७ की सत्ता रहेगी) चौथे समयप्रवद्ध के आवाधाकाल का दूसरा समय समाप्त होगा (४८ की सत्ता रहेगी) तथा पाचवे समयप्रवद्ध का वध होगा । इस प्रकार छट्ठे सातवे आदि समय से लेकर ५० वे समय तक समझना चाहिए ।

अन्त के ५०वे समय मे पहले समयप्रवद्ध का ४८ वा निषेक खिरेगा, दूसरे का ४७वा निषेक खिरेगा (१की सत्ता रहेगी) तीसरे का ४६ वा निषेक खिरेगा (२की सत्ता रहेगी) चौथे का ४५वा निषेक खिरेगा (३की सत्ता रहेगी) पाचवे का ४४वा निषेक खिरेगा (४की सत्ता रहेगी) इसी प्रकार छट्ठे के ५ की सत्ता रहेगी, सातवे के ६ की सत्ता रहेगी और ४६ वे की ४८ की सत्ता की ही सत्ता रहेगी तथा पचासवे का नया वन्ध होगा । इन सवका जोड कुछ कम डेढ़ गुणहानि गुणित समयप्रवद्ध प्रमाण होगा । इसका त्रिकोणयत्र रचना ग्रन्थ मे से देखिए ।

(१२०४) शका - मति-श्रुत ये दो ज्ञान प्रत्यक्ष है या परोक्ष है ?

समाधान - ये दोनो ज्ञान पर पदार्थों को जानते समय परोक्ष है तथा दर्शनमोहनीय का उपशम, क्षयोपशम तथा क्षय होने के कारण से स्वानुभवकाल मे प्रत्यक्ष है।[1]

(१२०५) शका - अन्तर्मुहूर्त पहले का मिथ्यादृष्टि और अन्तर्मुहूर्त बाद का सिद्ध भगवान बन सकता है क्या ?

समाधान - हॉ वन सकता है । सादि मिथ्यादृष्टि जीव जिसका कि अभी अर्धपुद्गल परिवर्तन काल ससार परिभ्रमण का शेष है, वह जीव अन्तिम अन्तर्मुहूर्त काल मे समयकृत्व और सयम को युगपत् ग्रहण करके श्रेणीमाडकर केवलज्ञान प्राप्त करके सिद्ध परमात्मा वन जायेगा ।

(१२०६) शंका - कार्मण शरीर निरुपभोग क्यो है ?

समाधान - यद्यपि कार्मण कायोयोग केवली जिनके प्रतर और लोकपूरण समुद्घात के समय तथा (अन्य जीवो के) विग्रहगति मे होता है । केवली को केवलज्ञान होने से वहॉ उपभोग का प्रश्न ही नही उठता और विग्रहगति मे भावेन्द्रियॉ तो होती है पर द्रव्येन्द्रियॉ नही होती इसलिए यहॉ शव्दादि विषयो का ग्रहण नही होता । यही कारण है कि अन्त का शरीर को निरुपभोग कहा है ।

(१२०७) शंका - तैजस शरीर भी निरुपभोग है तो वहॉ यह क्यो कहते हो कि अन्त शरीर निरुपभोग है ?

समाधान - तैजस शरीर योग मे अर्थात् आत्मप्रदेशो के परिस्पन्द मे निमित्त भी नही होता, इसलिए इसका उपभोग के विचार मे अधिकार नही है ।

(१२०८) शंका - करणानुयोग किसे कहते है ?

समाधान - जिसमे गुणस्थान मार्गणा आदि जीव के भावो का कर्मों के निमित्त से होने वाली जीव की विविध अवस्थाओं का, लोक, अलोक का तथा काल चक्र का वर्णन होता है उसे करणानुयोग कहते है ।

(१२०९) शंका - इस लोक को किसने रचा है ?

समाधान - यह लोक अकृत्रिम है, किसी का बनाया हुआ नही है, इसकी न आदि है और न अन्त है, यह सदा से है और सदा रहेगा ।

१- पचाध्यायी उत्तरार्ध गाथा ४६२

(१२१०) शंका - अन्तिम गुणहानि का परिमाण किस प्रकार से निकालना ?

समाधान - एक घाट अन्योन्याभ्यस्तराशि का भाग समयप्रवद्ध को देने से अतिम गुणहानि के द्रव्य का परिमाण निकलता है । जैसे - ६३०० मे एक घाट ६४ का भाग देने से जो १०० पाये, सो ही अन्तिम गुणहानि का द्रव्य है ।

(१२११) शका - अन्य गुणहानियो के द्रव्य का परिमाण किस प्रकार निकालना चाहिये ?

समाधान - अन्तिम गुणहानि के द्रव्य को प्रथम गुणहानि पर्यन्त दूना दूना करने से अन्य गुणहानियो का परिमाण निकलता है । जैसे - २००,४००, ८००, १६००,३२०० ।

(१२१२) शका - प्रत्येक गुणहानि मे प्रथमादि समयो मे द्रव्य का परिमाण किस प्रकार होता है ?

समाधान - निषेकहार को चय से गुणा करने से प्रत्येक गुणहानि के प्रथम समय का द्रव्य निकलता है, और प्रथम समय के द्रव्य मे से एक एक चय घटाने से उत्तरोत्तर समयो के द्रव्य का परिमाण निकलता है । जैसे - निषेकहार १६ को चय ३२ से गुणा करने पर प्रथम गुणहानि के प्रथम समय का द्रव्य ५१२, होता है । और ५१२ मे से एक एक चय अर्थात् वत्तीस वत्तीस घटाने से दूसरे समय के द्रव्य का परिमााण ४८०, तीसरे का ४४८, चौथे का ४१६, पाचवे का ३८४, छट्टे का ३५२, सातवे का ३२० और आठवे का २८८ निकलता है । इसी प्रकार द्वितीयादिक गुणहानियो मे भी प्रथमादि समयो का द्रव्य का परिमाण निकाल लेना चाहिये ।

(१२१३) शका - चय किसे कहते है ?

समाधान - श्रेणीव्यवहार गणित मे समान हानि वा समान वृद्धि के परिमाण को चय कहते है ।

(१२१४) शंका - इस प्रकरण मे चय का परिमाण निकालने की क्या रीति है ?

समाधान - निषेकहार मे एक अधिक गुणहानि आयाम का प्रमाण जोड़कर आधा करने से जो लव्ध आवे, उसको गुणहानि आयाम से गुणा करे । इस प्रकार गुणा करने से जो गुणनफल हो उसका भाग विवक्षित गुणहानि के द्रव्य मे देने

से विवक्षित गुणहानि के चय का प्रमाण निकलता है। जैसे - निषेक हार १६ मे एक अधिक गुणहानि आयाम ६ जोडने से २५ हुए। २५ के आधे १२ १/२ को गुणहानि आयाम ८ से गुणाकार करने से १०० होते है। इस १०० का भाग विवक्षित प्रथम गुणहानि के द्रव्य ३२०० मे देने से प्रथम गुणहानि सबधी चय ३२ आया। इसी प्रकार द्वितीय गुणहानि के चय का **परिमाण १६,** तृतीय का ८, चतुर्थ का ४, पचम का २, और अन्तिम का १ जानना।

(१२१५) षडस्थानहानि वृद्धि के स्वरूप को अंक संदृष्टि द्वारा समझाते है

(१) **अनंतभागवृद्धि** - अनतगुणो मे से एक गुण की पर्याय का जो उत्पाद वो अनतवे भागवृद्धि है।

(२) **असख्यातभागवृद्धि** - असख्यात गुणो की अपेक्षा एक गुण की पर्याय का जो उत्पाद है वो असख्यात भागवृद्धि है।

(३) **सख्यातभागवृद्धि** - सख्यात गुणो की अपेक्षा एक गुग की पर्याय का जो उत्पाद है वो सख्यात भागवृद्धि है।

(४) संख्यातगुणवृद्धि - ८ (सख्यात) गुणो मे ८ (सख्यात) पर्याय का उत्पाद हुआ वो **संख्यातगुणवृद्धि** है।

(५) असंख्यातगुणवृद्धि - असख्यात गुणो मे असख्याती पर्यायो का उत्पाद हुआ वो**असख्यातगुणवृद्धि** है।

(६) **अनंतगुणवृद्धि** - अनतगुणो की अनती पर्यायो का उत्पाद हुआ वो अनतगुणवृद्धि है।

उसी समय षड्स्थान हानि भी होती है उसे भी देखिए।

(१) अनंताभागहानि - व्यय की अपेक्षा अनत गुणो की अपेक्षा एक गुण की पर्याय का व्यय अनतवे भाग हानि है।

(२) **असंख्यातभागहानि** - असख्यात गुणो की अपेक्षा एक गुण की पर्याय का व्यय वह असख्याताभाग हानि है।

(३) संख्यातभागहानि - संख्यात गुणो की अपेक्षा एक गुण की पर्याय का व्यय वह संख्यातभाग हानि है।

(४) संख्यातगुणहानि - एक गुण की पर्याय के व्यय की अपेक्षा १०० गुणो की पर्याय का व्यय वह सख्यात गुण हानि है।

(५) असंख्यातगुणहानि - एक गुण की पर्याय के व्यय की अपेक्षा असख्यात गुणो की पर्याय का व्यय वह **असंख्यातगुणहानि** है।

(६) अनतगुणहानि - एक गुण की पर्याय के व्यय की अपेक्षा अनतगुणो की पर्याय का व्यय वह अनतगुणहानि है।

(१२१६) शका - चार प्रकार के कल्पवासी देवो का निवास कहाँ है ?

समाधान - मेरू के तलभाग से ऊपर डेढ़ राजू जाकर सौधर्म - ऐशान नाम के दो स्वर्ग हैं। उनसे डेढ़ राजू ऊपर सनत्कुमार-माहेन्द्र स्वर्ग है। उनसे आधे राजू ऊपर ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर स्वर्ग है। उनसे आधे राजू ऊपर लान्तव-कापिष्ठ स्वर्ग है। उनसे आधे राजू ऊपर शुक्र-महाशुक्र स्वर्ग है। उनसे आधे राजू ऊपर शतार-सहस्रार स्वर्ग है। उनसे आधे राजू ऊपर आनत-प्राणत स्वर्ग हैं। उनसे आधे राजू ऊपर आरण-अच्युत स्वर्ग है। उनसे ऊपर एक राजू के मध्य नौ ग्रैवेयक, नौ अनुदिश और पाच अनुत्तर विमान हैं। इन स्वर्गों मे कल्पवासी देवो का निवास है।[1]

(१२१७) शका - नारकीयों का निवासस्थान कहाँ है ?

समाधान - मेरूतल से नीचे आधे राजू मे पहला नरक है, उससे आधे राजू नीचे दूसरा नरक है, उससे एक राजू नीचे तीसरा नरक है, उससे एक राजू नीचे चौथा नरक है, उससे एक राजू नीचे पाचवा नरक है, उससे एक राजू नीचे छटवा नरक है, उससे एक राजू नीचे सातवा नरक है और एक राजू मे तीनो वातवलय है। इस प्रकार ७ राजू ऊपर और ७ राजू नीचे ये १४ राजू की त्रसनाली है।[2]

(१२१८) शका - सम्यग्दर्शन सराग और वीतराग होता है क्या ?

समाधान - कोई मोहशाली पुरुषो को मोहवासना के सस्कार का यह फल है जो ऐसा मानते है कि वीतरागसम्यग्दृष्टि को ही ज्ञानचेतना होती है, सरागसम्यग्दृष्टि को नही। सरागसम्यग्दृष्टि और वीतरागसम्यग्दृष्टि ऐसे भेद श्रद्धान की अपेक्षा से नही है परतु चारित्र की अपेक्षा से है। चारित्र की पर्याय कैसी है ? मात्र इसे बताने के लिये ऐसे भेद उपचार से किये है, परतु सम्यग्दर्शन के ऐसे भेद नही है।[3]

(१२१९) शंका - सम्यग्दर्शन देवायु के बध का कारण है क्या ?

समाधान - सम्यक्त्व और उपलब्धि की शुद्धता के अविनाभावपना है, इसलिये *सम्यग्दर्शन होने पर जो आत्मोपलब्धि होती है वह शुद्धात्मोपलब्धि कहलाती है* और वह अबधफलवाली होती है।[4]

(१२२०) शंका - व्यवहार चारित्र (शुभोपयोग) से निर्जरा होती है क्या ?

समाधान - विचारपूर्वक देखा जाय तो शुभोपयोग मे विरुद्धकार्यकारीपना अर्थात् ससार कार्य करने मे असिद्ध नही, क्यो कि शुद्धोपयोग सिवाय अन्य सर्वभाव केवल वध के ही उत्पादक है। शुभोपयोग भी वध का कारण है।[५]

(१२२१) शंका - श्रुतज्ञान यदि मतिज्ञान पूर्वक होता है तो वह श्रुतज्ञान भी मत्यात्मक ही प्राप्त होता है, क्योकि लोक मे कारण के समान ही कार्य देखा जाता है ?

समाधान - यह कोई एकान्त नियम नही है कि कारण के समान कार्य होता है। यद्यपि घट की उत्पत्ति दण्डादिक से होती है तो भी वह दण्डाद्यात्मक नही होता। दूसरे मतिज्ञान के रहते हुए भी श्रुतज्ञान नही होता। यद्यपि मतिज्ञान रहा आता है और श्रुतज्ञान के वाह्य निमित्त भी रहे आते है तो भी जिसके श्रुतज्ञानावरण का प्रवल उदय पाया जाता है उसके श्रुतज्ञान नही होता। किन्तु श्रुतज्ञानावरण कर्म का प्रकर्ष क्षयोपशम होने पर ही श्रुतज्ञान होता है इसलिए मतिज्ञान श्रुतज्ञान की उत्पत्ति मे निमित्त मात्र जानना चाहिए। स सि पृष्ठ ८३

(१२२२) शका - कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि जीव कहां कहां उत्पन्न होते है ?

समाधान - कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि का काल अन्तर्मुहूर्त है उसके चार भागो मे से पहले भाग मे मरे हुए जीव देवो मे, दूसरे भाग मे मरे हुए जीव देव और मनुष्यो मे, तीसरे भाग मे मरे हुए जीव देव, मनुष्य और तिर्यचो मे तथा चौथे भाग मे मरे हुए जीव चारो गतियो मे से किसी भी गति मे उत्पन्न होते है। क दी प्र भा पृष्ठ २१

(१२२३) शंका - मरण किन किन जीवो का नही होता ?

समाधान - मिश्र गुणस्थान वाले, निर्वृत्य पर्याप्त अवस्था को धारण करने वाले मिश्र काय योगी, क्षपकश्रेणी वाले, उपशमश्रेणी चढ़ते हुए अपूर्वकरण गुणस्थान के पहले भाग वाले, प्रथमोपशम सम्यकृत्व वाले, सातवे नरक क दूसरे, तीसरे और चौथे गुणस्थान वाले मरण को प्राप्त नही होते। इनके अतिरिक्त अनन्तानुवधी का विसयोजन करके मिथ्यात्व को प्राप्त होने वाला जीव अन्तर्मुहूर्त तक मरण

← (१-२) तत्वार्थसार पृष्ट ५६। (३) पचाध्यायी उत्तरार्थ गाथा ८२१ स ८३०
(४) ,,, ,,, और २१७। (५) पचा उ गाथा ७५६ से ७६२।

को प्राप्त नही होता तथा दर्शनमोहनीय का क्षय करने वाला जव तक कृतकृत्यता रहती है तव तक मरण नही करता। कृतकृत्यता समाप्त हो जाने पर मरण कर सकता है।[1]

(१२२४) शका - पदार्थों को जानने के कितने उपाय है ?

समाधान - चार उपाय है - लक्षण, प्रमाण, नय और निक्षेप।

(१२२५) शका - लक्षण किसे कहते है ?

समाधान - वहुत से मिले हुये पदार्थों मे से किसी एक पदार्थ को जुदे करने वाले हेतु को लक्षण कहते है। जैसे - जीव का लक्षण चेतना।

(१२२६) शका - लक्षण के कितने भेद हे ?

समाधान - दो भेद हे - एक आत्मभूत, दूसरा अनात्मभूत।

(१२२७) शका - आत्मभूत लक्षण किसे कहते है ?

समाधान - जो वस्तु के स्वरूप मे मिला हो। जैसे - अग्नि का लक्षण उष्णपना।

(१२२८) शंका - अनात्मभूत लक्षण किसे कहते है ?

समाधान - जो वस्तु क स्वरूप मे मिला न हो। जैसे - दडी पुरुप का लक्षण दड।

(१२२९) शका - लक्षणाभास किसे कहते हैं ?

समाधान - जो लक्षण सदोप हो।

(१२३०) शका - लक्षण के कितने दोष हैं ?

समाधान - तीन है - अव्याप्ति, अतिव्याप्ति और असभव।

(१२३१) शका - लक्ष्य किसे कहते है ?

समाधान - जिसका लक्षण किया जाय, उसको लक्ष्य कहते है।

(१२३२) शका - अव्याप्ति दोष किसे कहते है ?

समाधान - लक्ष्य के एक देश मे लक्षण के रहने को अव्याप्तिदोष कहते है। जैसे - जीव का लक्षण केवलज्ञान।

---

१ नाट लब्धिसार मे कहा हे कि कृतकृत्य का मरण होता हे। (जयधवला पु २/२१५से२२०पृष्ठ) क अनुसार कृतकृत्य वेदक सम्यक्त्वी मरण नहीं करता।

(१२३३) शंका - अतिव्याप्तिदोष किसे कहते है ?

समाधान - लक्ष्य और अलक्ष्य मे लक्षण के रहने को अतिव्याप्तिदोप कहते है। जैसे - जीव का लक्षण अमूर्तिक।

(१२३४) शका - अलक्ष्य किसे कहते है ?

समाधान - लक्ष्य के सिवाय दूसरे पदार्थों को अलक्ष्य कहते है।

(१२३५) शंका - असभव दोष किसे कहते है ?

समाधान - लक्ष्य मे लक्षण की असभवता को असभवदोप कहते है।

(१२३६) शका - प्रमाण किसे कहते है ?

समाधान - सच्चे ज्ञान को प्रमाण कहते है।

(१२३७) शका - प्रमाण के कितने भेद है ?

समाधान - दो भेद है - प्रत्यक्ष और परोक्ष।

(१२३८) शका - प्रत्यक्ष और परोक्ष किसे कहते है ?

समाधान - जो पदार्थ को स्पष्ट जाने वह प्रत्यक्ष है और जो दूसरे की सहायता से पदार्थों को स्पष्ट जाने वह परोक्ष है।

(१२३९) शंका - आकाश कितना अनंत है ?

समाधान - पुद्गल परमाणु तीव्र गति से गमन करे तो एक समय मे १४ राजू गमन करता है, ऐसा गमन अनत काल तक करे तो भी कभी आकाश का अत नही आयेगा इतना अनत है।

(१२४०) शंका - भगवान आत्मा को ज्ञान मात्र क्यो कहा जाता है ?

समाधान - भगवान आत्मा अनन्त शक्तियो का सग्रहालय, अनन्त गुणो का गोदाम, अनन्त-आनन्द का कन्द, अनन्त महिमावन्त, अतीन्द्रिय महापदार्थ है, उसे ज्ञानमात्र भी कहा जाता है। आत्मा ज्ञान मात्र है अर्थात् वह शरीर, मन, वाणी और पुण्य-पाप रूप नही है, एक समय की पर्यायमात्र भी नही है। वह ज्ञान, दर्शन, चारित्र, आकार्यकारण, भाव, अभाव आदि अनन्तशक्तिमय है।

(१२४१) शका - जब एक समय की पर्याय (काल) आत्मा मे नही तो दृष्टि का जो विषय अखंड आत्मा वह काल से खडित हो गया है ?

समाधान - नही हुआ ! आत्मवस्तु द्रव्य की अपेक्षा सामान्य विशेषात्मक, क्षेत्र की अपेक्षा भेदाभेदात्मक, काल की अपेक्षा नित्यानित्यात्मक और भाव की अपेक्षा एकानेकात्मक है। इनमे से विशेष, भेद, अनित्य और अनेक ये पर्यायार्थिकनय के विषय बनते है। और सामान्य, अभेद, नित्य और एक इन चारो का एकत्वपना वो द्रव्यार्थिकनय को विषय बनता है। इन चारो भेदो मे रहित जो आत्मवस्तु है वह अखड ही है वही दृष्टि का विषय बनती है। इसलिये दृष्टि का विषय खडित नही हुआ, अखड ही रहा।

(१२४२) शका - निर्वाण किसे कहते है ?

समाधान - बिन कर्म, परम, विशुद्ध जन्म, जरा, मरण मे हीन है।

ज्ञानादि चार स्वभावमय अक्षय अछेद, अछीन है ॥
निर्वाध, अनुपम अरु अतीन्द्रिय, पुण्यपाप विहीन है।
निश्चल, निरालम्बन, अमर पुनरागमन से हीन है ॥
दुख सुख नही, पीडा जहॉ नही और बाधा है नही।
नहि जन्म है, नहि मरण है, निर्वाण जानो रे वही ॥
इन्द्रिय जहॉ नहि, मोह नहि, उपसर्ग विस्मय भी नही।
निद्रा, क्षुधा, तृष्णा नही, निर्वाण जानो रे वही ॥
रे कर्म नहि नोकर्म, चिता आर्त-रौद्र जहाँ नही।
है धर्म - शुक्ल ध्यान नही, निर्वाण जानो रे वही ॥
दृग ज्ञान केवल, सौख्य, केवल और केवल वीर्यता।
होते उन्हे सप्रदेशता, अस्तित्व, मूर्ति - विहीनता ॥
निर्वाण ही तो सिद्ध है, हे सिद्ध ही निर्वाण रे।
हो कर्म से प्रविमुक्त आत्मा पहुँचता लोकान्त रे ॥

ॐ शाति ॐ शाति ॐ शाति

तिलोयपण्णत्ती द्वितीय भाग

(१२४३) शंका - अर्थप्ररूपणा (कालप्ररूपणा) किसे कहते हैं ?
समाधान - व्यवहारकाल के भेद एव उनका स्वरूप ही अर्थप्ररूपणा (कालप्ररूपणा) है।

(१२४४) समय - पुद्गल परमाणु का निकट मे स्थित आकाश-प्रदेश के अतिक्रमण-प्रमाण जो अविभागी काल है, वही "समय" नाम से प्रसिद्ध है । - पृष्ठ ८२

(१२४५) आवली तथा उच्छ्वास - असख्यात समयो की आवली और सख्यात आवलियो के समूह रूप उच्छ्वास होता है । यही उच्छ्वास काल "प्राण" नाम से प्रसिद्ध है । - पृष्ठ ८२

(१२४६) स्तोक - सात उच्छ्वासो का एक स्तोक होता है । - पृष्ठ ८२

(१२४७) लव - सात स्तोको का एक लव होता है । - पृष्ठ ८२

(१२४८) एक नाली- सत्ततर के आधे (३८ $\frac{१}{२}$) लवो की एक नाली होती है। - पृष्ठ ८२

(१२४९) एक मुहूर्त - दो नालियो का एक मुहूर्त होता है । - पृष्ठ ८२

(१२५०) भिन्न मुहूर्त - समय कम एक मुहूर्त को भिन्न मुहूर्त कहते है । - पृष्ठ ८३

(१२५१) एक दिन - तीस मुहूर्त का एक दिन होता है । - पृष्ठ ८३

(१२५२) एक पक्ष - पन्द्रह दिनो का एक पक्ष होता है । - पृष्ठ ८३

(१२५३) एक मास - दो पक्षो का एक मास होता है । - पृष्ठ ८३

(१२५४) एक ऋतु - दो मासो की एक ऋतु होती है । - पृष्ठ ८३

(१२५५) अयन - तीन ऋतुओं की एक अयन होती है । - पृष्ठ ८३

(१२५६) एक वर्ष - दो अयनो का एक वर्ष होता है । - पृष्ठ ८३

(१२५७) एक युग - पॉच वर्षों का एक युग होता है । - पृष्ठ ८३

(१२५८) दस वर्ष - दो युगो के दस वर्ष होते है । - पृष्ठ ८३

(१२५९) एक शत - दस वर्षो को दस से गुणा करने पर शतवर्ष (१००) होते है । - पृष्ठ ८३

(१२६०) सहस्र - शतवर्ष को दस से गुणा करने पर एक सहस्रवर्ष होते है । - पृष्ठ८३

(१२६१) दस सहस्रवर्ष - सहस्र वर्ष को दस से गुणा करने दससहस्रवर्ष होते है । - पृष्ठ ८३

पूर्वाङ्ग से अचलात्म पर्यत कालांशो का प्रमाण --

(१२६२) लक्षवर्ष - दस सहस्र वर्षों को दस से गुणा करने पर लक्ष (लाख) वर्ष होते है । - पृष्ठ ८३

(१२६३) पूर्वाङ्ग तथा पूर्व - एक लाख वर्ष को चौरासी से गुणा करने पर एक पूर्वाङ्ग और इसका वर्ग करने पर प्राप्त हुए ७०५६०००००००००० को पूर्व का प्रमाण जानना । १००००० वर्ष ८४=८४००००० वर्ष का एक पूर्वाङ्ग (२) ८४ लाख x८४लाख = ७०५६०००००००००० वर्ष का एक पूर्व।-पृष्ठ ८५

(१२६४) पर्वाङ्ग तथा पर्व - पूर्व को चौरासी से गुणा करने पर पर्वाङ्ग होता है और इस पर्वाङ्ग को चौरासी लाख से गुणा करने पर एक पर्व का प्रमाण जानना। एक पूर्व x ८४=५९२७०४ x१० शून्य प्रमाण वर्ष का एक पर्वाङ्ग । एक पर्वाङ्ग ८४ लाख = ४९७८७१३६ x १५ शून्य प्रमाण वर्ष का एक पर्व । - पृष्ठ ८५

(१२६५) नयुताङ्ग तथा नयुत - पर्व को चौरासी से गुणा करने पर एक नयुताङ्ग होता है और इसको चौरासी लाख से गुणा करने पर एक नयुत का प्रमाण

जानना । एक पर्व x ८४= ४१८२११६४२४ x १५ शून्य प्रमाण वर्ष का एक नयु ताङ्ग । एक नयुताङ्ग x ८४ लाख = ३५१२६८०३१ ६१६ x २० शून्य प्रमाण वर्ष का एक नयुत । - पृष्ठ ८५

(१२६६) कुमुदाङ्ग तथा कुमुद - चौरासी से गुणित नयुत प्रमाण एक कुमुदाङ्ग होता है। इसको चौरासी लाख वर्षों से गुणा करने पर कुमुद होता। एक नयुतx ८४=२६५०६०३४६५५७४४x२५ शून्य प्रमाण वर्ष का एक कुमुदाङ्ग । एक कुमुदा ङ्ग x ८४ लाख = २४७८७५८६११०८२४६६ x२५शून्य प्रमाण वर्ष का एक कुमुद । - पृष्ठ ८६

(१२६७) पद्माङ्ग तथा पद्म - चौरासी से गुणित कुमुद-प्रमाण एक पद्माङ्ग होता है। इसको चौरासी लाख वर्षों से गुणा करने पर पद्म होता है ।

एक कुमुद x८४ लाख = २०८२१५७४८५३०६२६६६४x२५ शून्य प्रमाण पद्माङ्ग।एक पद्माङ्गx८४लाख = १७४६०१२२८ ७६५६८०६१७७६ x ३० शून्य प्रमाण वर्षों का एक पद्म । - पृष्ठ ८६

(१२६८) नलिनाङ्ग तथा नलिन - चौरासी से गुणित पद्म - प्रमाण एक नलिनाङ्ग होता है । इसको चौरासी लाख वर्षों से गुणा करने पर नलिन होता है । एक पद्म x ८४ = १४६६१७०३२१६३४२३६७०६१८४ x ३० शून्य प्रमाण वर्षों का एक नलिनाङ्ग। एक नलिनाङ्ग x ८४ लाख = १२३४१०३०७०१७२७६ १३५५७१४६x ३५ शून्य प्रमाण वर्षों का एक नलिन । - पृष्ठ ८६

(१२६९) कमलाङ्ग तथा कमल - चौरासी से गुणित नलिन प्रमाण एक कमलाङ्ग होता है । इसको चौरासी लाख से गुणा करने पर कमल कहा जाता है । एक नलिनx८४=१०३६६४६५७८६४५११६५३८८००२३०४x ३५ शून्य प्रमाण वर्षों का एक कमलाङ्ग । एक कमलाङ्ग x ८४ लाख = ८७०७८३१ २६३१३६००४१२५६२१६३५३६ x ४० शून्य अर्थात् ६७ अंक प्रमाण वर्षों का एक कमल। - पृष्ठ ८६

(१२७०) त्रुटिताङ्ग तथा त्रुटित - चौरासी - गुणा त्रुटिताङ्ग होता है । इसको चौरासी लाख से गुणा करने पर त्रुटित होता है । एक कमल x ८४ = ७३१४५७८२६१०३६७६३४६५७७४४२५७०२४ x ४० शून्य प्रमाण वर्षों का एक त्रुटिताङ्ग । एक त्रुटिताङ्ग x ८४ लाख = ६१४४२४५७३६२७०८८ १३११२५०५१७५६००१६x ४५ शून्य अर्थात् ७६ अंक प्रमाण वर्षों का एक त्रुटित ।

(१२७१) **अटटाङ्ग तथा अटट** - चौरासी से गुणित त्रुटित-प्रमाण एक अटटाङ्ग होता है । इसको चौरासी लाख से गुणित होने पर अटट होता है। एक त्रुटित x ८४= ५१६११६६४२०९८७५४०३०१४५०४३४७७५६१३४४ x ४५ शून्य अर्थात् ७६ अक प्रमाण वर्षों का एक अटटाङ्ग । एक अटटाङ्ग x ८४= ४३३५३७९७९३६२९५३३८५३२१८३६५२११५१५२८९६ x ५० शून्य प्रमाण वर्षों का एक अटट । - पृष्ठ ८७

(१२७२) **अममांग तथा अमम** - चौरासी से गुणित अटट-प्रमाण एक अममाग होता है । इसको चौरासी लाख से गुणा करने पर अमम होता है। एक अटटx ८४=३६४१७१९०२६६४८८०८४३६७०३४२६७७७६७२८४३२६४ x५० शून्य प्रमाण वर्षों का एक अममाग । एक अममाग 'x ८४लाख= ३०५९०४३९८२३८४९९९०८९८३०८७८४९३२४५१८८३४१७६ x५५ शून्य प्रमाण वर्षों का एक अमम । - पृष्ठ ८७

(१२७३) **हाहांग तथा हाहा** - चौरासी से गुणित अमम प्रमाण एक हाहाग होता है । इसको चौरासी लाख से गुणा करने पर हाहा होता है । एक अमम x८४ =२५६९५९६९४५२०३३९९२३२९३७९३४३२५९५८२०७०७८४ x५५ शून्य प्रमाण वर्षों का एक हाहाग । एक हाहाग x ८४लाख = २१५८४६१४ ३३९७०८५५३५५६६७८६७८६४८३३८०४८९३९४५८५६ x६० शून्य प्रमाण वर्षों का एक हाहा । - पृष्ठ ८८

(१२७४) **हूहांग तथा हूहू** - हाहा को चौरासी से गुणा करने पर एक हूहाग होता है । इसको चौरासी लाख से गुणा करने पर हूहू नामक काल का प्रमाण होता है। एक हाहा x८४=१८१३१०७६०४५३५५१८४९८७६१००९००६४६ ०३९६११०९१४५१९०४x६० शून्य प्रमाण वर्षों का हूहाग। एक हूहाग x ८४ लाख=१५२३०१०३८७८०९८३५५३८९५९२४७५६५४२६७३२७३३१ ६८१९५९९३६ x ६५शून्य प्रमाण वर्षों का एक हूहू । - पृष्ठ ८८

(१२७५) **लतांग तथा लता** - चौरासी से गुणित हूहू का एक लताग होता है। इसको चौरासी लाख से गुणा करने पर लता नामक प्रमाण उत्पन्न होता है। एक **हूहू×८४=१२७९३२८७२५७६०२६१८५२७२५७६७९५४९५८४५५४९५८६- १२८४६३४६२४×६५ शून्य अर्यातु ११४ अंक प्रमाण वर्षों का एक लताग । एक**

लताग
x८४लाख=१०७४६३६१२९६३८६१९९५६२८९६४५०८२१६५१०२६
१६५२३४७९०९३०८४१६ x७० शून्य अर्थात् १२१ अक प्रमाण वर्षों
का एक लता ।– पृष्ठ ८२

(१२७६) **महालतांग तथा महालता** - चौरासी से गुणित लता प्रमाण एक महालतांग होता है । इसको चौरासी लाख से गुणा करने पर महालता नाम कहा गया है । एक लता x ८४ = ९०२६९४३४८८९६४४०७६३२८३३०१८६९०१८६८६
१९७८७९७२२४३८१९०६९४४ x७० शून्य प्रमाण वर्षों का एक महालताग। एक महालतांग x८४लाख=७५८२६३२५३०७३०१०२४११५७९७३५६९९
७५६९६४०६२१८९६६८४८०८०१८३२९ ६x७५शून्य प्रमाण वर्षों का एक महालता । - पृष्ठ ८६

(१२७७) **श्रीकल्प तथा हस्तप्रहेलित** - चौरासी लाख से गुणित महालता प्रमाण एक श्रीकल्प होता है । इसको चौरासी लाख से गुणा करने पर हस्तप्रहेलित नामक प्रमाण उत्पन्न होता है । एक महालता x८४लाख =
६३६९४११३२५८१३२८६०२५७२६९७७९८७७९५८४९५१२२३९३२
१५२३८७३५३९६९६४ x ८०शून्य प्रमाण वर्षों का एक श्रीकल्प । एक श्रीकल्पx८४लाख=५३५०३०५५१३६८३१६०२६१६१०६६१५०९७४८५
१३८४२२८१०३००८००५३७७३३३६५७६x८५ **शून्य प्रमाण वर्षों का एक हस्तप्रहेलित होता है । - पृष्ठ ८९**

(१२७८) **अचलात्म** - चौरासी लाख वर्षों से गुणित हस्तप्रहेलित प्रमाण एक अचलात्म नाम का काल होता है, ऐसा कालाणुओं के जानकार अर्थात् सर्वज्ञदेव ने निर्दिष्ट किया है। एक हस्तप्रहेलित x८४लाख=४४९४२५६६३१४९३८५४
६१९७५२९५५६६८१८८७५१६२७५१६०६५२६७२४५१६९६०२७२३
८४ x९०शून्य प्रमाण वर्षों का एक अचलात्म नाम का कलाश होता है । - पृष्ठ ८६

अर्थ- पृथक्-पृथक् इकतीस (३१) स्थानो मे चौरासी (८४) को रखकर और उनका परस्पर गुणा करके आगे नब्बे शून्य रखने पर अचलात्म का प्रमाण प्राप्त होता है।-पृष्ठ ८६

चर्चा शतक

(१२७६) शंका - निगोद जीव कहाँ - कहाँ नही होते ?
समाधान - पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, केवली भगवान के परम औदारिक शरीर मे छट्ठे गुणस्थानवर्ती मुनि के प्रगट हुआ आहारक शरीर, नारकी जीवो के शरीर और देवो के शरीर इन आठ स्थानो मे निगोद जीव नही होते है । - पृष्ठ १२६

(१२८०) शंका - सासादन गुणस्थान को लेकर जीव कहाँ-कहाँ नहीं जाता ?
समाधान - सूक्ष्म जीवो मे अर्थात् पृथ्वीकाय, जलकाय, नित्यनिगोद, इतरनिगोद के जीवो मे, सातो नरकों के जीवों मे, अग्निकाय और वायुकाय के सूक्ष्म एव बादर जीवों मे इन चार स्थानो मे सासादन गुणस्थान को लेकर नही जाते ।—पृष्ठ१२७

(१२८१) शंका - तीर्थंकर की सत्तावाला जीव कहाँ- कहाँ नही जाता ?
समाधान - भवनत्रिक, भोगभूमिया और कर्मभूमिया पशुओं में तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता सहित जीव नही जाता । - पृष्ठ १२५

(१२८२) शंका - सातो नरको से निकलकर जीव क्या-क्या हो सकता है ?
समाधान - सातवे नरक से निकलकर जीव क्रूर पंचेन्द्रिय पशु होता है । मनुष्य नही होता है । छट्ठे नरक से निकलकर जीव मनुष्य हो सकता है, परतु महाव्रत धारण नही कर सकता है । पांचवे नरक से निकलकर मनुष्य हो सकता है और महाव्रत भी धारण कर सकता है, परन्तु समस्त कर्मो का क्षयकर मुक्त नही हो सकता है । चौथे नरक से निकलकर मनुष्य होकर, महाव्रत धारण करके मोक्ष भी जा सकता है, परन्तु तीर्थंकर नही हो सकता है। तीसरे, दूसरे और पहले नरक से निकलकर अचिन्त्य विभूति का धारक तीर्थंकर भी हो सकता है । - पृष्ठ १२६

(१२८३) शंका - सोलह स्वर्गों से निकलकर जीव क्या-क्या हो सकता है ?
समाधान - भवनत्रिकदेव और सौधर्म, ईशान स्वर्गों के देव मरकर एकेन्द्री पर्याय मे भी जन्म ले सकते है, परन्तु एकेन्द्री मे अग्निकाय, वायुकाय सूक्ष्म और साधारण

जीव नही हो सकते है । बादर पृथ्वीकाय, जलकाय, वनस्पतिकाय हो सकते है। तीसरे स्वर्ग से लेकर बारहवे सहस्रार स्वर्ग तक के देव पचेन्द्री पशु भी हो सकते है, लेकिन एकेन्द्रियादि नही हो सकते । तेरहवे स्वर्ग से लेकर ऊपर के सभी देव मनुष्यगति मे ही आते है । अन्य गतियो मे नही जाते । - पृष्ठ १२६

(१२८४) शंका - एक भवतारी जीव कौन-कौन है ?

समाधान - स्वर्गो के आठ युगल है । उनमे बारह इन्द्र है, छह उत्तर के और छह दक्षिण के है, इनमे दक्षिण दिशा के छह इन्द्र, सौधर्म की शची इद्राणी, सौधर्म स्वर्ग के चारो लोकपाल (सोम,यम,वरुण,कुबेर) लौकान्तिक देव और सर्वार्थसिद्धि स्वर्ग के सब अहमिन्द्र ये केवल एक ही भव धारण करके मुक्त हो जाते है । - पृष्ठ १२७

(१२८५) शंका - किस-किस गति के जीव कितने-कितने काल बाद सम्यकृत्व पैदा कर सकते है ?

समाधान - मनुष्य गति का जीव गर्भ से लेकर आठ वर्ष के बाद, नरक, देवगति के जीव जन्म से ३ अन्तर्मुहूर्त के बाद, कर्मभूमि के तिर्यच २ अथवा१ $\frac{१}{२}$ माह बाद, भोगभूमि के मनुष्य ६ माह बाद और तिर्यंच ३ दिन बाद सम्यकृत्व उत्पन्न कर सकते है । तिर्यच पचेन्द्रिय पर्याप्तके सम्यकृत्व उपजे तो जन्म लेने के पृथकृत्व दिन के बाद उपजता है, पहिले नही। (निर्जरासार पृष्ठ १६५)

दान चार प्रकार का होता है । उनमे आहारदान, औषधदान, अभयदान तो तत्काल क्षुधा के दु:ख को या रोग के या मरणादिक भय के दु:ख को ही दूर करते हैं । और ज्ञानदान वह अनन्त भव-सन्तान संबधी चले आ रहे दु:ख को दूर करने मे कारण है । तीर्थंकर, केवली, आचार्यादिक के भी ज्ञानदान की प्रवृत्ति मुख्य है । इससे ज्ञानदान उत्कृष्ट है । इसलिये ज्ञानाभ्यास हो तो अपना भला कर लेता है और अन्य जीवों को भी ज्ञानदान देता है । ज्ञानाभ्यास के बिना ज्ञानदान देना कैसे हो सकता है ?

- इसलिये दान में भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है ।

पांच भावो सम्बन्धी प्रश्नोत्तर

(१) प्रश्न - भाव शब्द का जिनागम प्रसिद्ध अर्थ क्या हैं ?

उत्तर - भू धातु से घञ् प्रत्यय पूर्वक अथवा भू धातु से णिच् + अच् प्रत्यय् पूर्वक निष्पन्न भाव शब्द कहीं पर द्रव्य अर्थ में आता है। यथा, "यदीये चैतन्ये मुकुर इव-भावाश्चिदचित "। यहाँ "भाव" पदार्थ या द्रव्य अर्थ मे है। कहीं परिणाम (पर्याय) अर्थ मे "भाव" शब्द आता है। कहा भी है - भावो खलु परिणामो ......। कही वर्तमान पर्याय से उपलक्षित द्रव्य भी भाव कहा जाता है। कहा भी है- पूर्वापरकोटि से व्यतिरिक्तवर्तमान पर्याय से उपलक्षित द्रव्य को भाव कहते हैं। कहीं पर "भाव" शब्द आत्मरुचि के अर्थ में आता है। कहा भी है- भाव आत्मरुचि । कहीं पर "भाव" शब्द से द्रव्य, गुण व पर्याय इन तीनो का ग्रहण होता है। समयसार गाथा १२८-१२९ आदि। कहीं "भाव" से पचभाव का ग्रहण होता है। तथा इन्हीं पाँच भावों को जीव गुण भी कहा गया है।

(२) प्रश्न - प्रकृत मे भाव शब्द के किस अर्थ से प्रयोजन है ?

उत्तर - प्रकृत मे औपशमिकादि पञ्च भावो से प्रयोजन है।

(३) प्रश्न - औपशमिक भाव किसे कहते है ?

उत्तर - जैसे - मैले जल मे निर्मली डालने से जल का मैल नीचे बैठ जाता है और जल निर्मल हो जाता है, उसी तरह परिणामों की विशुद्धि से कर्मों की शक्ति का अव्यक्त (अप्रगट) रहना, उपशम है। उपशम के लिये जो भाव होते हैं, उन्हे औपशमिकभाव कहते हैं।

(४) प्रश्न - क्षायिक भाव किसे कहते है ?

उत्तर - जिस जल का मैल नीचे जम गया हो, उस निर्मल जल को यदि दूसरे वर्तन मे रख दिया जाय तो जैसे उस जल मे अत्यन्त निर्मलता आ जाती है वैसे ही आत्यन्तिक विशुद्धि से कर्मो की अत्यन्त निवृत्ति होना, वह क्षय है। कर्मक्षय के लिये जो भाव होते हैं, उन्हे क्षायिक भाव कहते हैं।

(५) प्रश्न - क्षायोपशमिक भाव किसे कहते है ?

उत्तर - जैसे- मादक कोदों को धोने से कुछ मदशक्ति क्षीण हो जाती है और कुछ अक्षीण, उसी तरह परिणामो की निर्मलता से कर्मों का एक देश का क्षय और एकदेश का उपशम होना क्षयोपशम है। इस क्षयोपशम के लिये जो भाव होते हैं, उन्हे क्षायोपशमिकभाव कहते हैं।

(६) प्रश्न - औदयिक भाव किसे कहते हैं ?

उत्तर - द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के निमित्त से कर्मों का फल देना उदय है और उदय-निमित्तक भावो को औदयिक भाव कहते है। विशेष यह है कि उदय के साथ प्राय उदीयमान कर्म की उदीरणा भी होती रहती है, अत उदय व उदीरणा दोनो के निमित्त से उत्पन्न भाव औदयिकभाव रूप से विवक्षित है। पुद्गलविपाकी कर्मों के उदय से जीव-भाव नहीं होते, अतएव जीवविपाकी कर्मों के उदय से उत्पन्न भाव औदयिक भाव कहलाते हैं, यह विशेष ज्ञातव्य है।

(७) प्रश्न - पारिणामिकभाव किसे कहते है ?

उत्तर - जो भाव कर्मों के उपशमादि की अपेक्षा न रखकर द्रव्य के निजस्वरूप मात्र से होते हैं, उन्हे पारिणामिकभाव कहते हैं। 'परिणाम' स्वभाव को कहते है। "परिणाम ही है प्रयोजन जिसका, वह पारिणामिक "भाव है"

पांच भावो के भेद -

(८) प्रश्न - इन पांच भावो के कितने - कितने भेद होते है ?

उत्तर - (१) औपशमिक भाव के दो भेद- औपशमिक सम्यक्त्व, औपशमिक चारित्र।

(२) क्षायोपशमिक भाव के अठारह भेद - कुमति, कुश्रुत, कुअवधि ये तीन अज्ञान, मति, श्रुत, अवधि, मन पर्यय ये चार ज्ञान, चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शन, दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य ये पॉच लब्धि, क्षायोपशिमकसम्यक्त्व, सयमासयम, क्षायोपशमिक चारित्र।

(३) क्षायिक भाव के नौ भेद - क्षायिक ज्ञान, क्षायिक दर्शन, क्षायिकसम्यक्त्व (इसमे सुख और वीर्य गर्भित आ जाते हैं) क्षायिक चारित्र और क्षायिक पॉच लब्धियाँ।

(४) औदयिक भाव के इक्कीस भेद - चार गति, चार कषाय, तीन लिग, मिथ्यादर्शन, अज्ञान, असयम, असिद्धत्व, छह लेश्याये।

(५) परिणामिकभाव के तीन भेद - जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व। २+१८+९+२१+३= ५३

(९) प्रश्न - किस-किस भाव से क्या - क्या होता है ?

उत्तर - (१) धर्म की शुरुआत औपशमिक भाव से ही होती है।

(२) सभी छद्मस्थ क्षायोपशमिक भाववाले ही होते है।

(३) सभी क्षायिक सम्यक्त्वी, क्षायिक चारित्री तथा केवली क्षायिक भाववाले ही होते हैं।

(४) सभी ससारी औदयिक भाव वाले ही होते हैं।

(५) सभी पदार्थ (द्रव्य) पारिणामिक भाव वाले ही होते है।

(१०) प्रश्न - किस भाव के बिना क्या नहीं होते ?

उत्तर - (१) औपशमिक भाव के बिना धर्म की शुरूआत नहीं होती।

(२) क्षायोपशमिक भाव के बिना कोई छद्मस्थ नहीं होते।

(३) क्षायिक भाव के बिना कोई क्षायिक सम्यक्त्वी, क्षायिक चारित्री तथा केवली नहीं होते।

(४) औदयिक भाव के बिना कोई ससारी नहीं होते।

(५) पारिणामिक भाव के बिना कोई द्रव्य नहीं होते।

॥ पंचभाव के कारण, कार्य, स्वामी और काल ॥

(११) प्रश्न - पाच भावों के (निमित्त) कारण कौन हैं ?

उत्तर - औदयिक आदि चार भावो मे कर्मो की चतुर्विध अवस्था कारण होती है और पारिणामिक भाव मे स्वभाव कारण है।

(१२) प्रश्न - औदयिकादि भाव किस के कारण हैं ?

उत्तर - औदयिक भाव बंध का कारण है, औपशमिक, क्षायोपशममिक और क्षायिक भाव मोक्ष के कारण हैं और पारिणामिक भाव बन्ध, मोक्ष किसी का भी कारण नहीं है।

(१३) प्रश्न - समयसार १०९ गाथा में बन्ध के कारण-मिथ्यात्व, अविरत, कषाय और योग- ये चार (प्रमाद को कषाय में गर्भित करके) बतलाये हैं और यहाँ एक औदयिक भाव बन्ध का कारण बतलाया तो दोनो में से कौन-सा कथन उचित है ?

उत्तर - दोनो कथन उचित हैं, क्योंकि "औदयिक भाव बन्ध के कारण हैं" ऐसा कहने पर भी सभी औदयिक भावो का ग्रहण नहीं करना, क्योंकि वैसा मानने पर गति, जाति आदि नामकर्म सबन्धी औदयिक भावों को भी बन्ध कारण का प्रसग आ जायेगा जो कि उचित नहीं, और ऐसी स्थिति मे अयोगीकेवली को भी बन्ध होने का प्रसग आ जायेगा जो कि ठीक नहीं है। तथा मिथ्यात्वादि चारों औदयिक भाव के अन्तर्गत ही आ जाते हैं, अभेद विवक्षा मे।

(१४) प्रश्न - इन भावों के स्वामी कौन हैं ?

उत्तर - छहो द्रव्यो के भाव होते हैं, इसलिए छहो द्रव्य स्वामी हैं। ये भेद विवक्षा हुई। अभेद विवक्षा से देखा जाय तो परिणाम और परिणामी अभेद होते हैं, इसलिए किसी भी दव्य के भाव नहीं होते। ससारी जीव पाचो भावों का स्वामी है। मुक्त जीव क्षायिक और पारिणामिक भाव का स्वामी है। पुद्गल द्रव्य उदय और पारिणामिक भाव का स्वामी है। शेष चार द्रव्य पारिणामिक भाव के स्वामी हैं।

(१५) प्रश्न - औपशमिक भाव का काल कितना है ?

उत्तर - सादि-सांत काल है।

(१६) प्रश्न - क्षायोपशमिक भाव का काल कितना है ?

उत्तर - अभव्य की अपेक्षा अनादि अनत है। भव्य की अपेक्षा अनादि-सांत है और एक समय की पर्याय की अपेक्षा सादि-सांत है।

(१७) प्रश्न - क्षायिकभाव का काल कितना है ?

उत्तर - सादि-अनंत है। एक समय की पर्याय अपेक्षा सादि-सात है।

(१८) प्रश्न - औदयिक भाव का काल कितना है ?

उत्तर - अभव्य की अपेक्षा अनादि-अनंत है, भव्य की अपेक्षा अनादि-सात है, एक समय की पर्याय अपेक्षा सादि-सांत है।

(१९) प्रश्न - पारिणामिक भाव का काल कितना है ?

उत्तर - अनादि-अनत काल है।

॥ साततत्वों में पञ्च भाव घटाते हैं ॥

(२०) प्रश्न - जीवतत्व में कितने भाव घटित होते हैं ?

उत्तर - जीवतत्व मे एक परमपारिणामिक भाव ही घटित होता है।

(२१) प्रश्न - जीवद्रव्य मे कितने भाव घटित होते हैं ?

उत्तर - जीवद्रव्य में पांचों ही भाव घटित होते है।

(२२) प्रश्न - अजीवतत्व और अजीवद्रव्य में कितने भाव घटित होते हैं ?

उत्तर - पारिणामिक और पारिणामिक,उदय ये दो भाव घटित होते हैं।

(२३) प्रश्न - आस्रव, बंधतत्त्व मे कितने भाव घटित होते है ?

उत्तर - एक औदयिकभाव ही घटित होता है।

(२४) प्रश्न - संवर, निर्जरातत्त्व मे कितने भाव घटित होते हैं ?

उत्तर - औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक भाव घटित होते हैं।

(२५) प्रश्न - मोक्षतत्त्व मे कितने भाव घटित होते हैं ?

उत्तर - एक क्षायिकभाव ही घटित होता है।

पांच भावों मे संयोग-संयोगीभाव, स्वभाव-स्वभाव के साधन, और सिद्धत्त्व घटित करते हैं -

(२६) प्रश्न - औदयिक भाव क्या है और उदय क्या है ?

उत्तर - औदायिकभाव, संयोगीभाव है और उदय संयोग है।

(२७) प्रश्न - औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक भाव क्या हैं ?
उत्तर - औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिकभाव स्वभाव के साधन है तथा क्षायिकभाव सिद्धत्व भी है।

(२८) प्रश्न - पारिणामिक भाव क्या है ?

उत्तर - स्वभाव है।

पांच भावो का अध्वान

(२९) प्रश्न - औपशमिक आदि भाव कहाँ से कहाँ तक होते है ?

उत्तर औपशमिक भाव चौथे गुणस्थान से ग्यारहवे गुणस्थान तक होते है। क्षायोपशमिक भाव प्रथम गुणस्थान से बारहवे गुणस्थान तक होते है। क्षायिकभाव चौथे गुणस्थान से चौदहवे गुणस्थान एव सिद्धो पर्यत होते है। औदयिक भाव प्रथम गुणस्थान से चौदहवे गुणस्थान पर्यत होते है। पारिणामिक भाव प्रथम गुणस्थान से गुणस्थानातीत सिद्धो पर्यत होते है।

गुणस्थानो मे पांच भाव

(३०) प्रश्न - मिथ्यात्वगुणस्थान मे कितने भाव होते हे ?

उत्तर - औदयिक भाव के २१, क्षायोपशमिक भाव के कुमति, कुश्रुत, कुअवधि ज्ञान, चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, क्षायोपशमिक दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य पाच लब्धियॉ इस प्रकार १०, पारिणामिक भाव के जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व ये ३। (२१+१०+३=३४) भाव होते है।

(३१) प्रश्न - सासादनगुणस्थान मे कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - औदयिक भाव के २०, क्षायोपशमिक भाव के १० पूर्वोक्त, पारिणामिकभाव २ जीवत्व, भव्यत्व। (२०+१०+२=३२) भाव होते है।

(३२) प्रश्न - सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान मे कितने भाव होते है ?

उत्तर - औदयिक भाव के २०, क्षायोपशमिक भाव के १०, पारिणामिक भाव के २। (२०+१०+२=३२)भाव होते है।

(३३) प्रश्न - असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान मे कितने भाव होते है ?

उत्तर - औदयिक भाव के २०, क्षायोपशमिकभाव के १२, औपशमिकभाव का १, क्षायिकभाव का १, पारिणामिकभाव के २।(२०+१२+१+१+२=३६) भाव होते है।

(३४) प्रश्न - देशसंयत गुणस्थान मे कितने भाव होते है ?

उत्तर - औदयिक भाव के १४, क्षायोपशमिक भाव के १३, औपशमिक भाव का १, क्षायिक भाव का १, पारिणामिक भाव के २ । (१४ +१३ +१+१+२=३१) भाव होते है ।

खुलासा - मनुष्य - तिर्यचगति, क्रोध-मान-माया-लोभ कषाय, स्त्री-पुरुष-नपुसक लिग,पीत-पद्म-शुक्ल लेश्या, अज्ञान, असिद्धत्व ये १४ औदयिक भाव । मति-श्रुत-अवधि ज्ञान, चक्षु - अचक्षु - अवधि दर्शन, क्षायोपशमिक दान - लाभ भोग - उपभोग - वीर्य ये पाच लब्धियॉ, क्षायोशमिक समकृत्व और सयतासयत **ये १३ क्षायोपशमिक भाव । औपशमिकसमकृत्व । क्षायिकसम्यकृत्व । जीवत्व, भव्यत्व ये पारिणामिकभाव ।**

(३५) प्रश्न - प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत गुणस्थान मे कितने भाव होते है ?

उत्तर - औदयिक भाव के १३, ऊपर कहे १४ मे से एक तिर्यचगति को छोड़कर। क्षायोपशमिकभाव के उपरोक्त १३+१ क्षायोपशमिकचारित्र को मिलाकर १४ । औपशमिकसम्यकृत्व । क्षायिकसम्यकृत्व । जीवत्व - भव्यत्व पारिणामिकभाव (१३+१४+१+१+२=३१) भाव होते है ।

(३६) प्रश्न - अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण गुणस्थान मे कितने भाव होते है ?

उत्तर - औदयिक भाव के ११, क्षायोपशमिक भाव के १२, औपशमिक भाव के २, क्षायिकभाव के २, पारिणामिक भाव के २ । (११+१२+२+२+२=२६) भाव होते है ।

खुलासा - औदयिकभाव के मनुष्यगति, क्रोधादि ४ कषाय, लिग ३, शुक्ललेश्या, अज्ञान, असिद्धत्व । क्षायोपशमिक भाव के ३ या ४ ज्ञान, ३ या २ दर्शन, ५ क्षायोपशमिक लब्धियॉ, क्षायोपशमिक **चारित्र।** औपशमिक सम्यकृत्व और उपशमश्रेणी प्रारम्भ करने की अपेक्षा औपशमिक चारित्र । क्षायिकसम्यकृत्व और क्षपकश्रेणि प्रारभ करने की अपेक्षा क्षायिक चारित्र । जीवत्व और भव्यत्व पारिणामिक भाव ।

(३७) प्रश्न - सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान मे कितने भाव होते है ?

उत्तर - औदयिक भाव के ५ - मनुष्यगति, सूक्ष्मलोभकषाय, शुक्ललेश्या, अज्ञान और असिद्धत्व । क्षायोपशमिक भाव के पूर्वोक्त १२ । औपशमिक भाव के २। क्षायिक भाव के २ । पारिणामिक भाव के - २ । खुलासा ऊपर किया है । (५+१२+२+२+२=२३) भाव होते है ।

(३८) प्रश्न - उपशान्त कषाय गुणस्थान मे कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - औदयिक भाव के ४ - मनुष्यगति, शुक्ललेश्या, अज्ञान, असिद्धत्व । क्षायोपशमिक भाव के पूर्वोक्त १२ । औपशमिक सम्यक्त्व और चारित्र २ । क्षायिक सम्यक्त्व १ । जीवत्व-भव्यत्व पारिणामिक भाव के २ । (४+१२+२ +१+२=२१) भाव होते है ।

(३६) प्रश्न - क्षीणकषाय गुणस्थान मे कितने भाव होते है ?

उत्तर - औदयिक भाव के ४ पूर्वोक्त ।११क्षायोपशमिक भाव के -३ या ४ ज्ञान, ३ या २ दर्शन, ५ क्षायोपशमिकलब्धियाँ । औपशमिक भाव नही है । क्षायिकसम्यक्त्व और क्षायिकचारित्र २, पारिणामिक भाव के जीवत्व - भव्यत्व२। (४+११+०+२+२=१६) भाव होते है ।

(४०) प्रश्न - सयोगकेवली गुणस्थान मे कितने भाव होते है ?

उत्तर - औदियक भाव के ३ - मनुष्यगति, शुक्ललेश्या, असिद्धत्व । क्षायिक भाव के ६ स्पष्ट ही है । पारिणामिक भाव के २ । (३+६+२=१४) भाव होते है ।

(४१) प्रश्न -अयोगकेवली गुणस्थान मे कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - औदयिक भाव के २ । क्षायिकभाव के ६ । पारिणामिक भाव के २ । (२+६+२=१३) भाव होते है ।

(४२) प्रश्न - सिद्ध भगवान के कितने भाव होते है ?

उत्तर - क्षायिकभाव के ६ । पारिणामिक का १ जीवत्व । ६+१=१०अथवा अभेद अपेक्षा से ५ भाव होते हैं । क्योंकि चार लब्धियो का अन्तर्भाव वीर्य मे किया । सम्यक्त्व मे चारित्र का अन्तर्भाव कर दिया है । ये चार और एक जीवत्व पारिणामिक भाव - ऐसे पाच भाव होते है ।

(४३) प्रश्न - पांच भावो के उत्तर-भेद कितने प्रकार के हैं ?

उत्तर - दो प्रकार के है - (१) मुख्य उत्तर-भेद, (२)अमुख्य उत्तर - भेद ।

(४४) प्रश्न - मुख्य उत्तर-भेद के कितने प्रकार है ?

उत्तर - ५३ प्रकार के है । पहले इनके भेद लिख आये है, वहाँ से जान लेना।

(४५) प्रश्न - अमुख्य उत्तर-भेद कितने प्रकार के है ?

उत्तर - अनेक प्रकार के है । जैसे - उपशमश्रेणी मे ८ से ११ वे गुणस्थान पर्यंत उपशान्त क्रोध - मान - माया - लोभ तथा इन गुणस्थानो मे प्रत्येक समय मे होनेवाले भाव सब औपशमिक भाव है । इसीप्रकार क्षपकश्रेणी मे क्षीण क्रोध मान - माया - लोभ - मोह - राग द्वेष, सिद्ध - बुद्ध - परिनिवृत, सर्व दु ख

क्षय, अन्तकृत इत्यादि सभी क्षायिकभाव है । क्षायोपशमिक भाव मे एकेन्द्रिय के क्षयोपशम से पचेन्द्रिय पर्यत का क्षयोपशम तथा द्वादशाग का ज्ञान सभी ही क्षायोपशमिकभाव है । औदयिकभाव के सख्यात, असख्यात और अनंत भेद है। पारिणामिक भाव मे अस्तित्व, अन्यत्व, कर्तृत्व, भोक्तृत्व, सर्वगतत्व, प्रदेशत्व, अरूपत्व, नित्यत्व, आदि अनेक भाव है, ये सभी अमुख्यभाव ही है ।

(४६) प्रश्न - औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक भाव मोक्ष के कारण है, तो क्षायोपशमिक भाव वाले को भी श्रेणि मांडना चाहिए ?

उत्तर - नही, (१) क्योकि क्षायोपशमिक सम्यकृत्व मे चल, मल और अगाढ़ सहित श्रद्धान है । (२) चारित्र की अपेक्षा परमार्थ से देखा जाय तो वह १० वे गुणस्थान तक क्षायोपशमिक भाव से ही चल रहा है, परन्तु उसे औपशमिक और क्षायिक तो भावी नैगमनय से कहा गया है ।

(४७) प्रश्न - क्षायोपशमिक चारित्र किसे कहते है ?

उत्तर - अनन्तानुवन्धी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण इन १२ कषायो के उदयक्षय से और सद्वस्थारूप उपशम से तथा सञ्जवलन मे से किसी एक देशघाती प्रकृति के उदय होने पर और नौ नोकषायो के यथा सभव उदय होने पर जो त्याग रूप परिणाम होता है वह सयम या क्षायोपशमिक चारित्र है । इसे सयमलब्धि भी कहते है ।

(४८) प्रश्न - जैसे क्षायोपशमिक भाव के क्षय और उपशमरूप द्विविधात्मकता से क्षायोपशमिकपना है, वैसे ही द्विविधपना गत्यादि औदयिक पारिणामिक मे होना चाहिए ?

उत्तर - (१) नही, क्योंकि पारिणामिक भाव मे परिणाम का अर्थ स्वभाव होता है, वह है प्रयोजन जिसका ऐसा पारिणामिक भाव है, परन्तु ऐसा परिणामत्व गत्यादि मे नही है, क्योंकि गत्यादिभाव तो कर्मोदयरूप निमित्तो की अपेक्षा से समुत्पन्न है, अत औदयिकभाव ही है ।

(२) गत्यादि को पारिणामिक माना जाये तो जीव के मोक्षभाव का प्रसग आयेगा, क्योंकि तब गत्यादि भावो का सदा अवस्थान मानना पडेगा । अत· गति आदि पारिणामिक भाव नही होते, यह नियम हुआ ।

(४९) प्रश्न - पारिणामिक भाव का एक भेद जीवत्व है, वह औदयिक कैसे हो सकता है ?

उत्तर - पारिणामिक भाव के भेद रूप जीवत्व का अर्थ तो चैतन्य है और यदि प्राणो को धारण करने की अपेक्षा जीवत्त्व भाव कहा जाय तो उस परिस्थिति मे जीवत्वभाव औदयिक भाव कहलाएगा। क्योंकि प्राणो के धारण करने रूप जीवन अयोगीकेवली के अन्तिम समय के आगे नही पाया जाता है, अत प्राण धारण रूप जीवत्त्व तो कर्म के विपाक से उत्पन्न होता है, इस तरह औदयिक भी सिद्ध होता है। परन्तु चैतन्य गुणरूप जीवत्व नियम से पारिणामिकभाव है।

(५०) प्रश्न - भाव का स्थान क्या है और वे स्थान कितने है ?

उत्तर - भाव की उत्पत्ति के कारण को स्थान कहते है। उसके गति, लिग, कषाय, मिथ्यादर्शन, असिद्धत्व अज्ञान, लेश्या और असयम ये आठ स्थान है।

(५१) प्रश्न - कर्मसापेक्ष और कर्मनिरपेक्ष भाव कितने होते है ?

उत्तर - ५० भाव कर्म सापेक्ष होते है और ३ भाव कर्म निरपेक्ष होते है।

निक्षेपो मे भावो का वर्णन

(५२) प्रश्न - नामभावनिक्षेप क्या है ?

उत्तर - बाह्य अर्थ से निरपेक्ष अपने आप मे प्रवृत्त 'भाव' यह शब्द नाम भाव है।

(५३) प्रश्न - स्थापना भाव निक्षेप क्या है ?

उत्तर - स्थापनाभाव -सद्भाव और असद्भाव के भेद से दो प्रकार का है। (१) सरागी और वीतराग आदि भावो का अनुकरण करनेवाली स्थापना सद्भाव स्थापनाभाव है। (२) उससे विपरीत असद्भाव स्थापनाभाव है।

(५४) प्रश्न - आगमद्रव्यभावनिक्षेप किसे कहते है ?

उत्तर - भाव प्राभृत का ज्ञायक, किन्तु वर्तमान मे अनुपयुक्त जीव आगमद्रव्य भाव कहलाता है।

(५५) प्रश्न - नोआगम ज्ञायकशरीर का वर्तमान शरीर क्या है ?

उत्तर - भावप्राभृत पर्याय से परिणत जीव के साथ जो एकीभूत (एकक्षेत्रावगाह) शरीर है, वह वर्तमान शरीर है।

(५६) प्रश्न - द्रव्य के "भाव" ऐसा व्यपदेश कैसे हो सकता है ?

उत्तर - नही, क्योकि "भवन भाव" अथवा "भूतिर्वा भाव" इसप्रकार भाव शब्द की व्युतपत्ति के अवलम्बन से द्रव्य के भी भाव ऐसा व्यपदेश बन जाता है ।

(५७) प्रश्न - छह द्रव्यो पर सचित्त, अचित्त और मिश्र भाव लगाइए ?

उत्तर - जीवद्रव्य सचित्त भाव है । शेष पाच अजीव द्रव्य अचित्त भाव है तथा जीव पुद्गल का सयोग मिश्र भाव है, जैसे - मनुष्य जीव ।

(५८) प्रश्न - योग कौन - सा भाव है ?

उत्तर - क्षायोपशमिक भाव है, क्योंकि इसमे वीर्यान्तिराय कर्म के क्षयोपशम की अपेक्षा है यह उपचार से माना है । (धवला ७) मे इसे औदयिकभाव रूप भी कहा है ।

(५९) प्रश्न - आचारधर, सूत्रकृद्धर आदि द्वादशांग का ज्ञान कौन-सा भाव है ?

उत्तर - क्षायोपसमिक भाव है । ग्यारह अग का ज्ञाता गणी कहलाता है । और वारह अग का ज्ञाता वाचक कहलाता है । परतु दोनो ही क्षायोपशमिक भाव है ।

(६०) प्रश्न - अनादिसन्ततिबन्धनबद्धत्व, ऊर्ध्वगतित्व आदि कौन-सा भाव है ?

उत्तर - कर्मोदयादि चतुष्टय के विना मात्र स्वभावत निष्पन्न होने से पारिणामिक भाव है । सभी द्रव्य अपनी अनादिकालीन स्वभाव सन्तीत से वद्ध है, सभी के अपने-अपने स्वभाव अनादि अनन्त है ।

(६१) प्रश्न - मिथ्यात्वगुणस्थान मे "मिथ्यादृष्टि" यह कौन-सा भाव है ?

उत्तर - "मिथ्यादृष्टि" यह औदयिक भाव है ।

(६२) प्रश्न - सासादन गुणस्थान मे "सासादन सम्यकृत्व" यह कौन-सा भाव है?

उत्तर - यह पारिणामिक भाव है, ये दर्शनमोह की अपेक्षा है । अन्य अपेक्षा औदयिकत्व भी है ।

(६३) प्रश्न - तीसरे गुणस्थान मे "सम्यग्मिथ्यादृष्टि"यह कौन-सा भाव है ?

उत्तर - क्षायोपशमिक भाव है ।

(६४) प्रश्न - चौथे गुणस्थान मे "असंयतसम्यग्दृष्टि" यह कौन-सा भाव है ?

उत्तर - यह औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक भाव है, कि असयतसम्यग्दृष्टि का असयतपना औदयिक भाव है ।

(६५) प्रश्न - संयतासंयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत ये कौन-से भाव हैं ?

उत्तर - ये क्षायोपशमिक भाव है ।

(६६) प्रश्न - अपूर्वकरण से उपशान्तकषाय तथा अपूर्वकरण से क्षीणकषाय गुणस्थानो मे उपशमक और क्षपक यह कौन-सा भाव है ?

उत्तर - "उपशमक" यह औपशमिक भाव है और "क्षपक" यह क्षायिक भाव है ।

(६७) प्रश्न - सयोगकेवली और अयोगकेवली यह कौन-सा भाव है ?

उत्तर - ये क्षायिक भाव है ।

मार्गणाओं मे भावों का वर्णन

॥ गतिमार्गणा ॥

(६८) प्रश्न - नरकगति मे कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - औपशमिक सम्यकृत्व १, क्षायोपशमिक भाव के कुमति - कुश्रुत - कुअवधि अज्ञान,मति - श्रुत अवधि ज्ञान, चक्षु - अचक्षु, अवधिदर्शन, ५ क्षायोपशामिकलब्धियॉ, क्षायोपशमिक सम्यकृत्व ये १५ । क्षायिक सम्यकृत्व १। औदयिकभाव के १३ - नरकगति, ४कषाय, नपुसकलिग, कृष्ण - नील - कपोतलेश्या, मिथ्यात्व, अज्ञान असयम, असिद्धत्व । पारिणामिक भाव के जीवत्व, भव्यत्व और अभव्यत्व ये तीनो । (१+१५+१+१३+३=३३) ५३ ऋण २०=३३ भाव होते है ।

(६९) प्रश्न - तिर्यचगति मे कितने भाव होते है ?

उत्तर - औपशमिकसम्यकृत्व १। क्षायोपशमिकभाव के १६ । ३अज्ञान, ३ज्ञान, ३ दर्शन ५ लब्धि, क्षायोपशमिक सम्यकृत्व और सयतासंयत । क्षायिक सम्यकृत्व १ । औदयिक भाव के १८ तिर्यचगति, ४ कषाय, ३ लिग, ६ लेश्या, मिथ्यात्व, अज्ञान, असयम और असिद्धत्व । पारिणामिक भाव के ३ । (१+१६ +१+१८+३=३९) ५३ ऋण १४ = ३९ भाव होते है ।

(७०) प्रश्न - मनुष्यगति मे कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - औपशमिकसम्यकृत्व - चारित्र २ । क्षायोपशमिकभाव के १८ पूरे । क्षायिक भाव के ९ । औदयिकभाव के १८, तीन गतियो को छोड़कर । पारिणामिकभाव के ३ । (२+१८+९+१८+३=५०) । ५३ ऋण ३ = ५० भाव होते है ।

(७१) **प्रश्न - देवगति मे कितने भाव होते है ?**

उत्तर - औपशमिकसम्यकृत्व १ । क्षायोपशमिक भाव के १५ । ३ अज्ञान, ३ ज्ञान, ३ दर्शन, ५ लब्धि, क्षायोपशमिक सम्यकृत्व । क्षायिकसम्यकृत्व १। औदयिकभाव के १४, देवगति, ४ कषाय, २ लिग, पीत - पद्म - शुक्ल लेश्या, **मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम, असिद्धत्व । पारिणामिकभाव ३ । (१+१५+१+१४+३=३४) ५३ ऋण १९ = ३४ भाव होते हैं ।**

इन्द्रियमार्गणा

(७२) **प्रश्न - एकेन्द्रिय द्वन्द्रिय, त्रीन्द्रिय जीव को कितने भाव होते है ?**

उत्तर - कुमति, कुश्रुतज्ञान, अचक्षुदर्शन, ५ क्षायोपशमिक लब्धियाँ, तिर्यचगति, ४ कषाय, १ नपुसकवेद, ३ अशुभलेश्या, मिथ्यात्व, अज्ञान, असयम, असिद्धत्व। पारिणामिक भाव के ३ । (८+१३+३=२४) भाव होते है ।

(७३) **प्रश्न - चौ इन्द्रिय जीव को कितने भाव होते है ?**

उत्तर - पूर्वोक्त २४ भावो मे १ चौ इन्द्रिय के (चक्षु दर्शन) और मिलाने से २५ भाव होते है ।

(७४) **प्रश्न - असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव को कितने भाव होते है ?**

उत्तर - क्षायोपशमिक भाव के २ अज्ञान, २ दर्शन, ५ लब्धि । औदयिकभाव के तिर्यचगति, ४ कषाय, ३ लिग, ३ लेश्या, मिथ्यात्व, अज्ञान, असयम, असिद्धत्व । पारिणामिक भाव के ३ । (९+१५+३=२७) भाव होते है ।

(७५) **प्रश्न - संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव को कितने भाव होते है ?**

उत्तर - ५३ भाव होते है ।

कायमार्गणा

(७६) **प्रश्न - छहकाय जीवो के कितने भाव होते है ?**

उत्तर - पाच स्थावरकाय मे २४ भाव और त्रसकाय मे ५३ भाव होते है ।

योगमार्गणा

(७७) प्रश्न - १५ योगों में कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - सत्य और अनुभय मन-वचन योग में ५३ भाव होते हैं । असत्य और उभय मन-वचन योग में ४६ भाव होते हैं । औदारिककाययोग मे ५१ भाव, औदारिकमिश्रकाययोग में ४५ भाव होते हैं । वैक्रियिककाययोग में ३९ भाव और वैक्रयिकमिश्रकाय योग में ३८ भाव होते है । आहारकद्विक में २७-२७ भाव होते हैं और कार्मणकाययोग में ४८ भाव होते हैं ।

वेदमार्गणा

(७८) प्रश्न - तीनो वेदो मे पृथक्-पृथक्भाव वतालाइए ?

उत्तर - स्त्रीवेद मे ४२, नपुसकवेद मे ४२ और पुरुषवेद मे ४३ भाव होते है।

खुलासा - औपशमिक भाव के १ या २ । क्षायोपशमिक भाव के ३ अज्ञान, ३ज्ञान, ३दर्शन, ५लब्धि, क्षयोपशमसम्यक्त्व क्षयोपशमचारित्र, सयतासयत ये १७ । क्षायिकभाव के १या२। ओदयिक भाव के ४ गति, ४कपाय, १लिग कोई भी, ६ लेश्या, मिथ्यात्व, अज्ञान, असयम, असिद्धत्व ये १६।पारिणामिक भाव ३ या २ । इनको यथायोग्य लगा लेना ।

कषायमार्गणा

(७९) प्रश्न - क्रोधादि २५ कषायवाले जीवो मे कितने भाव होते है ?

उत्तर - ४३ भाव होते है । इन्हे भी ऊपर के समान यथायोग्य समझना ।

ज्ञानमार्गणा

(८०) प्रश्न - आठो ही ज्ञानो मे पृथक्-पृथक् भाव वतलाईए ?

उत्तर - मति - श्रुत-अवधिज्ञान मे ४१,४१,४१,। मन पर्ययज्ञान मे ३१ या २८ केवलज्ञान मे १४ । ३ अज्ञानो मे ३४,३४,३४, भाव होते है ।

सयममार्गणा

(८१) प्रश्न - सात प्रकार के सयमो मे भाव वतलाईए ?

उत्तर - असयम मे ४१, देशसयम मे ३१, सामायिक-छेदोपस्थानासयम मे ३१, ३१, परिहारविशुद्धि सयम मे २७, सूक्ष्मसाम्पराय सयम मे २२, यथाख्यात सयम मे २६ भाव होते है ।

दर्शनमार्गणा

(८२) प्रश्न - ४ दर्शनो मे पृथक्-पृथक् भाव बतलाईए ?

उत्तर - चक्षु-अचक्षु दर्शन मे ४६,४६ । अवधिदर्शन मे ४१ केवलदर्शन मे १४ भाव घटते है ।

खुलासा - औपशमिक भाव के २ । क्षायोपशमिक भाव के १८। क्षायिक भाव के २ । औदयिक भाव के २१ । पारिणामिक भाव के ३ । (२+१८ +२ +२१+३=४६) ये चक्षु-अचक्षुदर्शनवालो को । औपशमिक भाव के २ । क्षायोपशमिक भाव मे ३ अज्ञान कम करके १५ । क्षायिक भाव के २ । औदयिक भाव /मे एक मिथ्यात्व को छोड़कर २० । पारिणामिक भाव के २ ।

(२+१५+२+२०+२=४१) भाव अवधि दर्शनवालो के। केवलदर्शन मे क्षायिक भाव के ६। औदयिक भाव के ३ - मनुष्यगति, शुक्ललेश्या, असिद्धत्व। पारिणामिक भाव के २। (६+३+२=१४) भाव होते है।

लेश्यामार्गणा

(८३) प्रश्न - लेश्याओं मे भाव बतलाइए ?

उत्तर - कृष्ण ३६, नील ३६, कपोत ३६, पीत ३८, पद्म ३८, शुक्ल मे ४७ भाव होते है।

भव्यमार्गणा

(८४) प्रश्न - भव्य तथा अभव्य जीवो के कितने भाव होते है ?

उत्तर - भव्य को ५२। अभव्य को ३३ भाव होते है।

खुलासा - अभव्यत्व के विना भव्य को ५२। अभव्य को क्षयोपशमभाव के ३ अज्ञान, २ दर्शन, ५ लब्धि ये १०। औदयिक भाव के २१। पारिणामिक भाव के २। (१०+२१+२=३३) भाव होते है। कही अवधि दर्शन लिया है तो ३४ भाव भी कहे है।

सम्यक्त्वमार्गणा

(८५) प्रश्न - ६ प्रकार के सम्यक्त्वो मे कितने भाव होते है ?

उत्तर - मिथ्यात्व मे ३४। सासादन मे ३२। मिश्र मे ३२ या ३३। औपशमिक सम्यक्त्व मे ३८। क्षायिक सम्यक्त्व मे ४६ और क्षायोपशमिक सम्यक्त्व मे ३७ भाव होते है।

सज्ञीमार्गणा

(८६) प्रश्न - संज्ञी तथा असज्ञी के कितने भाव होते है ?

उत्तर - सज्ञी के ५३ या ४६। असज्ञी के २७ भाव होते है।

खुलासा - सज्ञी के ५३ भाव तो स्पष्ट ही है। ४६ भाव गुणस्थानो की अपेक्षा गुणस्थान प्रकरण मे देखिए। असज्ञी के २७ भाव - क्षायोपशमिक भाव के २ अज्ञान, २ दर्शन, ५ लब्धि, ये ६। औदयिकभाव के १तिर्यचगति, ४ कषाय,

३वेद, ३ लेश्या, मिथ्यात्व, अज्ञान, असयम, असिद्धत्व ये १५ । पारिणामिक भाव के ३ । (६+१५+३+=२७) भाव होते है ।

आहारमार्गणा

(८७) प्रश्न -आहारक और अनाहारक जीवो के कितने भाव होते है ?

उत्तर आहारक के ५३भाव होते है और अनाहारक के ४८ भाव होते है वे इस प्रकार है - औपशमिक सम्यक्त्व १ । क्षायोपशमिक भाव के २ अज्ञान,३ ज्ञान, ३ दर्शन, ५ लब्धि, क्षायोपशमिक ये १४ । क्षायिक भाव के ६ । औदयिक भाव क २१ । पारिणामिक भाव के ३ । (१+१४+६+२१+३=४८) भाव होते है ।

(८८) प्रश्न - एक जीव को एक काल मे कितने भाव पाये जाते है ?

उत्तर - १७ भाव पाये जाते है ।

(८९) प्रश्न -उत्पाद, व्यय, ध्रुव मे भाव बतालाइए ?

उत्तर -पारिणामिक भाव ध्रुव रूप है, शेष चार भाव उत्पाद, व्यय रूप है ।

(९०) प्रश्न - कितने भाव द्रव्यरूप है और कितने भाव पर्याय रूप है ?

अत्तर - पारिणामिक भाव द्रव्य रूप है, शेष चार भाव पर्यायरूप है ।

(९१) प्रश्न - औपशमिकसम्यग्दृष्टि को कितने भाव होते हैं ?

उत्तर - ४ भाव होते है -सम्यक्त्व की अपेक्षा औपशमिकभाव, ५ज्ञान,दर्शन, वीर्य के विकास की अपेक्षा क्षायोपशमिक भाव । बॉकी रहे विकार की अपेक्षा औदयिकभाव । स्वभाव की अपेक्षा पारिणामिक भाव ।

(९२) प्रश्न - क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि को कितने भाव होते है ?

उत्तर - तीन भाव होते है - ज्ञान, दर्शन, वीर्य के विकास एव सम्यक्त्व और चारित्र की अपेक्षा क्षायोपशमिक भाव । शेष ऊपर कहे अनुसार लगा लेगा ।

(९३) प्रश्न - क्षायिकसम्यग्दृष्टि को कितने भाव होते है ?

उत्तर - ५ भाव होते है (१) क्षायिकसम्यग्दृष्टि उपशमश्रेणी माडे तो उसे सम्यक्त्व की अपेक्षा क्षायिकभाव । चारित्र की अपेक्षा औपशमिक भाव । ज्ञान, दर्शन,

वीर्य के विकास (उघाड़) की अपेक्षा क्षायोपशमिकभाव । शेप रही अशुद्धता की अपेक्षा औदयिक भाव । वस्तु स्वभाव की अपेक्षा पारिणामिक भाव होता है । (२) क्षायिकसम्यग्दृष्टि के चौथे से सातवे गुणस्थान पर्यत की अपेक्षा चार भाव होते है ।

(६४) प्रश्न - मुनिदशा को कितने भाव लागू होते है ?

उत्तर - ३ भाव । औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक भाव लागू होते है ।

(६५) प्रश्न - मुनि को कितने भाव लागू होते है ?

उत्तर - ५ भाव लागू होते है ।

गुणस्थानो मे भावो के भग

(६६) प्रश्न - प्रथम,द्वितीय, और तृतीय गुणस्थानो मे कितने भंग होते है ?

उत्तर -इन गुणस्थानो मे पारिणामिक, क्षायोपशमिक, औदयिक, ये ३ भाव होते है । प्रत्येक भाव की अपेक्षा ३ भग । पारिणामिक और औदयिक । पारिणामिक और क्षायोपशमिक । औदयिक और क्षायोपशमिक ये ३ द्विसयोगी भग । त्रिसयोगी भग एक ही होगा - औदयिक - क्षायोपशमिक - पारिणामिक रूप। स्वसयोगी भग ३ औदयिक - औदयिक । क्षायोपशमिक - क्षायोपशमिक । पारिणामिक - पारिणामिक । स्वसयोगी ३भगो का खुलासा -गति औदयिक भाव है और कपाय आदि भी औदयिक भाव है । ज्ञान क्षायोपशमिक भाव है और दर्शन - सयम आदि भी क्षायोपशमिक भाव है ।जीवत्व भी पारिणामिक भाव है और अस्तित्व आदि भी -पारिणामिक भाव है । इसप्रकार जहॉ-जहॉ जो,जो योग्य है, वहॉ वह लगा लेना चाहिए । ये कुल ३+३+१+३=१० भग हुए ।

(६७) प्रश्न - चौथे, पाचवे, छट्टे और सातवे गुणस्थान मे कितने भग होते है ?

उत्तर - इन गुणस्थानो मे ५ भाव होते है । ५ प्रत्येक भग । ६ द्विसयोगी भग। ७ त्रिसयोगी भग । २ चतुसयोगीभग । ३ स्वसयोगी भग । इसप्रकार ५+६+७+२+३=२६ भग होते । ये २६ भग पाचवे, छट्टे और सातवे गुणस्थान मे भी होते है ।

(९८) प्रश्न - अपूर्वकरण आदि उपशान्तकषाय गुणस्थानो मे कितने भग होते हैं?

उत्तर - इन गुणस्थानो में ५ भाव होते है, इसलिए ५ प्रत्येक भग । १० द्विसयोगी भंग । १० त्रिसंयोगी भग । ५ चतु सयोगी भग । १ पञ्चसंयोगी भग । ५ स्वसयोगी भग । इस प्रकार ५+१०+१०+५+१+५=३६ भंग होते हैं ।

(९९) प्रश्न -क्षपकश्रेणी के अपूर्वकरणादि चार गुणस्थानो मे कितने भग होते हे ?

उत्तर - इन गुणस्थानो मे ४ भाव होते है, इसलिए ४ प्रत्येक भग । ६ द्विसयोगी भग । ४ त्रिसयोगी भग । १ चतुसयोगी भग । ४ स्वसयोगी भग इसप्रकार ४+६+४+१+४=१९ भग होते है ।

(१००) प्रश्न - सयोगीकेवली और अयोगीकेवली गुणस्थानो मे कितने भग होते हैं?

उत्तर - इन गुणस्थानो मे ३ भाव होते है,इसलिए ३ प्रत्येक भग । ३ द्विसयोगी भग । १ त्रिसयोगी भग । ३ स्वसयोगी भग इसप्रकार ३+३+१+३=१० भग होते ह ।

(१०१) प्रश्न - सिद्धभगवतो के कितने भग होते हैं ?

उत्तर - यहॉ २ भाव होते हे, इसलिए २ प्रत्येक भग । १ द्विसयोगी भग । २ स्वसयोगी भग । इसप्रकार २+१+२=५ भग होते हैं । प्रथम गुणस्थान से लेकर सिद्धो पर्यत जितने भी भग दर्शाये गये है, ये सव ५ भावो की अपेक्षा ही दर्शाये है । इन्हे प्रश्न न० ८६ मे जिसप्रकार लगाये गये है, उसी प्रकार सव गुणस्थानो मे लगाना चाहिए ।

(१०२) प्रश्न - इन पञ्च भावो को जानने का क्या प्रयोजन है ?

उत्तर - इन पञ्च भावो को जानने का प्रयोजन यह है कि ज्ञान तो पाचो भावो का करना, पश्चात् चार भावो का लक्ष्य छोड़कर, एक परम पारिणामिक भाव का आश्रय लेकर आत्मानुभूति प्रगट करके अपुनर्भव के लिए प्रस्थान करना ।

ॐ शांति , ॐ शाति, ॐ शाति

हरिश चन्द्र ठोलिया

15, नवजीवन उपवन,

मोती डूंगरी रोड़, जयपुर-4

प्रस्तुत ग्रन्थ की कीमत कम कराने मे प्राप्त राशि का विवरण

उदयपुर से–

१	श्री डॉ जामनदास मेहता, उदयपुर	१००१/-
२	मातुश्री राजुभाई कानपुरवाला हस्ते ब्र विमला बहन	१०००/-
३	श्री उम्मेदमलजी कमलकुमारजी वडजात्या, बम्बई	१०००/-
४	श्री कोदरलालजी भोरावत, उदयपुर	१०००/-
५	श्री भवरलालजी ताराचदोत, उदयपुर	५०१/-
६	श्री भवरलालजी खेडीवाला, उदयपुर	५०१/-
७	श्री सुभाषचन्दजी जैन गदिया, उदयपुर	५०१/-
८	श्री कमलचन्दजी जैन गदिया, उदयपुर	५०१/-
९	श्री रगलालजी बोहरा, उदयपुर	५०१/-
१०	श्री प्यारेलालजी बोहरा, उदयपुर	५०१/-
११	श्री लक्ष्मीलालजी बडी, उदयपुर	५०१/-
१२	श्री भवरलालजी गगावत, उदयपुर	५०१/-
१३	श्री भवरलालजी बजरावत, अहमदाबाद	५०१/-
१४	श्री भवरलालजी शान्तिलालजी, उदयपुर	५०१/-
१५	श्रीमती कान्तादेवी गगावत, उदयपुर	५०१/-
१६	श्री गणेशलालजी धनावत, उदयपुर	५०१/-
१७	श्रीमती कमलाबाई जैन (सरावगी), उदयपुर	५०१/-
१८	धर्मपत्नी श्री रगलालजी बोहरा, उदयपुर	५०१/-
१९	श्री कचरूलालजी मेहता, उदयपुर	२५१/-
२०	श्री प्रेमचन्दजी गगावत, उदयपुर	२५१/-
२१	श्री नेमीचन्दजी भोरावत, उदयपुर	२५१/-
२२	श्री चुन्नीलालजी भदावत, उदयपुर	२०१/-
२३	श्री जेवरचन्दजी सलावत, उदयपुर	२०१/-
२४	श्री लख्मीचन्दजी भोरावत (सेमारीवाला), उदयपुर	२०१/-
२५	श्री अम्बालालजी (काकाजी) बजुवावत, उदयपुर	२०१/-
२६	श्रीमती कलादेवी, उदयपुर	२०१/-
२७	श्री डॉ डूगरमलजी चौधरी, उदयपुर	२०१/-
२८	श्री प्रेमचन्दजी जैन (महावीर टेन्ट हाउस, अजमेर)	२०१/-

२९	श्रीमती कचनवाई ध प स्व श्री सोहनलालजी गदिया, उदयपुर	२०१/-
३०	श्री दीपचन्दजी गाधी	२०१/-
३१	श्री ललितकुमारजी अग्रवाल	२०१/-
३२	श्री रोशनलालजी टाया	२०१/-
३३	श्री शान्तिलालजी टाया	२०१/-
३४	श्री मदनलालजी वैद	२०१/-
३५	धर्मपत्नी श्री प्रकाशचन्दजी गगवाल, उदयपुर	१०१/-
३६	श्री धूलचन्दजी सिघवी हस्ते पुत्रवधु, उदयपुर	१०१/-
३७	श्रीमती तीजाबाई मेहता, उदयपुर	१०१/-
३८	श्रीमती सुशीलाबाईजी, उदयपुर	१०१/-
३९	श्री भगवतीलालजी जसीगोत, उदयपुर	१०१/-
४०	श्रीमती वसन्तीदेवी ध प श्री नेमीचन्दजी पचौरी, उदयपुर	१०१/-
४१	श्रीमती सोहनवाई ध प श्री फतेलालजी पचौरी, उदयपुर	१०१/-
४२	गुप्तदान हस्ते श्रीमती सोहनवाई, उदयपुर	१०१/-
४३	श्री अमृतलालजी कुणावत, उदयपुर	१०१/-
४४	श्री मदनलालजी वालावत, पाणुदवाला	१०१/-
४५	श्री नीरज जैन	१०१/-
४६	श्री ललितकुमारजी पचौरी	१०१/-
४७	श्री मीठालालजी भगनोत	१०१/-
४८	श्री नाहरमलजी सगावत	१०१/-
४९	श्री दिनेशकुमारजी सोनी	१०१/-
५०	श्री छगनलालजी रगावत, सेमारीवाला	१०१/-
५१	गुप्तदान हस्ते श्रीमती कचनवाई अखावत	१०१/-
५२	श्री रमेशचन्दजी गदिया	१०१/-
५३	श्री मदनलालजी जैन जाम्बुडीवाला	१०१/-
५४	श्री टीकमचन्दजी लखमावत	१०१/-
५५	श्रीमती रूपकुवर (गदिया) जैन	१०१/-
५६	गुप्तदान हस्ते श्रीमती पुष्पाबाई लुणदीया	५१/-
	योग	१६५५३/-

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा प्राप्त सूची

क्रम	नाम	राशि
१	श्री सुन्दरलालजी जैन, सागर	२००१/-
२	स्नेह जैन हकीम मेहरचन्द जैन, देहली	५२५/-
३	श्री हुलासमलजी कासलीवाल, कलकत्ता	५०१/-
४	श्री दिगम्बर जैन समाज, शाहपुरा	५००/-
५	श्रीमती सुशीलाबाई ध प ताराचन्दजी बाकलीवाल, जयपुर	५००/-
६	श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल, उदयपुर	२५१/-
७	श्री अभयकुमारजी बडी	२५१/-
८	श्री प्रकाशचन्दजी गभीरमलजी, अहमदाबाद	२५१/-
९	श्री मागीलालजी छाबडा, इन्दौर	२५१/-
१०	श्रीमती पुष्पा बहन कान्तिभाई मोटाणी, बम्बई	२५१/-
११	श्रीमती सुनीता नितिन शाह, बम्बई	२५१/-
१२	श्री प्रेमचन्दजी जैन महावीर टेन्ट हाउस, अजमेर	२०१/-
१३	श्री छगनराजजी भडारी, मद्रास	२०१/-
१४	बादामदेवी चिरजीवलाल ट्रस्ट, अकोला	२००/-
१५	श्रीमती कुन्तीदेवी ध प मन्नूलालजी वकील, सागर	१५१/-
१६	श्रीमती कान्ताबाई पूनमचन्द छाबडा, इन्दौर	१५१/-
१७	श्रीमती मनोरमादेवी ध प राजेन्द्रकुमारजी, फिरोजाबाद	१११/-
१८	श्रीमती जैनाबाई, भिण्ड	१०१/-
१९	श्रीमती त्रिशलादेवी ध प निर्मलकुमारजी, अलीगज	१०१/-
२०	श्रीमती शान्तिदेवी जैन, जयपुर	१०१/-
२१	श्री सुरेशचन्द अनिलकुमार, बैंगलोर	१०१/-
२२	कुन्दकुन्द मूलचन्द के ट्रस्ट, अजमेर	१०१/-
२३	श्रीमती आशादेवी ध प प्रेमचन्द, दिल्ली	१०१/-
२४	श्रीमती बसन्ती देवी, सूरत	१०१/-
	योग	७२५४/-